प्रकाशक .

प्रकाशन शाखा,
सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश

मूल्य ४.५०

मुद्रक :

प्रेम प्रिंटिंग प्रेस,
गोलागंज, लखनऊ

सत्तावनी क्रान्ति के

अठारह वर्षीय तरुण सेनानी

अभिनव अभिमन्यु श्री बलभद्र सिंह

(चहलारी के ठाकुर)

और

उनके साथ स्वदेश की इच-इच भूमि के लिये अन्तिम बूंद तक
रक्तदान करने वाले

नवावगज वारावकी के युद्ध क्षेत्र के
अभूतपूर्व रणबाँकुरे

छह सौ हिन्दू-मुसलमान पुरखों

को

प्रतीक स्वरूप

यह श्राद्ध आयोजन

सविनय अर्पित—

पितृपक्ष ७, शाके १८७९
स्वतन्त्रता सग्राम शताब्दी, १९५७ ई०

अमृतलाल नागर

प्रकाशक :

प्रकाशन शाखा,
सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश

मूल्य ४.५०

मुद्रक :

प्रेम प्रिंटिंग प्रेस,
गोलागंज, लखनऊ

ebookspdf.in

दो शब्द

सत्तावनी क्रान्ति सम्बन्धी अपने उपन्यास के लिये ऐतिहासिक सामग्री एकत्र करते हुए मुझे लगा कि अपने उपन्यास के क्षेत्र—अवध—मे घूम-घूम कर गदर सम्बन्धी स्मृतियां और किवदतिया आदि एकत्र किये विना मेरी गढी हुई कहानी मे झकोले रह जायेंगे। यो भी गदर की किवदतियो या वातो को सुनानेवाले व्यक्ति अव छीजते जा रहे है। सत्तावनी क्रान्ति के सम्बन्ध मे भारतीय दृष्टिकोण से लिखे गये इतिहास के अभाव मे जनश्रुतियो के सहारे ही इतिहास की गैल पहचानी जा सकती है।

हमारे देश मे स्वजनो की चिता के फूल चुने जाते हैं। सौ वर्ष वाद ही सही मैं भी गदर के फूल चुनने की निष्ठा लेकर अवध की यात्रा का आयोजन करने लगा।

प्रसगवश एक दिन उत्तर प्रदेश के सूचना-सचालक भाई भगवतीशरण सिंह से यह जिक्र छिडा। उनके और उनके विभाग के सहयोग से मेरा काम वहुत सरल हो गया। भगवती भाई मेरे मित्र हैं, उन्हे मेरे औपचारिक कृतज्ञता-ज्ञापन की आवश्यकता नही।

पुस्तक २१ जुलाई से लिखना आरम्भ कर १६ सितवर को पूरी की। चि० ज्ञानभद्र दीक्षित ने इसकी पाडुलिपि लिखी। मैं उन सव व्यक्तियो और पुस्तको के प्रति आभारी हूँ जिनके सहयोग से यह कार्य कर सका।

साहवजादा कौकव कदर से प्राप्त वेगम हजरतमहल के एक वहुत ही धुंधले और छोटे फोटोग्राफ से मेरे छोटे भाई चि० मदन ने उनका पोर्ट्रेट चित्र वनाया है।

चौक, लखनऊ। अमृतलाल नागर

गदर के फूल

राणा वेणीमाधव वख्श

वाराबंकी

४ जून, मगलवार। मेरी यात्रा का पहला दिन।

नवाबगज वाराबकी की लडाई सत्तावनी क्रान्ति के सग्राम में मार्के की लडाई हुई थी। सर होपग्राण्ट के सस्मरण और सर विलियम रसल की डायरी मे नवाबगज के युद्ध का वर्णन तथा युद्ध के नायक चहलारी नरेश वलभद्र सिंह रैंकवार के अद्भुत शौर्य का वृत्तान्त पढ कर ही यहाँ आया हूँ। चहलारी प्राय गदर के वाद से ही वहराइच जिले का एक अग बन गया है, इससे पहले वह सीतापुर जिले से जुडा हुआ था, वाराबकी क्षेत्र से उसका कोई सम्वन्ध न था। सुप्रसिद्ध इतिहासकार डाक्टर रमेशचन्द्र मजुमदार की ग़दर सम्वन्धी सद्य·प्रकाशित पुस्तक में यह पढने पर कि सत्तावन की क्रान्ति असगठित और अनियोजित थी, मुझे लगा कि जहाँ तक अवध का सम्वन्ध है मजुमदार महाशय का यह वक्तव्य कदापि लागू नही हो सकता। उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से भारतीय स्वतंत्रता सग्राम का इतिहास लिखने के हेतु नियुक्त शिक्षा विभाग के अण्डर सेक्रेटरी, मेरे विद्वान् मित्र डाक्टर अतहर अव्वास रिजवी ने मुझे ऐसे कई पत्र दिखलाये थे जो राजा वेणीमाधव वख्श और मौलवी अहमदुल्ला शाह ने अवध के समर सगठन के सम्वन्ध मे एक दूसरे को लिखे थे। इसके अतिरिक्त मेरे सामने अवध के कम से कम तीन ऐसे नायको का विवरण था जिन पर यह आरोप नही लगाया जा सकता कि वे मात्र अपने या अपनी रियासत के वचाव के लिये लडे थे। शकरपुर ज़िला रायवरेली के राणा वेणीमाधव वख्श, गोंडा के राजा देवी वख्श सिंह और चहलारी के ठाकुर वलभद्र सिंह, ये तीनो व्यक्ति निश्चितरूप से अवध की स्वतन्त्रता के लिये लडे थे और इन तीनो मे से एक ने भी अग्रेजो के सामने न तो हथियार ही डाले और न सिर झुकाया। अट्ठारह वर्ष के नौजवान वलभद्र सिंह ने तो समर मे अनोखी वीरता दिखलाते हुये अवध की स्वतन्त्रता के लिये अपने प्राण निछावर किये थे।

मैं उसी युद्ध के सम्वन्ध मे किंवदतिया और लोक साहित्य के प्रमाण वटोरने

आया हूँ। मन मे एक धुकपुकी भी है कि यदि जन साधारण से ऐसी सामग्री प्राप्त करने के सम्बन्ध मे मेरी धारणा असत्य निकली तो ?—ऐसी आशा तो नही। अगर लखनऊ मे मुझे कुछ ऐसे लोग मिल सकते हैं, तो बाहर भी उनका अकाल नही होना चाहिये। प्रश्न यह भी है कि अगर बाराबकी मे मुझे 'कुछ नही' के बराबर ही सामग्री मिली तो क्या आगे की यात्रा करना उचित होगा ? मैं अपना समय, पैसा और सरकारी पैट्रौल खर्च करने का अधिकार तभी तक रखता हूँ जब तक कि उसका सदुपयोग भली-भाँति करू और इस भ्रमण का महत्व सिद्ध कर दिखाऊँ। इस तरह की बातें उठने पर मेरे मन मे बार-बार यह विश्वास भी जागता है कि मेरा तीर औचक अँधेरे मे नही छूट रहा, सफलता मिलनी ही चाहिये। यदि बाराबकी मे मुझे अधिक ऐतिहासिक सामग्री न प्राप्त हुई तब भी कम से कम दो अन्य ज़िले घूमे-परखे बिना मुझे हताश नही होना चाहिये। अस्तु।

बहुत से लोग शायद यह न जानते हों कि जो स्थान इस समय बाराबकी के नाम से प्रसिद्ध है, वह दरअस्ल नवाबगज कहलाता है। बकी और बारा ग्राम दोनो ही वहाँ से दूर हैं। जिला सूचनाधिकारी श्री लक्ष्मीसहाय गुप्त उत्साही नव-युवक लगे। उन्होंने अपने ज़िले का सत्तावनी क्रान्ति से सम्बन्धित इतिहास सरकारी सूचना के लिये भलीभाँति एकत्र किया है। उन्होने बतलाया कि यहाँ १० मई से पहले जब उक्त तिथि को मनाने की बात आई, तो स्थानीय अधिकारियो के एक डिनर मे यह शका उठाई गई कि नवाबगज के युद्ध मे मारे जाने वाले चहलारी नरेश बलभद्र सिंह वास्तव मे देशभक्त वीर थे या नही। कुछ लोगो का ख्याल था कि वह गदर के नायक नही हो सकते क्योंकि अग्रेजो ने नवाबगज मे उनकी कब्र बन-वाई थी, जो अब तक मौजूद है। डिनर मे एक किंवदती का हवाला भी दिया गया जिसके अनुसार बलभद्र सिंह बारात लेकर आ रहे थे। उस ज़माने के क्षत्रिय राजे रजवाडो की बारात के अनुसार ही उनके साथ भी तोपें बन्दूकें और लाव-लश्कर था। अग्रेज़ो ने समझा कि दुश्मन लडने आ रहा है, धावा कर दिया। चहलारी नरेश और उनकी फौज मारी गई। बाद मे अग्रेज़ो को पता चला कि बलभद्र सिंह उनका दोस्त था तो उन्होने बलभद्र सिंह की कब्र बनवा दी। डिनर मे श्री अहमद किदवाई उर्फ अच्छन साहब भी मौजूद थे। उन्होंने अपने मामा से चहलारी वाले की वीरता के अनेक किस्से सुन रक्खे थे। अच्छन साहब ने उक्त किंवदती को असत्य माना और प्रमाण के रूप मे अपने मामू से चहलारी नरेश सम्बन्धी प्राचीन आल्हा भी प्राप्त करने का निश्चय किया।

श्री गुप्त की बातें सुनकर मेरे मन मे सर होप ग्राण्ट द्वारा 'सिपॉय वार' नामक पुस्तक मे लिखित नवावगज युद्ध के हमारे सेनानियो और सैनिको के अद्भुत् शौर्य का विवरण घूमने लगा। सर होप उस युद्ध के शत्रु पक्षीय महा सेनानी थे। उन्होंने भारत मे अनेक स्थलो पर लडाइया लडी, हमारे वडे-वडे रणवांकुरो से लोहा लिया था, परन्तु नवावगज के युद्ध मे उन्हे जैसे अभूतपूर्व लडवैयो से सामना करना पडा वैसे पहले नही देखे थे। और उनमे भी एक तो—एक ही था।

'लण्डन टाइम्स' के रिपोर्टर और उक्त युद्ध के एक शत्रु पक्षीय सेनानी सर विलियम रसल ने उस अनोखे 'एक' का नाम भी लिया है—वलभद्र सिंह चहलारी।

सोच लिया, अच्छन साहव से वह आल्हा प्राप्त किया जायगा।

दरियावाद

चूंकि दरियावाद से ही इस जिले मे क्रांति आरम्भ हुई थी इसलिये जिला सूचना अधिकारी के साथ मैंने पहले दिन दरियावाद चलने का ही प्रोग्राम वनाया। दरियावाद कांग्रेस के प्रधान श्री जगन्नाथ प्रसाद निगम उस दिन नगर मे ही थे। श्री गुप्त उन्हें ले आये, वे हमारे साथ हो लिये। प्रेसट्रस्ट आफ़ इन्डिया के स्थानीय प्रतिनिधि श्री रामस्वरूप वाजपेई वकील और 'हिन्दुस्तान समाचार' के प्रतिनिधि श्री इन्दुप्रकाश जी भी हमारे साथ चले। इन स्थानीय सज्जनो का साथ मेरे लिये लाभप्रद रहा। श्री निगम ने अपने कस्वे के सम्वन्ध मे गजेटियर तथा स्थानीय किंवदंतियो से अच्छी सामग्री सग्रह की थी। वात-वात मे वे वडे उत्साह के साथ अपनी जेव से छोटी सी डायरी निकालकर हवाले पेश करते और फिर चट मे उसे जेव मे रख लेते थे। जगह छोटी हो या वडी, वहां का निवासी अपने स्थान को जव वडे प्यार से महत्व देना आरम्भ करता है तव मुझे वहुत अच्छा लगता है। जिसने अपनी धरती को प्यार न किया वह मनुष्य कितना ही वडा क्यो न हो मेरी नजर मे वहुत छोटा होता है क्योकि उसका व्यक्तित्व आत्म-उपेक्षा अथवा आत्म-प्रवचना की विकृति को आधार वना कर पनपता है। हां, यही धरती का प्रेम यदि अपनी ही सीमा मे सिमट जाय, दूसरे के ऐसे ही भाव को मनुष्य सराह न सके तो उसे भी मैं घातक मानता हूं।

दरियावाद वारावकी से लगभग २८ मील दूर लखनऊ-फैजावाद मार्ग पर आवाद है। लगभग साढे चार सौ वर्ष पूर्व मुहम्मद इब्राहीम शर्की के एक सूवेदार दरिया खां द्वारा यह कस्वा वसाया गया था। गदर मे ध्वस्त होने तक जिले का

सदर मुकाम यही था। शानदार कस्बा था, चौंतीस फाटक थे, मोहल्लों के नाम उसके पुराने वैभव का पता बतलाते हैं—मुहल्ला मुहर्रिरान यानी सरकारी क्लर्कों का मुहल्ला, मुहल्ला मखदूम ज़ादान यानी पूज्य और पवित्र लोगो का मुहल्ला, मुहल्ला चौधरियाना, मुहल्ला मुग़लान इत्यादि। इस क्षेत्र के ताल्लुकेदारो मे हडहा के सूर्यवंशी तथा दरियाबाद खास के कायस्थ वली परिवार के लोग प्रमुख हैं।

यह सुनते-सुनाते चले जा रहे थे। मार्ग मे राम सनेही घाट पड़ता है। बाबा राम सनेही के सम्बन्ध मे मुझे यह बतलाया गया कि वे बडे ही पहुँचे हुये व्यक्ति थे। गदर के ज़माने मे बाबा ने फैज़ाबाद से लखनऊ की ओर आती हुई अंग्रेज़ी सेनाओ से अपने शिष्यों सहित मोर्चा लिया था और जूझ गये थे। बावा राम सनेही का चमत्कार बडा प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि गदर के काफी बाद अंग्रेज़ो ने उनके समाधि-स्थल के पास से सडक निकालने का आयोजन किया। बाबा की समाधि सडक मे ही नप जाती थी अत उसे खोद डालने की आज्ञा हुई। मज़दूर सहम गये, उन्होने कहा कि बाबा की समाधि हमारा अत्यत पूज्य स्थान है, हम इस पर फावडा नही चला सकते। गोरे हाकिम ने इस पर अविश्वास प्रकट किया, और समाधि को खोद डालने का पुन आदेश दिया। मज़दूर बोले कि सरकार, हमको तो डर लगता है, पहला फावडा आप चलायें।

कहते हैं कि अविश्वासी गोरे का बडा अनिष्ट हुआ और उसके बाद ही यह आदेश निकला कि सडक भले ही टेढी हो जाय मगर समाधि सुरक्षित रहेगी।

गदर से सम्बन्धित बाबा राम सनेही के विषय मे जानकारी बटोरने की इच्छा हुई। हम लोग राम सनेही घाट पर उतरे। लखनऊ फैजाबाद मार्ग के दाहिनी ओर, बाराबकी से लगभग छब्बीस मील दूर कल्याणी नदी के तट पर राम सनेही घाट स्थित है। स्थान बडा ही रम्य है। कल्याणी के दोनो ओर पलाश वन बडा ही सुहावना मालूम पड रहा था। बाबा राम सनेही की समाधि कल्याणी की सतह से काफी ऊँचे एक टीले पर है। पास ही राम सनेही घाट का डाक बँगला भी बना है। बाग बगीचा भी है। जगह का हरा-भरा पन और एकान्त मुझे कुछ दिनो के लिये वही टिक जाने को रह-रह कर बुलावा देने लगा। खैर यह तो फुरसत की बात है।

बाबा राम सनेही की समाधि देखी। समाधिस्थल देखते ही मुझे शक हुआ। ऊँचे चबूतरे पर उल्टी नाँद का स्तूप-सा बना हुआ था। आमतौर पर ऐसी समाधियो के साथ मैंने महात्माओ के जीवित समाधि लेने की बात सुनी थी। जो

जलाये जाते है उनकी समाधि पर स्तूपनुमा वस्तु नही होती। मैंने अपने बारावकी के साथियो से यह शका प्रकट की और कहा कि इसे देखकर बावा के ग़दर मे मारे जाने के प्रमाण तो नही मिलते। वे सभी प्राय एक स्वर मे बोले "नही साहब, मारे तो ये गदर मे ही गये थे।"

हो सकता है, फिर भी आसपास से पता तो लगाना ही चाहिये, मैंने सोचा। बाग़ मे एक बूढा माली दिखलाई पडा, उससे पूछा . "बावा का गदर मा गोरन ते लडे रहे ?"

"नाही। उनका कोई मार नाही सकत रहै। आपै बिरमाड मा साँस चढाय के समाधी लिहिन रहै।" बूढे का उत्तर सुनकर बाजपेई जी, गुप्त जी और निगम जी तीनो ने ही उसे अपने प्रश्नो से घेर लिया। बूढा बोला "हम भाई यहु नाही बताय सकिति, बावा के घरै के लोग हियाँ नगिचहे रहति हैं उनका मालुम होई।"

सडक के उस पार, पास ही बावा के वशज रहते थे। हम वहाँ पहुँचे। ऊँचे टीले पर, जो किसी प्राचीन काल के बडी ईंटो वाले खडहर का परिचायक था, बावा रामसेनही का मकान बना हुआ था। सामने और बाई ओर छप्पर पडे थे। बच्चे खेल रहे थे, एक बूढी माई बैठी कडे पाथ रही थी। हमने नीचे से ही गोहार लगाई। निगम जी ने बावा के वर्तमान वशज के सबध मे पूछा। पता लगा वे कही गये हैं। खैर, बूढी माई से ही प्रश्न किया गया। उन्होंने भी बावा के ग़दर मे या कभी किसी की सेना से लडने की बात को अस्वीकार किया, केवल समाधि खुदने वाली किंवदती का ही समर्थन किया। मेरे पत्रकार मित्रो को काफी निराशा हुई। उनमे से एक सज्जन तो बावा को गदर का हीरो बनाकर उनका माहात्म्य अखबारो मे छपवा भी चुके थे। उन्हे सबमे अधिक निराशा हुई। आगे चल कर बाज़ार शेमियर गज मे एक परिचित बडे बजाज़ की दूकान पर मित्र मडल मुझे ले गया। मुझ से कहा कि दूकान के बडे मालिक डाक्टर साहब अवश्य ही इस घटना पर प्रकाश डाल सकेंगे, वे पुराने आदमी हैं, और इन जगहो के बारे मे उनको काफी जानकारी है। सत्तावनी क्रान्ति मे अनेक फकीरो ने बडा हिस्सा लिया था इसलिये बावा राम सनेही का युद्ध करना तनिक भी अनहोनी बात नही थी, फिर भी समाधि देखकर मुझे उनके ग़दर मे मारे जाने पर शक अवश्य था। लेकिन मेरे बारावकी के मित्रो का छानबीन के लिये सदाग्रह करना भी स्वाभाविक ही था, उनके क्षेत्र का एक हीरो कम हुआ जा रहा था। शेमियर गज के डाक्टर साहब ने भी बावा

के गदर मे भाग लेने की कथा को गलत बतलाया ।

अक्सर प्रसिद्ध पुरुषो के साथ मे ग़लत कथायें भी जुड जाती हैं और चूंकि सडक के निमित्त गोरो द्वारा बाबा की समाधि खुदवाने की बात उठी थी इसलिये गदर के मौसम मे किसी ने बाबा को, जहाँ सूई न समाय वहाँ फावडा चला कर, गदर का हीरो बना दिया । चलो अच्छा ही हुआ, एक गलतफहमी साफ हुई ।

दरियाबाद पहुँचे । खडहरो का कस्बा है । निगम जी हमे पहले क़िला दिखाने ले गये । पहुँचने पर सामने ऊँचे टीले पर एक बिल्डिग बनी है । यह दरियाबाद का स्कूल है । भारत सेवक समाज का शिविर चल रहा था । बाहर कपडे पर उसका सकेत पट टँगा था । ऊपर चढ़ते ही फर्श पर एक बडे इँदारे के निशान दिखलाये गये थे । स्कूल की बिल्डिग एक ओर बनी थी बीच मे बहुत बडा मैदान था और उसके दूसरे सिरे पर भी कुछ कमरे बने हुये थे । मैदान किले के अन्दर ही था । राम जाने पुराने ज़माने मे यहाँ क्या बना होगा, क्या न बना होगा । दक्षिण-पश्चिम की ओर किले की चहार दीवारी के कुछ भाग अवश्य बचे हैं। वहाँ पहुचने से पहले एक टूटी तोप के तीन हिस्से पडे हुये देखे । क्रिकेट के गेंद जैसे गोले छोडने वाली छोटी तोप रही होगी ।

हम लोग दीवार पर चढे । यह किले के पश्चिमी भाग की दीवार थी । नीचे नाला था जो कभी किले की खाई का काम करता होगा । उसके बाद दूर तक ऊँचा नीचा मैदान दिखलाई पड रहा था । कहा जाता है कि सौ बरस पसले यहाँ पर एक मुहल्ला आबाद था जो पूर्व पश्चिम के कोने पर कटरा रौशनलाल से लेकर किले के दक्षिण तक फैला हुआ था । पूर्व पश्चिम का कोना इस समय घने पेडों से आबाद है जिसमे महुआ के पेड अधिक हैं ।

श्री निगम ने बतलाया कि अग्रेजो ने किले पर आक्रमण करने के लिये पहले इस मुहल्ले को ध्वस्त किया क्योंकि घरो की आड होने से किले पर तोपें नही चल पाती थी । निगम जी ने अपनी डायरी खोल कर इतिहास बतलाना आरभ किया । किले के छ बुर्ज़ थे छहो पर तोपें रहती थी । ग़दर के ज़माने मे हरप्रसाद चकलेदार यहाँ रहते थे जिन्होने रणक्षेत्र मे वीर गति पाई । पूर्व दिशा मे मुख्य फाटक था और उससे लगा हुआ ही दूसरा स्थान आज तक तोपखाने के नाम से प्रसिद्ध है । कहते हैं यह किला बारहवी सदी मे मुहम्मद गोरी के समय बना था और अकबर के काल मे मिर्जा अब्दुर्रहमान यहाँ के हाकिम थे ।

हम लोग तोपखाना भी देखने गये । तोपखाने वाले भाग मे इस समय पन्द्रह

बीस कच्चे घरो की आवादी है। वहाँ के एक निवासी श्री मोहनलाल नामक पैंसठ-अडसठ वर्ष के वृद्ध हमारे पथ प्रदर्शक बन गये, हमे इतिहास वताने लगे "कौनो जमाना मा भैया युहु सब वडा आलीसान वना होई। अब तौ यह वात है कि वहुत वारीक नजर ते एक-एक चीज देखैं तौ समझ मा आवति है कि कइस आलीसान रहा होई। हम वहुतु गौरु किया है भइया। देखौ तुमका एक जगह देखाई कइस मुनौअरी काम वना है।"

मोहनलाल जी हमे सामने वाले घर के दरवाज़े पर ले गये। पास ही किसी पुराने चवूतरे की एक पट्टी-सी बची दिखलाई दे रही थी। उस पर चूने का पलस्तर था और उम्दा नक्काशी की वेल बनी थी। उसके पास वैठते हुये वेल पर उँगलियाँ दौडा कर मोहनलाल वोले "मुनौअरी काम है। अव को वनवाई!" मोहनलाल जी उदास हो गये। निगम जी ने उनसे पूछा

"हियाँ तोप के गोला कहाँ ते निकलत हैं?"

"आओ, तुमका बताई।" कह कर मोहनलाल जी फिर अपने घुटनो पर हाथ टेक कर उठे। एक घर की दीवार के पास आकर वैठ गये "हियाँ ते निकरत हैं गिर्राँवी गोला।" यह कह कर उन्होने पास ही खडे एक युवक से फावडा लाने को कहा। दीवाल के पास ही कोने से एक खूँटा गडा था उसे उखडवाया फिर कोना खुदवाने लगे। उनका अन्दाज़ था कि ऊपरी सतह पर ही गोले गडे हैं, परन्तु आस पास गड्ढा खोदने पर एक भी गोला दिखलाई न पडा। वोले "ई लौंडे ससुर कउनौं चीज नाई राखत।" यह कह कर उन्होंने और खोदने का आदेश दिया और साथ ही साथ यह भी कहने लगे कि अधिक गड्ढा खोदने से सभव है दीवार का यह कोना वैठ जाय। मैंने उन्हे मना किया। गिर्राँवी गोले कोई ऐसी अजीव चीज़ नही थी जिन्हे देखने के लिये मैं किसी की दीवार खुदवाता। मेरे मना करने पर भी उन्होने फावडे के एक दो हाथ चलवा ही दिये। जव न मिले तो उन्हे तैश आया, युवक के हाथ से कँपित हाथो फावडा छीन कर खुद उठे। मैंने उनका हाथ पकड लिया, कहा रहने दीजिये। वे वोले "नाही हम आप का देखउवै करव नाही तौ कइहौ मोहनलाल झूठ व्वालत रहै।" मैंने कहा मुझे आपकी वात का विश्वास है। यहां ज़रूर गोले दवे होगे।

"अरे, गाडी खांड गोला दवे हैं, एकु दुइ थोरे हैं।" इसके वाद वे हमे एक ओर जगह दिखलाने ले चले। वडी सडक की ओर किले अर्थात् आज के स्कूल के फाटक के पास आकर उन्होने एक कब्र दिखलाई और वोले: "हमरे वाप वतावत रहैं,

और सब वुजुरुग लोग बतावत रहैं कि यू कबर नकली आय। ईमा गदर वालेन के हथियार धरे आंय।"

मोहनलाल जी अपने आस-पास के खडहरो के प्रति पुरातात्विक दृष्टि रखते हैं। उन्हें अपने आस-पास की एक-एक चीज़ के प्रति जानकारी रखने का उत्साह है। वे हमारे साथ ही चलने लगे।

अध्यापक तुलसीराम भी हमारे साथ हो लिये। मुहल्ला मुहर्रिरान की छत्ता मजिल का इतिहास सुना। वहाँ सारे ज़िले का सदर दफ्तर था। जिस समय अग्रेज आये उस समय शेख नज़फ अली मुहर्रिर शाही थे। अँग्रेज़ो ने उनसे दफ्तर सौंप देने के लिये कहा। शेख जी बोले कि "हुज़ूर कागजात सहेजने मे कुछ वक्त तो ज़रूर लगेगा। आप मुझे एक दिन की मोहलत दें, परसो मैं सब कुछ आपके हवाले कर दूगा।" अँग्रेज़ राज़ी हो गये। उनके जाते ही वे कमियार के राजा शेर वहादुर सिह से सारा हाल कहने गये। राजा साहब ने कहा कि कागज़ात हरगिज मत देना। राजा साहब ने रातोरात डोलिया भेजी। नजफ अली के वीबी बच्चे और महत्वपूर्ण काग़ज़-पत्र कमियार भेज दिये। फिर भी वहुत से कागजात वाकी वचे। इन्हे इकट्ठा कर कपडा ओर मोम का पलस्तर चढा कर जमीन मे गाड दिया गया। शेख साहव भी नौ दो ग्यारह हो गये। तीसरे दिन अँग्रेजो को जब 'कुछ' और 'कोई' न मिला तो क्रोध मे आकर तोप से छत्तामजिल को ध्वस्त कर दिया।

छत्ता महल खेत हो रहा है। कटरा मोहर्रिरान एक उजाड़ बस्ती है। दस वरस पहले तक ऐसे उजाड स्थानो को देख कर मेरे सामने भावना के उद्वेग मे अक्सर भूत आ जाया करते थे। अब यह सब नही होता। वस्तिया उजडती रहती है और बनती भी रहती हैं। हमारे पुरखो की विभिन्न पीढियो ने उन विनाशो की वडी पीडा सहकर नई आवादिया वसाई थी। वे निश्चय ही अपने कष्ट के कारण अपने शत्रुओ से घृणा कर सकते थे। उनका शत्रु अग्रेज हो मुग़ल, पठान, हूण अथवा कुपण हो—कोई भी हो–हमारा शत्रु वर्वरता है। सभ्यता उस वातावरण का सहार करती है जो समाज मे वर्वरता और अनाचार उत्पन्न करते हैं। मैं इन खण्डहरो से, उनकी कहानियो से अव यही सवक लेता हूँ। कटरा मोहर्रिरान मे ही कपूरथला नरेश का भाई मारा गया था, मोहनलाल ने उसका नाम गुलावसिंह वतलाया। सत्तावनी क्रान्ति मे अग्रेज़ो और सिक्खो का गठवधन आज के वौद्धिक वातावरण मे कुछ अजीव और उलझने वाली वात लगती है। यह ात भी ध्यान मे

आती है कि जितने छोटे राजे-रजवाडे सामन्त हमारे यहा थे उनमे से अधिकाश अग्रेजो का साथ दे रहे थे। जाहिर है कि उन्हें अपनी विरादरी के अन्य भूपतियो से भय था। और यह भय ही फूट का कारण बना

सामने ही जौनपुरी मेहराव का वडा फाटक दिखलाई दिया। कहा तो यह जाता है कि यह अल्मास अली खा के दीवान लाला रौशन लाल ने वनवाया है। मगर मेरा खयाल है कि यह फाटक मुहम्मद इब्राहीम शर्की के सूवेदार, इस कस्वे को आवाद कराने वाले दरिया खा की निशानी है।

जो हो, कटरा-रोशनलाल मे पुरानी याद दिलाने वाली रोशनलाल की सराय और एक मस्जिद है। लाला रौशनलाल कायस्थ थे। वे चलतेपुर्ज़े आदमी थे, मालिक की आँखो मे धूल झोक कर अपनी रियासत खडी कर रहे थे। दिलजलो ने जाकर अल्मास खा से शिकायत की। वे एक दिन अचानक दरियावाद आये। लाला रौशनलाल के गोयन्दे भी शिकायत करने वालो से कम चतुर न थे। रौशन-लाल को यथा समय सूचना मिली और उन्होने सराय के पास ही एक मस्जिद वन-वाना भी शुरू कर दिया।

अल्मास खा की सवारी आई, पूछा कि रौशनलाल क्या वनवा रहे हो? दीवान रौशनलाल वोले "हुज़ूर को इस राह से आने जाने पर नमाज़ अदा करने मे तकलीफ न हो इसलिये मस्जिद वनवा रहा हूँ।"

खेतो मे खडे किये जाने वाले 'धोख' की तरह मस्जिद वनवा कर दीवान रौशनलाल मालिक का माल हडप कर गये।

मस्जिद मे एक पत्थर लगा है जिस पर अरवी मे कुछ अकित है। वहरहाल मस्जिद १२०३ हिज़री मे यानी गदर से उनहत्तर वर्ष पहले वनी थी, यह उस पत्थर से मालूम हो जाता है। लोगो ने वतलाया कि इस जगह का पुराना नाम अल्मास गज था। वाद मे यह जगह कटरा रौशनलाल के नाम से प्रसिद्ध हुई।

वातो-वातो मे, प्राचीन इतिहास के वातावरण मे ऐतिहासिक किंवदन्तियो के जुलूस निकल पडे। निगम जी एक वात छेडते तो मोहनलाल जी या अध्यापक तुलसीराम जी उनमे चार वात और जोडते। हममे से हर एक को—सुनने और सुनाने वालो को रस मिल रहा था। निगम जी वोले कि कटरा रौशनलाल मे आज से सौ सवा सौ साल पहले शाम के वक्त कधे से कधा छिलता था। इस जगह की हमारे यहाँ वही रौनक थी जो लखनऊ मे चौक की थी। उस वक्त दरियावाद की आवादी पच्चीस हज़ार के लगभग थी।

मैंने फरमाइश की कि ऐसे गीत विरहे या कवित्त वग़ैरह जिनका सबध ग़दर से हो, मुझे यदि कोई सुना सके तो उपकार मानूंगा।

श्री मोहनलाल बोले "अरे, आल्हा बिरहा की का कउनो कमती आय। मुदा जो दुइ चार दिन पहिले से मालुम होइ जात तौ लोगन का बुलाय लेइति। औ ऐसे एकाध कबित्त तौ हमहू का आदि होई—"

यह कह कर श्री मोहनलाल जोश मे हाथ बढा कर सुनाने लगे—

हता जनाना शाहगज का, लौंडा हटा भिठौली क्यार।
अडिगा राजा चहलारी का, बकी विखम बजी तलवार॥

अब इसकी व्याख्या आरभ हुई। मोहनलाल जी समझाने लगे कि कि 'हता' माने मारा गया और हटा माने भाग गया, 'समुझ्यो ?' उन्होंने इस तरह पूछा मानो मास्टर लडके से पूछ रहा हो। मैंने कहा, यह तो समझ गया मगर शाहगज वाला कौन था ? उसका कोई समुचित उत्तर मुझे न मिल सका। अयोध्या के राजा मानसिह शाहगज के अधिपति भी थे लेकिन वो मरे नही अंग्रेजो से मिल गये थे। मोहनलाल जी बोले "अरे अगरेजन ते मिलिगे तौन मरे हे समान हैं।"

इस पर जोरदार ठहाका पडा। मोहनलाल जी मेरी ओर यों देखने लगे मानो उन्हें यह हँसी अपनी शान के खिलाफ लगी। बोले "हम का कुछु झूठु कहा ? अरे, जब शाहगंज वाला को रहै, और कइसे हता, ई बताय नही पाये औ आप कह्यो कि मानसिह रहे, तौ हम कहि दिया कि जो छत्री होइ कै दुसमनन ते मिलिगे उइ मरे समान आयँ।" मैंने उन्हे आश्वासन दिया कि आप की बात पर ही फिलहाल मैंने अपना विश्वास स्थापित किया है। जब कभी असली शाहगज वाला मिल जायगा तब चाहे यह धारणा बदल दूँ।

अध्यापक तुलसीराम जी बोले "अच्छा 'हता' शब्द का अर्थ तौ तुम ऐसे समुझाय दियो अब 'हटा' बताओ। कहाँ ते हटिगा भिठौली क्यार राजा ?"

"अमा अपनी बात ते हटिगा और कहाँ ते हटा।" फिर अपनी बात मुझे समझाते हुए मोहनलाल जी बोले . "बात यह भै कि बेगम जौन रहैं तौन भिठौली मा रहैं। भिठौली वाला कहिसि कि अब आप केरि रच्छा मैं नाइ कै सकति हौं। हमार मान का नाही रहा। तब बेगम बिचरउनी भाग गईं। ई तरह ते भिठौली वाला वचन ते हटा कि नाइ हटा ? मर्दं थ्वारय हटत हैं अपनी बात ते, लौंडे हटति हैं।"

ज़ब ऐसे शास्त्रार्थ गर्मा जाते हैं तब सुनने वाले को मजा भी आता है और नई

नई वात भी सामने आती है। जो वात शायद यो याद करने पर अनायास न आयें वे भी वहस की गर्मी मे खट से उतर आती हैं। अध्यापक जी भी सुनाने लगे कि—

आई वदरी होइगा घाम।
आज पडा हडहा से काम॥

इसकी कथा सुनाते हुए अध्यापक जी ने वतलाया कि कटरे वाले लगान नहीं देते थे तो ठाकुर वद्रीसिंह चकलेदार ने उन पर चढाई की। कटरे वालो ने हडहा से सहायता मांगी और पाई। हडहा वाले सूर्यवशी थे। इससे कवि ने घाम का उल्लेख किया है और वद्री सिंह को वदरी याने वादल वना दिया है।

मोहनलाल जी वोले "अरे, ई गदर के कवित्त सुनि हैं। इनका कुछ अट्ट-सट्ट न सुनाओ। चहलारी वाले राजा का कवितु सुनाओ।" मोहनलाल जी की टोक-टाक मजा दे जाती थी, इससे लोगो की स्मृतियो से नई-नई वातें निकालने का एक वहाना भी वन जाता था। अध्यापक महोदय ने निम्नलिखित कवित्त सुनाया—

चहलारी को नरेश निजदल मो सलाह कीन,
तोप को पसारा जो समीपै दागि दीना है।
तेगन से मारि मारि तोपन को छीन लेत,
गोरन को काटि काटि गीधन को दीना है।
लदन अग्रेज तहाँ कपनी की फौज वीच,
मारे तरवारिन के कीच करि दीना है।
वेटा श्रीपाल को अलैदा वलभद्र सिंह,
साका रैकवारी वीच वांका वांधि दीना है॥"

सुन कर वडा प्रसन्न हुआ। वलभद्र सिंह के प्रति मेरा श्रद्धा भाव वढ रहा था। मैं वहुत उत्सुक था कि सत्तावनी क्राति के इस अमर नायक के सवध मे अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करू, किन्तु तुलसीराम जी को और कुछ विशेष रूप से मालूम न था।

"हमै यादि तौ वहुत से कवित्त रहैं पर ई समय कोई उठि नाही रहा है। पहिले वहुत याद रहे। टिकरा वावुआन मा ठाकुर रामलाल सिंह के पास वहुत से कवित्त हैं।"

"सत्तावनी क्रान्ति के सम्वन्ध मे ?" मैंने पूछा।

"का कह्यो आप ?" तुलसीराम जी ने पूछा।

मैं समझ गया, पूछा "गदर के सवध मे।"

"हाँ हाँ, गदरै के सवध मे। वहुत से हैं।"

"तो फिर ले चलिये ।"

"वह यहाँ नही हैं ।"

सुन कर निराशा हुई । खैर । मैंने फिर पूछा कि अच्छा आप लोगो के नाते-रिश्तेदारो मे या परिचितो मे बहुत से ऐसे अवश्य होगे जिनके पुरखो ने ग़दर में अंग्रेज़ो से युद्ध किया होगा । या तो वे किसी राजा की सेना मे रहे हो या अपने गाँव पर अंग्रेज़ो द्वारा चढाई के वक्त जूझे हो ।"

"हाँ, हाँ, हमारा ही वश था ।" हमारे दल मे एक नये व्यक्ति भी राह चलते शामिल हो गये थे, वे बोले ।

स्वाभाविक रूप से मेरी कागज कलम उनका नाम-ग्राम पूछने लगी । भिलौना निवासी श्री हरिदत्त पाण्डेय ने खट से नाम गिना डाले । तारापुर के बेनी पाठक लडे, ठाकुर औतार सिह लडे, हँसौर के रामसेवक पाँडे लडे । शाही ज़माने में झाऊलाल पाठक बडे सुन्दर थे । चकलेदार ने उन्हे देखकर एक बार कोई भद्दी सी बात मज़ाक़ मे कह दी । पाठक को बात बहुत अखरी परन्तु पी कर चले आये । घर आकर अपने पिता से कहा कि आप से आज्ञा लेने आया हूँ । बडे पाठक जी ने बेटे की बात सुनकर कहा तुमसे इतना सबर कैसे हुआ कि यहाँ तक मेरी आज्ञा माँगने आये । झाऊलाल पाठक यह सुनते ही स्वय भी घर से ऐसे निकले जैसे बहादुर की म्यान से तलवार निकलती है ।

मैं सोचने लगा पिछला समय भी कितना अजीब और भद्दा सा था । आम तौर पर लोग बीते हुये युगो की बात करते ही वैभव से आत्म विभोर हो उठते हैं । बचपन से सुनता चला आ रहा हूँ, पुरखे बडे-बूढे बात करते थे कि हमारा ज़माना ऐसा था और वैसा था और आज का समय कुछ नही, आज घोर कलजुग है । मैं समझता हूँ कि सभी युगो और सभी पीढियो के पुरखे यह वाक्य कहते-दोहराते चले आये हैं । बात मे व्यक्तिगत भावना का लगाव तो अवश्य है परन्तु बारह आने उर्फ ७५ नये पैसे भर यह वक्तव्य बडा भ्रामक और असत्य है । चालीस पार कर चुकने के बाद ढाल पर आकर इधर दो तीन वर्षों से अब मेरे मन मे भी कभी-कभी बडी तेज़ी से यह विचार आता है कि पुराना ज़माना बडा अच्छा था । अक-सर पुरानी स्मृतिया सिनेमा के चित्र की तरह सामने आ जाती हैं । बहुत से चेहरे, पुरानी शानदार महफिलें, वो नवाबी ज़माने के अदब कायदे, आदाबो-अल्काब जो हमने बडी मेहनत से सीखे थे, वो मान्यतायें जो उस समय बहुत बडी मानी जाती थी, जो हमारे घर मे बडे बूढो के साथ थी उन्हें हमने भी स्वीकार कर लिया ।

उदाहरण के लिये सम्पन्न घरो मे पुरुषो का, आम तौर पर गृहपति का, थाली मे जूठन छोडकर उठना एक आम रिवाज सा था। दावतो मे लोग इस कदर तकल्लुफ से खाते थे कि जूठन पत्तल मे कम से कम तीन चौथाई या आधी वचती थी। अमीरो की जूठन से गरीव पला करते थे। आज की सभ्यता मे यह जूठन गिराना ऐसा घनघोर पाप और असभ्य नियम माना जाता है कि जिसका हद-हिसाव नही। जो लोग रीति रिवाजो को, अपने वचपन और जवानी के चलन को विना सोचे विचारे ही जस का तस अपना लेते है उन्हे हृदय से नये नियम स्वीकार करना वडा कठिन मालूम पडता है। अकालो की खवरो और मँहगाई की फाँसी से मजवूर होकर उन्होने अपनी आदतें वदली तो है मगर नई आदतो के प्रति उनका ममत्व नही है। वे समाज के उस सहज भाव को ही सत्य स्वीकार कर चुके थे। इसलिये अपने वचपन और गुजरी जवानी के दिनो को वे ज़ोर-ज़ोर से गोहराते है।

यो तो हर दो पीढ़ियो मे विरोधी तत्व होते ही है। हम वर्तमान युग का एक चलता हुआ उदाहरण लें, आजकल नवयुवको मे वुलगानिन फैशन की दाढी रखने का चलन क्रमश ज़ोर पकड रहा है। उनके मुँछमुण्ड अभिभावको को यह खलता है। वे हैरत और परेशानी से कहते हैं कि आजकल के लडको को न जाने क्या हो गया है, हमारे वचपन मे ऐसा नही था। मेरे सामने दो पीढी पहले का एक चित्र आ जाता है। जव इस देश मे मुँछमुण्डा कर्ज़न फैशन आया था तव क्या भारतीय घरो मे कम गदर मचा था ? जिन घरो के लोग पहले पहल विलायत गये थे उन्होने अपने समय और समाज को क्या कम टक्करें दी थी ? मुँछमुण्ड और विलायती हवा वाले नवयुवको के वडे वूढो ने क्या तव यह नही कहा था कि 'आज के लडको को न जाने क्या हो गया है ?'

सन् १८५७ की क्रान्ति निश्चित रूप से ऊपर वखानी गई मुँछमुण्डन क्रान्ति से कई हजार-गुना अधिक वज़नी कारणो से हुई, यह निर्विवाद है। सन् ५७-५८ मे जन साधारण के जो असख्य लोग अग्रेजो के खिलाफ लडे वे दरअस्ल अपनी अनेक प्रकार की गहरी घुटनो के खिलाफ भी लड रहे थे। भारतीय प्रजा मरता क्या न करता वाली स्थिति मे जानी अनजानी सैकडो विवशताओ के प्रति जूझी थी— अँग्रेज़ो मे युद्व तो एक ज़वरदस्त वहाने के रूप मे ही हुआ था।

यदि हम यह न मानें तो हमारे सामने एक वडी भारी समस्या यह आती है कि ग़दर के वाद ही तुरन्त भारतीय जन भावना का नक्शा एकाएक कैसे वदल गया ? जिस अवध के विद्रोही रूप को सन् सत्तावन् के अँग्रेज़ लेखको ने जन-स्वातत्र्य का

"तो फिर ले चलिये ।"

"वह यहाँ नही हैं ।"

सुन कर निराशा हुई । खैर । मैंने फिर पूछा कि अच्छा आप लोगो के नाते-रिश्तेदारो मे या परिचितो मे बहुत से ऐसे अवश्य होंगे जिनके पुरखो ने ग़दर मे अंग्रेजो से युद्ध किया होगा । या तो वे किसी राजा की सेना मे रहे हो या अपने गाँव पर अंग्रेज़ो द्वारा चढाई के वक्त जूझे हो ।"

"हाँ, हाँ, हमारा ही वश था ।" हमारे दल मे एक नये व्यक्ति भी राह चलते शामिल हो गये थे, वे बोले ।

स्वाभाविक रूप से मेरी कागज कलम उनका नाम-ग्राम पूछने लगी । भिलौना निवासी श्री हरिदत्त पाण्डेय ने खट से नाम गिना डाले । तारापुर के बेनी पाठक लडे, ठाकुर औतार सिह लडे, हँसौर के रामसेवक पाँडे लडे । शाही ज़माने मे झाऊलाल पाठक वडे सुन्दर थे । चकलेदार ने उन्हें देखकर एक बार कोई भद्दी सी बात मज़ाक़ मे कह दी । पाठक को बात बहुत अखरी परन्तु पी कर चले आये । घर आकर अपने पिता से कहा कि आप से आज्ञा लेने आया हूँ । बडे पाठक जी ने बेटे की बात सुनकर कहा तुमसे इतना सबर कैसे हुआ कि यहाँ तक मेरी आज्ञा माँगने आये । झाऊलाल पाठक यह सुनते ही स्वय भी घर से ऐसे निकले जैसे बहादुर की म्यान से तलवार निकलती है ।

मैं सोचने लगा पिछला समय भी कितना अजीब और भद्दा सा था । आम तौर पर लोग बीते हुये युगो की बात करते ही वैभव से आत्म विभोर हो उठते हैं । बचपन से सुनता चला आ रहा हूँ, पुरखे बडे-बूढे बात करते थे कि हमारा ज़माना ऐसा था और वैसा था और आज का समय कुछ नही, आज घोर कलजुग है । मैं समझता हूँ कि सभी युगो और सभी पीढियो के पुरखे यह वाक्य कहते-दोहराते चले आये हैं । बात मे व्यक्तिगत भावना का लगाव तो अवश्य है परन्तु बारह आने उर्फ ७५ नये पैसे भर यह वक्तव्य बडा भ्रामक और असत्य है । चालीस पार कर चुकने के बाद ढाल पर आकर इधर दो तीन वर्षों से अब मेरे मन मे भी कभी-कभी बडी तेजी से यह विचार आता है कि पुराना ज़माना बडा अच्छा था । अक-सर पुरानी स्मृतिया सिनेमा के चित्र की तरह सामने आ जाती हैं । बहुत से चेहरे, पुरानी शानदार महफिलें, वो नवाबी जमाने के अदब कायदे, आदाबो-अल्काब जो हमने बडी मेहनत से सीखे थे, वो मान्यतायें जो उस समय बहुत बडी मानी जाती थीं, जो हमारे घर मे बडे बूढो के साथ थी उन्हे हमने भी स्वीकार कर लिया ।

उदाहरण के लिये सम्पन्न घरों मे पुरुषो का, आम तौर पर गृहपति का, थाली मे जूठन छोड़कर उठना एक आम रिवाज सा था। दावतो मे लोग इस कदर तकल्लुफ से खाते थे कि जूठन पत्तल मे कम से कम तीन चौथाई या आधी बचती थी। अमीरो की जूठन से गरीब पला करते थे। आज की सभ्यता मे यह जूठन गिराना ऐसा घनघोर पाप और असभ्य नियम माना जाता है कि जिसका हद-हिसाब नही। जो लोग रीति रिवाजो को, अपने बचपन और जवानी के चलन को बिना सोचे विचारे ही जस का तस अपना लेते हैं उन्हे हृदय से नये नियम स्वीकार करना बडा कठिन मालूम पडता है। अकालो की खबरो और मँहगाई की फाँसी से मजबूर होकर उन्होंने अपनी आदतें बदली तो है मगर नई आदतो के प्रति उनका ममत्व नही है। वे समाज के उस सहज भाव को ही सत्य स्वीकार कर चुके थे। इसलिये अपने बचपन और गुजरी जवानी के दिनो को वे ज़ोर-ज़ोर से गोहराते हैं।

यो तो हर दो पीढियो मे विरोधी तत्व होते ही हैं। हम वर्तमान युग का एक चलता हुआ उदाहरण लें, आजकल नवयुवको मे बुलगानिन फैशन की दाढी रखने का चलन क्रमश ज़ोर पकड रहा है। उनके मुंछमुण्ड अभिभावकों को यह खलता है। वे हैरत और परेशानी से कहते हैं कि आजकल के लडको को न जाने क्या हो गया है, हमारे बचपन मे ऐसा नही था। मेरे सामने दो पीढी पहले का एक चित्र आ जाता है। जब इस देश मे मुंछमुण्डा कर्ज़न फैशन आया था तब क्या भारतीय घरो मे कम गदर मचा था ? जिन घरो के लोग पहले पहल विलायत गये थे उन्होने अपने समय और समाज को क्या कम टक्करें दी थी ? मुंछमुण्ड और विलायती हवा वाले नवयुवको के बडे बूढ़ो ने क्या तब यह नही कहा था कि 'आज के लडको को न जाने क्या हो गया है ?'

सन् १८५७ की क्रान्ति निश्चित रूप से ऊपर बखानी गई मुंछमुण्डन क्रान्ति से कई हजार-गुना अधिक वज़नी कारणो से हुई, यह निर्विवाद है। सन् ५७-५८ मे जन साधारण के जो असख्य लोग अंग्रेज़ो के खिलाफ लडे वे दरअस्ल अपनी अनेक प्रकार की गहरी घुटनो के खिलाफ भी लड रहे थे। भारतीय प्रजा मरता क्या न करता वाली स्थिति मे जानी अनजानी सैकडो विवशताओ के प्रति जूझी थी—अँग्रेजो से युद्ध तो एक जबरदस्त बहाने के रूप मे ही हुआ था।

यदि हम यह न मानें तो हमारे सामने एक बडी भारी समस्या यह आती है कि ग़दर के बाद ही तुरन्त भारतीय जन भावना का नक्शा एकाएक कैसे बदल गया ? जिस अवध के विद्रोही रूप को सन् सत्तावन् के अँग्रेज लेखको ने जन-स्वातन्त्र्य का

प्रबल भाव रूप माना है, वही अवध गदर के सात-आठ वर्षों के अन्दर ही बडी तेजी से अग्रेजी पढने वाला बन गया। सन् १८६४—६५ मे अवध के १४०० सरकारी स्कूलो मे पाँच हजार विद्यार्थी अंग्रेजी पढ रहे थे। यह क्या केवल राजनीतिक गुलामी के कारण ही सभव हुआ था ? मैं तो समझता हूँ कि नई शिक्षा को अपनाने की इस तेजी मे सदियो की सामाजिक घुटन से उबरने की इच्छा भी थी। हमारे लगभग एक सदी पहले के पुरखो को अपना जमाना पसन्द नही आ रहा होगा तभी तो वे उसे बदलने के लिये अग्रसर हुए।

सन् सत्तावन के बाद सारा देश एक दम से नया हो उठा और फिर दिनो दिन उसी दिशा मे उसका विकास भी होता गया। अंग्रेजी भाषा के सहारे उसने अपनी स्वतन्त्रता खोने से अधिक पाई। उसने अपने देश के दार्शनिक सास्कृतिक और साहित्यिक वैभव को नये सिरे से पाया। वह अपने समाज की अनेक प्रकार की गदगियो से जूझ कर उन्हें हटाने मे समर्थ हुआ। सत्तावनी क्रान्ति मे दरअस्ल हमारी तरह-तरह की कमजोरिया ही हारी। गदर के बाद के भारतीय नवयुवक उन कमजोरियो का नाश करने के लिये तरह-तरह से कटिबद्ध होने लगे थे। मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि वह पिछला जमाना, जिसकी प्रशसा हमारे पुरखे हमसे और हम अपने नौजवान बच्चो से करते हैं, कई दृष्टियो से निहायत गदा और घुटन भरा था।

विगत वैभव के गुण ग्रहण करना ही यदि विगत वैभव की पूजा करना है तब तो मैं उसे निश्चित रूप से सराहनीय समझता हूँ। अन्यथा पिछले ज़माने पर कोरी 'आहें' भरना मुझे बडा ही मूर्खता पूर्ण और नामर्दी का काम लगता है। वे सचमुच कायर होते हैं जो समय के वार नही सह पाते हैं। हममे शक्ति थोडी हो या अधिक, यह बहस की बात नही, सवाल तो यह है कि हम उसे निकालते और आज़माते कितना हैं। हम भले ही वनस्पति घी के युग मे रहते हो, जीवन सघर्ष अपनी चरम चोटी पर हो, मगर यह क्यो बिसरायें कि जैसे भी हो, जितने दिन महीने, या वर्ष हो, हमे जीना है। तब जीवन को ढग समेत उठाने का प्रयत्न करना ही चाहिये। जहाँ परिस्थितिया एकदम मजबूर भी कर दें वहाँ भी यह क्यो भूलें कि आज नहीं तो कल अवश्य ही इस परिस्थिति को बदलना है। हम आनेवाले कल से आँख न मीच लें और यथा शक्ति अपने आज को पहचानें, जूझें और अपनायें। यह ऊँचे दर्शन या उपदेश की बात नही, वैसी ही मजबूरी है जैसी कि सन् ७-८ लेकर पहली लडाई के बाद के जमाने तक देखने मे आई, यानी जब विलायत से लौटे

हुए वहुतो को पुराने समाज ने स्वीकार किया था। पुरानी मान्यताओ की दृष्टि से यह वैसी ही मजवूरी और नया यथार्थ सत्य है जैसा कि आज अनेकानेक दहेज़ न दे सकने वाले मिडिल क्लास घरो मे डिगरी शुदा लडकियो से नौकरी कराना।

खैर, तो हम फिर से सत्तावनी समय मे आ जायें। मार्ग मे मैंने अपने आस-पास के सज्जनो से उस खजाना लूटे जाने का चरचा उठाया, जिसके कारण ग़दर के इतिहास मे दरियावाद सरनाम हुआ। मुझे पता लगा कि क़िले से दो मील दूर वह गोरा वाग उर्फ गोरा वैरक है जहां सिपाही विद्रोह आरभ हुआ था और वहुत से गोरे मारे गये थे। अध्यापक तुलसीराम ने गोरा वाग वाली लडाई की एक कथा सुनाई। हडहा वाले नायव ठाकुर रामसिह की अग्रेजो से गोरा वाग मे लडाई हुई थी। रामसिह हार गये। फिर अग्रेज़ो से कहा गया कि रामसिह की सेना, माझा नामक एक स्थान मे छिपी है। उनके मारने के लिये अग्रेजी सेना के घुडमवार भेजे गये। रामसिह की सेना झाऊ के वन मे छिपी थी, अग्रेजो के आते ही राम सिह की सेना ऐसे उठ के निकल पडी मानो धरती से उगी हो। इस तरह अचानक आक्रमण कर रामसिह की सेना ने अग्रेज़ो को वहुत काटा।

छापेमार लडाई के नमूने के तौर पर यह भी एक अच्छी कथा है। गदर मे छापेमार युद्ध का हमारी ओर से वडा ही प्रयोग हुआ था। मुझे तो ऐसा लगता है कि यह छापेमार लडाई हमारे देश की वडी पुरानी चीज़ है। यह वडी-वडी सगठित सेनाओ का परिचायक नही वल्कि जातीय अथवा ग्राम सगठनो द्वारा व्यवहार मे लाया जानेवाला युद्ध कौशल है। शिवा जी इसी तरकीव से लडते थे। राणा भीमसिह ने अरावली की पहाडियो मे औरगजेव को यो ही घेर कर छापा मारा था। हमारी सेनाओ मे जव जन सख्या खूव अधिक होती थी तो हम सम्मुख मैदान लेते थे, कम सख्या होने पर छापे मारी काम आती थी।

मेरे आस-पास के मित्र पुराने राजाओ की आपसी लडाइयो के भी प्रसग उठा रहे थे। वह थोथी ठकुरई की वातें मुझे वडी भोली सी लग रही थीं। लौट कर हम फिर पुराने किले और नये स्कूल मे आ गये जहाँ कि भारत सेवक समाज का शिविर चल रहा था। वहाँ हमारे लिये चाय का आयोजन किया गया था।

इस चाय की वैठक मे एक वडा लाभ यह हुआ कि गदर के किस्से सुनने-सुनाने वालो की एक नई भीड़ मुझे और मिल गई। दरियावाद के राय अभिराम वली, सिकरौरा के ज़मीदार अजव सिह और उनके साथी अल्लावख्श, ये सभी सत्तावन के वीरो मे थे। अल्लावख्श, कयामपुर के आगे वारिन वाग रोड पर अग्रेजो से लडते हुये मारे गये।

अजब सिंह इतने बहादुर थे कि अंग्रेज उनका सिर काट ले गये और लखनऊ के म्यूजियम मे रख दिया। वहाँ वह बहुत दिनो तक रक्खा रहा।

'हडहा के राजा तौ बहुत भोले भाले रहे पर उनकी रानी रतन कुँअर नायब की मदद लैके जाती रही।' रानी रतन कुंवर, बरकटहा (जिसे अब कयामपुर कहते हैं) के ठाकुर, रानीमऊ के ताल्लुकदार, और कमियार के शेर बहादुर सिंह,—यह सब राणा बेनी माधव के संघ मे थे और गदर मे लडे थे।

हडहा मे एक कहावत यह भी है कि रानी हडहा ने सिकरौरा कयामगज आदि को मिला कर रुदौली को मुसलमानो से जीतने की योजना बनाई थी। पर तब तक अंग्रेज़ जीत गये।

किसी ने इसका प्रतिवाद किया, कहा कि यह घटना गदर की नही बल्कि उस समय की है जब अमेठी के मौलवी अमीर अली ने अयोध्या मे जेहाद किया था।

लिखते-लिखते मेरी इच्छा होती थी हाथ मशीन हो जाँय। सामग्री इतनी थी कि मैं उठा नही पाता था।

हम फिर गलियो मे निकल पडे। श्री पलटनी दरियाबाद के सबसे बूढे व्यक्ति है। उनकी आयु लगभग नब्बे पचानबे वर्ष की है। पलटनी के दादा बेचन चौधरी दरियाबाद और रुदौली के तोपखाने के चौधरी थे। श्री पलटनी ने संक्षेप मे दो बातें बतलाई—"गोरा बाग माँ छावनी परी रहैं। बहुत गोरा मारेगे अउरु खजाना लुटा। फिर दुसराय के अगरेजन क दिन आवा, हिया बडी भगदड परी। दरियाबाद के लोगन क कमियार म सरन मिलत रहै। औ छै द्वारा रहे जहाँ परजा के लोगन क सरन मिलत रहै।"

"यह छै द्वारा कौन थे ?" मैंने पूछा।

"अब यू हाल हमका नाही मालूम जउन बुजुरगन ते सुना तउनै मालूम है।"

मेरे लिये इतना ही बहुत था। एक-एक कथा से जुडकर इस यात्रा के बाद मेरे सामने सन् १८५७ का जो चित्र आयेगा उसी पर अपनी दृष्टि टिकाऊगा। इस समय जो मिलता चल रहा है वही मूल्यवान है।

हम लोग दरियाबाद के ताल्लुकेदार के घर आये। वली परिवार माथुर कायस्थो का है। हमारे समय मे इस परिवार के राय राजेश्वर वली एक प्रमुख व्यक्ति हुए हैं। वे अंग्रेजी हुकूमत मे यू० पी० सरकार के मंत्री भी रहे हैं। इस घराने के श्री सुरेन्द्रनाथ वली अपनी सगीत सयोजनाओ के लिये प्रसिद्ध हैं। आकाशवाणी के दिल्ली केन्द्र से उन्होंने ऊँची कुर्सी भी पाई है और मेरे मित्र भी हैं। इस परि-

वार मे शक्ति की उपासना होती है और कृष्ण की भी। अकवर के समय मे यह परिवार यहा आकर वसा। इनके पुरखे शाही कानूनगो वनकर आये थे। अपने कृष्ण प्रेम को इनके पुरखो ने अपने राज के बहुत से ग्रामो के नाम वदलकर सिद्ध किया है। वाराबकी ज़िले मे वली परिवार की रियासत में आप को गोकुला, नद गाँव, वरसाना, वृन्दावन सभी मिल जायेंगे।

यहा भी ग़दर की वातो के सिलसिले मे 'छै द्वारा' का प्रसग छिडा। मालूम हुआ कि पसका, कमियार, शाहपुर, घनावा, आटा और परसपुर—यह रियासतें छ द्वारा कहलाती थीं, तथा वली परिवार से इनकी दाँतकाटी रोटी थी। कमियर के ठाकुर शेरवहादुर सिह वलियों के कमाण्डर इनचीफ थे।

गदर में वली परिवार के लोग यह स्थान छोडकर कमियार चले गये थे।

उक्त परिवार के वृद्ध सज्जन का नाम नोट बुक मे पेंसिल से लिखा होने के कारण दुर्भाग्य वश मिट गया है। वहरहाल उन्होने आगे की वात बढाते हुये कहा. "प्रताप वली रियासत के मैनेजर थे। खज़ाने की कुजी उन्ही के पास थी। अग्रेज़ो ने गोरा वाग़ मे उनके चारो ओर नगी तलवारो का घेरा डालकर कहा कि कुजी दो। ये वोले कि मैं तो कारिन्दा हू, मेरे पास कुजी कहा ? तव अग्रेजो ने इन्हें डराना-धमकाना शुरू किया। तो फिर, हमारे खानदान मे देवी का इष्ट तो था ही, प्रताप वली ने देवी को याद किया। इधर हमारे घर मे जव खवर आई तो प्रताप वली साहव की मा देवी के मन्दिर मे गईं। वहा जाकर देखा तो मूर्ति नदारद ! अब आप ही समझ सकते हैं कि उनके ऊपर कैसा सकट आ गया, एक तो लडके की जान पर वन आई थी और दूसरे घर से देवी हो चली गईं। वह वेचारी दुखी होकर रोने लगी। फिर कुछ ही देर मे उनके देखते ही देखते मूर्ति अपनी जगह पर वापस आ गई। प्रताप वली की मा एकदम अचम्भे मे आ गईं कि यह कैसा चमत्कार हुआ। थोडी देर मे प्रताप वली भी आ गये। मा ने उनकी वलायें लीं, आशीर्वाद दिया और वोली कि मैंने तो समझा था कि आज मैं हर तरफ से मुसीवत से फँस गई हूँ। उधर तुम्हारी यह खवर आई और इधर मन्दिर मे आकर देखा तो देवी जी नही थी।"

इस पर प्रताप वली ने कहा "देवी को तो मैंने याद किया था और वही मुझे वचाने भी गई थी।"

कुचला स्वाभिमान, देवी देवताओ के प्रति अध श्रद्धा जमाकर कैसे उठता है इसका यह एक सुन्दर प्रमाण है। अग्रेजो से राजा भले हारे पर राजाओ की इष्ट

देवियो और देवताओ ने अग्रेजो को अपनी शक्ति का परिचय दिया। धर्म के नारे को लेकर उठने वाली क्रान्ति मे ऐसी कथायें गढ जाना न तो अस्वाभाविक है न कठिन ही।

इस परिवार की देवी ने एक वार और अपना परिचय अग्रेजो को दिया। गदर के दिनो मे जब अग्रेजो के पैर फिर से जम गये तब दरियाबाद का जिला दफ्तर अग्रेजो ने इन्ही के महल मे रक्खा था। उस जमाने मे अग्रेजो ने इनके पूजाघर को अपवित्र करने के लिये उसमे अपने घोडे बाँधे। रात को सब घोडे मर गये, तब जानकारो ने अग्रेजो से कहा कि इस घर की देवी बडी सच्ची है, उनसे आप लोगो को बिगाड नही करना चाहिये। इसके बाद अग्रेजो ने पूजाघर मे घोडे बाँधने का हठ छोड दिया। वहुत सी अग्रेज स्त्रिया उन दिनो इसी घर मे रहती थी। शेमियर साहव कमिश्नर इन्ही के घर मे पैदा हुआ था। एकवार जब वह इनके महल मे आया तो उसने अपने जन्म स्थल को देखने की इच्छा प्रकट की। वह कमरा देख कर वोला "ओ दिस इज द प्लेस व्हेयर आई वाज बॉर्न ?"

वलियो के महल के वाहर उनके राज्य की जेल भी बनी थी।

रजीत सिंह नाम के एक व्यक्ति इनके सिपाहियो मे थे। वे कुछ अग्रेजी पढे थे। वे जाकर अग्रेजो से मिल गये और इन लोगो को धोखा दिया। वाद मे अग्रेजो ने इनसे पाँच गाँव छीनकर रजीत सिंह को दे दिये।

मैंने राय अभिराम बली के सबध मे पूछा। मालूम हुआ वह राय प्रताप वली के भतीजे थे।

"मैंने सुना है उन्होंने गदर मे बहुत वडा हिस्सा लिया है।" मैंने पूछा।

"नही साहब, हमारे यहाँ गदर मे किसी ने हिस्सा विस्सा नही लिया।"

"तो आपके यह पाँच गाँव क्यो जब्त हुये ?"

"यह नही जानता, लेकिन सुना है कि गदर के वाद अँग्रेजो ने सवकी जमीने जब्त कर ली और फिर नये सिरे मे ताल्लुकेदारो को सनदें वाँटी। सिर्फ वौडी रियासत को जब्त कर लिया।"

चलिये, वली परिवार की कहानी भी गदर के किस्सो की झोली मे पड गई।

राय राजेश्वर वली के पुत्र ने अपने पिता के सस्कृति प्रेम के नमूने दिखलाये। घर के हाल मे राय राजेश्वर वली ने अजता गुफाओ से प्रेरणा लेकर छतो दीवारो और खम्भो पर दरियावाद के एक चित्रकार से ही चित्र अकित कराये थे। अच्छी

चित्रकारी थी। महल का एक भाग भी उन्होने अजन्ता शिल्प का वनवाया था।

उनके घर मे गवर्नर आये, सराह गये। अवनीन्द्र नाथ ठाकुर आये, वली परिवार का सास्कृतिक वैभव देखकर प्रसन्न हुये। राय राजेश्वर वली महोदय को एक जगह ज़मीन खुदवाते हुये विष्णु की मूर्ति मिल गई थी। मैंने उसे भी देखा, नवीदसवी शताब्दी की सुन्दर कला कृति थी।

मार्ग मे लौटते समय श्री रामस्वरूप वाजपेयी से गदर सवधी वातो की चर्चा चलाता रहा। उन्होने मुझे वतलाया कि वेगम हजरत महल सीतापुर से होकर नही वरन् वारावकी से गई थी। लखनऊ से चलकर २३ मार्च १८५८ को आई। वहाँ से देवा होते हुये भयारा पहुँचो, जहाँ उन्होने कल्याणी नदी पार की। फिर १६ अप्रैल १८५८ को वदोसराय के पास हजरतपुर मे जो कि वाजपेई जी के कथनानुसार वेगम हजरत महल के नाम पर वसा है। राजाओ से मशविरा हुआ और यह तय हुआ कि हम अग्रेजो से मुकाविला नही कर सकते। यह १६ अप्रैल १८५८ की वात है। उसके वाद वे महादेवा गई। महादेवा से भिठौली पहुँची। ५ दिसवर सन् ५८ को जव भिठौली तवाह हो गई तव वो वौडी से राजा देवी वख्श की मदद लेने गोडा पहुँची। वहाँ से नानपारा और फिर नेपाल चली गई। मुझे वाजपेई जी का यह नक्शा समझ मे न आया। 'वेगमाते अवध के खुतूत' मे एक जगह लिखा है कि लखनऊ छोडने के वाद वेगम विसवा और वाडी की तरफ गई जो सीतापुर मे है। 'कैसरउत्तवारीख़' के अनुसार भी उनका जाना सीतापुर ज़िले से होकर ही वतलाया गया है।

श्री रामस्वरूप वाजपेई को इस वात पर विश्वास नही होता था। वह कहने लगे "यहाँ महादेवा वगैरह मे वेगम के आने की वात वडी प्रसिद्ध है। अभी कल ही मेरी एक साहव से वात हो रही थी। वे इसी वारावकी जिले के रहनेवाले हैं। दीनदयाल दीक्षित उनका नाम है। यो रहते लखनऊ मे हैं। सेक्रेट्रियट मे पोलिटिकल पेंशन के मोहकमे मे काम करते हैं। उनके पुरखो का ग़दर मे वडा भाग रहा है। उन्होने भी मुझसे यही कहा था।"

मैंने वाजपेई जी की वात काटी तो नही परन्तु वडे चक्कर मे पड गया।

लखनऊ आने पर मैंने श्री दीनदयाल दीक्षित से उनके गदर मे भाग लेने वाले पुरखो का इतिहास मांगा। दीक्षित जी ने मुझे अपनी जानकारी लिखकर दे दी। वह इस प्रकार है—

"जिला वरावंकी मे कस्वा वदोसराय के उत्तर मे और घाघरा नदी के दक्षिण

मे लगभग दो मील की दूरी पर हजरतपुर नाम का एक ग्राम है। इस ग्राम के चारो ओर पक्की ईंटो की दीवार बनी है और चारो कोनो पर बुर्ज हैं। नवाबी शासन काल मे यह एक किला था जो अब ध्वस्त पडा है।

"सन् १८५७ की क्रान्ति मे लखनऊ पतन के पश्चात् बेगम हज़रत महल युवराज बिरजीस क़दर, नाना धोडूपत, राणा वेणी माधवसिंह, बौंडी के राजा हरदत्त सिंह तथा गोंडा नरेश राजा देवी बख्श सिंह गुप्त रूप से यही एकत्र हुये थे। नवाब गज, बहराम घाट आदि स्थानो पर देश भक्त वीरो ने मोर्चे लगा दिये थे ताकि पीछा करने वाली अंग्रेज़ी सेना को मार्ग मे ही रोका जा सके। देशभक्त वीरो तथा विद्रोही सैनिको को अंग्रेजो का मार्ग अवरुद्ध करने का भार सौंपा गया था, कुछ विश्वस्त चुने हुये वीरो को इन नेताओ ने अपने साथ रक्खा था। वे लोग अपने नेताओ की रक्षा के हित अपने प्राण देने को तैयार थे।

इन्ही रक्षको मे हज़रतपुर किले के पूर्व मे लगभग चार मील की दूरी पर स्थित ग्राम आर्यमऊ के प० भवानीशकर दीक्षित तथा उनके ज्येष्ठ पुत्र प्रयाग दत्त भी थे। ग्राम तासीपुर के शिवराम उपाध्याय तथा ग्राम खोर निवासी शकरी बख्श के पूर्वज भी इनके साथ थे।

"रात को लगभग दो बजे इन नेताओ ने अपने रक्षको के साथ चौका घाट तथा सरदहा घाट से घाघरा नदी को नौकाओ पर चढकर पार किया। प्रातःकाल वे घाघरा के उस पार राजा बौंडी की गढी मे पहुँच गये। यहाँ बेगम हज़रत महल ने अपने बहुमूल्य ज़ेवरो को रक्षको मे पुरस्कार स्वरूप वितरित किया। अंग्रेज़ी सेना बहराम घाट तथा नवाबगज क्षेत्र मे आगे बढने से रोक दी गई थी। बहराइच ज़िले से नेताओ का यह दल गोंडा ज़िले मे प्रवेश करता हुआ नेपाल की ओर बढ रहा था। अंग्रेज़ी सेना इस दल का पीछा कर रही थी। बौंडी गढ को अंग्रेज़ी सेना ने धराशायी कर दिया। गोंडा के गढ मे राजा देवी बख्श सिंह पीछा करने वाली अंग्रेज़ी सेना को रोकने के लिये डट गये। तब तक यह दल तुलसीपुर पहुँच चुका था। तुलसीपुर से यह दल देवी पाटन के आगे सरवा-मार्ग से नेपाल मे प्रवेश कर गया। तुलसीपुर की रानी ने अंग्रेज़ी सेना को रोकने के प्रयत्न मे वीर गति प्राप्त की।

"राजा देवी बख्श का साथ छूट गया था, अब केवल नाना साहब, बौंडी के राजा, बेगम हज़रत महल, बिरजीस कदर और उनके रक्षको मे प० भवानीशकर दीक्षित, उनके ज्येष्ठ पुत्र प्रयाग दत्त तथा अन्य विश्वस्त लोग साथ थे।

"नेपाल के घने जगलो मे बहुत से साथी बीमार होकर स्वर्ग सिधार गये।

वेगम हज़रत महल और नाना साहव मे मतभेद हो गया। वेगम युवराज और अपने साथियो को लेकर काठमाडू की ओर चली गई, नाना साहव और भवानीशकर दीक्षित उत्तर पश्चिम के घने जगलो की ओर वढते गये। आगे चलकर भवानी शकर दीक्षित का स्वर्गवास हो गया। वन मे उनका दाह-सस्कार उनके पुत्र प्रयाग दत्त ने किया। नाना साहव ने प्रयाग दत्त को यह परामर्श दिया कि वे नेपाल के किसी गाँव मे जाकर वस जांय और अपने पिता का क्रिया कर्म करें। उन्होने यह आदेश भी दिया कि भवानीशकर दीक्षित के पुत्रो मे जिस किसी से भी हो सके अपने पिता की गया अवश्य करे जिससे कि उनकी आत्मा को मुक्ति मिल जाय। यही पर नाना साहव ने शेप जीवन सन्यासी रूप मे विताने का निश्चय किया और प्रयाग दत्त से कहा कि यदि सभव हुआ और कष्टमय जीवन से वच गये तो भारत के तीर्थो का दर्शन करेंगे। उन्होने प्रयागदत्त को एक साकेतिक प्रश्न वतलाया था जिसके आधार पर वे अथवा उनके कोई वधु भारत के किसी तीर्थ स्थान मे नाना साहव का दर्शन कर सकते थे। नाना साहव लटजीरे के चावलो का भोजन करते थे और उसकी जड को भी खाते। लटजीरे के चावलो मे कई दिन तक क्षुधा को रोकने की शक्ति होती है। साकेतिक प्रश्न इन्ही चावलो पर था।

"गोंडा तथा वौंडी की रियासतें जब्त कर ली गईं। भवानीशकर दीक्षित का गाँव आर्यमऊ राजा हडहा को दे दिया गया। दीक्षित जी के अन्य पुत्र वडौदा तथा उदयपुर की रियासतो मे चले गये और वहाँ की सेनाओ मे भर्ती हो गये। दीक्षित वधुओ का यह परिवार लगभग पचीस वर्षो के उपरान्त आर्यमऊ वापस आया। प० प्रयागदत्त दीक्षित भी कुछ काल के उपरात नेपाल से अपनी जन्म भूमि वापस आ गये थे। उन्होने अपने भाइयो को अपने पिता के स्वर्ग-वास की कहानी तथा नाना साहव का सकेत वतलाया। प्रयागदत्त के छोटे भाई लालताप्रसाद अपने पिता की गया करने और भारत के समस्त तीर्थो का दर्शन करने के लिये चल पडे क्योंकि पिता की गया करने के पूर्व पुत्र के लिये भारत के समस्त तीर्थो का दर्शन करना अनिवार्य था। इस तीर्थ यात्रा मे प० लालताप्रसाद ने तीर्थराज प्रयाग मे साकेतिक प्रश्न के आधार पर नाना साहव के दर्शन किये। नाना साहव ने प्रसन्न होकर वम्वई मे मुद्रित सटीक रामायण की एक पुस्तक उपहार स्वरूप प्रदान की। यहीं से लालताप्रसाद नाना साहव के साथ वद्रीधाम की यात्रा को चले गये। मार्ग मे लालताप्रसाद का देहावसान हो गया। तत्पश्चात उनके चौथे भाई महावीर प्रसाद दीक्षित ने भारत के समस्त तीर्थो की यात्रा कर अपने पिता की गया की।

उन्होने भी सकेत के अनुसार नैमिषारण्य मे नाना साहब के दर्शन किये थे तथा उन्हें यह भी सूचित किया था कि आप के आदेशानुसार मैंने पिता की गया कर उनकी आत्मा को मोक्ष दिला दिया ।

"नाना साहब दीर्घजीवी थे । उनका देहावसान १९३६ के लगभग नैमिषारण्य मे हुआ था, ऐसा समाचार पत्रो मे शका के साथ प्रकाशित किया गया था ।

"यह निश्चित है कि नाना साहब के जीवन के शेष दिन साधुवेष मे भगवद् चिन्तन मे बीते, और उन्होने भारत के समस्त तीर्थों के दर्शन किये ।

"लेखक भवानीशकर दीक्षित का प्रपौत्र है । उपरोक्त कहानी उसने अपने पितामह प० महावीर प्रसाद दीक्षित से सुनी थी । सन् १८५७ की क्रान्ति मे जो हथियार प्रयोग मे लाये गये थे उनमे से कुछ लेखक के घर की एक दीवार की नीव मे गडे हैं । कुछ हथियार स्व० भवानीशकर दीक्षित द्वारा बनवाये गये कुयें मे, जो कि एक वाग मे है, पडे हैं। कुछ हथियार एक खेत मे गडे हैं । नाना साहब द्वारा दी गई रामायण को लेखक ने १९५२ मे त्रिवेणी सगम प्रयाग मे विसर्जित कर दिया क्योकि उस पुस्तक का कागज बहुत जीर्ण हो गया था पृष्ठ छूते ही चूर-चूर हो जाते थे ।

"मेरा विश्वास है कि यदि नैमिषारण्य मे वयोवृद्ध सन्यासियो से जाँच पडताल की जाय तो सभव है कि नाना साहब के जीवन के सम्बन्ध मे कुछ और भी बातें प्रकाश मे आ जाँय ।"

श्री दीक्षित के इस वक्तव्य के नानाराव से सम्बन्धित अश की जाच पडताल तो नैमिषारण्य पहुँच कर करनी ही है, परन्तु जहा तक बेगम हज़रत महल के बारा-वकी मार्ग से भिठौली पहुँचने की बात है, अनेक प्रमाणो की मौजूदगी मे उसे मैं सहसा मानने को तैयार नही ।

'सवानहात-ए-सलातीन-ए-अवध' मे अकित है कि 'बेगम आलिया की सवारी आलम बाग से निकली, भरावन पहुँची । यहा से बाडी होकर खैराबाद पहुँची, फिर महमूदाबाद के राजा नवाव अली खा के घर मेहमान हुई, फिर भिठौली गईं, वहाँ से बौंडी मे दाखिल हुईं ।'

'बेगमात-ए-अवध के खुतूत' नामक पुस्तक मे वाजिद अली शाह की एक पत्नी सरफ़राज़ बेगम लखनवी ने मटिया बुर्ज कलकत्ते मे रहने वाली दूसरी बेगम अख्तर महल को एक पत्र लिखा था कि " करीब शाम मय बिरजीस कदर के पीनस मे सवार होकर नाका आलम बाग की तरफ से मय मम्मू खा के घोडे पर सवार लखनऊ से रवाना हो गईं । रास्ते मे राजा मर्दन सिंह जमीदार तुमरुदी से पेश आया ।

मौलवी अमादुद्दीन देवी उर्फ मौलवी मुहम्मद नाजिम विस्वाने वाडी तीन कोस से इस्तकवाल जनावे आलिया के वास्ते आये वहा यह मशविरा हुआ कि वरेली को चलें ।"

मेलिसन द्वारा दिया हुआ मार्ग भी यही सिद्ध करता है। 'वेगमात-ए-अवध के खुतून' मे वेगम के वरेली जाने की वात अकित है। वरेली से भिठौली पहुँचना अटपटा मार्ग लगता है। हो सकता है कि उर्दू छापे मे भिठौली को गलती से वरेली लिख दिया गया हो।

जो भी हो, श्री वाजपेई द्वारा वतलाया हुआ वारावकी ज़िले का कुर्सी, देवा भयारा, हज़रत पुर, महादेवा होकर भिठौली पहुँचने का मार्ग सही प्रतीत नही होता।

भयारा

पांच जून। सुवह हम लोग भयारा के लिये चल दिये। हमे अच्छन साहव के मामू शेख अव्दुल अली क़िदवाई महोदय से मिलना था। जैसा कि मै पहले लिख चुका हूँ कि वारावकी मे वलभद्र सिंह चहलारी नरेश की कब्र को लेकर जो भ्रम फैला हुआ था उसे अच्छन साहव ने अपने इन्ही वयोवृद्ध मामा साहव की वातो और इनके द्वारा सुनाये गये वलभद्र सिंह सवधी एक आल्हा के कुछ अशो के वल पर निवारण किया था।

गन्ने के खेत मार्ग मे अधिक दिखलाई दिये। कल भी गौर किया और आज इस समय भी, गाव मे जगह-जगह प्रथम पचवर्षीय नल कूप योजना, सहकारी बीज भडार, उद्यान, स्कूल और अस्पतालो के नामपट टगे दिखलाई देते है। मिट्टी वलुहा है, जो खेती के लिए उत्तम वतलाई जाती है। चारो ओर अतरिक्ष के किनारे खडे वृक्ष विशाल मैदानो वाली भूमि को वडी किनार दार परात के समान वना देते है। मुझे मैदानो से मोह है। यो पहाड भी वहुत अच्छे लगते है, ऊँची नीची चोटियाँ साप की चाल की तरह टेढी-मेढी सडकें, पेडो की हरियाली या दूर दिखलाई देने वाली हिमानी चोटियाँ मन को मोह लेती है। पहाड मे प्रकृति रहस्यमय लगती है। यह सव होते हुए भी मैदानो की विशालता मुझे वहुत आकर्षित करती है। मैदानो मे प्रकृति की उदारता अनन्त सी लगती है। जो हो, यह तो अपनी अपनी रुचि की वात है। वहरहाल यह मालूम हुआ कि वारावकी जिला गन्ने के अलावा अफीम के लिए भी प्रसिद्ध है। नवावी लखनऊ को ज़िला वारावकी ही अफीम चटाया करता था।

नहर के किनारे किनारे हम भयारा पहुँच गये। भयारा ग्राम का पचायत घर एकदम आधुनिक शैली का वना हुआ है। वच्चो के खेलने के लिये चरखी, झूला

वगैरह भी लगे हैं। कच्ची झोपडियो के बीच मे यह शहरी किस्म की इमारत एक नये युग का सकेत कर रही है। पन्द्रह बीस वर्षों बाद पचायत घर की यह इमारत पुरानी पड जायगी, गाँवो मे नये मकान बन जायेंगे, बिजली पहुँच जायगी, सडके उम्दा और पक्की हो जायेंगी। एवमस्तु।

पचायत घर के निकट ही फूस के एक छप्पर के नीचे चारपाई पर वे बुजुर्ग विराजमान थे, जिनसे मिलने के लिए हम आये थे। बाद आदाबो अल्क़ाब के बातचीत शुरू हुई। शेख साहब ने फरमाया "जो कुछ मुझे मालूम था वह अच्छन को लिख कर भेज चुका हूँ। वे उसे किसी अखबार मे शाया करायेंगे। बहरहाल आप इतनी दूर से तशरीफ लाये है जो कुछ जानता हूँ आपको जरूर सुनाऊँगा। गदर मे अग्रेजो के खिलाफ आग तो भडक ही चुकी थी। मौलवी अहमदुल्ला शाह ने गाँव गाँव मे ऐसा जोश फैलाया था कि दल के दल अग्रेजो के खिलाफ लडने के लिये तैयार हो गये थे।

"जब बेगम हज़रतमहल ने हार कर लखनऊ छोड दिया तब महादेवा मे चहलारी के राजा के साथ जितने राजा थे, वे सब इकट्ठा हो गये। बेगम भी थी, चर्दा और बौंडी के राजा भी थे। उन्ही के साथ मेरे दादा शेख यासीन अली किदवाई भी मय अपने सिपाहियो के थे। महादेवा बहुत पुराना तीरथ है। महाभारत के ज़माने मे युधिष्ठिर महाराज ने महादेव जी की मूरत को वहा पर असथापित किया था। बहरहाल वहाँ हिन्दुओं और मुसलमानो ने कस्मे खाई। हिन्दुओ ने महादेव जी की मूरत पर हाथ रख कर कसम खाई और मुसलमानो ने कुरान पाक हाथ मे लेकर कसम खाई कि फिरगियो से जम कर लोहा लेंगे।

"मेरे बचपन और जवानी के दिनो तक ज्योरी गाँव का एक भागू नाई मुसलमान था। शाही ज़माने मे वह रफी अहमद किदवाई के परदादा शुजाअत अली के पास नौकर था। उसने गदर देखा भी था और खयाल लिखा था। बाद मे उसने पेशा गवी का कर लिया था और जब कभी हमारे यहाँ आ जाता तो हम उससे अपने दादा के और गदर के किस्से खूब सुना करते थे। उसी भागू नाई का खयाल जितना कुछ मुझे याद था और जो कुछ मेरे जैसे चद बूढो को याद था मैंने अच्छन को लिख कर भेज दिया है। जो कुछ मुझे याद है आप को सुनाये देता हूँ बाकी आप अच्छन से कागज लेकर लिख लीजियेगा। उस आल्हे को सुनाते सुनाते भागू की यह कैफियत हो जाती थी कि बदन की एक एक नस तन जाती थी और बडे जोश मे आ जाता था, लेकिन राजा बलभद्रसिंह का नाम आते ही आँखो मे

आंसू आ जाते थे और आवाज कमजोर पड जाती थी। वह सब लिखकर भेज चुका हूँ।"

(अच्छन साहब ने भागू की वह महत्वपूर्ण रचना बाराबकी से प्रकाशित होने वाली 'विश्ववाणी' को दे दी थी।) रचना इस प्रकार है —

'बिच ओबरी के मैंदनवा मा साहब लोगन किहिन पडाव।
देस के राजा एक ठौरी होइगे लै लै रामचन्द्र का नाव।।
तोपैं गरजी अगरेजन की धरती अगिनि दिहिन बरसाय।
जेहिके लागैं तोप का गोला ऊकी धजा सरग मँडराय।।
जेहिके लागैं सीसे का डडा देहिया टूक टूक होइ जाय।
अरे गोमइयाँ परलै होइगै राजे भागे पीठि देखाय।।
भागा राजा बौंडी वाला जेहिका हरदत्त सिंह था नांव।
भागा राजा चरदा वाला जेहिका जोतसिंह था नांव।।
राजा कहिये चहलारी वाला जेहिके बांट परी तरवार।
ब्याह क कँगना कर मा बाजै लक्खी मौर देय बहार।।
हाथी घिरिगा जब राजा का महावत गया सनाका खाय।
बोला महावत तब राजा ते भैया दीन बधु महराज।।
मरजी पावौं सहजादे की तुरतै चहलारी देऊँ पहुँचाय।
सुनिकै राजा राहुट होइगा करिया नैन लाल होइ जांय।।
बोला राजा चहलारी वाला जेहिका बलभद्र सिंह नाव कहाय।
हटजा हटजा मेरे आगे से तेरा काल रहा नियराय।।
धरम छत्री का यू नाही है भागै रण ते पीठ देखाय।
अरे महावत हाथी बैठा दे सोने कटा देहौं दोनो हाथ।।
घोडा मँगाइस खासे वाला राजा कूदि भया असवार।
जैसे भेड़हा भेडिन पैठे बैसे फौजन माँ गा सिधियाय।।
पूरब मारे पच्छिम धावे राजा उत्तर दक्खिन करे सहार।
ग्यारह साहब ठौरे मारिसि औ गोरन की गिनती नाय।।
मारि पचासन का हनि डारिसि जिनका भागत रस्ता नाय।
तीन घरी मा परलै कीन्हिसि गोरा भागे जान बचाय।।
तब महराजा चहलारी को देस मा नाव अमर होइ जाय।
होइगा नाव तोरा लदन मा कोई तेरे बराबर नाय।।

इस अधूरे आल्हे की जितनी पक्तियाँ बुजुर्गवार शेख साहब को उस समय याद थी मुझे पुराने जमाने के जोश के साथ सुनने को मिली। शेख साहब को सुनाते हुये खुद इतना भावोद्रेक हुआ कि आँखो मे आँसू आ गये, कहने लगे राजा बलभद्रसिंह की बातें कहते-सुनते मुझे लगता है कि जैसे मैं अपने दादा का हाल ही सुन रहा हूँ।

मैंने पूछा—"आप अपने दादा साहब के बारे मे कुछ बतलाने की तकलीफ फरमायेंगे ?"

शेख साहब ने उत्तर दिया—"मेरे दादा इसी भयारा गाँव मे रहते थे। उनकी जमीदारी बहुत बडी थी। आप यह समझें कि किदवाई लोग साढ़े सात सौ बरसो से अवध मे बसे हुये हैं—"

"कता कलाम होता है, माफ कीजिए, ये क़िदवई लोग आये कहाँ से ?" मैंने पूछा।

"यह तो साहब हमे नही मालूम, मगर यह जानता हूँ कि किदवाइयो के पास बावन गाँव थे—

बावन गाँव किदवारा।
सबसे बडा भयारा॥

तो यह भयारा हमारे खानदान की जमीदारी मे शुरू से रहा है और जब कि माहदेवा से हिन्दू मुसलमान फौजें हजारो की तादाद मे लखनऊ की तरफ बढी तो हमारे गाँव भयारा के पास से ही उन्होंने कल्यानी नदी पार की। मेरे दादा शेख यासीन अली साहब किदवाई भी अपनी छोटी मोटी टुकडी लेकर कौम के जानिसारो के हुजूम मे शामिल हो गये। देखिये, मैं आप को यह बतला दूँ कि हमारी हार की वजह यही थी कि हमारी फौज एक बेकायदा भीड थी जबकि अँग्रेजो के साथ बाकायदा फौजें थी। मुल्की लोग बहुत बहादुरी से लड कर भी इसीलिये हारे। जैसा आपको भागू के खयाल से मालूम होगा, नवाबगज की लडाई मे चर्दा और बौंडी के राजा भी बलभद्रसिंह के साथ थे। मगर जब लडाई बिगडी तो इन लोगो के पैर उठ गये। बहादुर तो बस एक बलभद्रसिंह था। खैर, तो मेरे दादा भी लडे उनके सारे सिपाही कट गये। उनके घोडे को गोली लगी। वह लेके भागा और अरहर के खेत में जा गिराया। मेरे दादा खुद भी जख्मी थे। रात को किसान उन्हे उठा ले गये। बच जाने के बाद बहादुर की हालत कुछ अजीब हो जाती है। लडाई मे जूझ जाना आसान है मगर फाँसी चढ़ कर मरना

किसी को अच्छा नहीं लगता। इसलिये फांसी के डर से मेरे दादा भागे-भागे फिरे। इलाक़ा दूसरों के पास चला गया। बाद में जब कि यह ऐलान हुआ कि जिन्होंने लड़ाई के मैदान के अलावा किसी निहत्थे गोरे, मेम, बच्चे को नहीं मारा उसे हम माफ़ कर देंगे, तब मेरे दादा अदालत में हाज़िर हुए, यह बयान दिया, तब यह मवारा हमें वापस मिला।"

"क़िदवाइयों में आप के दादा साहब के अलावा और कौन कौन लड़े?" मैंने पूछा।

"आम तौर से क़िदवाइयों ने ग़दर में कोई हिस्सा नहीं लिया।"

"इसकी कोई ख़ास वजह थी?"

"ख़ास वजह यह थी कि अवध के बादशाह से हमें कोई दिलचस्पी न थी। क़िदवाई लोग बाग़ी थे। शाही फ़ौजें आये बिना मालगुज़ारी भी अदा नहीं करते थे और फ़ौजें आने पर भाग जाते थे। इसकी एक वजह थी। बक्सर की लड़ाई में सत्रह सौ क़िदवाई नवाब शुजाउद्दौला के साथ शरीक हुए थे। यह सब के सब वालंटियर थे। जब शुजाउद्दौला हारकर भागने लगे तो क़िदवाइयों ने कहा कि आप तो बादशाह हैं, मुंह दिखा लेंगे। मगर हम हार कर कहां जायें। लिहाज़ा वे सत्रह सौ लोग वहीं जूझ गये। बड़ी बूढ़ियां बतलाया करती थीं कि क़िदवारे में ख़बर आने पर एक ही दिन में क़िदवाइयों की सत्रह सौ बीवियों की चूड़ियां टूटी थीं। इसके बाद ही क़िदवाई लोग हुकूमत से बददिल हो गये। फिर बादशाह की ओर से उनके बच्चों की परवरिश नहीं हुई। उनकी तादाद भी घट गई। नतीजा यह हुआ कि क़िदवाइयों में 'अपारच्यूनिज़्म' (अवसरवादिता) आ गया। अब हम लोग सुन्नी हैं मगर बादशाही में बहुत से क़िदवाई अपने को शिया लिखाये हुए थे। जहांगीराबाद वाले भी शाही में अपने को शिया लिखाते थे और बराबर सुन्नी रहे। जहां तक मेरा ख्याल है मेरे दादा को छोड़ कर ग़दर में क़िदवाइयों ने कोई शिरकत नहीं की। आम तौर पर जहांगीराबाद का भी रोल ही रहा।"

"हां, मैंने हॉपग्राण्ट की किताब में जहांगीराबाद के मुतल्लिक़ पढ़ा था—"

"जहांगीराबाद वाले गोरों के साथ दग़ाबाज़ी कर रहे थे। क़िदवाइयों में सबसे बड़े ज़मींदार थे। इन्होंने किसी का साथ न दिया; इसीलिये इन्हें उठाना पड़ा।"

शेख़ साहब से मिलकर मुझे बहुत ही प्रसन्नता हुई। बड़े मज़ाक़ी आदमी, एक-एक बात को इस तरह मज़ा ले कर कहते थे जैसे घर के लड़कों से घर की बातें कह रहे हों। पांच मिनट की जान पहचान, यहां से जाने के बाद फिर कभी शायद

शेख साहब की ज़ियारत करने का मौका नसीब हो या न हो मगर उतनी देर तक मैं यही अनुभव करता रहा कि मानो वे मेरे ही मुहल्ले के बड़े बुजुर्ग हैं, सदा से मिलते-जुलते आये हैं, किसी तरह का भी परायापन अनुभव नही किया। मैंने उनसे इज़ाज़त ली।

चलते वक्त कहने लगे "आप यह अच्छा काम कर रहे है। इसे तो बहुत पहले ही किसी को करना चाहिये था। पुराने बुजुर्गों के हालात पढते हैं तो फख्र होता है, मगर गदर के बाद का रग कुछ और हो गया और बहुत शर्मनाक भी। मेरी ज़िन्दगी पर आप सच मानिये सबसे ज्यादा असर चहलारी का है, लगता है कि अपने ही दादा के किस्से हैं जो मुझ पर गहरा असर करते हैं। हमारे यहाँ किदवाइयो मे एक रफीअहमद का खानदान भी बेदाग रहा। उसका जो नतीजा हुआ वह भी दुनियाँ ने देखा। रफी ऐसा आदमी होना मुश्किल है।"

जहांगीराबाद

हम लोग भयारा से नहर के किनारे किनारे जहागीराबाद की ओर चले। जहागीराबाद के बारे मे जिस दोतरफा चाल की बात मैंने अभी शेख अब्दुल अली साहब से सुनी, वही सर होपग्राण्ट ने अपनी किताब मे लिखी है। 'सिपॉय वार' मे लिखा है "२२ अप्रैल (सन् १८५८ ई०) को मैंने सुना कि पड़ोस मे ही अवध का एक मज़बूत मिट्टी का कोट जहाँगीराबाद मे है। वह घने जगल से घिरा हुआ है और उसमे जाने के लिये कुछ एक रास्ते तो है मगर आम तौर पर उस जगल मे धँसना नामुमकिन है। यह कोट राजा रज्ज़ाक बख्श का है जो कि गदर मे बराबर दोतरफा चाल चलता आया है। मैंने सोचा कि उसे सबक़ देना उचित होगा। उसी दिन सुबह वह हमारे कैंप मे आया, बड़ी बड़ी सलामे झुकाई और हमारे प्रति अपने सदव्यवहार और स्वामिभक्ति का बखान करने लगा। उसने कहा कि उसके पास तीन तोपें हैं जो वह हमे देने के लिये आया है। मैंने अपने साथ घुड़सवारो की दो टुकड़ियां ली और उस जगल से गुजरते हुए कोट के फाटक तक पहुँचा। अन्दर मोटे कँटीले पौधों और बाँस का एक घना जगल था जिसमें से होकर आगे बढना असभव सा ही था। हम लोग एक बहुत सँकरे और कष्टदायक मार्ग से होकर अन्त मे उन बेहूदा मिट्टी के मकान तक पहुँचे जिसे वह अपना महल कहता था। लोग बड़ी शराफत से मिले और हम से कहा कि तोपें कमिश्नर के पास

भेज दी गई हैं लेकिन हमारे एक सिख ने एक ऐसी छिपी हुई जगह से दो तोपें निकाल ली जहाँ कि किसी का ध्यान ही नही जा सकता था। छिपी हुई सामग्री का पता लगाने मे सिख प्रसिद्ध हैं। हमने फौरन फाटक तुडवा डाला और नौ पाउण्डर तथा छ पाउण्डर तोपें निकाल ली। मैंने राजा से बैल मँगवाये। आने पर देखा कि वे सरकारी जानवर थे जिसे उस बुड्ढे शैतान ने चुरा लिया था। एक हिन्दुस्तानी ने मुझे एक और छिपी हुई तोप के सबध मे सूचना दी। वह उस फाटक के पास ही थी जिससे हम आये थे। खोजने पर एक नौ पाउण्डर तोप मिली जो दोहरी मार 'ग्रेपशाट' और 'राउण्ड शाट' कर सकती थी। और इस तोप का मुँह उसी सडक की ओर था जिससे हम आये थे। तोप बडी खूबी के साथ ढँकी और छिपाई गई थी और उसमे धीमे धीमे सुलगने वाली बत्ती भी लगा दी गई थी। यह सब देख कर बडा सन्देह उत्पन्न हुआ। उसी समय एक अफसर ने यह सूचना दी कि उसने राजा के घर मे बहुत से सरकार-द्रोही कागजात पाये हैं। तब मैंने निश्चय कर लिया कि उस बुड्ढे खूसट को अब किसी हालत मे भी बख्शना मुनासिब नही। दूसरे ही दिन मैंने नवाबगज से ब्रिग्रेडियर हार्स फोर्ड की कमान मे एक सेना उस जगल और कोट को ध्वस्त करने के लिये भेजी। सेना ने जगल जला दिया और किला ध्वस्त कर मिट्टी मे मिला दिया गया।"

सर होपग्राण्ट के इस विवरण के अतिरिक्त मैंने यह भी सुना था कि अग्रेजी सेना के गुरखे और अग्रेज सिपाहियो ने महल की स्त्रियो को बेइज्जत किया, राजा रज्जाक बख्श को अस्सी अन्य व्यक्तियो के साथ फाँसी दी और उनकी लाशें जलते हुये जगल मे झोक दी। इन दोनो प्रकार की बातों के साथ जहागीराबाद के सबध मे मेरे मन मे कई प्रश्न उठ रहे थे। समझ मे नही आता था कि राजा रज्जाक बख्श को देशभक्त माना जाय अथवा गद्दार? जिस क़िले मे अग्रेजो को धोखा देकर मारने का प्रबध हो और जहा उनके विरुद्ध षडयत्र करने के कागजात पाये गये हो उसे सहसा देशद्रोही मान लेना कठिन प्रतीत होता था। फिर अग्रेजो ने जैसा बदला लिया वैसा किसी साधारण अपराधी से नही लिया जाता। ऐसा लगता है कि अग्रेजों को इस बात पक्का विश्वास हो गया था कि राजा रज्जाक बख्श महज उन्हें धोखा देने के लिये ही उनसे मिले हुए थे। देशभक्तो के साथ हार्दिक सहयोग था। दूसरा प्रश्न यह उठता है कि यदि अग्रेज जहागीराबादी सामन्त कुल से इतने क्षुब्ध हो उठे थे तो उन्हें जहागीराबाद की गद्दी पर बहाल क्यो किया?

मैंने शेख साहब से यह सुना था कि राजा रज्जाक बख्श के वशज भयारा मे रहते हैं और जहागीराबाद की गद्दी पर राजा नौशाद अली के वशज राज्य करते

हैं। जब वाजिद अली शाह गिरफ्तार हुए तब नौशाद अली नमकहलाली दिखलाते हुए उनके साथ साथ कलकत्ता तक गया था लेकिन शेख शाहब के अनुसार वह अग्रेजो का जासूस था और इसी कारण से जहागीराबाद की गद्दी उसके हिस्से मे आई।

शेख साहब का बतलाया हुआ 'नौशाद अली' नाम भी ग़लत है। सन् १८९३ ई० मे प्रकाशित पदवीधारी राजा नवाबो के आदि के परिचय ग्रन्थ, सर रोपर लेथब्रिज द्वारा सकलित और लिखित 'दि गोल्डेन बुक ऑफ इडिया' में जहागीराबाद की रानी ज़ेबुन्निसा का परिचय देते हुये निम्न लिखित इतिहास अकित है —

"रानी ज़ेबुन्निसा का जन्म २८ अक्टूबर १८५५ मे हुआ था। ७ अप्रैल १८८१ को उसने अपने पिता स्व० राजा फरज़न्द अली खाँ की गद्दी पाई। फरज़न्द अली को राजा का खिताब अवध के भूतपूर्व बादशाह वाजिदअली शाह ने दिया था, जिसे ब्रिटिश सरकार ने भी परम्परागत पदवी माना। जहागीराबाद की रियासत के स्वामी राजा रज्ज़ाक बख्श थे, जो पुत्रहीन मरने के कारण रियासत अपने दामाद फरज़न्द अली खाँ के लिये छोड गये। फरज़न्द अली लखनऊ के सिकन्दर बाग का दारोगा था। अवध के अग्रेजी राज्य मे मिलाये जाने से तीन वर्ष पूर्व उसके भाग्य ने उसकी सफलता के लिए एक अच्छी परिस्थिति उत्पन्न कर दी। फरज़न्द अली बहुत सुन्दर था। एक बार वाजिदअली शाह सिकदर बाग घूमने गये, नवयुवक की सुन्दरता से प्रभावित होकर उन्होने उसे खिलअत बख्शी तथा महलो मे आने का आदेश दिया। शाही कृपा के एक सकेत पर ही फरज़न्द अली की उन्नति का मार्ग तेज़ी से खुल गया। प्रभावशाली ख्वाजासरा बशीरुद्दौला फरज़न्द अली को चाहता था। उसके प्रयत्नो के कारण फरज़न्द अली को एक फरमान द्वारा जहागीराबाद के राजा का पद मिला। वाजिदअली शाह के दरबार मे फरज़न्द अली खाँ का सबध जुड गया। सन् १८५६ मे वाजिदअली शाह के पदच्युत होने पर फरज़न्द अली उनके साथ कलकत्ता गया वहाँ उसने कुछ समय तक निवास किया। गदर मे उसका भाग प्रमुख नही था तथा शीघ्र ही उसने अपने आप को सरकार के प्रति समर्पित भी कर दिया। १८६० मे अपनी रियासत के अन्दर कार्य करने के लिये उसे असिस्टेन्ट कलेक्टर की सत्ता प्रदान की गई।"

इस प्रकार जहागीराबाद के ध्वस और उसकी गद्दी के बहाली के कारण स्पष्ट हो जाते हैं। सभव है कि वाजिदअली शाह और उनके प्रभावशाली ख्वाजासरा के दबाव से राजा रज्ज़ाक बख्श को फरज़न्द अली से अपनी पुत्री का विवाह करने के लिये मजबूर होना पडा हो। राजा रज्ज़ाक बख्श के जीते जी ही फरज़न्द अली को

बादशाह की ओर से राजा का खिताब मिला। इसलिये सभव है कि रज्ज़ाक़ बख्श ने नई परिस्थिति को प्रसन्न मन से स्वीकार न किया हो, और वह मन ही मन अपने दामाद और शाह से नाराज रहा हो। ऐसी परिस्थिति मे तो रज्ज़ाक बख्श को (यदि वो व्यापक चेतना का मनुष्य नही था तो) अपना बदला लेने के लिये अग्रेजो से मिल जाना चाहिये था। सर होपग्राण्ट के अनुसार रज्ज़ाक़ बख्श उससे मिलने गया था, और सर होप को जहागीराबाद की तरफ से दुमुही चाल चले जाने का पता भी लग चुका था। ऐसी परिस्थिति मे रज्ज़ाक बख्श के कारनामो का सही अन्दाज़ नहीं लगता। यदि रज्ज़ाक बख्श अपने दामाद का विरोधी था तो अपने किले मे अग्रेजो द्वारा ब्रिटिश द्रोही कागज़ात और तोपें पकडे जाने पर उसने अपने दामाद की चुगली क्यो नही खाई ? ऐसा करने पर वह अपने ऊपर पुराने शासक द्वारा आरोपित दामाद फरजन्द अली को चुटकियो मे तबाह कर सकता था, भले ही उसकी बेटी पति के जीते जी विधवा हो जाती अथवा अपने बाप से लड कर कलकत्ता चली जाती।

इससे तो यही सिद्ध होता है कि रज्ज़ाक बख्श ही अँग्रेजो के प्रति विद्रोह कर रहे थे। अपनी शारीरिक सुन्दरता रूपी योग्यता के बल बूते पर सिकन्दर बाग़ का दारोगा भाग्य के करिश्मे से राजा हो गया। अयोग्य व्यक्ति यदि भाग्यवश ऊँचे दरजे की सफलता पा जाता है तो उसमे क्वचित् ही आत्म-विश्वास उत्पन्न होता है। अयोग्य व्यक्ति हर युक्ति से अपना पद सँभालता है, उसके लिये हीन से हीनतम् चाल भी चल सकता है। सभव है कि जनश्रुति के अनुसार फरज़न्द अली अग्रेजो का गोयन्दा बनकर वाजिदअली के साथ कलकत्ता गया हो। यह विचार करने की बात है कि राजा रज्ज़ाक़ बख्श की दुतरफा कारगुजारी को उनकी बदनीयती माना जाय अथवा अग्रेजो के खिलाफ एक चाल ?—एक ऐसी चाल जो भोडी तरह मे चली चली गई और असफल हो गई।

जहागीराबाद की शहादत मे राजा रज्ज़ाक़ बख्श और उनके दामाद राजा फरज़न्द अली क्या साझीदार थे ? एक साझीदार के तबाह होने पर दूसरा उन से तुरत चेत कर, साझा तोड अपना मुनाफा बचाने की फिराक मे लग गया हो। हर तरह से सोच कर हम राजा रज्ज़ाक बख्श के व्यक्तित्व को हीन मानने का कोई कारण नही देखते। राजा रज्ज़ाक बख्श शत्रु पक्ष के सर होप ग्राण्ट जैसे मेधावी सेनानी को मिठबोले बन कर नष्ट करने का आयोजन कर, उसे अपने किले मे आमन्त्रित कर ले गये होंगे। उनकी चाल फेल हो गई यह और बात है।

शत्रु पक्ष के उन प्रवल मेधावी सेनानियो को छल, कल, बल से मार कर स्वपक्ष को सकट से उबारना इस देश की कोई नई रीति नही है। महाभारत मे ऐसी युद्ध नीति के अनेक प्रमाण हैं।

मुझे लगता है कि राजा रज्जाक बख्श नि सन्देह स्वतत्रता सग्राम के सगठन-सूत्र मे बँधे हुये थे। उनकी शहादत को गुनाह बेउसूल मानने का जी नही चाहता। अपने जीते जी अपने दामाद को जहागीराबाद का राजा बनाने वाले शाह के प्रति राजा रज्जाक वख्श की निष्ठा तो हो नही सकती, इसलिये हमारा यह वृद्ध पुरखा निश्चय ही देश स्वतत्रता के लिये कारगुजारी करते हुए मारा गया।

क्या ही अच्छा हो यदि वे कागज़ात जो सर होपग्राण्ट ने जहागीराबाद के मिट्टी के महल से पाये थे पुरानी सरकारी फाइलो मे उसी तरह दबे पडे हो जैसे राणा वेणीमाधव और मौलवी अहमदुल्ला शाह आदि के पत्र दवे पडे थे तथा जिनका उद्धार मेरे विद्वान मित्र डा० रिजवी ने किया है।

गदर के नायको मे अनेक ऐसे हैं जो मुझे निकली लगते है और जिनका ढिढोरा पीटना अब वन्द हो जाना चाहिये। और वहुत से ऐसे नायक हैं जो अव तक छिपे पडे हैं या दुर्भाग्य वश गलत मूल्याकन के शिकार हो गये हैं। मैं केवल राजा-रजवाडो मे ही नही, बल्कि जन साधारण के उन शहीदो को भी पहचानना चाहता हूँ जो हमारी प्रणामाजलि प्राप्त करने के पूर्ण अधिकारी हैं। मुझे एक नये शहीद का नाम-ठाम मिलता है तो मुहावरे की रीति मे मेरा एक सेर खून वढता है। मैं कोरी व्यक्ति पूजा या विगत वैभव की रोमाटिक परिपाटी का पुजारी नही। परपराओ को इसलिये पहचानना चाहता हूँ कि उनमे कौन सी ऐसी सशक्त हैं जो हमे आज भी अपने समय और परिस्थितियो से जूझने के लिए नया रूप धारणकर प्रेरणा दे सकती हैं। सौ वर्ष पहले के लोग भले ही देश को नक्शे के रूप मे न जानते हो मगर अपनी धरती की मिलकियत अपने पास रखने की चेतना—वह स्वाभिमान उनमे जरूर था। और यह देशभक्ति का वीज नही तो फिर है क्या ?

शारदा नहर के किनारे-किनारे हवा के सरसराते झोको की तरह विचार एक के वाद एक कडी में वँधे चले आ रहे थे। वीच-वीच में मेरा पुराना सफरी साथी पान का वटुआ भी खुलता ही था। आज की यात्रा मे भी भाई इन्दु प्रकाश साथ थे। गुप्त जी और इन्दु प्रकाश जी, दोनो ही वडे सज्जन नवयुवक है, मेरी दृष्टि को वाहर कही उलझे हुए देख कर वातचीत से मुझे नही सताते। 'पिकअप' की दूसरी वर्थ पर स्थानीय वातो मे अपने को उलझा लेते हैं। हाँ, जव पान का वटुआ

बेगम हज़रतमहल

खोलता हूँ तव इन्दु प्रकाश जी तुरन्त मेरी ओर मुखातिव हो किसी न किसी रूप मे किन्ही शब्दो मे यह प्रश्न अवश्य कर लेते है "तो आपको हमारे जिले से 'मैटर' पाने मे अब तक कोई निराशा तो नही हुई ? आप की आशा से कम मैटर तो नही मिल रहा है हमारे जिले से ? आप के साथ-साथ हमे भी अपने जिले के सम्बन्ध मे वहुत सी नई सूचनायें मिल रही हैं, इससे हमे तो बड़ा लाभ हो रहा है, पता नहीं आपकी आशा के अनुसार आपको मैटर मिला या नही ?" मैं हर वार इन्दु प्रकाश जी को यह आश्वासन दे देता हूँ कि अपनी यात्रा के पहले जिले में मेरी वोहनी अच्छी हुई है। एक वार, अभी-अभी मैंने कह दिया कि एक प्रश्न का उत्तर मुझे अभी तक किसी ने नही दिया।

इन्दु प्रकाश जी और गुप्त जी दोनों ही घवरा कर मुझे इस तरह देखने लगे मानो स्वय उनसे ही कोई वहुत वडी ग़लती हो गई हो।

मैंने कहा "कई लोगो से पूछा कि जव गदर हुआ तव मुल्की लोगो मे कुछ गुण्डे तो नही शामिल हो गये थे, जिन्होंने गदर के हुल्लड मे स्वय अपने पास पडोसियो को ही लूटा पीटा हो ?"

इन्दु प्रकाश जी चिन्तित होते हुए वोले "हाँ, इसका तो उत्तर नही मिला आपको। वैसे तो हमारा जिला क्रिमिनल है, मगर शायद गदर की राष्ट्रीय भावनाओ के कारण हमारे यहाँ के गुण्डे भी उस समय ईमानदार सिपाही वन गये हो।"

मुझे हँसी आ गयी, जिसे मन ही मन दवा गया, कहा "आप की वात से आपके जिले का गौरव वढता है।"

भाई मेरे उत्तर से सतुष्ट हो गये। वडे भले युवक हैं।

शारदा नहर के वाई ओर सूखे वाँसो के झुण्ड के झुण्ड जमीन तक झुके हुए दिखलाई पडने लगे। वीच-वीच मे हरियाली। मैदानो की हरियाली और मस्जिद की ओर दिखलाई पडने वाली पलाशो की लाली के वीच लम्वे-लम्वे पुराने वशवृक्षो का खाकी रग वाँसो को एक स्वतत्र व्यक्तित्व दे रहा है। नहर के किनारे पर भी पलाश और रूसा छाया हुआ है। वाँई ओर मस्जिद, उसके पास सूखे वाँसो का झुण्ड, फिर जहागीरावाद का आलीशान महल और दूर-दूर पर ताड के वृक्ष—सव मिल कर इस जगह के नये-पुराने इतिहास का सकेत दे रहे हैं।

इन्दुप्रकाश जी वोले . "यही पुरानी गढ़ी का क्षेत्र है जिसे सर होपग्राण्ट ने तवाह किया था। वाँस के जगल अव तो वहुत काफी साफ हो गये हैं। एक वार पहले,

यानी आजादी से पहले जब मैं यहां आया था तब काफ़ी थे। इस नहर के पुल से लेकर महल तक शाम को ऐसी रौनक रहती थी जैसी आपके कैसरबाग मे रहती हैं। कई बार अंग्रेज गवर्नर भी यहां आये हैं।"

हम लोग पुल पार कर महल की ओर आये। दाहिनी ओर एक बडी मस्जिद है जिसका कुछ हिस्सा अधबना ही रह गया है। जहागीराबाद महल खासा शानदार बना है। मुझे सर होपग्राण्ट की बात याद आ गई। राजा रज्जाक बख्श के मिट्टी के महल को देख कर वह बहुत तप गया था, राजा की बेटी के वशजो का यह राजसी वैभव देख कर सर होप को शायद तसल्ली होती। ताल्लुकेदारो के महलो की शान बान आम तौर पर गदर के बाद ही बढी है। अवध मे आम तौर पर वैसी ही घने जगलों से घिरी, मिट्टी की गढियाँ थी जैसी कि सर होप ने सौ बरस पहले इस स्थान पर देखी थी। बाराबकी ज़िले भर मे ऐसी अनेक गढियां थी जो गदर के बाद ध्वस्त कर डाली गयी।

महल सूना था। राजकुल से लेकर मैनेजर तक पहाडो पर चले गये थे। माल-खाने के दारोग़ा मिले। वे हमे पुरानी गढी वाला मैदान दिखलाने ले गये। गदर का हाल उन्हें कुछ नही मालूम, पुरानी रवायतें भी बहुत नही सुनी, केवल इतना अन्दाज़ है कि पुराना कोट कहां से कहां तक फैला हुआ था। — "पहले कोट की खन्दकैं दिखाई पडत रही। औ पुराना महल बस इसी जगह पर था जहां यह महल है। पुराना महल मिट्टी का रहा। शाही वख्तो मे राजा रहे सो माल गुज़ारी वगैरह न देवैं, सो आगज़नी होय, लूटे जांय, भागे भागे फिरैं। यही हाल था, यही के मारे पुराने राजा लोग मिट्टी के महल बनावत रहैं और बचाव के लिये खन्दकैं औ बीहड बीहड जगल, यही सब इन्तज़ाम करत रहैं। अब ये बांस जौन आप देख रहे हैं उसी पुराने वख्तन के हैं। फल जाने पर अब सूख गये हैं। अरे अब तो सब जगल बगल काट के खेत बनाय लिये गये हैं। जगल से बडी आराम रही। मगर अब सब बांसो की जानै निकल गई। यही हाल है।"

मैंने पूछा "आप को राजा रज्जाक बख्श के बारे मे कोई जानकारी हो तो बतलाइये।"

कुर्ते से बटुआ निकाल कर एक चुटकी तम्बाकू मुंह मे डालते हुए माल दारोग़ा बोले "हिशटरी की तो साहब हमें कुछ खबर नहीं, मगर यह सुना है कि बडे राजा रज्जाकबख्श तो फकीर रहैं। रामपुर के महन्तन के यहा जांय, उई इनके यहा आवैं, यही हाल रहा।"

कुर्सी

जहागीराबाद भी देख लिया। हम लोग अब कुर्सी की ओर रवाना हुए। लखनऊ और कन्नौजवार मे बाराबकी ज़िले की कुर्सी का वही माहात्म्य है, जो भोगांव, शिकारपुर और बलिया का है। कुर्सी के बारे मे बडे-बडे लतीफे चलते है। अभी हाल ही मे यहाँ एक मज़ेदार किस्सा हो गया। कुर्सी के किसी व्यक्ति की अन्य गांव के किसी व्यक्ति से अदावत हो गई। बडी तेज़ कहा-सुनी हुई। उसके बाद ही कुयें मे एक लाश पाई गई जिसकी सही शिनाख्त न हो सकी। कुर्सी के किसी लाल बुझक्कड ने वहाँ के दारोगा से यह कहा कि हो न हो यह लाश उसी व्यक्ति की है, जिसका स्थानीय व्यक्ति से झगडा हुआ था। दारोगा जी ने विश्वास कर लिया और वह स्थानीय व्यक्ति हत्या के अपराध मे गिरफ्तार कर लिया गया। वह बेचारा घर-घर कहे कि मैंने हत्या नही की मगर उसकी सुने कौन ? खैर, गिरफ्तार होने वाले व्यक्ति के घर वाले किसी तरह उस व्यक्ति को जाकर ले आये जिसकी हत्या होना सिद्ध हो चुका था। मैंजिस्ट्रेट बोले कि दारोगा पर कुर्सी का कुछ न कुछ असर तो होना ही चाहिये।

वैसे कुर्सी का इतिहास किवदतियो के अनुसार बहुत प्राचीन है। इसका पुराना नाम लवकुशी बतलाया जाता है। रघुवशी रामचन्द्र के बेटो लव-कुश ने इसे बसाया था। किसी समय यह पडितो का घर था। सन् १०३० मे सैयद सालार मसूद के आक्रमण के समय, अवध गजेटियर के अनुसार, यहाँ भरो का राज्य था। जनवार राजपूतो का इतिहास भी इस स्थान से जुडा हुआ माना जाता है। पडितो की इस प्राचीन नगरी के निवासियो के सबध मे जहागीरनामा मे 'अहमकाने-कुर्सी' लिखा है। शायद इसके बाद ही कुर्सी का नाम चकल्लसी प्रयोग मे लिया जाने लगा। कोरे पडित लोग व्यावहारिक दृष्टि से मूर्खतायें तो करते ही हैं। अस्तु।

गदर मे कुर्सी ने अपना जल्वा दिखलाया था, या यो कहिए कि इस स्थान को ग़दर का जल्वा देखने के लिए मजबूर होना पडा। कुर्सी लखनऊ से केवल सोलह मील दूर है। २१ मार्च सन् १८५८ मे मौलवी के पराजित होने के कारण, लखनऊ के पतन के बाद भागी हुई फौजें यहाँ इकट्ठा हो गईं। ज़िला गज़ेटियर मे लिखा है कि जब लार्ड क्लाइड ने अतिम रूप से अवध की राजधानी पर अपना अधिकार जमा लिया तब विद्रोही सेना का बहुत बडा भाग, भागकर, पत्थर वाले पुल से होता हुआ बाराबकी के रास्ते से घाघरा की तरफ बढा। समाचर मिला

कि लगभग चार हज़ार विद्रोहियो ने कुर्सी मे मोर्चा साधा है। तदनुसार ब्रिगेडियर होपग्राण्ट को आदेश दिया गया कि २३ मार्च के तडके ही जाकर वह विद्रोहियो तितर-बितर करे। सर होप की यहा पर देशभक्त सेनाओ से मुठ-भेड़ हुई और विजयश्री भी लाभ हुई थी।

दोपहर, भर-धूप मे हम लोग कुर्सी के चौधरी महमूद हसन ताल्लुक़ेदार के यहाँ पहुँचे। हमारे आने का उद्देश्य सुनकर चौधरी साहब ने फरमाया "साहब हमने तो आज तक नही सुना कि कुर्सी मे ग़दर हुआ था। क्या गज़ेटियर मे लिखा है?"

मैंने कहा "जी हाँ।"

"हो सकता है साहब। बहरहाल मेरे सुनने मे नही आया। खैर, अब आप आये हैं तो इसका पता लगाया ही जायगा। मौलवी साहब के यहाँ चलते हैं। अगर मालूम होगा तो उन्हें ही मालूम होगा। उनके यहाँ पुरानी किताबें हैं, शायद किसी मे यह हाल लिखा हो। बाकी सब लोग तो जाहिल हैं।"

मैंने कहा "मेरा काम ऐसे लोगो से भी निकल सकता है। जो सत्तर अस्सी बरस पुराने बुजुर्ग होगे उन्होने अपने बुजुर्गो से गदर की बातें सुनी होगी। मौलवी साहब के अलावा ऐसे बुजुर्गों से भी मेरी मुलाकात करवायें।"

चौधरी साहब ने अपने अनुचरो से गाँव के बुड्ढो के सबंध मे पूछा। पता लगा कि अमुक और अमुक बड़े "पुरनिया" आदमी हैं। मगर इतनी दूर चलकर यहाँ नही आ सकते हैं। मैंने कहा, हम लोग वही चले चलेंगे।

प्राचीन 'ढूहो' की बस्ती से हम लोग गुजरने लगे। आसफी लखौरियो के अलावा जगह जगह उससे कुछ बडी और मोटी लखौरियाँ, भरो की लखौरियाँ दिखलाई पडती थी जो यहाँ के पुराने इतिहास की गूंगी गवाह थी।

सरकारी बीज भडार के चबूतरे पर हम लोगो ने आसन जमाया। दोनो वृद्ध वही आस पास रहते थे और हमारे पहुँचते ही एक सज्जन आ गये। घुटा सिर, मूंछ विहीन सफेद दाढी, नगे बदन, लम्बी झुकी हुई देह को लठिया पर टिकाये हाजी अब्दुस्समद तशरीफ लाये। एक तो यो ही बुढापे के मारे चलने फिरने से लाचार थे दूसरे पैर मे पट्टी बँधी थी। बीस क़दम दूर से आते आते भी उन्हे करीब दो तीन मिनट लग गये। आने पर मैने उनसे प्रश्न किया। कमज़ोर थकी आवाज़ मे उन्होंने कहा "हमारे जमाने की तो बात है नही, सुनी सुनाई बातें हैं सो वह भी अब ज़ईफी की वजह से ठीक ठीक याद नही रही।"

मैंने कहा "आप को जो कुछ याद हो सुनाइये।"

"वालिदा हमारी बताती रही कि गोरे इधर से आये। तोपखाना था मस्जिद के पीछे। गोरे दक्खिन की तरफ से आये। मितैला की तरफ यहाँ के लोग और सिपाही भागे"।

मैंने पूछा "मितैला कहाँ है" ?

चौधरी महमूद हसन साहब ने बतलाया कि कुर्सी से लगभग डेढ मील दूर क़ाज़ी बाग के पास मितैला का तालाब है।

मितैला से मित्र अर्थात सूर्य से सबधित प्राचीन नाम की ध्वनि आ रही थी। जो हो।

हाजी साहब फिर कहने लगे "तो, मितैला के तालाब के पास गोरो ने घेरा। वहाँ गोरो ने बडा कत्ले आम मचाया। वालिदा कहती थी कि जब हम लोग भागे तो बस भागे-भागे ही फिरे।"

आस पास दस पाँच लोग जुट आये थे, उन्ही मे से एक वृद्ध जो हाजी साहब की अपेक्षा कम उम्र के लगते थे, बोले "यू सुनाई परत है कि पहिले अग्रेज रहे, फिर तीन महीने ग़दर रहा, फिर अग्रेज आय गये।"

हाजी साहब ने भी एक बात सुनायी "हमारे यहाँ के एक जुलाहे सिपाही थे वो (लखनऊ की) छतर मजिल मे नौकर थे। दरिया पार कर भाग कर आये थे। कहते थे कि मुल्की आदमी लूट पाट मे पड गए। इसीलिये अग्रेजो को मौका मिल गया।"

दूसरे बुजुर्ग श्री खुर्शेद दर्ज़ी भी इसी समय पहुँच गये। खुर्शेद मिया हाजी साहब की अपेक्षा लगभग दस वर्ष बडे, नव्वे की आयु के थे, परन्तु उनका स्वास्थ्य हाजी साहब की अपेक्षा अच्छा था।

खुर्शेद दर्ज़ी ने बतलाया "काज़ी बाग मे गोरन से लडाई भयी। मदारपुर कुर्सी का ही एक पुरवा है, हुआ मार काट मची और अली खा के तालाब के पास पीछे हटत-हटत मितैला मा शाही फौज़ हार गई।" कह कर खुर्शेद दर्जी साहब ने हाज़ी अब्दुस्समद की ओर देखा, मानो समर्थन चाहते हो। हाजी साहब अपनी खोपडी सहलाते रहे। श्री खुर्शेद ने अपनी बात फिर आरभ की बोले "हिया मुस्तकिल लश्कर रहा, तोपखाना रहा और जहा चौधरी साहब की कोठी है हुँआ कोतवाली रही।"

"तोपखाना यहाँ मुस्तकिल तौर पर रहता था, या शाही फौज़ के साथ आया था ?"

"नही, तोपखाना बराबर रहत रहे। कुछ फौज तोपखाने मे रही। कुछ शाही फौज वाजिदअली शाह की भाग कर क़ाजी बाग मे आय कर ठहरी।"

हाजी—"लश्कर दौरे पर आवा करत रहे।"

एक भावुक राष्ट्र हैं। हमारे सन्तो की परपरा बुद्ध से लेकर गांधी तक महाभाव सिद्ध पुरुषों की परपरा है। भारतीय किसान मे जो सुन्दरतम है वह गांधी, सूर, तुलसी, कबीर, समर्थ रामदास, नानक, नरसी, चैतन्य आदि मे हमे देखने को मिला है।

मौलवी साहब के यहाँ से हम चलने ही वाले थे कि खबर आई, हाजी साहब और खुर्शेद दर्जी साहब को एक बात और याद आ गई है, उन्होने बुलवाया है। हम लोग चल कर उन बुजुर्गो की सेवा मे उपस्थित हुए। हाजी साहब बोले "देखिये बुढ़ापे का मगज है कुछ बातें निकल जाती हैं। आपके जाने के बाद हम दोनो ख्याल दौडाने लगे। हमने कहा भाई ये तो हमारे बुजुर्गों का हाल लिखा जा रहा है तो हम लोगो को खयाल दौडाना चाहिये। फिर इनके खयाल मे भी एक बात आई और मुझे भी कुछ बातें याद आई। मैंने कहा आप को तकलीफ देकर बुलवा लू।

उनका उपकार मानते हुए मैंने कलम कॉपी सँभाल ली। हाजी साहब ने दो बातें बतलाई। एक तो यह "वालिदा कहती थी कि जब बेगम बिरजिस क़दर को लेकर आईं तो जगह-जगह जेवर और अशर्फिया कुँओ मे फेंकती चली।" दूसरी रवायत यह सुनाई गोरो ने बादशा वजिदअली शाह से कहा कि या तो बारह कोस का राज ले लो या सवा लाख रुपये ले लो। इस पर बेगम बोली जहा इतनी बडी सल्तनत गई वहा बारह कोस का क्या होगा। बादशा के ससुर नकी मिया मुतफन्नी रहें वहे बादशा से गोरन का सल्तनत दिलाय दिहिन। बाद मे बिरजिस कदर ने कहा, तो बादशा बोले, तुम्हारे नाना ने दिला दिया मैं क्या करूँ।"

श्री खुर्शेद दर्जी ने एक कथा सुनाई "गगा बक्स—दो मील पर बेहटाई के—बाप-बेटे बडे बहादर रहे। उयि एक अँग्रेज और मेम को पकड लाये। पिसाव के मुकाम पर मेख ठोक दिहिन। फिर अँग्रेज पकड लै गये। लखनऊ मे सिरकटे नाले पर इनके सिर काटे गये।"

मैंने पूछा आप लोगो मे से किसी ने यह सुना है कि यहा मुल्की लोगो ने अपने ही देश भाइयो को लूटा हो ?"

श्री खुर्शेद बोले · "हा, बेगमे भाग के आईं हैं तो बडी लूट पडी है। हमरे मुल्की लोगो ने मुलुक वालन क लूटा रहा। वही म असरफिन का एक छकडा हमरे यहाँ के दुल्लू—"

"कौन, लल्लू का बाप दुल्लू ?" मैंने पूछा।

"हां, लालू क बाप।"

इन दोनो वुज़ुर्गों का उपकार मान कर मुहल्ला तोपखाना में श्री असगर अली । भेंट की। उन्होंने रिसालदार की चार रडियो की क़ब्रो के निशान दिखलाये जो ाव करीव-करीव मिट्टी मे मिल चुकी हैं। एक आध वुर्ज के निशानात् भी दिख- ाये। श्री असगर अली ने अपनी आयु अस्सी से ऊँची वतलाई। उन्होंने चलते ग्लते एक वात कही "वालिद हमार वयान करत रहैं कि अग्रेज आये। वौडी मा ोगम का पनाह मिली।"

मैंने पूछा "यहाँ लूट पाट हुई ?"

वोले "नाही, वस्ती के लोग भाग गये रहैं।"

हाजी साहव और खुर्शेद दर्जी ने दुवारा वुला कर जो वाते सुनाई थी वे मेरे ध्यान मे घूमने लगी। हाजी साहव की वालिदा के अनुसार वेगम हज़रत महल इधर से होकर गुजरी थी। श्री राम स्वरूप वाजपेई ने भी कल वेगम का मार्ग कुर्सी, देवा, भयारा आदि वारावकी ज़िले के विभिन्न ग्रामो से होकर भिठौली सिद्ध करने का प्रयत्न किया था। हाजी साहव की वात उनका समर्थन करती है। श्री वाजपेई की वात ठीक है या गलत इसका उत्तर विशेषज्ञ विद्वान ही दे सकते हैं। मैं तो केवल जी की एक शका निवेदन करता हूँ, वेगम हज़रत महल नही, वल्कि वेगमे इधर से भाग कर गई हैं। जिस दिन अतिम रूप से लखनऊ का पतन हुआ, उस दिन अग्रेज़ों का मोर्चा मौलवी अहमदुल्ला शाह से अटका था। वेगम दो दिन पहले ही जा चुकी थी।

हाजी साहव की दूसरी वात, कि गोरो ने वाजिदअली शाह से वारह कोस का राज्य या सवा लाख रुपया की वात कही—यह घटना एक ऐतिहाकि वात की जन-श्रुति मात्र है। विरजीस कदर की मा हज़रत महल वाजिद अली की वहुत सी वेगमो मे से एक थी। अली नकी खा खासमहल अर्थात् पटरानी के पिता थे, मगर जनता तो अपनी ही तरह से वादशाह का घर परिवार भी वाँध लेती है।

वाजिद अली शाह ने अपनी काव्य आत्म-कथा 'हुज्ने अख्तर' मे इस प्रसग को यो लिखा है —

"वस अव तर्क तम्दीह कर ऐ जवा। सुना इब्तेदा से तू यह दास्ताँ॥
यह वाजिद अली इब्ने अमजद अली। सुनता है अव दास्ताँ रज की॥
कि जव दस वरस सल्तनत को हुये। जो ताले थे वेदार सोने लगे॥
हुआ हुक्मे जरनल गर्वनरिया यार। करो सल्तनत को खला एकवार॥
जो ये मुल्क मे वैठते सेह करोड। उनकी यह थी वादशाही यह ज़ोर॥

जफाकश का शाहे अवध नाम है। हुकूमत का आखिर यह अन्जाम है ।।
जो वह लाट डिल्होज़ी उस वक्त थे। मज़ामी यह खत मे उन्होने लिखे ।।
रेआया बहुत तुम से नाराज़ है। तुम्हारी रियासत है बदनाम शै ।।
रेआया न देखेगे हरगिज़ तबाह। फकत नाम के तुम रहो बादशाह ।।
महीना हर एक माह एक लाख का। मिलेगा कुछ नही शक जरा ।।
रेज़ीडेन्ट जरनेल औट्रम जो थे। गवरनर का खत मुझको वह दे गये ।।
हुआ घर मे कोहराम सुनकर यह बात। वह दिन दोपहर हो गयी काली रात ।।
वह लायेथे इस तरह की साथ फौज। कि जिस तरह दरिया की आती है मौज ।।
यहाँ जुज़ इताअत न था दिल मे शर। न थी ऐसे दिन की तो हरगिज़ खबर ।।
यह बन्दा बहुत उन दिनो था अलील। कहा दिल ने क्या सोचू इसकी सबील ।।
अली नकी खाँ मेरे थे वज़ीर। वही मेरे हर हाल मे थे मुशीर ।।
मेरे दिल मे आता था हरदम खयाल। जो होना था वह हो चुका क्या मलाल ।।
करो मुहर तुम राजी नामे पे अब। गयी सल्तनत तो कई बे सबब ।।

इस प्रकार वाजिद अली शाह की आत्म कथा से भी उनके पदच्युत होने के साथ ही साथ उनकी उस अमनपसन्दी का परिचय मिलता है, जो किसी वीर या कुशल राजनीतिज्ञ की अमनपसन्दी नही, वरन् विलासी और कायर की शान्ति-प्रियता है। अवध के इस अन्तिम शाह के सबध मे जितना कुछ पढा है, उससे यही अन्दाज़ लगता है, वे भोले और भले थे। अपनी जवानी के आरभिक दिनो मे उन्होने सेना की व्यवस्थित कवायद तथा राज्य शासन का उत्तम प्रबध करने के लिये बडा उत्साह दिखलाया, परन्तु अग्रेजो और अपने बेईमान अफसरो के चगुल से वे मुक्त न हो सके। एक बार शासन की चिन्ता से मुक्त होने के बाद उन्होने अपने आप को नाच रग और विषय विलास मे झोक दिया। फिर उनके पाँव किसी नीति पर न ठहर सके। उनका भोला और भलापन विलासिता की ओर बेछूट बढ जाने पर उनकी विकृतियो का अन्यतम पोषक हो गया। वाजिदअली शाह के सामने जब हम उनके 'परीखाने' की एक परी, उनके एक पुत्र की माता बेगम हजरत महल के व्यक्तित्व को देखते हैं तब वे बेगम के सामने उनके पैरो की धोवन भी नही ठहरते। बचपन मे ही वाजिदअली की कुटनियो के चगुल मे फँसकर नर्तकी बनने वाली अज्ञात कुल शीला स्त्री का विद्रोह सही तौर पर समझने की चीज है। अस्तु।

श्री खुर्शेद दर्ज़ी द्वारा बतलाई हुई रामसिह और उसके बेटे की क्रूरता निस्सन्देह अक्षम्य कायरता का नमूना है। डाक्टर मजूमदार को भारतवासियो की इस

क्रूरता के कारण महान् भारतीय सस्कृति की दुहाई देनी पडी है। गदर की इन घटनाओं के कारण लज्जा के मारे इतिहास के महान पडित का मस्तक झुक-झुक गया है। उनकी तरह शर्म तो मुझे भी आती है, मगर मैं यह नही भूल पाता कि ऐसे कार्य वीरो द्वारा नही वरन उन लोगो द्वारा अधिक हुए है, जो सदियो तक अपने से अधिक शक्तिशालियो के असख्य अत्याचार सहन करते आये थे। महान भारतीय सस्कृति की परपरायें कमजोर क्यो पडी, इसका कारण न देख केवल लज्जा से सिर झुका कर बैठ रहना विद्वान् का काम नही, अधकचरी बुद्धि वाले भावुको का, अथवा स्वपक्ष समर्थन करनेवाले चतुर वकील का काम हो सकता है। मजूमदार महोदय ने ५७ मे 'पुरवियो' की क्रूरता और नृशसता तो देखी, मगर उनकी वहादुरी और उदारता के उदाहरण न देखे, जिनसे उनका मस्तक गौरव युक्त होकर ऊँचा उठता।

नवावगज की लडाई का अमरशहीद, तेंतीस गावो का साधारण जमीदार, चहलारी का ठाकुर वलभद्रसिह सत्तावनी क्रान्ति का ऐसा अनुपम वीर और आचरण-शील युवक था कि उसके विदेशियों द्वारा वर्णित कारनामे किसी भी भारतीय का मस्तक गौरव से ऊँचा उठा देते हैं।

सर होप ग्राण्ट लिखता है "जमीदारी के तेज और वडे साहसी आदमियो की एक वडी सेना दो तोपें लेकर मैदान मे आई और हमारी पिछली कतारो पर हमला किया। मैंने भारत मे अनेक युद्ध देखे हैं, ऐसे अनेक वहादुरो को देखा है, जो विजय अथवा मरण लाभ करने का दृढ निश्चय कर मैदान मे आते हैं, परन्तु मैंने आज तक जमीदारी के इन लोगो के आचरण के समान शानदार और कुछ भी कही नही देखा। ' उनका सरदार लम्बा चौडा पुरुष था और उसके गले मे घेघा था। उस व्यक्ति को किसी भी प्रकार का भय नही झुका पाता था।"

निन्यानवे वर्ष वाद आज भी वारावकी जिले के गाँव-गाँव मे असख्य भारतीय जन की वाणी पर चहलारी के अमर शूर वलभद्र सिह का वास है। जिसे शत्रु मित्र सव सराहे वही वास्तविक विजेता है। अठारह वर्ष का नवयुवक वलभद्रसिह समस्त देश के लिये, विशेप रूप से हमारे नवयुवको के लिये चिरजीवी आदर्श रहेगा। अपने लिये नहीं, वरन अपने देश के लिये, स्वतत्रता के लिये जूझने वाला निष्काम कर्मी अवध की धरती का यह लडैता लाल भारतीय वीरो के इतिहास मे अभिमन्यु की भाँति सदा गौरवशाली स्थान पायेगा।

लौटने पर श्री रामस्वरूप वाजपेई को अपने ठहरने के स्थान पर प्रतीक्षा करते पाया। वाजपेई जी वोले "आप साहवदीन से भी मिल लीजिये। एक सौ चौदह

बरस का बुड्ढा है। उसने नवाबगज की लडाई देखी थी। पिछली १० मई को उसी के बतलाये हुये स्थान पर बलभद्रसिह को श्रद्धाजलि अर्पित की गई थी।"

"नेकी और पूछ पूछ ?" मैंने वाजपेई जी से कहा "मैं तैयार हूँ अभी चलिये।" शाम को लगभग पाँच बजे थे। स्टेशन के पीछे, बहुत करीब ही ओबरी गाँव है। श्री साहबदीन वही रहते थे। ओबरी के उस पुरवे के सामने ही वह मैदान था, जिसमे निन्यानवे वर्ष पहले नवयुवक बलभद्रसिह की सरदारी मे भारतीय जन ने अपने विस्मयकारी स्फूर्ति भरे युद्ध का वह शानदार इतिहास रचा था, जिसे आज के नामचीन्ह इतिहास पडित तो भूल गये परन्तु जनता नही भूली। सन् १८५७ पर पोथे लिखने वाले हमारे स्वनामधन्य इतिहासकार ने अग्रेजो और क्लर्क क्लास के बगालियो की डायरियो के सहारे ग़दर वालो की क्रूरता, नृशसता, जघन्यता, पैशाचिकता आदि-आदि इत्यादि न जाने क्या-क्या सूघ लिया, उसके लिये उनका मस्तक अखिल भारतीय लज्जा के भार से झुक गया। काश कि अंग्रेजो के ही लिखे हुए कुछ ऐसे भी अश उन्होने पढ लिये होते, जिनसे भारतीय सस्कृति और भारत की शान बहुत ऊँची होती है।

कच्ची मिट्टी के घरो वाले साफ सुथरे मुहल्ले मे प्रवेश किया। एक गली घूम, एक बडे आगननुमा मैदान को पार कर हम साहबदीन जी के पास आ पहुँचे। छप्पर के नीचे तख्त पर अपने आगे लिपटा हुआ बिस्तर रख एक दुबला पतला व्यक्ति जिसकी देह की खाल झूल रही थी बैठा, हाफ रहा था। एक सदी से भी कुछ वर्ष अधिक के व्यक्ति को देखना, उससे बातें करना एक बहुत ही अजीब, विस्मय और उल्लासकारी अनुभव होता है। अक्सर बच्चो की तरह से मैं कल्पना करता हू कि मेरा एक हाथ कम से कम बीते हुये सौ सवा सौ वर्षो के भूतकाल को अपने मे समेट ले और दूसरा हाथ कम से कम इतने ही आगामी कलो को। वैसे, बात तो बच्चो जैसी लगती है परन्तु अनहोनी अथवा असम्भव नही। खैर, होगा।

साहबदीन को दमे का आरजा है। दाढी-मूँछ विहीन कठीधारी भगत श्री साहबदीन के सिर मे और बाईं आँख के पास मसेनुमा दाग हैं, गालो की हड्डियाँ उभरी हुई हैं, आँखो की पुतलियाँ पथरा गई है, या कहूँ, अपने आप मे किसी हद तक लय हो गयी हैं। सास फूलती है मगर आवाज़ मे अब तक कडक है। कैडा बतला रहा है कि बदन कभी कसरती और मजबूत रहा होगा। मुह मे अब भी दो चार घिसी हुई दाढें नजर आती है।

मैंने पूछा "आप की उम्र क्या है ?"

"चउदह के हन। वल्कि आँसव चौदही पूर होइकै पन्द्रहिया लागि गा होई।"

हमारे यहाँ आयु के सौ वर्ष पूरे हो जाने पर नये सिरे से उम्र के दिन गिने जाते हैं। सौ के वाद नि सन्देह मनुष्य फिर से बच्चा हो जाता है। स्मृति खो जाती है, अधिकतर मनुष्य गोदी के वच्चो की तरह अपने हर काम के लिये परवश हो जाता है। यद्यपि साहवदीन जी अब भी परवश नही हुये, वे चूँकि कठीधारी भगत होने के कारण किसी के हाथ का छुआ नही खाते, इसलिये स्वय पाकी हैं। उन्हें दो वडे कष्ट है और दो छोटे। वड़े कष्टो मे एक तो यह है कि वे अव केवल एक समय ही भोजन कर सकते हैं, दूसरा यह कि चौदह-पन्द्रह वर्षों से वे सो नही पाये। कभी-कभी वैठे ही वैठे गफलत सी आ जाती है। तीसरी पत्नी है, वह भी लगभग ७५-८० की लपेट मे है। चार पुत्र हैं, नाती पोते अनेक हैं। छोटे दु खो का कारण आँख कान का कमजोर पड़ जाना है।

श्री गुप्त ने कहा "चहलारी के राजा का किस्सा सुनने आए हैं।"

साहवदीन के शरीर मे वैसी ही तत्परता आ गयी जैसी 'सावधान' कहते ही सिपाही मे आ जाती है। मैं उनका वह सवाव देख मुग्ध हो गया।

वे वोले "कहाँ ते सुनाई ? हमका सवु आदि है।"

मैंने कहा "आप जैसे जी चाहे वैसे सुनायें।"

वोले "अच्छा।" और उनकी साँस फूल आई, मैंने यह निश्चय कर कलम-कापी सँभाली कि ये धीरे-धीरे वोलें या तेज, मैं इनका एक-एक शव्द ज्यो का त्यो लिपिवद्ध करूँगा।

साहवदीन जी वतलाने लगे "इनकी अग्रेजन की तोपैं ई जगह कादिरघाट पर लागी रहै और नवावी की तोपैं कपनी वाग मा लागी रहैं। तीन तोपैं रहै।"

"पहले अगरेजन की हार हुइ गई। गोरा वहुत कसा। दोसर-तीसर पल्टन आई, तव हिंदुस्तान कटा, जो वडे-वडे नवावी के रहैं उयि कटे। तव तौ कागज रहै नाही, तौ भोजपत्र पर लिखिआउज भै कि कौन-कौन नामी हैं। तव वलभद्दर सिह का लिखिन। इनकी उमर अठारा वरस रहे। रेखैं फूटित रहैं। याकै दिन पहिले व्याव भवा रहै। अच्छा।"

इतना कह चुकने के वाद अपनी फूलती साँस को नया दम देने के लिये वे सुस्ताने लगे, फिर कहना आरम्भ किया "तव पीलवान कहिसि, अकि सरकार जो हुकुम होय तौ मैं निकाल लै चलौ।—वलभद्दरसिह से। तौ उयि कहिनि कि हम छत्री हुइकै पीठी दिखाउव तौ लोगन के आगे मुँहु कैसे दिखाउव—वैठार

हाथी ! तौ हाथी बैठार दिहिस। हौदा पर से उतर पडे। दून्हौ हाथन ते कब्जा लै लिहिनि। आदमी एक हाथे म ढाल रोकत हयि, उयि दून्हौं हाथन म कब्जा लिहिन औ उतर परे। औरु जैसी बजरा कैसी बाली नाही छाँटति हयि वैसे अगरेजन का काटिन। धन्न है परमातमा उनका अइसन प्राणी। अच्छा।"

साहाबदीन जी फिर हाँफने लगे थे। कुछ देर मौन रहकर उन्होंने फिर अपनी बात बढ़ाई, कहा "तब दुपहर भै कि दून्हौं हाथन से लडत रहे। तौ सरकार साहेब कहिसि अकि ईका मारा न जाय पर एक गोरा घात किहिस, पीछे ते मारिस। तब दुपहर भर बिन गरदन लहास लडी। दूर से सब द्याखैं। तब लहास गिरी नाही। अच्छा !"

क्षणिक विराम के बाद फिर बोले "तउ अगरेज जन्नी पढ़े रहैं। तब एक औरत मँगाई गै, जब उयि लहास छ्यि लिहिस तब गिर पडे। अच्छा !"

'तब इ अगरेज तीन पहर बनोबस्त किहिन। चला नाही। फिर बनोबस्त किहिन उहौ न चला। फिर तिसरी दाँयि बनोबस्त किहिन तब मुलुक मा कुछ-कुछ बनोबस्त भा। फिर रेल भराइन। जहाँ टेसन है उहाँ बँगला रहा।

"फिर जितने राजा महराजा रहे उयि कहिन कि हजार गाँव मैं तहसीलत रहेउँ, कोई कहिसि पानसौ मैं तहसीलत रहेउँ। तौ उनका अगरेज बाँटि दिहिन। कौनो ते एक बिस्वासी नाही लिहिन।"

साहबदीन जी अपनी बात कहकर फिर सुस्ताने लागे। मैंने पूछा "जब गदर हुआ तब क्या आप यहीं रहते थे ?"

"जब गदर भै तब मैं जगनेहटा माँ रहत रहेउँ। मोर पैदावारी वहैं के है।"

"ये जगनेहटा है कहाँ ?"

"वरैल का मौजा लागति है।"

"अच्छा तो आप लोग वहीं रहे ?"

'नही, मोर बाप सबका लैके भिठौली भागि गे रहैं।"

भिठौली नाम सुनकर मैंने पूछा "क्या आपने वहाँ बेगम को भी देखा था ?"

"बेगम " साहबदीन की आखें एक बार कहीं दूर भटकीं और फिर चेहरा खिल उठा, भरे मुह से वोले "हा, द्याखा रहै। हम एक महीना भिठौली माँ रहेन, तब द्याखा रहै।"

'कैसी थी" ? मैंने पूछा।

"बेगम पतरे कद की रहैं। कोई ने परदा नाही किहिन।"

"लम्बी थी, कि ठिगनी ?"

"न वहुत ठिगनी, न वहुत लम्बी ।"

"अच्छा काली थी, या—"

"गोरी रहैं ।" साहवदीन जी ने तुरन्त वात काट कर कहा । उनकी पथराई हुई आँखो की टकटकी मानो भूतकाल से वँध गई थी, "जिस अउरत क सील धरम होत है वइसी रहैं । देउता रहैं ।"

साहवदीन की वातो के सहारे मैं भी भूतकाल को स्पर्श कर रहा था । उनसे मिलकर मेरी वही दशा हो गई थी, जैसे वहुत प्यासे को दो चार घूट पानी मिलने से होती है । इच्छा होती थी काश कि साहवदीन जी की तरह ही मुझे सत्तावन के नायको मे से कोई मिल जाता, जिससे उस समय के सही वाकयात सुनने को मिलते । हमारे पास सन् ५७ का इतिहास नही है । उर्दू मे "कैसरुलतवारीख" है, "सवानहात-ए-सलातीन-ए-अवध" है, "तारीखे अवध" है—मगर इनमे से एक भी ग्रथ सत्तावन के सम्बन्ध मे भारतीय दृष्टिकोण नही प्रस्तुत कर पाता है । मैंने वुजुर्गो से सुना है कि वडे घरो मे, जिनका १८५७ की क्रान्ति से किसी न किसी प्रकार का सच्चा झूठा लगाव था, गदर की वातें वस मुंह ही मुंह मे की जाती थी। वहुतो ने अग्रेजो के भय से पुराने कागज-पत्र जला दिये । एक आध जगह ऐतिहासिक मसाला सहेज कर रक्खा गया था, पर दुर्भाग्यवश सन् १९१५ की विध्वसकारी वर्षा मे वे छिपे-ढके कागज पत्र नष्ट हो गये ।

साहवदीन जी से वाजपेई जी ने पूछा "राजा कहाँ गिरे रहैं ?"

"उइ दिन साहव क वतावा रहे । पाच पेड आम के हैं, वहैं राजा गिरे रहे। यू ओवरी आय, जेहिका असिल नाव ओवागढ रहै ।"

साहवदीन जी से विदा लेकर हम ओवरी के मैदान मे, उस स्थान पर गये जहा एक कतार मे आम के पाच पेड एक ओर और शीशम के दो पेड दूसरी ओर लगे थे । इन्ही के वीच मे वह स्थान है जहा श्री साहवदीन के अनुसार अभिनव अभिमन्यु वलभद्रसिंह ने वीरगति प्राप्त की थी । विगत १० मई के दीपदान के दिये विखरे पडे थे । यह स्थान वारावकी स्टेशन के पश्चिम मे है । इसके पश्चिमोत्तर कोण मे रेठ नदी के ऊपर रेल का पुल वना है । लगभग आध मील दूर वह कादिरघाट और शाही पुल है, जिसका जिक्र साहवदीन जी ने किया था, और जहा से रेठ पार कर अग्रेज लखनऊ से इधर आये थे ।

थोडी देर के लिए मैं अपने को भूल गया । झुटपुटी साँझ मेरी कल्पना के युद्ध

दृश्य को दूर-दूर तक फैले हुए सूने मैदान मे उतर लाई। हजारो की सख्या मे घुडसवार और पैदल सैनिक एक दूसरे से गुथे हुए एक झलक भर के लिये नजर आये। मुझे ऐसा लगा कि तोपो की गरज से धरती लरज रही है। जुझारू बाजो और वीरो के रण हुकारो से वेखुदी बढती चली जा रही है। घेघे वाला लम्बे चौडे शरीर का अट्ठारह वर्षीय नवयुवक बलभद्र सिह अपने रण कौशल से शत्रुओ के लिए प्रलय उपस्थित करता हुआ यह गिरा। और देश की आजादी के लिए धरती को अपना रक्तदान दे गया। वीर बलभद्रसिह, तुम्हारा शौर्य इस देश को सदैव प्रेरणा देता रहेगा। तुम्हें शत-शत प्रणाम ! कोटि-कोटि प्रणाम !!

महादेवा

६ जून। हम लोग महादेवा के लिए प्रस्थान कर रहे हैं। मैं पिकअप पर बैठा हूँ। श्री गुप्त कार्यवशात् सामने के घर मे किसी से मिलने गये हैं। पान लगाने के लिये वटुआ खोला।

नोट बुक उसी बटुए मे रक्खी थी, उसे देख मन दौडा कि देखो आज इस कापी मे क्या जुडता है, और 'कापी' शब्द के ध्यान से एक पुरानी बात याद आ गई। स्कूल मे हमारे अग्रेजी के अध्यापक इस बात पर बहुत जोर देते थे कि 'कापी' नही 'कापी बुक' कहा जाय और कापी बुक तथा नोट बुक मे अन्तर माना जाय। परन्तु लडके, सिले हुए कोरे या रूलदार कागजो की गड्डी को सदा 'कापी' ही कहते थे। अब तक आम तौर पर लोग नोट बुक या कापी बुक इत्यादि न कह कर बोल चाल मे कापी ही कहते हैं। यह शब्द भले ही अग्रेजी का सही, मगर अब तो हिन्दी भाषी जनता का है। और उसका रूप भी स्वतत्र हो गया। बगैर अग्रेजी पढा-लिखा व्यक्ति नोट बुक या कापी बुक शब्दो के अर्थ नही समझ पाता परन्तु 'कापी' शब्द का अर्थ वह सही तौर पर जानता है।

विचार आता है कि 'कापी' की तरह ही हमारी बोल चाल की भाषा मे 'गदर' शब्द भी अपना स्वतत्र व्यक्तित्व पा चुका है। बोल चाल की भाषा के इस शब्द का अर्थ अब केवल सिपाही विद्रोह तक ही सीमित नही रह गया। 'गदर' मचना या 'गदर' पडना हमारी बोल चाल के मुहावरे मे है जिसका अर्थ भारी उथल-पुथल मचना है। मेरे स्कूल के मास्टर की तरह ही शुद्धता के समर्थको को 'गदर' शब्द सत्तावनी क्रान्ति के लिये हलका और अपमानजनक प्रतीत होता है। ऐसे विद्वानो की भावना का हृदय से आदर करते हुए भी मैं अब सत्तावनी क्रान्ति को 'गदर' के नाम से पुकारने मे न झिझकूंगा।

सत्तावनी गदर के सबध मे डॉक्टर मजूमदार महाशय को आपत्ति है। उनकी मान्यता है कि यह कोरा सिपाही विद्रोह था इसका जनता से कोई लगाव नही था, और यह असगठित और अनियोजित था। अपनी यात्रा के इस पहले जिले मे ही मुझे महामान्य पडित प्रवर की यह भभकी झूठी प्रतीत होती है। सत्तावनी क्रान्ति मे सिपाही विद्रोह तो था ही, साथ ही जनता भी इसमे पूर्णरूप से सम्मिलित थी, सामन्त वर्ग भी सगठित होकर विदेशी शत्रुओ को देश से बाहर निकालने के लिये प्राणपण से डटा हुआ था। गदर के आरभ होते समय विभिन्न पूर्वी जिलो की सेनायें आ आ कर नवाबगज मे एकत्र हुई थी। अवध के ताल्लुकेदार-रजवाडे भी आये थे। ३० जून सन् ५७ को सब ने सगठित होकर चिनहट के मैदान मे अंग्रेजो को परास्त किया था। उस दिन दरियाबाद मे लोगो से गदर के कितने ही ऐसे शहीदो के नाम मालूम हुए जो जनसाधारण के प्रतिनिधि थे।

इस जिले मे यह आमतौर पर प्रचलित है कि लखनऊ से परास्त होने के बाद बेगम हजरत महल बिरजीसक़दर को लेकर बाराबकी जिले से होकर भिठौली के गढ मे पहुँची थी। इस बात को लेकर कल रात से मेरा मन एक नये दृष्टिपथ पर दौड रहा है। यह अब भी मानता हूँ कि वे इतिहासो मे उल्लिखित मार्ग द्वारा ही भिठौली पहुँची थीं परन्तु यह भी सम्भव है कि वे लखनऊ या भिठौली मे रहते हुये जगह-जगह के दौरे किया करती हो। रसल के कथनानुसार उन्होंने सारे अवध मे उत्तेजना भर दी थी।

उन्होने अग्रेजो को मोर्चा देने के लिये जमीदारो के दल सगठित किये थे। इस लिये सभव है कि उन्होने हजरतपुर और महादेवा मे राजाओ की सभायें की हो। किवदतिया कितनी ही गलत क्यों न हो फिर भी अपने अन्दर वह आमतौर पर एक बड़ा सत्य छिपाये रहती हैं, यह मैंने अक्सर पर आजमाया है।

बेगम का भिठौली मे बैठना ही यह सूचित करता है कि उन्होंने एक ऐसे स्थान को चुना था जो सहसा या, आसानी से जीता नही जा सकता था। शत्रु की सेनाओं का वहाँ तक पहुँचना भी कारेदारद था।

भिठौली रैकवार राजपूतो की गढी थी। बौंडी के हरदत्त सिह, चहलारी के बलभद्र सिह, भिठौली के गुरुबख्श सिह, रुइया के नरपत सिह आदि सभी प्रमुख सामन्त रैकवार राजपूत थे। बैसवारा राणा बेणीमाधव बख्श के नेतृत्व मे सगठित था। भिठौली मे बैठकर बेगम सब से सदा निकट सम्पर्क स्थापित कर सकती थी।

क्या यह बात बेगम की कार्य-कुशलता पर प्रकाश नही डालती? स्वय अग्रेज

भी स्वीकार कर चुके हैं कि नवाबगज मे बहराइच और सीतापुर के जमीदार लडे— तब क्या यह सत्य स्वतत्रता सग्राम का द्योतक नही ? सत्तावन का विद्रोह क्या केवल फौजी सिपाहियो तक सीमित था ?

औरो को क्या कहूँ, स्वय मेरी ही यह धारणा थी कि गदर मे भाग लेने वाले सामन्त अपने-अपने स्वार्थों के लिये लडे, इनका कोई सगठन नही था। परन्तु अवध के इन छोटे बडे सामन्तो और बिहार के बाबू कुँवरसिंह और अमरसिंह के सगठन को देख कर मेरी पूर्व धारणा गलत सिद्ध हो जाती है। महारानी लक्ष्मीबाई के शौर्य और बेगम हजरत महल की कार्य-कुशलता तथा सगठन शक्ति देख कर राष्ट्र के स्वाभिमान मे क्या हमारी आस्था नही जमती ? मौलवी अहमदुल्लाशाह और तात्या टोपे का हर जगह जा कर लडवैयो का हुजूम बटोर लेना क्या सत्तावनी क्रान्ति को जन-क्रान्ति सिद्ध नही करता ?

मैं इतिहासकार नही, इतिहास का पडित भी नही। हाँ अपने देश के इतिहास के प्रति जिज्ञासु अवश्य हूँ। हाल ही में प्रकाशित होनेवाले, अपने स्वनामधन्य इतिहासकारो द्वारा लिखित सत्तावनी क्रान्ति के इतिहासो से मेरे मन मे बडा क्षोभ है। अचानक जमी-जमाई आस्था को धक्का लगने के कारण नही, वरन् इसलिये क्षुब्ध हूँ कि हमारे राष्ट्रीय स्वाभिमानरहित स्वनामधन्य इतिहासकारो ने एक ऐसे सत्य को, जिसका जनचेतना से बहुत गहरा लगाव है, महज ऊपरी तौर पर टटोल कर अपना फतवा दे डालने का दम्भ करता है। कोई भी क्यो न हो, बडे से बडा व्यक्ति क्यो न हो एक राष्ट्र के सम्मुख वह अपना झूठा दम्भ लेकर नही आ सकता, सत्-विद्रोह को लेकर आना और बात है।

हम लोग रामनगर रुके। मैं यहाँ के एक सज्जन का नाम-ठाम अपने साथ लिख कर लाया था। वे न मिले। रामनगर के राजा के सबध मे भी मालूम हुआ कि बाहर हैं, यद्यपि आज उनके लौट आने की आशा है। इन सज्जनो से मैं भिठौली के सबध मे जानकारी प्राप्त करना चाहता था। खैर, हम लोग कुछ देर के लिए रामनगर ब्लाक के एक अधिकारी महोदय के यहाँ रुके। वहाँ कई लोग थे। गदर बटोरने वाले आदमी से अक्सर लोगो को दिलचस्पी हो ही जाती है। बहाने से लोग बातें करने लगते हैं। एक सज्जन ने मुझे रुदौली के फौजदार शाह का किस्सा सुनाया। ये फौजदार शाह फकीर दरअस्ल गदर के एक सिपाही थे जो गदर बिखरने पर अपनी तलवार लिये भाग कर रुदौली पहुँच गये थे। कहा जाता है कि तलवार म्यान से निकलने पर शत्रु को

मारे बिना म्यान मे नही जाती। इसलिये फौजदार शाह की तलवार सदा बाहर ही रही और जब वे मरे तब उनकी वसीयत के अनुसार उनकी तलवार भी उनके साथ ही उनकी कब्र मे दफन की गई। अस्तू।

महादेवा पहुँचे। यह स्थान इस ज़िले मे अत्यन्त पावन माना जाता है। जन धारणा है कि स्वय धर्मराज युधिष्ठिर ने इस मूर्ति की प्रतिष्ठा की थी।

हम महन्त जी के द्वारे पहुँचे। उनके मकान का फाटक बहुत बडा था। अन्दर जोगिया गिलाफ की मसनद रक्खे एक सादे वस्त्रधारी पण्डित जी विराजमान थे। यही महन्त जी थे। महन्त जी बडे सरल और सज्जन हैं, देहरादून या हरद्वार की ओर के हैं। भोजन के लिये आग्रह करने लगे। ना कहने पर भी प्रसाद के लड्डू मगवा कर खिलाये। महन्त जी को महादेवा के गदर सम्बन्धी इतिहास का पता नहीं, बीस-बाईस वर्षों से ही यहाँ रहते हैं। इस स्थान पर महादेव जी की प्रतिष्ठापना के सम्बन्ध मे उन्होने कहा "मैंने स्वय जाँच कर देखा है। मूर्ति बहुत प्राचीन तो नही, फिर भी महाभारत के समय की अवश्य है। महाराज युधिष्ठिर अपने वनवास काल मे यहा रहे थे, सब पाण्डवगण इनकी पूजा करते थे।"

पावन क्षेत्र मे प्रवेश किया, महादेव शिव के दर्शन किये। यो एक जगह अमली तौर पर भी मैं जाति पाँति और धर्म के पचडो से मुक्त मनुष्य हू, पर इसके साथ ही साथ मैं जन्म से ब्राह्मण और शैव परिवार का हूँ। मेरे ब्राह्मणत्व ने बचपन मे सस्कारवश ऊँच नीच तो जाना पर किसी को नीच कहकर अपमानित करना नही जाना, मनुष्य मे घृणा करने का सस्कार नही पडा। मेरा शिव किसी को सहसा अशिव नही मानता और जब मानता है तो उसके बुरे कार्य को ही। इसलिए जाति-पाँति-धार्मिक आस्था मेरी राह का रोडा कभी नही बन पाई। खैर, यह तो सफाई देते हुये प्रसग से बाहर चला गया—कहना यह चाहता था कि मैं आस्था से शैव हू। भोले भण्डारी को ध्यान मे लाते ही मेरा मन ऊँचा उठता है, भर जाता है।

फिर अपने आपे मे आते ही कलम कापी सम्हाल ली। वहाँ के प्रधान पुजारी पण्डित महावीर प्रसाद अवस्थी से महन्त जी ने इतनी देर मे शायद बात कर रक्खी थी, अवस्थी जी तुरन्त बोले 'महादेवा मे गदर का बडा इतिहास है। आइये विराजिये, आपको विस्तार से सुनाता हूँ।

"हाँ, तो जब चिनहट का जुद्ध समाप्त भया तो ये लोग—बेगम, हरदत्त सिह बौंडी, राजा देवीबक्स गोडा वाले, राजा गुरुबकस सिह रामनगर वाले—ये सब यहीं

पर आयके एकत्र भये। राम चौतरा पर जहाँ रामलीला होती है ये सब जुटे और आगे का उपाय सोचा कि अब कैसे जुद्ध चलावैंगे।

"राजा देवीबकस गोडा वाले को बाबा पर बिसेस भक्ति थी। मदिर के अन्दर ये पत्थर का काम उन्होने ही बनवाया और गौरीशकर पण्डा के पूर्वज शिवगुलाम पण्डा को पाँच सौ बीघा भूमि सकल्प मे दी महाराज। और ये चाँदी के द्वार हैं सो रामनगर के महाराज उदित नारायण सिह ने लगवाये। इनके दादा ने गदर लडे थे महाराज। गुरुवकस सिह रामनगर वाले रहे जिनके सतँसी के किले* मे वेगम का बास भया था। रामनगर किला तोपन से उडाय दिया, यहाँ से होके ही अँगरेज लोग गये थे। यहाँ भी गोला बारी हुआ। यहाँ से जायके सतँसी का किला भी तोप से उडाय दिया। घाघरा के आरपार रामनगर के दो किले रहे महाराज तौ, बचाने के लिये रामनगर के राजा गुरुवकस सिह के बेटे सर्वजीत सिह ने कहा कि मेरा पिता से बटवारा हो गया है। पिता सतँसी मे रहते हैं। मैं राजभक्त हूँ। फिर भी आपने हमारे किले को नास कर डाला। इस प्रकार तब से ही रामनगर के राजा सर्वजीत सिह हुइ गये। राजा गुरुबकस भाग गये। गदर ठडा होने पर आये पर राजा नही माने गये।

"तौ राजा सर्वजीत सिह की कादिरजहा नाम की एक वेगम रही। राजा साहव ने प्रेमवस होकर अपना पूरा राज्य उसके नाम लिख दिया। तव उनके पुत्र राजा नारायण सिह ने मुकदमा लडा और अत मे जीते महाराज। उन्होने पाँच गाँव कादिर-जहा वेगम को दिये और कहा कि आप हमारी माता हैं, आपके गुजारे के निमित्त यह देता हूँ। मुकदमा जीतने के उपलक्ष्य मे उन्होने मन्दिर के किवाडो पर चादी चढवाई।

"वावा का वडा माहात्म है महाराज। इनका प्राचीन नाम शैल मल्लिकार्जुन है। द्वादश ज्योतिर्लिङ्गो मे यह एक पीठ है। यह महादेवा है महाराज। इसकी राजधानी रामनगर सो प्राचीन नाम शैलकनगर था महाराज। फिर कोई काल ऐसा आया कि शकर भगवान का मन्दिर इस स्थान से लुप्त हो गया। फिर वडे समय के उपरान्त एक वडे पहुँचे भये महात्मा इस स्थान पर आये और रहने लगे। तौ एक दिन स्वप्न मे उन्हे वावा ने कहा कि मैं पण्डित लोधेराम अवस्थी के खेत मे हूँ। मुझे निकालो। पण्डित लोधेराम हमारे पूर्वज थे महाराज, वडे तेजस्वी शुद्ध विद्वान ब्राह्मण थे महाराज। तौ उनसे महात्मा ने कहा। फिर प्रमाण लैके खेत खुदाया तौ

*सत्ताइस इलाको का क्षेत्र सतँसी कहलाता है। भिठौली का किला सतँसी क्षेत्र का प्रमुख गड था, अत सतँसी का किला भी कहा जाता था।

बावा प्रकट भये। इसी से यह स्थान लोधेश्वर भी बाजता है। यहाँ एक पुजारी परिवार है पण्डित लोधेराम अवस्थी का और दूसरी महन्त जी की गद्दी है, चढावा आधा आधा बँटता है। ये इस स्थान का इतिहास है और बावा का वडा चमत्कार है महाराज, दूर-दूर से हजारो यात्री आता है।"

पुजारी जी तथा महन्तजी से विदा लेकर हम महादेवा से चले।

भिठौली जाने की इच्छा मन मे ही रह गयी। मार्ग दुर्गम था। एक नाला और घाघरा पार करने की समस्या थी फिर चार मील का रेतीला मैदान था। पिक-अप के वहाँ तक पहुँचने मे असुविधा थी। मैं नाव से घाघरा पार कर पैदल चलने को प्रस्तुत था, गुप्तजी भी जोश दिखाने लगे पर पर न जा सके।

हैदरगढ भी न गया। वहा नेपाल के राणा जगवहादुर और उनकी गोरखा सेना से वारावकी ज़िले वालो का जोरदार मोर्चा हुआ था। वहाँ से भी सामग्री मिलने की पूरी सम्भावना थी। पर इच्छा दवा गया। मेरे सामने स्वेच्छा से निश्चित की हुई एक अवधि है जिसमे मुझे अपना काम पूरा करना है। ज्ञानार्जन की धुन भी है, रोज़ की रोटी की व्यवस्था का ध्यान भी है। मैं यथासम्भव सब को साध कर चलता हूँ। यही सब सोच समझ कर भिठौली और हैदरगढ़ का प्रोग्राम काट दिया।

फिर भी अपनी सोद्देश्य अवध यात्रा के प्रथम चरण पर मुझे यह विश्वास हो गया है कि सन् सत्तावन से सवधित सौ वर्ष पुरानी बातें अभी एक दम मे लुप्त नही हुई। सवसे वडी वात तो यह है कि वारावकी ज़िले ने वलभद्र सिह को अब तक वडी शान से जीवित रक्खा है। वलभद्र सिह चहलारी के होकर भी नवावगज, वारावकी के अमर नायक हैं।

सोल्जर वोर्ड के विश्रामगृह मे, जहाँ मैं ठहरा था, एक सज्जन ने मुझे पीतल का एक वडा सा गोल तमगा लाकर दिखाया, कहा "आप ग़दर की हिस्ट्री वटोर रहे हैं, यह तमगा भी गदर का ही है। जो सिपाही अँग्रेज़ी फौजो के साथ लडकर मरे थे, उनके घर वालो को इनाम मे मिला था।" दिवगत देशद्रोहियो के पट्टे पर लिखा है, 'वह स्वतत्रता और स्वाभिमान के लिये मरा।" यह भी अच्छा मज़ाक़ रहा।

दूसरे दिन दरियावाद मे भारत सेवक समाज का दीक्षान्त समारोह था। वारावकी के उत्साही, साहित्य तथा इतिहास प्रेमी युवक डिप्टी कमिश्नर श्री शिवप्रसाद पाण्डेय के आग्रह से उसमे सम्मिलित होने के लिये रुक गया।

शाम को गदर के वीरो का शानदार जलूस निकला। एक जगह पार्टी हुई। किले के मैदान मे जलसा हुआ। मुझे मतलव की एक सूचना और मिल गई। फतेहपुर

तहसील (जिला बाराबकी) के पुराने काग्रेसी नेता श्री कयामुद्दीन ने बतलाया कि बेगम हजरत महल फतेहपुर होकर गई थी। उनके उस्ताद मौलवी अबुल कासिम के वालिद, फतेहपुर मे ही रुक गये। अशर्फियो की गाडिया वही रह गई।"

श्री लक्ष्मीसागर गुप्त भी फतेहपुर के ही है बोले, "हमारे यहाँ एक नीम के पेड पर तिरासी फाँसिया दी गई थी।

दरियाबाद से ही मैं फैजाबाद की गाडी पर सवार हो गया।

फैजाबाद

फैजाबाद, ८ जून। फैजाबाद का नाम गदर के इतिहास मे मौलवी अहमदुल्ला शाह के कारण बहुत प्रसिद्ध हो गया है। यद्यपि यह मार्के की बात है कि मौलवी अहमदउल्ला शाह फैजाबाद नगर या जिले के निवासी नही थे।

इन्तजामुल्ला शाहबी द्वारा सकलित 'बेगमात-ए-अवध के खुतूत' मे एक पत्र है जिसमे वाजिदअली शाह की एक पत्नी शैदा बेगम ने अपने पति को लिखा है— "घास मडी मे मौलवियो का जमाव है। सुना है कि एक सूफी अहमदउल्ला शाह आये हुये है। नवाब चीना-टीन के साहबजादे कहलाते हैं। आगरे से आये हैं। ये भी सुना है कि उनके हजारहाँ मुरीद हैं और वो पालकी मे निकलते हैं। आगे डका बजता होता है पीछे अजदहाँ बडा होता है।"

सवान-हात-ए-सलातीन ए-अवध के अनुसार—"अहमदुल्ला शाह फ़कीर रहने वाला मन्दराज या दकन का कई बरस से लखनऊ मे घसियारी मडी मे रहा करता था। मशहूर नक्कारा शाह इत्तिफाकन किसी इरादे से फैजाबाद गया, सरा मे उतरा था। किसी बरकन्दाज से फसाद किया। क़ैद होकर नील की पल्टन मे था। जब हगामा बरपा हुआ, फकीर समझ कर छोड दिया गया। पहले फौज ने चाहा इसे अपना अफसर कर हमराह सरपरस्त हो, लेकिन इसकी बातो से डरे कि हिन्दू से नफरत रखता है, इन्तकाम हनूमानगढी के वास्ते भी कहता है, इससे हिन्दू मुस्लिम मूरत फसाद निकले इससे अफसर न किया।"

मौलवी अहमदउल्ला शाह की प्रारभिक जीवनी के सबध मे बहुत सी बातें प्रचलित है। कोई इन्हे टीपू सुल्तान का सबधी बतलाता है, कोई इनका मूल स्थान चिगलपटम् कोई अरकाट बतलाता है। लखनऊ के बडे बूढो मे अब तक यह रवायत चली आती है कि मौलवी साहब की सवारी के आगे निशान डका बजता चलता था और वे डका शाह कहलाते थे। इनके सैकडो मुरीद थे। कहते हैं कि इनके चेले जनता के सामने अगारे चबाने का प्रदर्शन करते थे, कहते थे कि अगारे चबायेंगे

और आग उगलेंगे। यह भी सुनने मे आया है कि अयोध्या की हनुमान गढी पर जेहाद अथवा धर्मयुद्ध कराने के इरादे से यहाँ आये थे।

जो हो, मुझे यह वात तो प्राय निश्चित् सी ही लगती है कि ईसाइयो की हुकूमत के प्रति उनका विरोध धार्मिक वैमनस्यता के कारण ही था। हिन्दुओ के प्रति हो सकता है कि आरभ मे इन्हे लगाव न रहा हो, परन्तु वाद मे उनकी नीति वदल गई थी। वे अग्रेजो के समान शत्रु हिन्दू रजवाडो के साथी भी हो गये थे। वेगम हज़रत महल की सरकार से भी उन्होने जहाँ तक अग्रेजो को हराने का प्रश्न था, समझौता किया। राणा वेणीमाधव वख्श से उनका पत्र-व्यवहार चलता था। फैज़ावाद रायबरेली, सीतापुर, लखनऊ और उन्नाव के ज़िलो मे मौलवी साहव के तूफानी दौरे हुआ करते थे। कहते है कि इनके भाषणो से आग वरसती थी। जनता मे इनकी चामत्कारिक दैवी शक्तियो की वडी धूम थी। अस्तु।

फैज़ावाद मे मौलवी साहव के सवध मे जानकारी वटोरने के अतिरिक्त अयोध्या की जन्मस्थान मस्जिद को लेकर गदर से तीन चार वर्ष पहले जो मारकाट मची थी, उनके सबध मे भी जानना चाहता था। सन् १८५३ के साम्प्रदायिक युद्धकाण्ड मे अवध के उन अनेक हिन्दू सामन्तो ने भाग लिया था जो वाद मे हरा झडा लेकर वहादुरशाह और वेगम हज़रत महल के नाम पर अग्रेज़ो से लडे थे। यह कम आश्चर्य की वात नही, साथ ही उत्साहवर्द्धक भी है।

प्रात काल अयोध्या पहुँचा। अयोध्या ऐतिहासिक खडहरो की वस्ती है। खडहरो के ऊपर ही आज के अधिकाश धार्मिक स्थान वने है।

राम की अयोध्या का यह ध्वस्त रूप देखकर मेरा मन कुछ क्षणो के लिये व्यथित हो गया।

अयोध्या का प्राचीन वैभव वाल्मीकीय-रामायण मे इस प्रकार देखने को मिलता है, "सरयू नदी के किनारे, धन धान्य मे भरपूर दिन दिन खूब वढने वाला कोशल नाम का वडा प्रदेश है। उस प्रदेश मे सुप्रसिद्ध महाराज मनु की वसाई अयोध्या नगरी है। (अयोध्या का अर्थ है जिसके साथ युद्ध न किया जा सके।) यह नगरी वारह योजन (अडतालीस कोसो) लम्वी और तीन योजन (वारह कोस) चौडी है। उसकी वडी वडी सडकें और चारो ओर के वडे-वडे दरवाज़े वडी सुघराई से वनाये गये हैं। उसके भीतर की सडकें सुन्दर सुन्दर फुलवाडियो से सजी हुई हैं। वहाँ सडको पर खूव छिडकाव होता रहता है। देश को वढाने वाले महाराज दशरथ ने उस नगरी को इन्द्र की अमरावती पुरी की तरह वसाया। यह किवाड और वदनवारो से

तहसील (जिला बाराबकी) के पुराने काग्रेसी नेता श्री कयामुद्दीन ने बतलाया कि बेगम हज़रत महल फतेहपुर होकर गईं थी। उनके उस्ताद, मौलवी अबुल कासिम के वालिद, फतेहपुर मे ही रुक गये। अशर्फियो की गाडिया वही रह गईं।"

श्री लक्ष्मीसागर गुप्त भी फतेहपुर के ही है बोले, "हमारे यहाँ एक नीम के पेड पर तिरासी फाँसिया दी गई थी।

दरियाबाद से ही मैं फैजाबाद की गाडी पर सवार हो गया।

फैजाबाद

फैजाबाद, ८ जून। फैजाबाद का नाम गदर के इतिहास मे मौलवी अहमदुल्ला शाह के कारण बहुत प्रसिद्ध हो गया है। यद्यपि यह मार्के की बात है कि मौलवी अहमदउल्ला शाह फैजाबाद नगर या जिले के निवासी नही थे।

इन्तज़ामुल्ला शाहबी द्वारा सकलित 'बेगमात-ए-अवध के खुतूत' मे एक पत्र है जिसमे वाजिदअली शाह की एक पत्नी शैदा बेगम ने अपने पति को लिखा है— "घास मडी मे मौलवियो का जमाव है। सुना है कि एक सूफी अहमदउल्ला शाह आये हुये है। नवाब चीना-टीन के साहबज़ादे कहलाते हैं। आगरे से आये है। ये भी सुना है कि उनके हज़ारहाँ मुरीद हैं और वो पालकी मे निकलते हैं। आगे डका वजता होता है पीछे अज़दहाँ बडा होता है।"

सवान-हात-ए-सलातीन ए-अवध के अनुसार—"अहमदुल्ला शाह फकीर रहने वाला मन्दराज या दकन का कई वरस से लखनऊ मे घसियारी मडी मे रहा करता था। मशहूर नक्कारा शाह इत्तिफाकन किसी इरादे से फैजाबाद गया, सरा मे उतरा था। किसी वरकन्दाज़ से फसाद किया। कैद होकर नील की पल्टन मे था। जव हगामा वरपा हुआ, फकीर समझ कर छोड दिया गया। पहले फौज ने चाहा इसे अपना अफसर कर हमराह सरपरस्त हो, लेकिन इसकी वातो से डरे कि हिन्दू से नफरत रखता है, इन्तकाम हनूमानगढी के वास्ते भी कहता है, इससे हिन्दू मुस्लिम सूरत फसाद निकले इससे अफसर न किया।"

मौलवी अहमदउल्ला शाह की प्रारभिक जीवनी के सबध मे बहुत सी वातें प्रचलित है। कोई इन्हे टीपू सुल्तान का सबधी बतलाता है, कोई इनका मूल स्थान चिंगलपटम् कोई अरकाट वतलाता है। लखनऊ के वडे बूढो मे अब तक यह रवायत चली आती है कि मौलवी साहब की सवारी के आगे निशान डका बजता चलता था और वे डका शाह कहलाते थे। इनके सैंकडो मुरीद थे। कहते हैं कि इनके चेले जनता के सामने अगारे चबाने का प्रदर्शन करते थे, कहते थे कि अगारे चबायेंगे

और आग उगलेंगे। यह भी सुनने मे आया है कि अयोध्या की हनुमान गढी पर जेहाद अथवा धर्मयुद्ध कराने के इरादे से यहाँ आये थे।

जो हो, मुझे यह वात तो प्राय निश्चित् सी ही लगती है कि ईसाइयो की हुकूमत के प्रति उनका विरोध धार्मिक वैमनस्यता के कारण ही था। हिन्दुओ के प्रति हो सकता है कि आरभ मे इन्हे लगाव न रहा हो, परन्तु वाद मे उनकी नीति वदल गई थी। वे अग्रेज़ो के समान शत्रु हिन्दू रजवाडो के साथी भी हो गये थे। वेगम हज़रत महल की सरकार से भी उन्होने जहाँ तक अग्रेज़ो को हराने का प्रश्न था, समझौता किया। राणा वेणीमाधव वख्श से उनका पत्र-व्यवहार चलता था। फैज़ावाद रायवरेली, सीतापुर, लखनऊ और उन्नाव के ज़िलो मे मौलवी साहव के तूफानी दौरे हुआ करते थे। कहते है कि इनके भाषणो से आग वरसती थी। जनता मे इनकी चामत्कारिक दैवी शक्तियो की वडी धूम थी। अस्तु।

फैज़ावाद मे मौलवी साहव के सवध मे जानकारी वटोरने के अतिरिक्त अयोध्या की जन्मस्थान मस्जिद को लेकर गदर से तीन चार वर्ष पहले जो मारकाट मची थी, उनके सबंध मे भी जानना चाहता था। सन् १८५३ के साप्रदायिक युद्धकाण्ड मे अवध के उन अनेक हिन्दू सामन्तो ने भाग लिया था जो वाद मे हरा झडा लेकर वहादुरशाह और वेगम हज़रत महल के नाम पर अग्रेज़ो से लडे थे। यह कम आश्चर्य की वात नही, साथ ही उत्साहवर्द्धक भी है।

प्रात काल अयोध्या पहुँचा। अयोध्या ऐतिहासिक खडहरो की वस्ती है। खडहरो के ऊपर ही आज के अधिकाश धार्मिक स्थान वने है।

राम की अयोध्या का यह ध्वस्त रूप देखकर मेरा मन कुछ क्षणो के लिये व्यथित हो गया।

अयोध्या का प्राचीन वैभव वाल्मीकीय-रामायण मे इस प्रकार देखने को मिलता है, "सरयू नदी के किनारे, धन धान्य से भरपूर दिन दिन खूब वढने वाला कोशल नाम का वडा प्रदेश है। उस प्रदेश मे सुप्रसिद्ध महाराज मनु की वसाई अयोध्या नगरी है। (अयोध्या का अर्थ है जिसके साथ युद्ध न किया जा सके।) यह नगरी वारह योजन (अडतालीस कोसो) लम्बी और तीन योजन (वारह कोस) चौडी है। उसकी वडी वडी सडकें और चारो ओर के वडे-वडे दरवाज़े वडी सुघराई से वनाये गये हैं। उसके भीतर की सडकें सुन्दर सुन्दर फुलवाडियो से सजी हुई हैं। वहाँ सडको पर खूव छिडकाव होता रहता है। देश को वढाने वाले महाराज दशरथ ने उस नगरी को इन्द्र की अमरावती पुरी की तरह वसाया। यह किवाड और वदनवारो से

सुशोभित थी। उसकी दूकान सुन्दर सजी हुई थी। यहाँ सब तरह की कलें और अस्त्र शस्त्र मौजूद रहते थे, सब प्रकार के शिल्पकार मौजूद थे। सूत और मागधो मे सयुक्त तथा वडी सुन्दर चमकती हुई ऊँची नीची अटारियो और ध्वजाओ से अयोध्या सुशोभित थी। वहाँ सैकडो शतघ्नी (एक प्रकार की तोप) शस्त्रादि रक्खे रहते थे। वहाँ पर नाचने, गाने वालो की कमी न थी। उसमे अमराई से और साखुओ से सयुक्त वगीचे थे। अगाध खाई मे घिरी रहने के कारण वह सर्व साधारण के लिए दुर्गम थी। शत्रुओ की दाल तो उनमे गल ही न सकती थी। वह घोडे, ऊँट इत्यादि पशुओ से भरी हुई थी। सामन्त नरपति कर लिये हाजिर रहते थे। वह नाना देशवासी व्यापारियो से सुशोभित थी। रत्नो से वनी हुई पर्वताकार अटारिया उसकी शोभा वढा रही थी। उसमे स्त्रियो के वडे सुन्दर क्रीडागृह हैं, कूटागार तो अमरावती के तुल्य सुशोभित हैं। उसके गृह समूह अत्यन्त दृढ और समभूमि पर बने हुए हैं। उनमे शिल इत्यादि उत्तम तण्डुल और ऊख के रस के समान मीठा जल भरा रहता है। वहाँ नगाडे, मृदग, वीणा और ढोलक वजते रहते हैं। अयोध्या, तपस्या मे प्राप्त सिद्धो के विमान की तरह है। उसके सुन्दर भवनो मे श्रेष्ठ पुरुष रहते हैं।"

अयोध्या का एक मनोहर वर्णन कालिदास ने भी किया है—"अयोध्यापुरी क्षत्रियो के तेज की शमी, धनधान्य से पूरित दिव्य नगरी ऐसे जान पडती थी मानो भोग के भार से वह स्वर्ग से पृथ्वी तल पर उतर आई हो।"

अथर्ववेद के द्वितीय खण्ड मे लिखा है—"देवताओ की वनाई अयोध्या मे आठ महल, नवद्वार और लौहमय भडार हैं, यह स्वर्ग की भाँति समृद्धि सम्पन्न है।"

चीनी यात्री फाह्यान ने साकेत का चीनी अनुवाद शाची किया है। वह लिखता है—"यहाँ से चलकर तीन योजन दक्षिण पूर्व शाची का विशाल राज्य मिला।" उनने भी इसे वौद्धो का एक महत्वपूर्ण तीर्थ लिखा है। कहते हैं कि जैनियो के चौवीस तीर्थंकरो मे मे वाईस इक्ष्वाकुवशी थे और उनमे सवसे पहले तीर्थंकर आदिनाथ ऋषभदेव जी और चार अन्य अन्य तीर्थंकरो का जन्म यही हुआ था। वौद्धो का भी यह एक मान्य तीर्थ है। महायान सम्प्रदाय का गुरु वसुवन्धु पुस अयोध्या मे रहता था। भगवान तथागत् ने अजनवाग मे वौद्धमत के कुछ सूत्रो का उपदेश दिया था। वौद्ध ग्रथो मे अयोध्या को साकेत और विशाखा कहा है। दिव्यावदान मे साकेत की व्याख्या यो की गई है—

"स्वयमागत स्वयमागत साकेत साकेत मिति सज्ञा सवृता।" अर्थात् "यह आप ही आया, आप ही आया, इसीलिये साकेत नाम पड गया।"

जब से बाबर ने विक्रमादित्य द्वारा बनवाया हुआ राम जन्म स्थान मंदिर तोड़ा तब से वहाँ बराबर अशान्ति बनी रही। हिन्दुओं का प्रबल पराक्रम और विरोध देख कर अकबर ने पुराने मंदिर के खंडहर पर मस्जिद के पास ही एक चबूतरा बना कर भगवान राम की मूर्ति प्रतिष्ठित करने की आज्ञा दे दी थी। औरंगज़ेब की धर्मान्धता ने फिर से आग भड़का दी।

नवाब वाजिदअली शाह के समय में वहाँ बहुत बड़ा झगड़ा उठ खड़ा हुआ। अवध गजेटियर के अनुसार २० जून सन् १९०२ ई० के 'पायनियर' में एक लेख प्रकाशित हुआ था जिसके अनुसार झगड़े की जड़ हनुमानगढ़ी का एक बैरागी था। लिखा है कि उस बैरागी को हनुमान गढ़ी के महन्त ने किसी कारणवश क्रुद्ध हो अखाड़े से निकाल दिया। बदले की भावना के कारण अपना धर्म परिवर्तित कर वह मुसलमान हो गया। लखनऊ आकर उसने यह अफवाह फैलाई कि बैरागी लोग मस्जिद को भूमिसात करने का आयोजन कर रहे हैं। अमेठी निवासी एक फकीर मौलवी अमीर अली यह खबर सुन कर उत्तेजित हो उठा। वह उन दिनों लखनऊ में ही रहता था। उसने जेहाद की घोषणा कर दी। 'पायनियर' में प्रकाशित लेख का अंग्रेज लेखक कहता है कि वाजिदअली शाह ने छिपे तौर पर उसे उकसाया और जाहिरातौर पर फैजाबाद से इस सबन्ध में सरकारी रिपोर्ट मंगवाई। लखनऊ में अपना काम बनता न देख कर मौलवी अमीर अली अमेठी गया और मुसलमानों को उत्तेजित कर जेहाद के नाम पर उसने एक बहुत बड़ी सेना एकत्र कर ली। वाजिदअली शाह ने यह सुन कर वशीरुद्दौला को अमेठी मौलवी को समझा बुझा कर लौटा लाने के लिये भेजा। मौलवी मुजाहिदीन की सेना लेकर आगे बढ़ता ही चला गया। तब वाजिदअली शाह ने रेजीडेन्ट जेम्स आउट्रम से सहायता मांगी, तथा कुछ मुफ्ती—धार्मिक उपदेशक—जेहाद देवव्रतधारी धर्मांध जनता को समझाने बुझाने के लिए भेजे। ये मुफ्ती लोग मुजाहिदीन की संख्या घटाने में बहुत सफल हुये। मौलवी अमीरअली तब भी न माना। कर्नल बर्लो की कमान में एक सेना भेजी गई। मौलवी के दो हजार अनुयाइयों से सेना की मुठभेड़ हुई। मौलवी मारा गया। यह घटना गदर से चार वर्ष पहले की है।

मैंने सोचा कि हनुमान गढ़ी के महन्त से पूछने पर शायद उक्त दंगे के इतिहास के सम्बन्ध में कोई बात मालूम हो, अतः सबसे पहिले हनुमान गढ़ी ही गया। हनुमान गढ़ी दूर से देखने में सचमुच धर्मस्थान के बजाय किसी राजा का छोटा किला मालूम पड़ता है। गढ़ी के नीचे बसी हुई दूकानों की छत पर आज भी

जगह-जगह तोपें दिखलाई देती हैं जो गढी के अन्दर से शत्रुओ पर गोलावारी करने के लिये जमाई गई थी।

कुछ वर्ष हुये, दक्षिण के एक रामभक्त तमिल ब्राह्मण वडे भाव से अयोध्या दर्शन करने आये थे। अपनी उक्त यात्रा के सम्बन्ध मे उन्होने मुझसे कहा था कि अयोध्या तो राम भगवान् की नगरी लगती ही नही ' वहा क़ब्रे है और खडहर हैं। अपने जन्मस्थान मे भगवान् मस्जिद के वाहर एक चबूतरे पर फूस की बनी झोपडी मे रहते हैं और उनके परम सेवक हनुमान जी ने अपने लिये किला बनवाया है।

मैं मानता हू कि राम-राम रटने वाले इस महाद्वीप से विशाल देश के निवासी को अयोध्या आकर बडी ठेस पहुचती होगी—मुझे भी लगी। भारत के प्रमुख प्राचीन तीर्थो में अयोध्या से अधिक मनहूस लगने वाली नगरी शायद और दूजी नही है। परन्तु हनुमान गढी के लिए स्वय कपीन्द्र को कोई दोप नही दिया जा सकता। मुसलमानी काल मे वैष्णव बैरागियो के अखाडे सैनिको के अड्डे हो गये थे। राम, कृष्ण, विष्णु अथवा अलख नाम जपने वाले सन्त समाज मे इस सैनिक प्रथा का समावेश होना ऊपरी दृष्टि से देखने पर सचमुच अजीव ही लगता है, परन्तु मैं उसे उस काल की एक आवश्यक और प्रगतिशील राष्ट्रीय शक्ति मानता हू। झूठा राम, श्याम जमकर आक्रमणकारियो, आततायियो द्वारा अपना सर्वनाश देखते वैठे रहना निहायत शर्म की वात होती। कायर होना अहिंसा की निशानी नही। नाम जपने वाले सन्तो का ही एक दल वाद मे सिक्ख जाति के नाम से प्रसिद्ध हुआ। वैरागी इस प्रकार जाति नही वने हो, उनमे जमातें बहुत सी वन गई। सत सम्प्रदाय जाति पाँति मे विश्वास नही करता था। इसी कारण सवर्ण हिन्दू सदा उनका विरोध करते आये। जाति पाँति तोडने वाले बुद्ध, महावीर से लेकर गाधी तक हर महात्मा को सवर्णो का प्रवल विरोध सहना पडा है। जहा इन सतो के अनुयायी वडी सख्या मे हो गये वहा सनातनियो ने उनके साथ रोटीबेटी का व्यवहार छोड दिया। बौद्ध, जैन, सिक्ख, वगाल की वोष्टम जाति आदि ऐसे ही अपने काल के जाति पाँति विहीन प्रगतिशील वर्ग थे जो आगे चलकर स्वय भी रूढियो मे वँध गये और अपना प्रगतिशील रूप खो वैठे। साधु वैरागी चूँकि परिवार रहित होते थे इसलिये वे एक जाति तो न वन सके परन्तु कर्तव्यवश उपजी हुई उनकी सैनिक भावना दृढ होकर एक प्रकार की गुण्डागीरी अवश्य वन गई। इस वात के अनेक प्रमाण है कि मध्यकाल मे ये सैनिक वैरागी

अखाडे सामन्तो की आपसी लडाइयो मे किराये के सिपाही बनकर जाया करते थे। अस्तु।

हनुमान गढी के मालियो और दक्षिणा के लालच मे दर्शन कराने वाले बम्हनो की नोंसत से निकल कर ऊपर पहुँचा। हनुमान जी के दर्शन किये। वहा हर दिन बडी भीड रहती है। अनेक दक्षिण भारतीय स्त्री पुरुष भी वहा दर्शन कर रहे थे। उन्हे देखकर मुझे अपने तमिलनाडुवासी मित्र की बात याद आई, "रामचन्द्र जी झोपडी मे रहते है और उनके सेवक हनुमान जी ने किला बनवा रक्खा है।" वह बात याद कर हँसी आ गई, साथ ही तुलसीदास जी की 'राम ते अधिक राम कर दासा' वाली उक्ति भी।

वज्राङ्ग के मन्दिर के सामने ही एक बडा भारी दालान था जिसके बीचो-बीच पक्का मच था, उस पर गद्दी लगी थी। गद्दी खाली थी, वृद्ध महन्त जी धरती पर बैठे थे। मैंने उनसे अपना प्रश्न निवेदन किया। वे बोले "यहा साधू लोग रहता है, भजन करता है, इतहास-फितहास के प्रपच मे नही पडता।"

मैंने देखा यो शायद उत्तर न मिले, थोडी धर्म-कर्म की बात छेडी। महन्त जी उसमे भी रस न ले सके, बोले "हमारा साधू सन्त का धरम करम यही है कि सरजू जी मे नहाया और राम का नाम लिया।"

"यहा कितने साधू हैं महाराज ?"

बोले "पाँच सौ।"

मैंने फिर पूछा—"आपका इस गढी मे कबसे निवास है ?"

बोले 'हम साधू लोग बरस दिन महीना नही गिनता।"

'फिर भी—?"

"चालीस पैंतालीस बर्स हो गया।"

मैं फिर अपनी बात पर लौट आया, पूछा "यहा के कुछ पुराने कागजपत्र तो होगे ही, उनमे इतिहास की जानकारी हो सकती है।"

महन्त जी ऊबी हुई मुद्रा बनाकर कहने लगे "कह तो दिया बाबा, हम साधू लोग है कागज-वागज नही रखते। बस ये इतहास है कि जब यवनो का राज रहा तब यह जमीन माफी मिली थी।"

मैंने देखा कि वैराग्य की बालू से तेल नही निकलेगा। इसलिये उन्हे प्रणाम कर उठ खडा हुआ।

अयोध्या मे उस दिन गदर सम्बन्धी जानकरी प्राप्त न हो सकी। जिन दो

सज्जनो से कुछ मिलने की आशा थी उनमे से एक फैजाबाद चले गये थे और दूसरे किसी बारात मे।

फैजाबाद ज़िले मे मेरा पहला दिन था, अत मैंने यह तय किया कि अयोध्या मे इधर-उधर अँधेरे मे ढेले मारने के बजाय फैजाबाद नगर मे पहले सहज सुलभ जानकारी प्राप्त कर लेना उचित होगा। अत अयोध्या पर्यटन कार्य दूसरे दिन के लिये स्थगित कर लौट आया। सूचना-विभाग के वृद्ध ड्राइवर बड़े ही भले व्यक्ति थे, रास्ते मे बोले "साहब जी महराज, अजुध्या जी मे आपके मतलब का मसाला नही मिला। क्या कहे हमको बड़ा ही दु ख हो रहा है। फैजाबाद मे आप प्रियादत्तराम साहब जी से चलकर मिलिये, वो बडे आदमी है, उन्हें मालुम होगा। दद्दुआ साहब अजुध्या जी के राजा भी सायद बताय सकेगे। साहब जी महराज, आप इत्ती दूर से हमारे यहा आये है, गदर की बातें तो आपको जरूर मिलनी चाहिये।"

ड्राइवर महोदय की सहानुभूति मुझे स्पर्श कर गई थी। मेने कहा "आप मुझे जहाँ ले चलेगें, चलूँगा।"

महाराज अयोध्या की कोठी पर आये। उनके यहा एक कोई उच्चाधिकारी पण्डित जी हम से मिलने आये। वे सज्जन बोले "हमारे यहा इस तरह के कोई कागज वगैरह नही है। राजा साहब की जानकारी इस बाबत मे कोई खास नही है।"

यहा से चले। एक वकील साहब के यहा पहुँचे। वे कार पर बैठकर कचहरी के लिये निकल ही रहे थे, बोले "आप कचहरी आ जाइये। राजा मानसिंह के खान्दानी एक वकील साहब हैं उनसे मुलाकात करवा दूँगा"

फिर एक दूसरी जगह पहुँचे, वहाँ भी निराशा ही हाथ लगी। मैंने देखा कि राम जी की अयोध्या मेरी झोली मे अब तक कुछ भी नही डाल पाई, परन्तु जब एक काम का निश्चय कर निकला हूँ तब उसे बिना साधे तो नही ही लौटूँगा। तय किया कि अब अधेरे मे ढेले मारूँगा, जो भी पुराना चेहरा नज़र आयेगा उसी को टोक कर पूछूँगा। गाडी से उतर पडा और सफेद बालो वाले चेहरे तलाशने लगा। चौक के पास ही एक बुजुर्गवार निकले—बडी बडी सफेद झुकाऊ मूँछें, भारी बड़हल सी ठोढी, सिर झुकाये मगर नाक की सीध मे चलने का अन्दाज लिये हुये। मैं लपक कर उनके पास पहुँच गया। मेरे टोकने पर बुजुर्गवार यो थमे जैसे तेज स्पीड मे जाती हुई मोटर सहसा ब्रेक लगाये जाने पर झटके के साथ रुकती है। बोले "ग़दर! हाँ जनाब, सुना बचपन मे बहुत कुछ था मगर अब

हैं, पुराने जमाने का हिन्दुस्तानी था। अरे चटाई, दरी, मृगछाला पर बैठने वाले, उन्हें कुरसी से क्या लेना-देना जनाब ! खैर उसने अंगरेज को एक मचिया लाकर बैठने को दी। कहा कि हमारे यहां यही है हुजूर।"

"साहब बोला, वेल ये अच्छा-अच्छा हाय। साहब ने फिर पूछा कि हमारी लड़की तुम्हारे यहां है। पंडित बोला 'साहेब यू नई जानिति कि केकर आय। पर एक साहेब बिटिया है जरूर। बोलाय देइति हैं।'—यह कहके फौरन उस लड़की को ले आया जनाब। बाप को देखते ही बेटी झट से जाके लिपट गई और बेटी को देख कर बाप के दिल में जो खुशी हुई उसको आप समझ ही सकते हैं। खैर। मगर वह अंगरेज था, रोने-धोने में अपना ज्यादा टाइम नहीं बरबाद कर सकता था जनाब, फ़ौरन ही रौब से मचिया पर बैठ गया और अपनी लड़की से पूछा: वेल माई डाटर, टुमको इस पंडत ने कैसा माफिक रखा ?"

"लड़की बोली, पापा इन्होंने मुझे बिलकुल उसी तरह रक्खा जैसे बाप बेटी को रखता है ?" इस पर वह अंगरेज बोला कि वेन टुम बाप का मटलब सम-झटा ? लड़की बोली कि हां पापा जैसे आप मुझे घर में रखते हैं घर भर सब मेरा खयाल रखता था। एक दिन रेवरेन्ड पंडत प्यादर ने मुझसे कहा कि साहेब बिटिया हमरे घरमा मुरगी-अंडा नाहीं आय सकत है। कहौ तौ दूर लै जाय कै खिलाय लावऊं। अपनी लड़की से इस तरह की बातें सुन कर वो अंगरेज जनाब बहुत खुश हुआ। खैर तो वो लड़की को लेकर चलने लगा। वो घर वालों से विदा लेने लगी। आप सच मानिये जनाब बिल्कुल हू बहू वही सीन हो गया जैसे कि लड़की अपने घर से अपनी ससुराल के लिये जा रही हो। महराज एक कोने में खड़े आंसू पोंछ रहे हैं तो आंगन में उनके लड़के लड़कियां हाय जिज्जी हाय जिज्जी चिल्ला रहे हैं और महराजिन अलग घूंघट में कयामत की गुहार मचा रही हैं। यानी कि और कोई वक्त होता जनाब तो अंगरेज यह सब तमाशा देख कर 'यू डर्टी हिन्दु-स्टानी लोग' कह कर सबको ठोकरें लगाता, मगर जब अपनी लड़की के लिये इतना पुरसोज़ हंगामा देखा तो उसकी समझ में आया कि हिन्दुस्तानियों के प्यार में कितना जोश होता है।"

"खैर तो क़िस्सा मुख़्तसिर यह है कि अंगरेज़ की दूसरी लड़की का पता भी एक ठिकाने लग गया, अंगरेज़ ने फौरन उसका घर घिरवा लिया। एक जमींदार का घर था जनाब, उसके यहां लड़की मिली। बाप ने इस लड़की से भी वही सवाल पूछा, कि तुम्हें कैसे रक्खा। लड़की ने नजर झुका के झिझकते हुए कहा कि पापा

सिपाही पकड तो दूसरे सिपाही कहें कि अमा पागल के साथ तुम भी पागल होते हो ? चलो आओ । औ वो लडका कभी मुंह चिढा के 'ए—ए' करे, कभी गाली दे, उंगलिया नचाये, कभी खुद नाचे—इस तरह वह जनाव कश्मीरी का लडका अक्लमन्द, ज़हीन, चतुराई से अपने घर पहुंच गया । × × ×

"अब साहव देखिये मुझे जाना है । मैं खाना खा के उठा था अभी क़ुल्ला भी नही किया । खैर ! किस्सा मुख्तसिर ये कि जनाव वो अपने घर गया और वो हार जहां गडा था खोद के निकाला और लंगोटा मे छिपा के फिर वैसे ही सिडी वना, कोयले मिट्टी से वदरग वना, वकते गाते अपनी मा के पास पहुंच गया। तो उसकी मा बोली कि वेटा, मेरा तो तेरे पीछे रोते-रोते बुरा हाल हो गया । हार से हैसियत है मगर हैसियत तेरी जान से ज्यादा थोडे ही है । × × × खैर, तो जनावेवला अब मैं जाता हूं । मैंने अभी कुल्ला नही किया है ।"

पडत साहब कुर्सी छोड कर उठ खडे हुए और खटाखट दूकान से नीचे उतर गये । मैं भी अपना बस्ता संभालने लगा। आधी सडक से वे फिर लौट आये, दूकान पर पढ कर फरमाया, "हा साहव, आखिरी वात तो रह ही गई "

उनके आगे की वात कहते कहते विजली की-सी फुरती से मैं तैयार हुआ और लिखना शुरू किया—"कि जव गदर, यानी कि वो क्या नाम कि गदर 'सब्साइड' (दवा) हुआ तो बुढिया घर लौट के आई । सव औरतो ने चच्ची दादी, बुआ कह के घेरा, कहा, हमारे ज़ेवर लाओ । बुढिया वोली किसी को नही दूंगी । अरे, अभी आई हूं, दम फूल रहा है और तुम लोग जान खाये जा रही हो । खैर जनाव थोडी देर वाद उसने एक एक करके सबको बुलाया, कहा कि अपनी अपनी गठरी के रग बताओ और उसमे के दो ज़ेवरो के नाम लो, नग हो तो लाल लाल हैं या पियर पियर हैं, यह वताओ और ले जाओ । तो जनाव ऐसे ईमानदार लोग होते थे गदर के जमाने मे । अच्छा तो मैं चलूंगा—[उठे फिर कहा] यो तो मैंने अभी कुल्ला मगर एक किस्सा और याद आ रहा है वह भी आप को लिखवा जाऊं । आप बेचारे इतनी दूर से इसी के लिये आये हैं—मगर खैर, तो फिर लिखिये—

"एक अगरेज था, याने कि अपने ज़माने का वहुत वडा हाकिम था, ये समझ लीजिये । तो गदर की भगदड मे उसकी दो लडकिया गायव हो गई । जव तनल्लुद हुआ तव हुक्म हुआ कि जाकर उनका पता लगाओ । खैर जनाव पता लगा । उसकी एक लडकी एक ब्राह्मण के यहां थी । अगरेज ने फौरन गाडी जुतवाई और उस ब्राह्मण के घर गये । वह ब्राह्मण वेचारा—मतलव यह है कि आप समझ सकते

हैं, पुराने जमाने का हिन्दुस्तानी था। अरे चटाई, दरी, मृगछाला पर बैठने वाले, उन्हें कुरसी से क्या लेना-देना जनाव! खैर उसने अगरेज को एक मचिया लाकर बैठने को दी। कहा कि हमारे यहा यही है हुजूर।"

"साहव वोला, वेल ये आच्छा-आच्छा हाय। साहव ने फिर पूछा कि हमारी लडकी तुम्हारे यहा है। पडित वोला. 'साहेव यू नई जानिति कि केकर आय। पर एक साहेव विटिया है जरूर। वोलाय देइति है।'—यह कहके फौरन उस लडकी को ले आया जनाव। वाप को देखते ही वेटी खट से जाके लिपट गई और वेटी को देख कर वाप के दिल मे जो खुशी हुई उसको आप समझ ही सकते हैं। खैर। मगर वह अगरेज था, रोने-धोने मे अपना ज्यादा टाइम नहीं वरवाद कर सकता था जनाव, फौरन ही रौब से मचिया पर वैठ गया और अपनी लडकी से पूछा' वेल माई डाटर, टुमको इस पडत ने कैसा माफिक रक्खा?"

"लडकी वोली, पापा इन्होने मुझे विलकुल उसी तरह रक्खा जैसे वाप वेटी को रखता है?" इस पर वह अगरेज वोला कि वेल टुम वाप का मटलव समझटा? लडकी वोली कि हा पापा जैसे आप मुझे घर मे रखते हैं घर भर सव मेरा खयाल रखता था। एक दिन रेवरेन्ड पडत फादर ने मुझसे कहा कि साहेव विटिया हमरे घरमा मुरगी-अडा नाहीं आय सकत है। कहीं तौ दूर लै जाय कै खिलाय लावऊँ। अपनी लडकी से इस तरह की वातें सुन कर वो अगरेज जनाव वहुत खुश हुआ। खैर तो वो लडकी को लेकर चलने लगा। वो घर वालो से विदा लेने लगी। आप सच मानिये जनाव विल्कुल हू वहू वही सीन हो गया जैसे कि लडकी अपने घर से अपनी ससुराल के लिये जा रही हो। महराज एक कोने मे खडे आँसू पोंछ रहे हैं तो आँगन मे उनके लडके लडकियाँ हाय जिज्जी हाय जिज्जी चिल्ला रहे हैं और महराजिन अलग घूंघट मे कयामत की गुहार मचा रही हैं। यानी कि और कोई वक्त होता जनाव तो अगरेज यह सव तमाशा देख कर 'यू डर्टी हिन्दुस्टानी लोग' कह कर सवको ठोकरें लगाता, मगर जव अपनी लडकी के लिये इतना पुरसोज हगामा देखा तो उसकी समझ मे आया कि हिन्दुस्तानियो के प्यार मे कितना जोश होता है।"

"खैर तो किस्सा मुख्तसिर यह है कि अगरेज की दूसरी लडकी का पता भी एक ठिकाने लग गया, अगरेज ने फौरन उसका घर घिरवा लिया। एक जमीदार का घर था जनाव, उसके यहा लडकी मिली। वाप ने इस लडकी से भी वही सवाल पूछा, कि तुम्हें कैसे रक्खा। लडकी ने नजर झुका के झिझकते हुए कहा कि पापा

बीबी की तरह । अगरेज भी जनाब वहुत बडा अगरेज था, उसकी आँखो मे खून उतर आया, कुरसी छोड कर उठ खडा हुआ और कडक कर कहा, बीवी लफ्ज़ के माने जानती हो क्या होते हैं ? लडकी ने नज़र झुका कर रोते हुए जवाब दिया कि माने समझ कर ही कह रही हूँ पापा ।"

"अगरेज ने कहा कि जनाब—अच्छा । वस, वह लडकी को लेकर अपने बँगले पर आया, और आते ही उस नालायक की जायदाद ज़ब्त कर उस पडित को दे दी, जिसने उसकी दूसरी वेटी को मुसीवत मे पनाह दी और वेटी बना कर रक्खा था । एक ये किस्सा याद है ।"

पडित सूरजकिशन जी गजूर ने अपने रोचक व्यक्तित्व, और अपने किस्सो से मेरी खिन्नता हर ली । दोनो किस्सो मे किस्सा गोई के फन की पालिश थी । खैर, जो हो, इसमे सन्देह नही कि ये किस्से उन हल-चल भरे दिनो के जन जीवन की एक झाँकी प्रस्तुत कर देते हैं ।

चौक वाजार मे एक जूते की दूकान पर खादीधारी मिया साहव बैठे दूकानदारी कर रहे थे । मैंने उनसे अपना सवाल किया । श्री गुलाम हुसैन ने वतलाया "मैंने मौलवी अहमदुल्ला शाह के मुताल्लिक अपने वावा से यह सुना था कि वो यहा तशरीफ लाये और कुछ आदमियो के साथ आये । पुख्ता सराय चौक मे मुकीम हुए । अगरेजो ने घेरा डाला । लोग लडे मगर मारे गये । मौलवी साहव गिरफ्तार हुये । उनके साथ सख्ती हुयी, जजीरो मे वाँध कर उन्हे शहर मे घुमाया गया । वस इतना ही मुझे मालूम है ।"

यही मुझे अख्तर साहव के वेटे मिले । अख्तर साहव फैजावाद के 'अख्तर' पत्र के सम्पादक, प्रकाशक भी है । साहवज़ादे मुझे अपने घर अपने पिता से मिलाने ले गये ।

अख्तर साहव वडे तपाक से मिले, गोया पुरानी जान पहचान हो, फरमाया "गदर के मुतअल्लिक मैंने तमाम मटर इकट्ठा किया है । आप अपना पता दे जाइये । मै लिख कर भेज दूगा ।"

मैंने अर्ज़ किया कि किताव जल्द ही लिख कर शाया कराने का इरादा है । इस लिये जो कुछ मसाला मुझे लगे हाथो मिलता चले उसे ज्यादा कीमती मानता हूँ ।

अख्तर साहव ने फरमाया "अजी कितना मसाला लीजियेगा ? वहुत मैटर दूगा । आप घर पहुँचेगे और दूसरे दिन मेरा खत पहुँचेगा । इसी घर मे गदर के ज़माने मे सैकडो लोग ठहरे थे । ये अवध के पहले नवाव वुरहानुल्मुल्क सआदत खाँ का

महल है। हमारे यहा बनीजान नाम की एक आया थी। बतलाया करती थी कि अंग्रेज जब घर मे घुसे तो वो खाना पका रही थी, उसने जलती लुकाठी एक गोरे के मुंह मे घुमेड दी।

"अजी तमाम क़िस्से हैं मेरे पास। मैंने बडी-बडी रिसर्च की है नागर साहब ! मुझे हमेशा यह सोच-सोच कर हैरत हुआ करती थी कि आखिर ये हमारे अवध वाले लाखो बरस पहले इतने कल्चर्ड कैसे हो गये। बिना ऊँची तहज़ीब के ये शान और शौक़त पायी नही जा सकती। मैं इसी वास्ते खुद अजुध्या जी गया। वहाँ शीश पैगम्बर की कब्र है। वह कब्र देखने मे ही बहुत पुराने जमाने की लगती है और मुसलमानी ढग की बनी हुई है। मे आपसे रिसर्च की बात कह रहा हूँ। तो हज़रते शीश हमारे अवध मे आकर बसे थे। हज़रते शीश हजरते आदम के पहले बेटे थे। इनसे आप खुद ही बखूबी समझ सकते हैं, ये लाखो बरस पहले की बात है। याने की सिर्फ हिन्दुस्तानी तहज़ीब ही नही, बल्कि इन्सानी तहजीब का पहला और सब से पुराना मरकज़ हमारा ये अवध है।"

मैंने कहा "आप हज़रते शीश की बातें कर रहे थे तो मुझे हिन्दुओ के देवता शेष भगवान् की याद हो आई। शेपनाग के अवतार रामचन्द्र जी के छोटे भाई लक्ष्मण माने जाते हैं। क्या यह नही हो सकता कि अयोध्या मे शेष भगवान का मन्दिर रहा हो, जिसे मुसलमानो ने बाद मे हज़रते शीश करार दे दिया। नाम मिलते-जुलते तो हैं ही।"

अख्तर साहब जरा परेशान हुए, कहा "फिर वहाँ पर कब्र कैसे बन गयी ?"

मैंने कहा "आसान बात है। मुसलमानों को यहाँ आने पर हज़रते शीश के नाम से मिलता-जुलता एक नाम दिखलाई दिया जिसकी तरफ उनका खिंचना लाज़िमी था। और फिर बाद मे यहा के रहने वाले जो मुसलमान हुए उन्हे अपने पुराने लगाव की चीज़ को नये रूप मे अपनाने का हौसला हुआ। शेष भगवान् का मन्दिर टूट कर हज़रते शीश का मकबरा बन गया।"

अख्तर साहब के चेहरे पर उलझन कुछ और बढती नजर आयी। मैंने बात का प्रसग बदल दिया। इतने मे अख्तर साहब के एक मिलने वाले डॉक्टर शफी हैदर साहब वहा तशरीफ लाये। जब उन्हे मालूम हुआ कि मैं अवध से सबधित गदर की बातें जमा कर रहा हूँ, तो फरमाया कि हमारे यहा भी गदर के कुछ वाकयात हुए थे, मगर हमारा ज़िला तो अवध मे है नही। इस पर मैंने उन्हे बतलाया कि अपनी सीमित शक्ति और सुविधा के लिहाज से ही मैं केवल लखनऊ और अवध तक

सीमित हू अगर मेरा वस चलता तो अजनाला पजाब से लेकर वगाल के बैरकपुर और मध्य प्रदेश की मऊ छावनी तक सब जगह घूम-घूम कर इतिहास बटोरता।

डॉक्टर साहब ने फरमाया "ज़िला जौनपुर मे एक माहुल राज है। वहाँ के राजा इदारतजहाँ के साहबजादे ने फैज़ाबाद का खजाना लूटा था। वे बागी हो गये थे। राजा इदारतजहाँ को मुबारकपुर ज़िला आजमगढ मे हाथी पर चढ़ा कर एक पेड के पास ले गये और वही उन्हे फांसी दे दी। राजा का हाथी भी दुख से वही मर गया। अँगरेज़ो ने उनका कोट खुदवा डाला। राजा इदारतजहाँ के लड़के राजा शमशेरजहाँ और उनकी बहन यानी मेरी दादी को उनके हमदर्दों ने सुरग की राह से बाहर निकाल लिया। बडा गाँव के ठाकुर अमरेठसिह के यहाँ उन्हे पनाह मिली। अँग्रेज सूघते हुए वहाँ भी पहुँच गये। शमशेरजहाँ ने सोचा कि मैं पकडा जाऊँगा, तो कोई बात नही मगर वहन की वेइज्जती न हो, इसलिए उन्हे मारने चले। मगर ठाकुर अमरेठसिह वहाँ पहुँच गये। उन्होने कहा कि आप ये क्या ग़ज़ब कर रहे हैं? मैंने अँग्रेजो को टाल दिया दिया। शमशेरजहाँ ने पूछा 'क्योकर टले?' ठाकुर साहब ने जवाब दिया 'अजी मैंने उनको यह पट्टी पढाई कि राम राम! हम हिन्दू भला मुसलमान को पनाह देंगे। आपको किसी ने गलत खबर दी है।' गदर के जमाने मे हिन्दू-मुसलमानो मे वडा मेल और भाईचारा था।"

फैजावाद के प्रतिष्ठित नागरिक श्री प्रियादत्त राम से भी भेंट की। उन्होने कहा "वचपन मे हमारे यहाँ एक चपरासी था, वह गदर के वडे-वडे किस्से सुनाया करता था। गदर के आल्हे और विरहे भी वडे जोश से सुनाता था। मगर अव वो सव याद नही। हमारे वचपन का जमाना कुछ और था। वडे घरो मे लोग गदर की वातें भी करते तो दवे-दवे ही करते थे। वच्चो मे वगावत का असर न आ जाय इसलिए उन्हें ऐसी वातो से दूर ही रक्खा जाता था। हम लोगो को तो वस अकडफूं मे रहना सिखाया जाता था। वह जमाना ही कुछ और था। मगर आप यह काम अच्छा कर रहे हैं। आपको तो ऐसे आदमियो से मिलना चाहिए जो कम से कम पिछत्तर-अस्सी वरस की उम्र के हो। आस-पास के गावो मे घूमिये। मुवारकगज मे श्रीपाल सिह हैं, एक रमेशर हैं, सीवाड वडा गाँव के नकी मिया भी पुराने आदमी हैं, रामनगर मे एक रनवीर सिह हैं, हिन्दू सिह की ड्योढी मे ठाकुर वजरग सिह रहते हैं, चिर्रा, जगतपुर, रौराही मे भी आपको पुराने लोग मिलेंगे, नवाव गज़नफर हुसैन मोती मस्जिद वाले भी सुना सकेंगे, पन्नगेश जी से मिलिये"।

मैं उनके वताये नाम लिखता जा रहा था, पर यह जानता था कि इनमे एक

ने भी मिलने का सौभाग्य प्राप्त न कर सकूगा । समय की कमी तो थी ही, साथ ही साथ फैजाबाद जिले मे घूमने की उचित सुविधा भी नही थी । फिर भी नाम इस वास्ते लिख लिये कि शायद किसी उत्साही व्यक्ति के काम आ जांय । प्रियादत्त-राम महोदय ने अपने पडोस मे रहने वाले एक वृद्ध महानुभाव के पास मुझे भेजा भी पर वे न मिल सके ।

काफी देर हो गयी थी, ठहरने के स्थान पर लौट आया । राजा मानसिंह के वशज वकील साहब से मिलने की वडी इच्छा थी, परन्तु जा न सका । गदर के इतिहास मे राजा मानसिंह का भाग वडा दुतरफा और अजीब-सा रहा है । 'बगाल आर्मी' के अवधी क्रान्तिकारियो के साथ वे डाक्टर आर० सी० मजूमदार के कथना-नुसार, षड्यत्र मे शामिल थे । बेगम हज़रत महल के समर्थको में भी उनका नाम मिलता है । चारबाग की लडाई मे उन्होंने वडी बहादुरी दिखलायी । मटिया बुर्ज की अख्तर महल के नाम सरफराज बेगम लखनवी द्वारा भेजे गये एक पत्र मे लिखा है "राजा मानसिंह ने वडी बहादुरी दिखलायी । नौ हज़ार जमीयत से ऐसा मुकाबला किया कि फिरगियो के छक्के छूट गये । शाम हो गयी थी । जनाबे आलिया ने राजा मानसिंह बहादुर की जाफिशानी व जाबाजी पर खिताबे फरज़न्दी दिया । खिलअत दुशाला, रूमाल और मलबूत-ए-खास दुपट्टा इनायत किया और बहादुरी की बहुत तारीफ की ।"

अवध गजेटियर में लिखा है "सकट काल उपस्थित जान कर फैज़ाबाद ज़िले के एक सिविल अफसर ने अग्रेज़ स्त्रियो और बच्चो की सुरक्षा का भार राजा मान-सिंह को सौपा, यह भार तुरन्त स्वीकार कर लिया गया । फौजी सैनिको का रुख योरोपियन अफ़सरो के लिए बहुत ही कष्टप्रद हो गया था । उनके पास भरोसे वाली ऐसी कोई भी सेना नही थी, जिसके बूते पर दोनो रेजीमेन्टो की बदतमीज़ियो को रोक कर उन्हे सयमित किया जा सकता । ऐसी परेशानियो के घिराव मे उन्हे लखनऊ से यह आदेश मिला कि उनके प्रभावशाली मित्र मानसिंह को तुरत गिर-फ्तार कर लिया जाय । यह असामयिक कार्य फैजाबाद के कमिश्नर और सुपरेण्टे-ण्डेण्ट कर्नल गोल्डने द्वारा किया गया । असिस्टेन्ट कमिश्नर ने इसका तत्काल विरोध करते हुये पत्र भेजा । बाद मे उसे छोडने की आज्ञा भी प्राप्त कर ली । यह आज्ञा वडे समय से मिली, अग्रेज़ स्त्रियो और बच्चो को उसकी सुरक्षा मे उसके शाहगज के किले मे भेज दिया गया ।"

यो राजा मानसिंह दोहरी चालें चलते हुए नज़र आते हैं । हो सकता है कि

गदर के ज़माने मे वहुत से रजवाडे नीतिवश ऊपरी तौर पर अंग्रेजो से मिले हो, राजा मानसिंह भी उनमे से ही एक हो। यह भी हो सकता है कि पहले उन्होने क्रान्तिकारियो का साथ दिल से दिया हो और गिरफ्तारी के बाद कायरतावश वे अंग्रेज़ो के जासूस वन कर क्रान्तिकारियो के गढ मे बने रहे हो। मितौली के राजा लोनेसिंह द्वारा धोखे से कैद किये गये अंग्रेज नर-नारी जो कि कैसरबाग मे बन्द थे, घृणा के उद्रेक मे भारतियो द्वारा मारे गये। कुछ स्त्रिया बच्चे राजा मानसिंह द्वारा सुरक्षित होकर रेज़ीडेन्सी पहुँचाये गये थे। लखनऊ मे मुझे यह भी सुनने को मिला कि मानसिंह ने गोलो मे भूसा भरवा कर क्रान्तिकारियो को वडा धोखा दिया। राणा वेणीमाधव वख्श की प्रशसा मे गाये जाने वाले एक लोक गीत मे 'नक्की मिले मानसिंह मिलिगे, मिले सुदर्सन काना' पक्ति भी मानसिंह के विरुद्ध ही जाती है। इस प्रकार महाराज मानसिंह का नाम तो ग़द्दारो की लिस्ट मे ही हर तरह से जुडा नज़र आता है।

शाम होते ही फिर शहर की गलियो की खाक छाननी शुरू की। मुझे अनजाने नगरो मे भटकने घूमने मे अटपटापन नही मालूम होता, अपने ठहरने का पता ठिकाना तथा उसके आसपास के वातावरण का चित्र ध्यान मे बैठा कर मौज से घूमता हूँ। इस समय तो मौलवी अहमदुउल्ला शाह के सम्बन्ध मे जानकारी बटोरने की इच्छा से निकला था।

ग़दर के नायको मे तात्या और मौलवी अपने ढग के अनोखे, वडे जीवट के व्यक्ति हैं। सैनिको को अपनी ओर आकर्षित करने मे इनके वरावर शायद और कोई नही। वख्त खाँ भी वडे जीवट के थे मगर उनका जादू एक जाति, एक सीमा तक ही चलता था। तात्या और मौलवी ऐसे चुवक थे जो कही भी चले जाते और लडवैयो की भीड की भीड अपनी ओर खीच लेते थे। गदर का अग्निपुज वावू कुँअर सिंह और राणा वेणीमाधव वख्श के व्यक्तित्वो को भी वडा सतेज वनाता था। गहरी छानवीन होने पर काग़ज़-पत्र इनके सवध मे और जो कुछ वोलें पर यह हर हालत मे स्वीकार करना पडता है कि हमारे एक सदी पहले के ये पुरखे वडी आन वान वाले थे। ये अदम्य साहस के मूर्तरूप महापुरुष थे। जो कमजोरिया अमरनाथ से कन्याकुमारी और द्वारका से कामरूप-कामाख्या तक व्याप्त, भारत भूमि के पुत्रो मे मौजूद थीं, उनसे कमोवेश ये सत्र भी वँधे थे, किन्तु जो देश की शक्ति थी इनके द्वारा प्रत्यक्ष देदीप्यमान हुई।

जव मैंने मजूमदार महाशय के इतिहास मे उनकी वैज्ञानिक वौद्धिक चीर-फाड

के परिणाम स्वरूप पाया हुआ फल देखा तो मन को जोर का धक्का लगा। धक्का इसलिए नही कि महापण्डित के द्वारा प्रस्तुत तथ्यो ने मेरी और अनेक की भी गदर सम्बन्धी जमी जमाई मान्यतायें ढादी, बल्कि यह देखकर आघात पहुँचा कि सत्तावनी इतिहास की पोथी पर डॉक्टर रमेशचन्द्र मजूमदार का नाम छपा हुआ था। डॉक्टर मजूमदार प्राचीन भारतीय इतिहास और सस्कृति के सिद्ध पण्डित हैं। उन्ही की 'कार्पोरेट लाइफ इन एश्येन्ट इण्डिया' पढ कर मैं भारत देश की व्यावहारिक एकता को पहचान सका हूँ। अनेक बोली-बानियो, अनेक, राज्यो, जमीदारियो, रीत-रिवाजो मे बँट कर भी भारतीय सामाजिक जीवन एक ढर्रे ढाँचे पर चलता था। घडी के छोटे-बड़े पुर्जे अपनी-अपनी जगहो पर ऐसे फिट बैठ गये थे कि वह चलती ही रही। भारत भूमि के चप्पे-चप्पे पर इतिहास ने बडी-बडी छापें छोडी मगर देश का सामाजिक-पचायती ढाँचा बहुत कम बदला जा सका, उसपर मैले गिलाफ एक पर एक भले ही चढते रहे, मगर धार्मिकता, आदर्श, स्वाभिमान के लिए मर मिटना, और काम की लगन आदि विशेषताएँ इस देश के जन मे तब भी बनी ही रही। उन विशेषताओ वाले व्यक्तियो को देश का गौरव माना जाता है। फिर तात्या, मौलवी, राणा, कुअर सिह, झासी वाली रानी, अवध की बेगम में ऐसा क्या 'कुछ' नही था जो तत्कालीन भारत देश के व्यक्तित्व से उन्हे अलग करता हुआ दिखलाई देता है? साहसी मगल पाडेय और महावीर बलभद्र सिह से लेकर अमर शहीद यतीन्द्रनाथ दास और सुखदेव, भगत सिह, राजगुरु, आजाद तक क्या एक अटूट भारतीय परम्परा नही है? रामायण महाभारत और पुराणो द्वारा जो सस्कार इस देश की नस-नस मे बिंधे हैं वे क्या राष्ट्र की चारित्रिक एकता के परिचायक नही? इस देश मे कही भी कोई हलचल हो, कही से कोई भी नायक उठे, प्राचीन काल से ही वह सारे राष्ट्र को अनुप्राणित करता रहा है और अब तो करता ही रहेगा। पण्डितवर ने स्वय ही अपनी पुस्तक मे सत्तावन के पहले अग्रेजो के विरुद्ध अनेक गदरो का गौरव बखाना है। पर अन्त मे सत्तावनी गदर को बडे शोक से देखा है। उन्हे यह सत्तावनी तमाशा दिल्ली से लेकर अवधी, बुन्देलखण्डी, भोजपुरी, बिहारी लोगो का ही लगा, विशेष रूप से अवधी सिपाहियो का रचाया हुआ लगा, जिसे बाकी राष्ट्र मानो कलकत्ते के 'स्टार थियेटर' में बैठ कर 'पुरबी' छातूखोरो की काली करतूत के नाटक के रूप मे देख रहा था। पुरबियो की क्रूरता से डॉक्टर साहब का भारतीय सस्कृति से समृद्ध गौरवमय मस्तक राष्ट्रीय लज्जा मे झुक गया।

मैं अकिञ्चन हूँ जानता हूँ, पर ईमानदारी की लाज निभाने के लिए सविनय यह अवश्य कहूँगा कि डॉक्टर साहब की तथ्य पाने वाली वैज्ञानिक जिज्ञासा उनके व्यक्तिगत अह की कचोट से, पूर्व निश्चित् धारणाओ से बँधकर अवैज्ञानिक और तर्कच्युत् हो गयी। सारे देश मे विद्रोह का तीव्र प्रदर्शन समय-समय पर बराबर होता रहा। सत्तावनी क्राति अनायास और स्वतत्र रूप से नही आयी बल्कि वह एक लम्बे वाक्य के क्रियापद सी आयी थी। यह क्राति प्राय देशव्यापी होकर भी विशेष रूप से कुरुक्षेत्र, अवध और मगध मे हुई, अर्थात सामती के आदिम गढ, मध्य देश, मे हुई थी। इस महादेश को अपने सास्कृतिक सूत्र से बाँधने वाली रामायण महाभारत और गगा यमुना की भूमि मे युगान्त और युगारम्भ के महासघर्ष का अन्तिम निर्णय होना मेरी दृष्टि मे तनिक भी आश्चर्यजनक या आकस्मिक नही। बगाल के सन्यासी विद्रोह से लेकर कुरु अवध और मगध मे प्रमुख रूप से होने वाले सत्तावनी विद्रोह तक हमारे राष्ट्रीय इतिहास की एक अटूट परम्परा है। मैं सचमुच यह सोच-सोच कर हैरान हूँ कि डॉक्टर मजूमदार जैसे बडे जिम्मेदार विद्वान यही आकर क्यो, नाम चतुरानन पै चूकते चले गये। यदि आदरणीय डॉक्टर साहब सत्तावनी क्रान्ति के इन नायको का, यहाँ की जनता का वह रूप भी देखने की कृपा करते जिससे भारत क्या किसी भी राष्ट्र का मस्तक गौरव से उठ सकता है, तो क्या उनका ऐतिहासिक दृष्टिकोण अवैज्ञानिक हो जाता ? मैं राष्ट्र की कमजोरियो पर पर्दा डालने के पक्ष मे नही हूँ, गदर के गौरव को लेकर अपने को बहलाना या धोखा देना भी नही चाहता, परन्तु दोषो पर चौदह आने भर वज़न, गुणो की ओर से आँखें मीच कर अपने जन को दिग्भ्रमित, हतोत्साहित और कुण्ठित भी नही करना चाहता। मान्य विद्वान् ने इसी 'मूड' मे अपनी किताब लिखकर 'मरे को मारें शाह मदार' वाली कहावत को चरितार्थ किया है।

चौक पहुचा। फैजाबाद का चौक बाज़ार लखनऊ के चौक बाजार से तो उम्दा ही बाँधा गया था। आसफुद्दौला को केवल अपने महल-दुमहलो के, इमामबाडे के नक्शे ही उम्दा से उम्दा बनवाने की चिन्ता रहती थी, उनके ज़माने मे लखनऊ के अनेक नये मुहल्ले आबाद हुए, मगर शहर का उम्दा नक्शा बनवाने की तरफ इनका ध्यान कभी नही गया। फैजाबाद का चौक बाज़ार एक आवर्त मे बाँधा गया है—एक तरफ तीन दरो का फाटक, उसके ठीक सामने एकदरा फाटक, फिर दूसरी ओर एकदरा फाटक बना है, यह तीन फाटक मिल कर अर्द्धचद्र का आकार ले लेते है, एकदरे फाटक के सामने वाला तिदरा फाटक गोल दायरे से हट

कर एक लम्बी सडक के वाद वना है। मेरी ममझ मे यह चौक चाँद-सितारे के नक्शे पर वनाया गया है। मछली का निशान हर फाटक पर है, एक फाटक पर मछलियाँ पेटेंट, नवावी फार्मूले से उलटी बन गई हैं।

एक हिनाई दाढी वाले बुजुर्गवार तहमद, लम्बा कुरता पहने, कधे पर वडा रूमाल और सिर पर चौडे पाड की दुपलिया लगाये आहिस्ता कदम छडी टेकते चले आ रहे थे। वाअदव राह रोक कर अपना सवाल किया। बुजुर्गवार एक क्षण तक मुझे गौर से देखते रहे, फिर पूछा "कहाँ से तशरीफ लाये हैं ?"

"लखनऊ से हाजिर हुआ हूँ।"

"इसी काम के लिये आये है ?"

"जी हा।"

"सरकारी नौकर हैं ?"

"जी नही। अपनी तरफ से ही घूम रहा हूँ, सरकार इस काम मे मेरी मदद कर रही है। गदर के जमाने की तवारीख मे सरकार को भी वहुत दिलचस्पी है।"

बुजुर्गवार फिर चुप होकर कुछ सोचने लगे। दो सेकड वाद सिर हिला कर बोले. "काम आपने वहुत उम्दा उठाया है। हमारा देस अपने बुजुर्गों के वडे-वडे कारनामे भूलता जा रहा है। इसी से यह तवाही आ रही है। काम आपका वाकई उम्दा है, मगर जो आप वुरा न मानें तो एक वात कहूँ वडी देर हो गई इस काम के लिये। अव वो वुजुर्ग नही रहे, जिन्होने अपनी आँखो गदर देखा था। मैं तो यहाँ तीन-चार माह से अपने मँझले लडके के पास आया हूँ, जिला सुल्तानपुर गजेडी का रहने वाला हूँ। हमारे यहाँ अग्रेजो ने पूरा शहर का शहर तवाह कर दिया। वडा जुल्म किया। खैर! एक वात और भी है गदर की वातें गाँव-गाँव मे फैली हुई हैं मवको इकट्ठा करना चाहिए"।

जिस समय प्रियादत्त राम जी के यहाँ वैठा हुआ था, उनके कोई मिलने वाले भी वहाँ मौजूद थे। मेरी वातें सुन कर उन्होने भी कहा था "काम अच्छा है मगर ये तो नोन-सतुआ ले के गाँव गाँव घूमने का काम है।" वात सच थी, इस समय इन वृद्ध सज्जन से भी वही सुन कर मन वडा फडफडाया। सचमुच यह नोन-सत्तू लेकर ही गाँव-गाँव घूमने का काम है, एक नही अनेक व्यक्ति घूम कर ही इसे पूरा कर सकते हैं। मैं गृहस्थी के भार से लदा व्यक्ति इतनी मुक्ति भला कैसे पाऊँ ? इस भ्रमण से, थोडी जगहों और थोडे से आदमियो से भेंट करके ही मैं स्वय यह कहता हूँ कि काम वहुत अच्छा है। जनता मे विखरी वातें, गदर की किवदतिया

उस महाक्रान्ति के प्रति जनता के सद्भाव का परिचय देती हैं। यह सिद्ध हो रहा है कि आम जनता की क्रातिकारी सैनिको और सामन्तो के प्रति पूर्ण सहानुभूति थी। यह क्राति की राष्ट्रीय स्पिरिट की परिचायक है।

खैर, हाजी साहब ने अपने परिचित नन्हे मिया गधी का नाम बतलाया, "लाल बहादुर घडीसाज की दूकान के पीछे रहते हैं। मुझसे सिन मे पन्द्रह बीस साल बडे हे, करीब नब्बे के होंगे। वो यहाँ की पुरानी बातें सुनाया करते हैं। उनसे मिलिए।"

पूछते-पूछते नन्हे मिया के यहा पहुँचा। घडीसाज मशहूर थे, उनकी दूकान लबे सडक थी। दाहिने हाथ एक गली गयी, फिर एक और गली मे तिराहे पर आया, वही मकान मिला, पर नन्हे मिया न मिले। उनके घर के एक युवक ने एक फर्लांग आगे डाक्टर जैनी के मकान के पीछे हाजी हसनू का पता दिया। हाजी साहब मिल तो गये, मगर कहने लगे "कहिये तो ये बताऊँ कि घण्टाघर कब बना और (कोई) मल मैनिसपल्टी के चेरमैन पहले वक्तो मे बनाये गये. "

"मुझे गदर की बातें सुनने की ख्वाहिश है।"

"तब हम पैदा ही नही हुए थे।

"शायद है अपने बुजुर्गों से सुनी हो।"

"नही साहब।" मै लौट आया। फिर चौक बाजार मे पहुँचा। एक बजाजे की दूकान पर ऐसे वृद्धो के हवाले पूछे जिन्हे उस समय का हाल मालूम हो। उन्होंने कनकभवन अयोध्या के भूतपूर्व मैनेजर लाल 'पन्नगेश जी का नाम बतलाया। प्रियदत्त राम जी ने भी इनका नाम लिया था, 'माधुरी' 'सुधा' पत्रिकाओ मे इनका नाम, रचनाओ के साथ छपा देखता था, यह ध्यान मे आ रहा था। मालूम हुआ उनके पुत्र कचहरी मे काम करते है, रकाबगज नियावा मे रहते है। वहाँ पहुँचा, मालूम हुआ दूसरी जगह चले गये। वहाँ पहुँचा, मालूम हुआ कही बाहर चले गये।

रात के नौ बज रहे थे। लौट आया, सोचा, मौलवी डकाशाह फिलहाल मेरे लिए शायद मखफी रहना चाहते हैं।

९ जून, रविवार। गजरदम तडके ड्राइवर महोदय गाडी लेकर आ गये। सरयू स्नान करने की मेरी इच्छा थी, वही से अपने काम पर जाने का विचार था। गुप्तार घाट गये, उसकी महिमा यह बतलायी गयी कि भगवान् रामचन्द्र यही से गुप्त हुए थे। श्रीराम ने बुढापे मे सरयू मे डूबकर अपने प्राण त्यागे थे। भगवान् राम

का लौकिक जीवन सचमुच बडे त्याग और कठोर परीक्षाओ से भरा तथा दुखी था । प्रजा के लिए उन्होने अपना व्यक्तिगत सुख न माना, निर्दोष जानते हुए भी सीता का त्याग किया । राजसूय यज्ञ मे भगवती सीता का तडप कर देहत्याग करना, लक्ष्मण के मृत्यु आदि के कारण वे खिन्न हो गये थे । गुप्तार घाट भले वह असली जगह हो या न हो, सरयू तो वही हैं । श्रीराम जैसे अनन्य व्यक्तित्वशाली महापुरुष का उससे नाता रहा है । गोता लगाते ही भाव विभोर हो गया ।

अयोध्या पहुँचा । मुझे मालूम हुआ कि श्री रामगोपाल पाण्डेय 'शारद' महोदय ने अपनी 'जन्म स्थान का रक्त रजित इतिहास' नामक पुस्तक मे गदर का हवाला भी दिया है, वह बहुत कुछ बतला सकते हैं, मगर बारात गये हैं । खैर, औरो से जो मिले वही सही । श्री गुदुन जी शर्मा तथा एक अन्य युवक मेरे साथ अयोध्या के पुराने लोगो के ठिकाने बतलाने चले । गुदुनजी साइकिल पर सारे भारत की सैर कर आये हैं । अच्छे स्वभाव के नवयुवक है ।

हम लोग श्री अशफाक हुसैन, श्री हवीब हैदर, श्री हाजी 'फिरकू', श्री मल्हू और हकीम साहब के घरो पर गये । पहले सज्जन नही मिले, दूसरे महाशय गदर के सवब मे कुछ नही जानते, हिंदू-मुस्लिम दगो के हाल अलबत्त जानते हैं, हाजी फिरकू का भी वही हाल था, श्री मल्हू का घराना गदर मे लखनऊ से भाग कर यहाँ आया था, यहाँ का कुछ हाल उनके बुजुर्गों को नही मालूम था, हकीम साहब मिले नही ।

श्री रामकिशोर खत्री ने अपने पडोसी बाबू रामदास खत्री के यहाँ का हाल सुनाया, कहने लगे, "हमारे पुरखे तो गदर के बाद यहाँ आये मगर हमारे पडोसी बाबू रामदास के दादा अयोध्या राज के खजाची थे । बलवा होने की आशका होते ही उन्होने अपनी फेमिली को महलो मे शरण दिला दी । उनके यहा गदर मे इस वजह से किसी की जान तो नही गयी, माल भी कोई खास न लुटा, क्योकि कीमती सामान वो ले जा चुके थे । हल्दी, मिर्च, मसाले, अचार वगैरा जो सामान छोड गये थे, उसे गोरो ने खूब फेंका-फोडा । उनकी दादी बतलाया करती थी कि घर भर मे हल्दी मसाले ही फैल गये थे ।

राम जन्म-स्थान, सीता रसोई आदि भी घूम-घाम कर देखी । महात्मा तुलसीदास जी का स्थान भी देखा ।

पुरातत्व विभाग राष्ट्रीय वचत को ध्यान मे रखते हुए भले ही और जगह खुदाई का काम कम करवा दे, परन्तु अयोध्या और मथुरा का पुरातात्विक अन्वेषण

और खुदाई का कार्य होना अत्यावश्यक है। राम और कृष्ण का समय निश्चित करना इस नवयुवक भारत के लिए बडा लाभप्रद होगा। उनके समय के अवशेष सामने आ जायें तो भारतीय इतिहास को अपूर्व लाभ हो।

गुदुन जी बोले "हमे दुख है कि आप दो दिन यहाँ आये और सफलता न मिली।"

मैंने कहा "अपने पास समय देखते हुए मैंने भरसक प्रयत्न तो कर ही लिया। आगे रामजी की मर्जी।"

वे बोले "मैं शारद जी से आपको सब इतिहास लिखकर भेज देने के लिए कहूँगा, विश्वास रक्खें।"

पुनश्च

श्री गुदुनजी शर्मा ने अपना वचन निभाया। 'शारद जी' महाराज ने यह हाल लिखकर मेरे पास भेजा है। उसके तथ्य यहा पर उद्धृत् कर रहा हूँ—

"भारत के प्रथम स्वाधीनता सग्राम मे, जिसमे भारत की जनता ने अग्रेजो की गुलामी के इस जुये को अन्तिम बार अपने कन्धे से उतार कर फेंक देने के लिये भीषण सग्राम किया था, हमारा फैजाबाद जिला पीछे नही रहा। स्वतत्रता सग्राम के आरभ होने का श्रेय यद्यपि मेरठ जिले को अवश्य प्राप्त हो गया, किन्तु इस सग्राम को प्रारभ करने की समस्त योजनाएँ फैजाबाद जिले मे बनायी गयी और कानपुर मे उन्हे विकसित किया गया, एव बैरकपुर मे उन्हे सचालित किया गया। समस्त योजना इसे फैजाबाद से ही प्रारभ करने की बनायी गयी, किन्तु कारणवश योजना का कार्य-क्रम न रहते हुए भी मेरठ से उसका प्रारभ हो गया। यही कारण है कि सुनियोजित एव सुनिश्चित होते हुए भी यह विद्रोह असफल हो गया।

"श्री मगल पाडे का जन्म फैजाबाद जिले की अकबरपुर तहसील के सुरहुरपुर नामक ग्राम मे सन् १८२७ के जुलाई की १९वी तारीख को अर्थात् आषाढ शुक्ल द्वितीया शुक्रवार विक्रमीय सवत् १८८४ मे हुआ था। इनके पिता का नाम दिवाकर पाडे था, वस्तुत फैजाबाद जिले की फैजाबाद तहसील के दुगवा रहीमपुर नामक ग्राम के रहने वाले थे और अपने ननिहाल की सपत्ति के उत्तराधिकारी होकर सुरहुरपुर मे जाकर बस गये थे। वही पर उनकी पत्नी अभयरानी देवी के गर्भ से मगल पाडे का जन्म हुआ। इनकी लम्बाई ९ फुट २॥ इच थी। २२ वर्ष की आयु मे अर्थात् १० मई १८४९ मे आप 'ईस्ट इडिया कम्पनी' की सेना मे भर्ती हुए। किसी काम से आप सुरहुरपुर से अकबरपुर आये हुए थे उसी समय कम्पनी

की सेना वनारस से लखनऊ को ग्राड ट्रक रोड होती हुई जा रही थी। आप सेना का मार्च देखने के लिए कौतूहलवश सडक के किनारे आकर खडे हो गये। सैनिक अधिकारी ने आपको हृष्ट पुष्ट और स्वस्थ देख कर सेना मे भरती हो जाने का आग्रह किया, आप राजी हो गये। बस यही से आपका सैनिक जीवन प्रारम्भ हुआ।

अपनी उपरोक्त बातो के प्रमाण मे हम कर्नल मार्टिन की वह रिपोर्ट उद्धृत करते हैं, जो उन्होने फैजाबाद के सैनिक अधिकारी कर्नल हण्ट के पास उस समय भेजी थी, जबकि फैजाबाद जिले मे विद्रोहियो की जबरदस्त सभाएँ हो रही थी और एक ही दिन मे समस्त जिले भर के अग्रेजो को मौत के घाट उतार देने के लिए रोमाचकारी सैनिक तैयारियो के साथ कार्य-क्रम बनाया जा रहा था। मार्टिन लिखता है—

"मगल पाडे को जब से फाँसी दे दी गयी है तब से समस्त भारत की सैनिक छावनियो मे जबर्दस्त विद्रोह प्रारभ हो गया है। फैजाबाद जिले मे बलवाइयो का इतना अधिक जोर है कि एक प्रकार से बागियो का वहा सैनिक अड्डा ही कायम हो गया है। फैजाबाद मे विद्रोहियो का सैनिक अड्डा कायम हो जाने की वजह यह है कि मशहूर बागी मगल पाडे फैजाबाद जिले की अकबरपुर तहसील के सुरहुपुर गाव का रहने वाला था।

"मगल पाडे के खान्दान मे जो भी मिला उसे तोप के मुँह पर धर कर अग्रेजो ने उडा दिया। फिर भी मगल पाडे के कई एक निकट सबधी बच गये, जिनमे मगल पाडे के सगे भतीजे बृन्दावन पाडे भी थे। वह अपनी जमात के सभी रिश्तेदारो, खान्दानियो और साथियो को साथ लेकर क्रान्तिकारी दल मे मिल गये। २५ अगस्त को इन सबने मिल कर फैजाबाद की सैनिक छावनी पर रात मे धावा बोल दिया जिनके फलस्वरूप सभी हिन्दुस्तानी सैनिक उनसे मिल गये और छावनी के सभी अग्रेज या तो मार डाले गये या बलवाइयो के हाथ बन्दी हो गये।

"नवाब आसफुद्दौला की बूढी माता खुर्शीदमहल बेगम का खजाना उन्ही की देख-रेख मे नाका मुजफ्फरा पर स्थित मकबरे मे सुरक्षित था। मार्टिन की प्रेषित रिपोर्ट को पढकर कर्नल हण्ट ने बडी भारी सेना के साथ जाकर मकबरे को घेर लिया। बेचारी बूढी बेगम ने कर्नल हण्ट के हाथ जोड कर गिडगिडाते हुए कहा कि मुझ बूढी के जेवर लूट कर मुझे कगाल क्यो करते हो? भला मुझमे और बलवाइयो से क्या मतलब है। अस्सी गर्मी, जाडा और बरसातें अपने इस बूढे जिस्म

पर झेलते हुए मैंने अपनी जिन्दगी के दिन विताये हैं। अब सिर्फ दो चार वर्षो की मेहमान हूँ। मैंने तुम्हारा क्या विगाडा है? किन्तु वूढी वेगम की इस करण प्रार्थना पर कर्नल हण्ट का पाषाण हृदय जरा नही पसीजा। उसने अग्रेज सैनिको को आर्डर दिया कि जवरदस्ती भीतर घुस कर सारे माल-असवाव पर कब्जा कर लो।

"कर्नल हण्ट के इशारे पर अग्रेज सैनिक महल के भीतर घुस गये और वडी वेइज्जती तथा वेदर्दी के साथ इन्होने सब माल जो लगभग अस्सी लाख रुपये की लागत का था और लगभग इतनी अशर्फियाँ जो खजाने मे सुरक्षित थी, जवरदस्ती छीन लिया।

"कर्नल हण्ट ने उस लूट के धन को सैनिक पहरे के सरक्षण मे लखनऊ भेजने का प्रवन्ध किया। उसी वीच मे वेगम हजरतमहल और मानवती (राजा मानसिह की वहन तथा वाजिदअली शाह की एक पत्नी) ने अग्रेजी सेना के विरुद्ध वकायदे युद्ध की घोषणा कर दी। वेगम हजरतमहल और मानवती ने विद्रोही सेना के साथ फैजावाद मे आकर अपना अड्डा जमाया। इस सेना का सवसे पहला और तगडा मुकाबला खोजनीपुर के पास कर्नल हण्ट की सेना के साथ हुआ।

"वेगम खुर्शीद महल के जेवरात और खजाने के वेदर्दी के साथ लूटे जाने का समाचार सारे जिले भर मे विजली की तरह फैल चुका था। जनता मे यह अफ-वाह वडे जोरो के साथ फैल गई थी, कि फिरगी सवके घरो मे घुनकर सवके जेवर और रुपये पैसे जवरदस्ती लूटेंगे। इस अफवाह के प्रतिकार स्वरूप अयोध्या मे वलवाइयो की एक वडी भारी गुप्त सभा सरयू नदी के किनारे, वासुदेव घाट पर झाऊ के जगल मे हुई। इस सभा मे फैजावद जिले भर के तथा नजदीकी अन्य जिलो के भी लगभग सभी प्रमुख-प्रमुख विद्रोही नेता उपस्थित थे। गोण्डा के प्रमुख विद्रोही नेता राजा देवी वर्ख्शसिह, रायवरेली के राजा वेणीमाधव सिह, अमेठी (सुल्तानपुर) के राजा लालमाधव सिह, अयोध्या के वावा रामचरन दास और शम्भूप्रसाद शुक्ल, हसनूकटरा के अमीरअली, वेगमपुरा अयोध्या के अच्छन खाँ आदि सभी वलवाइयो के प्रमुख-प्रमुख प्रभावशाली नेता जो इस विद्रोह मे सम्मिलित थे, लगभग सभी उपस्थित थे। एक स्वर से सर्वसम्मति से इस सभा मे अग्रेजो के साथ युद्ध करने का दृढ निश्चय किया गया। फलस्वरूप जिस समय वेगम हजरतमहल की सेना ने अपनी पूरी शक्ति के साथ खोजनीपुर के समीप कर्नल हण्ट की सेना का दृढ मुकाबला किया तो इन विद्रोहियो ने भी अपनी सेना के साथ कर्नल हण्ट की सेना को चारो ओर से घेर लिया। साथ ही उन सेना के

कुछ भाग ने निर्मली कुण्ड पर स्थित सरकारी सेना पर धावा बोल कर वहा सरकारी 'ग्रास फार्म' मे आग लगा दिया। छावनी मे उपस्थित समस्त अंग्रेजी आफिसर काट डाले गये, कुछ ने अपने बीबी-बच्चो के साथ गुप्तार घाट पर से डोंगियो के द्वारा नदी पार करने की इच्छा से भाग निकलने की चेष्टा की, किन्तु जमथरा घाट तक पहुँचते-पहुँचते राजा देवीबख्शसिंह के सैनिको ने जो एक छोटे से तोपखाने के साथ वहा पहले से ही उपस्थित थे, उनपर गोले बरसाना आरंभ कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप कोई भी अंग्रेज भाग कर नही जा सका। सभी सरयू नदी के अतल गर्भ मे डोंगियो सहित समा गये। इधर कर्नल हण्ट की सेना बुरी तरह काट डाली गई, स्वय कर्नल हण्ट राजा बेणीमाधव सिंह के हाथ से बुरी तरह मार डाला गया। बलवाइयो ने उसकी लाश उल्टी टाँग कर सारे शहर मे घुमाई।

"१३ नवम्बर को एकाएक जबरदस्त फौजी कुमुक आ जाने के कारण जो बेखबर थे, पराजित हो गये। बेगम हज़रतमहल, मानवती, राजा देवीबख्श सिंह तथा राजा बेणीमाधव सिंह आदि नैपाल के जगलो की ओर निकल गये और बाबा रामचरणदास, अच्छन खाँ, शम्भु प्रसाद शुक्ल एव अमीर अली आदि अंग्रेजी सेना द्वारा पकड लिये गये। बाबा रामचरण दास और अमीर अली को अयोध्या मे श्रीराम जन्म-भूमि के समीपस्थ कुबेर टीले पर एक इमली के पेड मे लटका कर फाँसी दे दी गयी। अच्छन खाँ तथा शम्भु प्रसाद शुक्ल के सर रेतियो से रेत-रेत कर अंग्रेजो ने उनसे बलवाइयो का भेद पूछना चाहा, किन्तु इन बहादुर देशभक्तो ने अपने प्राण दे दिये। रेतियो से रेत-रेतकर इनके सिरो को चकनाचूर कर डाला गया, किन्तु इन वीरो ने कोई भी भेद अंग्रेजी सेना को नही बताया।

"बाबा रामचरण दास और अमीर अली ने अयोध्या की श्रीराम जन्मभूमि जिसे मुसलमान बाबरी मस्जिद कहते है, हिन्दुओ को वापस दिलाने के लिये मुसलमानो को राजी कर लिया था, जिसके परिणामस्वरूप अंग्रेजो मे बुरी तरह घबराहट फैल गई थी।

"लखनऊ मे विद्रोहियो को सफल और अंग्रेजी सेना को असफल होते देखकर अंग्रेजो की हिम्मत बुरी तरह टूट गयी थी। उन्हें विश्वास हो गया कि अब भारत से हमारा जान बचाकर निकल जाना नितान्त असम्भव है। अंग्रेजो से अधिक वे घबरा गये, जो उस समय जी जान से अंग्रेजी सेना का साथ देकर स्वय अपने देश और जाति के साथ भीषण विश्वासघात कर रहे थे।

"२६ जून को फैजावाद की धारा पर स्थिति वादशाही मस्जिद मे मुसलमानों की एक बडी भारी सभा बुलाई गयी । इस सभा का आयोजन भारत सम्राट वहादुर-शाह जफर के हकीक़ी दमाद मिर्ज़ा इलाहीवख्श ने किया, जो कि उस समय अंग्रेजो के दाहिने हाथ वन कर भारतीय स्वतन्त्रता की जड खोद रहे थे । इस सभा मे मिर्जा इलाहीवख्श और उनकी वेगम शाहज़ादी हुस्नबानू भी उपस्थित थी । मिर्जा साहब ने इस सभा मे अपना भापण देते हुआ फरमाया—

'विरादराने वतन' दिल्ली की हुकूमत शाह वहादुरशाह जफर के हाथो मे जब से आई है, मुल्क बरवादी की ओर वडी तेजी से बढ रहा है । कपनी की हुकूमत मे मुल्क के आ जाने से मुल्क मे एक नयी जान आ जायगी ×××।' आगे वे कुछ कहने भी नही पाये थे कि सभा के वीच से एक आदमी उठ कर खडा हो गया और कहने लगा । 'विरादने वतन, यह मिर्जा साहब गद्दार हो गये हैं । ये मुल्क को बेईमान अँग्रेजो के हाथ मे सौंप देना चाहते हैं । ये जव खुद इज्जत और रुतबा अता करने वाले शाह वहादुरशाह ज़फर के नही हुए, तो अब किसके होगे ।'

यह शख्स अच्छन खाँ था । उसका यह कहना था कि उत्तेजित भीड ने मिर्जा इलाहीवख्श के ऊपर हमला कर दिया । किसी तरह जान बचा कर मिर्जा साहव भाग निकले । उत्तेजित भीड को शात करते हुए अमीर अली ने कहा—

'भाइयो, वहादुर हिन्दू हमारी सल्तनत को हिन्द मे मजवूत करने के लिए लड रहे हैं । इनके दिल पर कावू पाने और इनके एहसानो का वोझ अपने सर से उतार देने के लिए हमारा फर्ज है कि अयोध्या की श्री राम जन्म-भूमि, जिसे हम वावरी मस्जिद कहते हैं, जो हकीकत मे रामचन्द्र जी की जन्म-भूमि के मन्दिर को जमीदोज करके शाहशाहे हिन्द वादशाह वावर ने वनवाई थी, हिन्दुओ को वापस दे दें । इससे हिन्दू-मुस्लिम इत्तहाद की जड इतनी मजवूत हो जायगी कि जिसे अँग्रेज के वाप भी नही उखाड सकेंगे ।'

कहना नही होगा कि अमीर अली के इस उत्तेजनात्मक भापण का मुसलमानो पर बडा प्रभाव पडा और वे इसके लिये वाखुशी राजी हो गये । यह खवर कपनी के जासूसो ने खूब रग चढा कर अँग्रेजो के पास पहुँचाई । इस खवर ने अंग्रेजो के होश उड गये थे ।

कहना नही होगा कि वावा रामचरण दास और अमीर अली का यह सत्प्रयत्न अंग्रेजो की कूटनीति के कारण विफल हो गया, तथा १८ मार्च सन् १८५८ ई० को कुबेर टीले पर स्थित एक इमली के पेड पर दोनो देश-भक्तो को अंग्रेजो ने फांसी

पर लटका दिया। जनता बहुत दिनो तक उस पेड की पूजा करती रही, किन्तु सन् १९३५ मे २८ जनवरी को फैजावाद के तत्कालीन डिप्टी कमिश्नर मिस्टर जे पी निकल्सन ने उस पेड को जड से कटवा डाला। इस प्रकार फैजावाद और अयोध्या के दो प्रात स्मरणीय वीरो की स्मृति अग्रेजो के मनहूस हाथो द्वारा मिटा डाली गई।"

विद्रोहियो का परिचय

शभु प्रसाद शुक्ल — ये अयोध्या के रहने वाले थे और इनके पूर्वज ज़िला गोरखपुर के रहने वाले थे। अयोध्या मे स्थित वासुदेव घाट के एक मन्दिर के ये पुजारी थे। विद्रोही नेताओ मे इनका नाम प्रमुख था। सुप्रसिद्ध विद्रोही नेता राजा देवीवख्श सिंह के ये दाहिने हाथ थे। विद्रोह के विफल हो जाने पर ये अग्रेजो द्वारा पकड लिये गये और इनके सर को रेती से रेत कर वडी दुर्दशा से इनकी जान ली गई।

अच्छन खा — नवावी खानदान के एक प्रमुख व्यक्ति थे और अयोध्या के वेगमपुरा मुहल्ले मे रहते थे। विद्रोह मे इनका वहुत वडा भाग था। विद्रोहियो के यह भी एक नेता थे। विद्रोह के विफल हो जाने के वाद शम्भू प्रसाद शुक्ल के साथ ये पकड लिये गये और इनके भी सर को रेती से रेत कर इन्हे मार डाला गया।

वावा रामचरण दास — ये हनुमान गढी के पुजारी तथा वलवाइयो के नेता थे। इन्हे सारे वलवाई वडी पूज्य दृष्टि से देखते और इनका वडा सन्मान करते थे। विद्रोह के विफल हो जाने पर इन्हे कुवेर टीले पर स्थित एक इमली के पेड से लटका कर अयोध्या मे फाँसी दे दी गई।

अमीर अली — आप हसनू कटरा फैजावाद के निवासी तथा अच्छन खाँ और वावा राम चरण दास के दाहिने हाथ थे। विद्रोह के विफल होने पर वावा राम चरण दास के साथ आप भी पकड गये और उन्ही के साथ फाँसी पर लटका दिये गये।

वृन्दावन पांडे — आप सुप्रसिद्ध विद्रोही श्री मगल पांडे के सगे भतीजे थे।

विद्रोह के विफल होने पर आप राजा देवी वख्शसिंह के साथ गायव हो गये, तब से आपका पता नही लगा। इनके वशज अभी तक अयोध्या तथा फैजाबाद तहसील मे वर्तमान है।

'शारद' जी के द्वारा भेजी गई इन सूचनाओ मे तीन बातें विशेष महत्व की हैं। मगल पाँडे का अवध वासी होना यहाँ के निवासियो के लिये गौरव की बात है।

फैजाबाद मे षड्यत्रकारियो की गुप्त बैठके होने का समाचार भी विशेष महत्व का है, परन्तु यह समझ मे नही आता कि मौलवी अहमदुउल्ला शाह का नाम क्यो गायव है।

दूसरी बात ये कि यह सच है, इतनी वडी क्रान्ति का सूत्रपात रजवाडों की ओर से नहीं हुआ था। भारतीय सेना के सूबेदारो का इस योजना मे प्रमुखतम् हाथ रहा है। मैं डा० मजूमदार महाशय की इस राय का कायल हूँ कि सत्तावन का नायक फौज का सिपाही था। सर जान के लिखित गदर के इतिहास मे हमे ऐसी अनेक बातें देखने को मिली, जिनसे क्रान्तिकारी सेनाओ के महत्व का अन्दाज लगता है।

तीसरी सूचना अत्यन्त उत्साहवर्धक है। जिस जन्मस्थान मस्जिद को लेकर चार वर्ष पहले इतना जवरदस्त फिसाद हुआ, उसे मुसलमान हिन्दुओ को वापस देने की बात पर विचार कर रहे थे, और हिन्दू जो कि कुछ वर्ष पहले तक मुसलमानो के घोर शत्रु थे, देश पर सकट आया देख, आपसी वैमनस्यता भूल अपने उन शत्रु के विरुद्ध उठ खडे हुए जो न्याय के नाम पर वदर-बाँट कर राज पर राज हडप किये जा रहा था।

इससे यह भी सिद्ध होता है कि वाजिदअली शाह अपने शासन काल मे हुए इन दगे के लिये तनिक भी दोषी नहीं। 'पॉयनियर' वाले लेख के अग्रेज लेखक ने इस प्रकार का जहर वुझा सकेत फेका है, जो अपनी सतह पर ही सरासर झूठ लगता है। वाजिदअली शाह तअस्सुवी मुसलमान न था। उसके द्वारा रचित रास नाटक मे 'रामचन्द्र की जय' के नारे और 'कृष्णभक्त जोगिन' इस बात का प्रमाण है। उसकी शृगार प्रियता ने होली दिवाली जैसे त्योहारो को अपना लिया था। उसकी विलासी प्रवृत्तियो के सम्बन्ध मे तो लखनऊ के वडे बूढो मे अनेक कहावते चली आ रही है, परन्तु किसी से आज तक उनकी साम्प्रदायिकता के सम्बन्ध मे मैंने केवल एक घटना का विवरण छोड कर और कुछ नही सुना। चौक (लखनऊ) के वयोवृद्ध लाला मोतीचन्द जी जौहरी ने एक बार मुझे यह वतलाया था कि चौक के वर्तमान कस्मनो

बाग मे, जहाँ गदर से पहले घनी आबादी थी, वाजिदअली शाह के अफसरो ने जौहरियो का मन्दिर खुदवा डाला था। उस पर बडा असतोष फैला। बहुत से प्रतिष्ठित हिन्दू शिकायत लेकर मडियाव के बडे साहब (सर हेनरी लारेन्स) के पास गये थे। वाजिदअली शाह ने इस बात का बडा बुरा माना। महताबराय जौहरी बादशाह के जौहरी थे। उनके कहने-सुनने से और बीच मे पडने से मामला सुलझ गया। कमालुद्दीन हैदर लिखित 'सवानहात-ए-सलातीन-ए-अवध' मे भी लाला मोतीचन्द जी द्वारा बतलाई गई इस घटना का उल्लेख है। अयोध्या के सम्बन्ध मे भी उसका विवरण उल्लेखनीय है। लिखा।

"जब फसाद हनोमान गढी का अहले इस्लाम से बढा तो मौलवी सैयद अमीर-अली बन्दगी मिया के पोते साकिन कस्बये अमेठी निस्बती भाई शेख हुसैनअली कारिन्द राजा नवाब अली खा रईस महमूदाबाद बसबबे जोशश हरारते इस्लाम चाहा के दफा तौहीने इस्लाम करे। चुनाचे पहिले सदीले मे अहले इस्लाम ने मौलवियो की तहरीक मे बादे शोर ओइज्मा कमर जेहाद पर बाँधी। बाज ने नाआ-क़िबत अन्देश मना किया कि यह अम्र अच्छा नही, हाकिम वक्त और साहबान आलीशान मे आखिर को मुक़ाबला हो जायगा, फिर कुछ न बन पडेगा। अबस-अबस तौहीने इस्लाम सबके वास्ते हो जायगी। गरज एक ने न माना। मौलवी साहब के सर पर अजल तो आ ही गई थी। जब रुक्ने-रुकीन सल्तनते हुजूरे आलम इस अम्र से मुत्तिला हुए, शाह जमजाह से अर्ज की कि फिदवी हरचन्द चाहता है कि मग्द फसाद किसी हिकमते अमली से मौकूफ हो जाय लेकिन खाना-जाद सल्तनत यानी ख्वाजासरा पीरदा ग़फलत मे बानी मुबानी इस फसाद के होते हैं। मौलवी अमीर अली मीर हैदर मुशी मुतवस्सिल वशीरुद्दौला के अजीजो से है। वह चाहता है कि आतिशे फितना फसाद को खूब भडकाये और मुफ्त मे मेरी बद-नामी हो और नारसाई ज़ाहिर हो। वशीरुद्दौला जब इससे वाकिफ हुए, अपने रफये इल्जाम के वास्ते मौलवी साहब को बुलवा भेजा और हजरत जन्नतुल मकान के इमामबाडे मे उतारा। जब रहे ज़ियाफत की अपने साथ हुजूर आलम के पास ले गये। उन्होंने सब तरह मे समझाया और चाहा कि खिलअत सरफराज़ी देकर रुख्सत करें, लेकिन मौलवी साहब ने न माना, न खिलअत लिया और न जेहाद से हाथ उठाया। आखिर उसी रात मौलवी साहब को उनके घर भेजा और उनका निकल जाना अपने लिये अच्छा समझे।"

कमालुद्दीन हैदर अग्रेज परस्त इतिहासकार थे, उनके उपरोक्त वृत्तान्त से कही

भी यह बात प्रकट नही होती कि वाजिदअली शाह ने दगे को भडकाने के लिये मौलवी साहब की पीठ पर हाथ रक्खा। किसी बौद्धिक सिद्धान्तवश नही, किन्तु अपनी रसिया प्रवृत्ति का अत्यधिक दास होने की वजह से वाजिदअली शाह झगडे-फसाद से कोसो दूर भागता था।

अयोध्या के दगे के बाद अयोध्या के हिन्दुओ का साथ-साथ लडना निस्सदेह इस बात का प्रमाण है कि वे लोग स्थानीय मुसलमानो से अधिक विदेशी ईसाइयो को अपने धर्म का शत्रु मानते थे। यदि यह बात न होती तो अग्रेजी फौज की सहायता से दबाये जाने वाले जेहाद के साथ-साथ वे अग्रेजो के साथी बन जाते। हसनू कटरा के मिया अमीरअली और हनुमानगढी के बाबा रामचरण दास एक साथ अग्रेजो से लडें, यह बात तभी सम्भव हो सकती है, जब कि हिन्दू मुसलमान लड-भिड कर भी, सकट के समय एक दूसरे पर ही अधिक भरोसा रख सकें।

बाबा रामचरण दास और मियाँ अमीरअली की एकता चिर अनुकरणीय आदर्श है। फैजाबाद मे मौलवी अहमदुल्ला शाह के सम्बन्ध मे जानकारी न प्राप्त कर पाने के कारण दुःखी हुआ, परन्तु बाबा जी और मियाँ जी का इतिहास पाकर बहुत सतुष्ट भी हुआ हूँ। रामजी की अयोध्या ने यह दिया तो बहुत दिया।

सुल्तानपुर

९ जून। अपनी यात्रा के तीसरे पडाव की ओर बढते हुए मेरी कल्पना की दृष्टि के आगे ट्रेन के दोनो ओर फैले खेतो और मैदानो मे सौ वर्ष पहले की अग्रेजी भारतीय सेनायें आती जाती, हर ओर फैली हुई दिखलाई पडती थी। लाल कोट, सफेद पतलून और टोप लगाये घोडे पर सवार हथियार बन्द अग्रेज अफसर, फटी वर्दियो मे भागते हुए अग्रेज, उनकी स्त्रियाँ और बच्चे—सभी का ध्यान आ रहा था। जो काटे गये जिन पर विपत्ति पडी वे भले ही अग्रेज हो या हिन्दुस्तानी, उनके प्रति सहानुभूति उमडती है। लडवैयो की बात न्यारी है। आमने-सामने युद्ध के मैदान मे जो मार काट मचती है, वह जब तक युद्ध का सिद्धान्त जीवित रहेगा होती ही रहेगी। परन्तु इन युद्धो की घृणा को लेकर जब निहत्थी कमजोर जनता पर अत्याचार किया जाता है, तो बहुत बुरा लगता है।

यह झूठ नही कि हमारी ओर से लोगो ने अग्रेजो और अग्रेज परस्त रजवाडो, रईसो के प्रति जगह-जगह बडी क्रूरता भी दिखलाई थी। फैजाबाद गजेटियर मे उस क्षेत्र के अंग्रेजो को बुरी तरह खदेडे जाने का विवरण दिया है। चार पाँच या एक

व्यक्ति के पीछे खून की प्यासी जनता का दौडना कोई अच्छा चित्र नही है। सुल्तानपुर से आने वाली क्रान्तिकारी सेनाओ का समाचार सुन कर फैज़ावाद और सुल्लतानपुर के वीच की भूमि अग्रेजो के लिये नरक वन गई थी।

आज ही के दिन, सौ वर्ष पहले सुल्तानपुर मे गदर का श्रीगणेश हुआ था। कर्नल फिशर सुवह के समय मिलिटरी पुलिस लाइन से लौट रहा था। उसे पीछे से गोली मारी गई। दो सिविलियन अफसर और भी मारे गये। अपना दाँव आने पर अग्रेजो ने सुल्तानपुर नगर पूरी तरह उजाड डाला। मैंने सुना था कि पुराने सुल्तानपुर के खडहर गोमती पर आज भी उस नाश की गवाही देने को खडे हैं। वर्तमान सुल्तानपुर नगर गदर के वाद उस जगह वना, जहा पहले गोरो की छावनी थी। सुल्तानपुर जिले मे अमहट के खानज़ादो की वीरता के सम्वन्व मे भी वडी प्रशसा भरी वातें सुनी थीं।

दोपहर वाद सुल्तानपुर पहुँच गया। वहा के जिला सूचना अधिकारी श्री 'किसान' टिकट कलेक्टर के पास ही दरवाजे पर खडे वाहर निकलने वाले मुसाफिरो के चेहरे भाँप रहे थे। अपनी यात्रा के इस तीसरे स्टेशन पर आते आते तक, इन खोजती आँखो को पहचान लेने का अभ्यास हो चला था। इसलिये फाटक पर पहुँचते ही मैंने 'किसान' जी को इस तरह नमस्कार किया गोया पुरानी जान पहचान हो, कहा "आइये।"

'किसान जी "आप ही नागर जी है ?" पूछते रह गये और मैं उन्हें 'आइए' कहकर वढाता ले आया। मेरा जासूसी उपन्यास पढने का शौक उपयोगी सिद्ध हुआ, शर्लाक होम्स की तरह अपने कमाल से 'किसान' जी को वाँध कर मन ही मन वडा प्रसन्न हुआ। जीप गाडी के शहर की विभिन्न सडको से गुजरते हुए ही मुझे अन्दाज़ लगा कि शहर छोटा होते हुए भी सम्पन्न है। जगह-जगह नये ढग की इमारतें भी देखी। मेरे आने से 'किसान' जी एक धर्म सकट मे पड गये थे। दूसरे ही दिन उनके ज्येष्ठ पुत्र का तिलक आने वाला था। अपने पास वैठे एक साथी को निमत्रण वँटवाने का काम सौंप स्वय मेरे काम के लिये साथ चलने की योजना वनाने लगे। मैंने सोचा कि इस समय इन्हे अपने काम के लिये घेरना अनुचित होगा। उनसे कहा : "आप मुझे गाडी दे दीजिये और यह भूल जाइये कि मुझे घुमाने का भार आप पर है।"

ना-हा करते वे राज़ी हो गये। एक स्थानीय कालेज के अध्यापक, जिनका नाम मैं भूल गया, मेरे साथ अमहट चले। 'किसान' जी ने उन्हे मेरे साथ कर दिया था।

अमहट ग्राम नगर से वहुत दूर नही था । रास्ते मे जेलखाना भी पडता है, वह कोठी भी खँडहर के रूप मे दिखलाई पडती है, जहा कर्नल फ़िशर मारा गया था।

ठिकाने पर पहुँच गये । सवसे पहले जो साहव मिले उन्ही से सवाल किया । श्री जव्वादहुसैसन खा ने कुर्सिया मँगाई और इनायत हुसैन खा सरपच को भी बुलवा लिया । देखते-देखते दो चार बुजर्ग और जवान इकट्ठा हो गये । श्री जव्वाद हुसैन और सरपच साहब वतलाने वालो मे प्रमुख थे, यो बीच-बीच मे दूसरे सज्जन भी कुछ-कुछ वतलाते चलते थे । श्री जव्वाद हुसैन ने वतलाया · "हमको तो ये मालूम हुआ था कि जब अँग्रेज़ आये तब हमारे मूरिसान खानज़ादगान ने उनका मुकावला किया । उनमे फत्तेखा, दरियाव खा, पीर खां, फतेहवहादुर खा, हुसैन बख्श खा, फेंकू खा, खातिर खा, गनीबहादुर खा, रज़ा खा उर्फ राजा खा लड़े । हमारे क़ौम के लोग वाकायदा जग मे लडे । 'अट्ठारह सौ' लोग थे, इनमे से कुछ मारे गये, कुछ दूर-दूर गाँवो मे भाग गये, जो वचे वो हर तरह की मुसीवतें झेलने के वाद यहा कब्रिस्तान मे वमा दिये गये । पुराना अमहट गाँव तो यहा से जरा दूर है । हमारा इलाका हम से छीन कर दियरा वालो को दे दिया गया । हमको जीते जी मुर्दा समझ कर अँग्रेज़ो ने रहने के लिये ये कब्रिस्तान दिया । कर्नल जो गदर मे मारा गया था, उसका बँगला यही पास ही है । कर्नल में शैतानियत है, उसका भूत अव भी सफेद घोडे पर आता है ।"

मैंने पूछा "गदर तो छावनी मे हुआ होगा, फिर आप लोग उसमे कैसे और कव शामिल हुए ?"

एक वुजर्ग साहव वोले "हमारे पास लखनऊ से खुफिया तौर पर सरकारी आर्डर आया था । वम फिर जग शुरू हो गई ।"

"किसने आर्डर भेजा था ?"

"विरजिस कदर शाह ने भेजा था ।"

"क्या वो कागज़ आपके पास है ?"

"जी हा, खादिम हुसैन के भाई के पास है ।"

"मुझे देखने के लिये मिल सकता है ?"

सरपच इनायत हुसैन खा वोले "आप कल तशरीफ लाये । मैं मँगवा कर रक्खूंगा। वहरहाल हमने वो हुक्मनामा देखा है । उसमे फारसी मे यह इवारत लिखी है कि "गोमती, गगा, घाघरा के दरम्यान पोशीदा तौर पर अँग्रेज फ़ौजें जा रही हैं,

उनके साथ हिन्दू और सिक्ख फौजें भी हैं। हमे हुक्म हुआ था कि हम उनका पीछा करें, हिन्दुओं और सिक्खो को गिरफ्तार कर लें, जिससे कि गद्दारो की ताकत घट जाय और गोरो को कत्ल-ओ-तबाह कर दिया जाय।"

"यह हुक्मनामा किसके नाम आया था ?"

सरपच महोदय बोले "बख्शी खा सनदयाफ्ता ताल्लुकेदार अमहट के थे। उनके बाद उनके लडके बख्तावर खा हुये। ग़दर के दौरान मे ही बख्तावर खा का इन्तकाल हुआ। मिडई खा उर्फ मेहदी हसन खा फिर ज़मीदार हुए। इन्ही बाप बेटो में से किसी के नाम होगा। अब इस वक्त ठीक तरह से तो याद नही। हमारे वालिद के फूफा रज़ा अली खा नायब नाज़िम थे। उनकी दस हज़ार फौज थी। वैसे सनद ताल्लुका बख्शी खा के नाम था, मगर पट्टीदारान बहुत से थे, आपको जव्वाद हुसैन ने जो नाम लिखाये, वे सब, और तमाम लोग पट्टीदार थे। इन सब पर, बाईस आदमियो पर मुकद्दमा कायम किया गया। उनमे से कुछ को सज़ायें तजवीज हुईं और दो को यानी मिडई खा और हुसैन बख्श खा को फाँसी की सजा हुई। अवध के बावन ताल्लुकेदारान ने इनके लिये सफाई पेश की मगर वह काबिले समाअत नही समझी गई।"

"जुर्म था कि अग्रेजो की फौज के लोग, जो मारे गये, खुसूमन कर्नल, जो मारा गया, उसकी लाश दफनाई क्यों नही गई। दूसरा जुर्म यह था कि कर्नल की घोडी को गाँव वालो ने यानी हम लोगो ने हासिल कर लिया और उनके साईस को मार डाला। हमारा तीसरा जुर्म यह बतलाया गया कि परऊपुर छितौना के रहने वाले जयलाल को, जो कि गिरदौर का कानूनगो था हमारे बुजुर्गों ने मार डाला।"

"तो फिर मिडई खा और हुसैन बख्श खा को फाँसी दे दी गई ?" मैंने पूछा।

"जी नही, बच गये। उसी वक्त मल्का विक्टोरिया की तकरीब हुई। उस तकरीब मे सज़ायें माफ हो गईं। लोग बच तो गये, लेकिन उनका पूरा का पूरा ताल्लुका ज़ब्त हो गया।"

एक वृद्ध सज्जन बोले "कैदखाने के पास पीपल के दरख्त से हर रोज़ फाँसिया दी जाती थी। जब तक विक्टोरिया की तक़रीब नही हुई तब तक कलक्टर रोज़ कहता था कि मेडू खां, तुम्हारा भी यही हाल होगा। मगर मेडई खा इस्तखारे के इतने पाबद थे कि बराबर यही जवाब देते कि हुज़ूर, जैसे दूध से मक्खी निकल आती है वैसे ही मैं भी साफ निकल आऊँगा।"

दूसरे दिन मैं फिर बेगम हज़रतमहल के फर्मान देखने अमहट गया। उस दिन

तमाम खानज़ादे इकट्ठा थे। करीब पच्चीस-तीस बूढे-जवान व्यक्तियो ने मुझसे तरह-तरह के प्रश्न पूछने आरम्भ किये "यह हाल क्यो पूछा जा रहा है, क्या इससे हमारी तकलीफें दूर हो जायेंगी ? हमारी जो ज़मीन हवाई जहाज़ का अड्डा बनाने के लिये लडाई के जमाने मे ले ली गई थी, क्या हमे वापस मिल जायगी ? हम सब अंग्रेज़ी हुकूमत के बागी तो थे ही पर क्या अपनी हुकूमत मे भी बागी माने जायेंगे ?"

सरपच साहब सब को खामोश कर खुद बोलने लगे, कहा "मैं दो लफ्ज़ जानता हूँ बाबूजी—बागी और खैरख्वाह। बागी उसे कहते हैं जो मौजूदा सरकार के खिलाफ बगावत करे। हमने मौजूदा शाही सरकार के हुक्म के मुताबिक अपने मुल्क के लिये क़ुर्बानी दी, फिर हम बागी क्योकर कहे जा सकते हैं ?"

मैंने कहा "बागी आपको अंग्रेज़ कहते थे और गलत कहते थे। आप यकीनन अपने मुल्क के खैरख्वाह थे। आप की खैरख्वाही का सबूत सरकारे बिरजीसी के वे फर्मान है जिन्हे देखने के लिये मैं इस वक्त हाज़िर हुआ हूँ।"

शिकायतो और सवालो का फिर एक रौरा उठा। उसे रोकते हुए एक साहब ने हाँक लगायी "खामोश ! अब मैं आप की खिदमत मे अपना लिखा हुआ बयान पेश करता हूँ बाबू साहब। और वो जो फर्मान है वो मेरे ही पास है। निहाल गढ मे रक्खे हुए हैं। आप खुद ही देख रहे हैं कि मेरी तबियत आज नासाज है। आपके तशरीफ लाने की वजह से ही मैं यहाँ आया हूँ, बल्कि कहना चाहिये ये लोग मुझे ले आये है। दो चार दिन बाद अगर आप तशरीफ लायें, तो मैं चलकर आप को दिखला दूँगा।"

मैंने कहा "मेरे लिये तब तक रुकना नामुमकिन है, मैं 'किसान' साहब से कह जाऊँगा उन्हे आप मेहरबानी कर उन कागज़ात की फोटो खिचवाने के लिये दे दीजियेगा।"

सरपच साहब बोले 'वे कागजात ही हमारी जागीर है बाबू साहब, अब और कुछ नही रहा।"

मैंने कहा "वे कागजात फोटो खीचने के बाद आप को वापस मिल जायेंगे। चूँकि हर कैमरा काग़जात की तस्वीर नही खीच सकता इसलिये उन्हे लखनऊ भेजा जायगा।"

खादिम हुसैन खा साहब बोले-"तब तो हम बडे साहब की ज़िम्मेदारी पर ही उन्हें दे सकेंगे।"

मैंने कहा "ठीक है। यही कीजियेगा।"

खादिम हुसैन साहब ने फिर हाथ उठाकर सभा को सुनाते हुए कहा . "सुन लो भाइयो ! मैं इन बाबू साहब को सब हिस्ट्री लिखकर दे रहा हूँ अगर कोई बात छूट गई हो या किसी को किसी किस्म का इख्तिलाफ हो तो बतला देना। फिर न कहना कि दरोगा जी ने गलत ब्यान दे दिया।" इतना कहकर वे सुनाने लगे—

"वाकयातो हवादिसाते जंगी इलाका-ए-राज अमहट मिन्जानिब कौम खानज़ादगान जो गजलौती मुस्लिम राजपूत से हैं, शाही खानदान से भी ताल्लुक है। (१) यह इलाका ताल्लुका-ए-अमहट जो चौदह कोस मशहूर था बसिलसिलए बग़ावत ब्रिटिश ज़ब्त किया था (२) शाही फरमान जिस पर मुहर भी सब्त है इस बाबत मौसूल हुआ था कि अंग्रेजो से लडो दरियाए घाघरा पार उतार दो। ज़ाहिर है कि इस हुक्म की पाबन्दी मे जग भी किया होगा और घाघरा पार उतारा होगा। फर्मान बनाम बख्तावर खा सादिर हुआ था जो अगुआ थे। (३) नक्ल खेवट व दीगर काग़ज़ात जिनको अल्लाहयार खा मरहूम ने फराहम किया था मैंने बचश्म खुद देखा है। छियत्तर नवरी मुवाजेआत इस इलाके मे शामिल थे जिनमे छप्पन मुवाजेआत चार पट्टीदारो मे तकसीम थे। नवरदारान बख्तावर खा, मुहम्मद खा, झाऊ खा, गजा खा, इस इलाके मे दर्ज खेवट हैं। बकीया मुआवजेआत खान्दान बख्तावर खा मे (अस्पष्ट लिखावट) थे। (४) हमला अंग्रेजो पर जो किया गया कुल अफराद-ए-मौजा जो उस वक्त थे, शरीके कार रहकर अज़ तरफ पुराने सुल्तानपुर की जानिब अंग्रेजो को भगा कर ले गये, जहा कुश्तो-खून भी काफी हुआ। मेम और बच्चे तक निशाना बनाये गये और दरियाए घाघरा पार उतार दिया गया। (५) एक अंग्रेज भाग कर गोमती नदी के पूरब वाले घाट से जो करीब नगर है, एक मल्लाह की डोगी कश्ती के जरिये पार उतारा। उसने मल्लाह को अपनी जान बचाने के लिये तहरीर लिख दिया। उसने राजा साहब दियरा को दे दिया। जब खुद कमिश्नर तसल्लुद के बाद आया तब राजा साहब दियरा ने उसे भी पेश कर दिया, जिस बिना पर राजा साहब दियरा को खैरख्वाही मे इलाका-ए-अमहट भी मिल गया। (६) कर्नल फौज की सवारी की कलाराज़ घोडी मुहम्मद खा खानदान बख्तावर खा ने रख लिया था, साईस के माँगने पर मार कर भगा दिया। कर्नल फ़ौज की लाश एक दरख्त में लटकती पाकर जब दूसरी फ़ौज आई, देख कर यह इल्ज़ाम भी अमहट वालो पर लगाया कि तुम लोगो ने लाश को दफन नही कराया बल्कि तौहीन की। (८) कोई कानूनगो भी इस इलाका-ए-अमहट मे मारा

गया था, यह इल्ज़ाम इज़ाफा किया गया है। (९) जब दूसरी फौज अंग्रेजो की तसल्लुद कायम करने के लिये गोलाबारी करती हुई आई तो शानदार मकानात, जो बाज़ार अमहट के उत्तर जानिब डेढ़ दो मील के अन्दर आबादी मे थे, गोलाबारी करके मिस्मार करा दिया है। अब तक टीले मौजूद हैं, जो फरियाद कर रहे हैं। इस वक्त सब लोग बच बचाकर वसीह इलाके मे फरार होकर चले गये। ताकि जानें बच जायें। (१०) बुजुर्ग मखसूस अपने बडे वालिद ग़नी बहादुर खा की ज़बानी यह हालात मिले कि जब तसल्लुद कायम होने का ऐलान हुआ तो यह भी ऐलान हुआ कि सब लोग वापस आजायें। जब वापस आये तो धोखा देकर बुलवाया, लेकिन बहुत लोग नही गये सिर्फ दस या बारह आदमी गये, जिनमे ग़नी बहादुर खां, मेहदी खा, राजा खा, झाऊ खा, बाकी लोगो का नाम याद नही रह गया—सब को गिरफ्तार कर लिया गया। फांसी देने का हुक्म हुआ तख्ता फांसी लग गये। जुडीशियल कमिश्नर ने माफ कर दिया, जान बची। (११) एक फरमान ए-शाही और भी बज़बाने फारसी बनाम राजा खा और अल्लाहयार खा के नाम मौजूद देखा है जिसमे किसी मामले के तस्फिये के लिये राजा खा व राजा इस्माईल को हुक्म दिया गया था। (१२) मुख्तसर खाका वाकयात का इस ज़ब्ती इलाके का गजेटियर मे शाया हो चुका होगा मिसिल ज़ब्ती मुहाफिज़ खाने मे मौजूद है मुलाहिज़ा फरमाई जा सकती है। रियासत दियरा मे रियासत अमहट के शामिल होने वाले इस इलाके के कागज़ात भी अलहदा होगे। (१३) इसी बगावत की बिना पर अमहट के जब्ती शुदा इलाके मे एरोड्रम भी बनाया गया ताकि बिल्कुल कुचल दिये जाय, अब सर न उठा सकें। (१४) मेरे चचाज़ाद भाई हुसेन जो रेलवे मे मुलाजिम थे, सन् १९१९ मे जब कि कांग्रेस मे मुहम्मद अली और शौकत अली भी शामिल थे जनाब महात्मा गांधी की स्पेशल देहली से अमृतसर जाने वाली थी। वहां मीटिंग होने वाली थी। उस वक्त मेरे भाई जो सहारनपुर मे तैनात थे और रेलवे ड्राइवर थे और एक अंग्रेज ने उन पर ज़ोर डाला कि वह स्ट्राइक कर दें ताकि गांधीजी की स्पेशल न जा सके। मगर उन्होने स्ट्राइक न होने दिया ताकि स्पेशल गांधीजी की चली जावे। यह २४ दिसबर को स्ट्राइक कराई जा रही थी लेकिन स्ट्राइक न होने से स्पेशल चली गई बाद स्ट्राइक की गई। जब पूछा गया कि २४ को तो स्ट्राइक न हुई अब पहली को क्यो की गई तो जवाब मे कहा २४ दिसबर को अंग्रेज़ो के बच्चे पहाडो मे अपने वारिसो के पास तातील मे भेज दिये जाते हैं अगर स्ट्राइक होती तो बच्चे वारिसो तक नही पहुंच सकते थे तो खामोशी हुई।

मिजानिव कौम ए खानजादगान अमहट
खादिम हुसैन खा सब-इसपेक्टर मोरेका
१०-६-५७

अर्जे हाल-ए-खास है (१५) मक्फी न रहना चाहिए, मरने पर भी दुर। इस अफसोसनाक पामाली के वाद वलवाई की जमीन कोआपरेटिव को दे दी, जिसका उनको कोई हक़ नही था, क्योकि एरोड्रोम मजिस्ट्रेट साहव ने हुक्म फरमाया था कि जव जमीन हवाई अड्डे के मसरफ मे न रहे तो अस्ल मालिकाने जमीन को उसी सूरत मे वापिस दे दी जावे। अलावा इसके दो गवर्नमेन्ट आर्डर भी जारी हो चुके हैं कि जमीन वापस देना चाहिए। हुक्म एरोड्रोम की विना पर हम लोगो की दरख्वास्त तकरीवन दो बरस हुए गुजरी, पर वोर्ड मीटिंग के लिये भेज दी गई, जिसे तकरीवन आठ माह हुए होगे। अभी तक खामोशी के नशे मे पडी है। खास तवज्जह की जरूरत है और इलाका भी वा गुजार होना चाहिये। वलिहाजे आगाही वाकयात अर्ज किये।—खादिम हुसैन खा।"

अमहट के खानजादो से विदा लेकर जव मैं चला तो १८५७ से लेकर १९५७ तक, पूरी एक शताब्दी मेरे सामने आ रही थी। किसी वडे क्रान्तिकारी आन्दोलन मे भाग लेने वाले व्यक्ति को आन्दोलन की असफलता के वाद जो कुण्ठा और अवसाद सहना पडता है वह वडा भयकर होता है। यह खानजादे, जो वात-वात मे अपने पुरखो की जमीदारी और लाखो के वैभव का शोर मचाते थे वह उनके फटे-पुराने कपडो, मँहगाई की मार खाये हुए सूखे चेहरो और उनके वर्तमान मजदूर जीवन के साथ जुडकर एक ऐसी जटिल गुत्थी के रूप मे सामने आता था जिसे सुलझाना आसान काम नही है। जाने कितने वडे मँझोले ऐसे परिवार होगे, जो सत्तावनी क्रान्ति मे अपनी लाखो की हैसियत खोकर कौडी-कौडी के मुहताज हो गये। स्वर्गीय ख्वाजा हसन निज़ामी द्वारा लिखित दिल्ली के शाहज़ादो और शाह-ज़ादियो के विवरण पढकर, कई वरस पहले मैं फूट-फूटकर रोया था। कल का शाहज़ादा आज का भिखारी, कल की शाहज़ादी आज के किसी अति साधारण नौकरी पेशा व्यक्ति की स्त्री वन गई, यह वाते मुझे अग्रेजो के खिलाफ उभारती थी।

परन्तु आज, स्वतन्त्रता प्राप्ति के वाद हम उन लाखो के वैभव वाले क्रान्ति-कारियो के लुटे हुए वशजो को कैसे सतोप प्रदान करें। सौ वरस पहले के पुरखो के कारनामो के लिये क्या आज उनके वशजो को पेन्शनें वांटी जांय ? यह उचित

होगा ? ऐसे अनेक परिवार होगे जिनके व्यक्ति गदर मे लडकर शहीद हुए, परन्तु न वे तब अमीर थे न आज। उन अनजान पुरखो की शहादत क्या हमारे लखेसरी पुरखो से कम थी ? यदि पेन्शनें ही बँटनी हैं, तो फिर सबको क्यो न बँटें ? गदर, सन् १९०७ के स्वदेशी आन्दोलन, जलियावाला बाग के शहदो से लेकर सन् ४२ तक की असख्य हुतात्मायें हैं। अगर सबको पेन्शनें ही बाँटी जाँय, तो राष्ट्र पर कर का एक बडा भार लद जाय। फिर क्या शहीद केवल अपने लिये ही शहीद हुए थे ? उनकी शहादत का फल सारे देश को मिलता है। जब हमारा राष्ट्र सम्पन्न होगा तब उसका प्रत्येक व्यक्ति सुख पायेगा। सौ वर्ष पहले के पुरखो की वीरता के लिये उनके वशजो को आज पेन्शन देना अनुचित है। हाँ, उन वशो को विशेष सम्मान अवश्य देना चाहिये, जिससे कि शूर पुरखो के वशज अवसर पडने पर आज भी वैसा ही दृष्टान्त उपस्थित कर सकें। यदि अमहट के अमीर खानजादो के वशज पेन्शन के मुस्तहक हैं, तो लखनऊ के वे गरीब पासी क्यो नही, जिनके गरीब पुरखो ने बेलीगारद मे बार बार सुरगें बिछाकर अद्भुत साहस का परिचय दिया था।

इसमे सन्देह नही कि अमहट के खानज़ादो ने सन् १८५७ मे शाही फर्मान पाकर राजा अर्थात् देश के प्रति अपना कर्तव्य निभाया। शाही फर्मान यह भी सिद्ध करते हैं कि १८५७ की क्रान्ति एक सगठित आयोजन थी और गाँव के गाँव उसमे सम्मिलित हुये थे।

हाँ, भारतीयो की ओर से क्रूरतायें भी हुईं। स्वय अमहट वालो ने यह भी स्वीकार किया कि उनके पुरखो ने अपने राजा की आज्ञा पालन करने के जोश मे अग्रेज़ स्त्रियो और बच्चो तक को न छोडा। यह क्रूरता सचमुच किसी भी युग मे अक्षम्य मानी जायगी। बेगम हज़रत महल के अनुशासन मे चलने वाली सरकारे-बिरज़ीमी पर यह आरोप नही लगाया जा सकता कि उनकी आज्ञा से शत्रुओ की स्त्रियो और बच्चो का कत्ल हुआ। इस बात के प्रमाण मौजूद हैं कि हज़रत महल ने शत्रुओ की बन्दी स्त्रियो और बच्चो को बचाया था, उन्होने बदले की आग मे सुलगते हुये क्रान्तिकारियो को कैदी स्त्रियाँ और बच्चे देने से इकार कर दिया था।

जो हो, अमहट वाले पुरखो के इस घृणित कर्म के लिये डाक्टर मजूमदार की भाँति मेरा मस्तक भी राष्ट्रीय लज्जा से झुक जाता है, परन्तु यह विचार भी बार-बार आता है कि आखिर ऐसा क्यो हुआ ? क्या यह नृशनता एकपक्षीय ही

थी ? क्या इस वात के प्रमाण कम हैं कि भारतीय सैनिको और प्रजा-जन ने शत्रुओ से जी जान से लडते हुए भी सकट मे पडे अकेले-दुकेले अग्रेज स्त्रियो, पुरुषो की रक्षा की ?

नगर के प्रतिष्ठित वकील बावू गणपति सहाय से भेंट की। वे वोले "ज्यादा तो नहीं जानता पर इतना कह सकता हूँ कि हमारे यहा गदर मे सबसे वडा हिस्सा अमहट वालों ने लिया था। हमारा तो शहर का शहर वम्बार्ड कर दिया गया। पुराना सुल्तानपुर गोमती के पार है, वही लडाई हुई थी। लडाई के बाद पूरी वस्ती उजाड डाली गई। फिर लोग इधर आकर वसे। इस तरफ पहले अग्रेज़ी कैम्प था। देहाती अव तक इस इलाक़े को कम्पू कहते हैं। सुल्तानपुर की पहली आवादी से पता चलता है कि पुराने ज़माने मे हमारे यहा हिन्दुओ और मुसलमानो के आपसी सम्वन्ध वहुत अच्छे रहे होगे। आप अगर पुरानी वस्ती के खँड्हरो को देखने जायेंगे, तो खुद देखेंगे कि मन्दिर और मस्जिद एक साथ अगल-वगल बने हुए हैं। जब ग़दर शुरू हुआ तो दियरा के ताल्लुक़ेदार वावू रुस्तम साही ने अग्रेज़ो को वचाया, उन्हें पर्देदार पालकियो मे जौनपुर भेज दिया। गदर के वाद वावू साहव को राजा का टाइटिल और जागीर भी मिली। अग्रेजो ने जव कब्ज़ा किया तव सीताकुड के पास नीम के पेड से उन्होने सैकडो हिन्दुस्तानियो को फाँसिया दी थी।"

वीवी की मस्जिद के पेश इमाम मौलवी अब्दुल अव्वल ने वतलाया "वहादुर शाह ज़फर के कोई वेटे या पोते गदर के ज़माने मे भागकर यहा आये थे। वे सूफी हो गये थे। हज़रतशाह अब्दुललतीफ साहव के नाम से वे मशहूर हुए और ताउम्र यही रहे। दूसरी वात आपसे अर्ज़ करना चाहता हूँ कि जनरल वख़्त खा रुहेला जो ग़दर के जमाने में वडे सरनाम हुए, उनकी ननिहाल अवध सुल्तानपुर में थी। तीसरी वात यह है कि कादू के नाले पर मुजाहिदीन गदर ने वडा मोर्चा लिया।"

श्री शकरलाल एम० एल० ए० ने भी कादू के नाले वाली लडाई को अत्यधिक महत्वपूर्ण वतलाया, वोले "उस ज़माने मे वहा वडा वीहड जगल रहा। थोडा वहुत जगल अव भी है। वहा हिन्दुस्तानियो ने अग्रेज़ो को मार-मार कर खलिहान भर दिये। अग्रेज़ वही से वाहर खदेडे गये।"

एक वैद्यजी, और एक 'ज़िले के सर्वश्रेष्ठ विद्वान' महोदय के नाम और पते भी वतलाये गये। मैं दोनो सज्जनो के यहा दो-दो, तीन-तीन वार गया। दुर्भाग्यवश

तत्कालीन भारत की देवियो का गदर मे इस प्रकार भाग लेना क्रान्ति नही तो और क्या है।

गोडा नगर अब तक के देखे हुए स्थानो मे सब से दरिद्र लगा। मकान अधिकतर खँडहर हैं। गोडा प्राचीन बस्ती है और जैसा कि नाम से ही विदित होता है यह गोडो का नगर था। थारू, गोड, भर, पासी, कुर्मी आदि जातियो का किसी समय यहा बडा जोर था। गोडा जिले के बरवार स्त्री-पुरुष चोरी करने मे बडा नाम पा चुके हैं। पुरी के जगन्नाथ मदिर और बहराइच के सैयद सालार की दरगाह छोड कर कर प्राय हर देवी देवता को ये बरवार लोग लूट लेते है। गज़ेटियर मे गोडा के बरवारो का यह महात्म्य मैंने पढा था। कर्नल स्लीमेन की पुस्तक मे यहा के डाकू फज़लअली का हाल भी पढ चुका था। यहा के चोर डकैतो की पुरानी परम्परा यह सिद्ध करती है कि ऐतिहासक, कारणवश यहा दरिद्रता और बेकारी बढी, जिसके कारण लोगो ने चोरी डकैती का पेशा अपना लिया।

जो हो, इस समय तो मैं गोडा के राजा देवीबख्श सिंह का माहात्म्य यहाँ के लोगो से सुनने आया था। गोडा के अतिरिक्त सूचना अधिकारी श्री सिंह काफी सीधे और भले लगे। रास्ते मे उन्होंने भी मुझे राजा देवीबख्श की रानियो के सम्बन्ध मे एक बात बतलाई।

"राजा के दो रानियाँ थी। एक पयागपुर के राजवश की थी। यह रानी राजा के नेपाल भागते समय उनके साथ गई थी। नेपाल मे राजा देवीबख्श का देहान्त होने पर वे लौट कर पयागपुर चली आई। उनका दहान्त अभी आठ-दस वर्ष पहले ही हुआ। दूसरी रानी ने राजा के नेपाल जाते समय हीरे की कनी खाकर आत्महत्या कर ली थी।"

लखनऊ से चलते समय एक मित्र ने मुझे ठाकुर नौरग सिंह का नाम बतलाया था। ठाकुर साहब कांग्रेस के पुराने और प्रतिष्ठित कार्यकर्ता हैं, साथ ही इस समय जिला बोर्ड के अध्यक्ष भी हैं। श्री सिंह को लेकर मैं उनकी कोठी पर पहुँचा। यह जगज़ाहिर है कि नेता लोग हर दम जनता से घिरे रहते हैं, ठाकुर साहब भी काफी व्यस्त नज़र आये। मेरा आशय जानकर उन्होने अपने सारे कार्य कुछ देर के लिये रोक दिये। पास ही बैठे, एक वृद्ध सज्जन ने बतलाया "आप राजा देवीबख्श के कुटुम्बी हैं।"

ठाकुर साहब मुस्कुराये, फिर बतलाने लगे "देवीबख्श सिंह बिसेन क्षत्रिय थे। बिसेनो के पराक्रम का इतिहास गज़ेटियर मे लिखा है।

"राजा देवीवख्श हमारे पूर्वज थे। यहा तीन हिस्सा क्षेत्र मे रियासत थी और दो हिस्से में कुटुम्बियो का इलाका था। इसे 'पाँचा-दुआ' पद्धति कहते हैं। जव अग्रेज जीत गये तो उन्होंने राजा के राज्य के साथ-साथ उनके कुटुम्बियो का इलाका भी ज़ब्त कर लिया। इनका इलाका गोंडा से १२ मील दूर 'बड्डीहा' कहलाता है।

"गोडा के वर्तमान राजा 'पाडे' वश के एक व्यक्ति उस समय राजा देवीवख्श के यहाँ ज़िम्मेदार पद पर थे, सम्भवत राशन विभाग के अध्यक्ष थे। उन्होने विश्वास-घात किया अग्रेजो से मिल गये। अन्तिम युद्ध के समय सात दिनो तक सेना को राशन नही मिला, सिपाही भूखे रहे। राजा ने सुना तो बडे दुखी हुए और कहा—'जव यहाँ तक विश्वासघात है, तो अब हम यहाँ नही रहेगे, अग्रेजो के राज मे पानी भी नही पियेंगे।' राजा के बाद रियासत तीन भागो मे बँट गई—एक भाग गोडा के पाण्डेय को, दूसरा अयोध्या के राजा को और तीसरा भाग वलरामपुर के राजा को अग्रेज़ो के प्रति वफादार रहने के कारण इनाम मे मिला।

"पाण्डेय जी दोनो से मिले थे। हमारे पूर्वज अग्रेजो के भय से जगलो मे भटकते थे। पाडे जी उनसे मिलते तो डराते कि अग्रेज़ो को तुम्हारा पता लग गया है, वे पीछे पडे हैं। तथा अग्रेज़ो से आकर कहते कि वे लोग युद्ध की तैयारी कर रहे हैं। इसी घात मे वड्डीहा का इलाका ज़ब्त हुआ। महारानी विक्टोरिया की घोषणा के वाद हमारे कोई पूर्वज अग्रेज़ो से मिले, तव रहस्य उजागर हुआ। अग्रेज़ो ने २४०० बीघे ज़मीन इन्हे दी—कहा, चाहे जहां ले लो। माफी मिलेगी और जो भी ताल्लुकेदार होगा उसे यह रकम देनी होगी। इस हुक्म के अनुसार पहले पांडे जी हमारी ज़मीन का कर अदा करते थे। वाद मे वलरामपुर ने वह क्षेत्र ले लिया तो वो अदा करते थे। काग्रेस सरकार ने अव लगान वाँध दिया है, जो पिछले वर्ष से अदा किया जाने लगा है। वागात अव तक हैं।

"राजा के महल और सागर तालाव के अन्दर बनावटी टापू पर स्थित मन्दिर तक एक सुरग वनी थी। उस वश मे राजा रामसेवक सिंह वडे कृष्णभक्त हुए। वे मथुरा जाकर रहने लगे। लौट कर नही आना चाहते थे, परन्तु उनकी रानी ने उन्हे आग्रहपूर्वक वुलवाया। रानी के आदेश से ही कुज, सागर, टापू और उसमे स्थित मदिर वना। अनेक स्थलो के नाम वृन्दावन, वरसाना आदि रक्खे गये।

"राजा देवीवख्श आजानु-वाहु थे। वड़े वीर थे। उनसे पहले कोई दत्तसिंह राजा भी थे।

"राजा जब नेपाल भाग कर गये, तो फिर लौटकर नही आये। उनके साथ एक रानी भी गई थी, जो पयागपुर की लडकी थी। रानी लौट कर फिर अपने पीहर पयागपुर आ गई थी। उनके जाने के सम्बन्ध मे दो बातें कही जाती हैं—एक तो यह कि राजा अकेले बिना किसी से कुछ कहे एक रात को निकल गये। दूसरी किवदन्ती के अनुसार एक रानी उनके साथ ही चली गई थी, और नेपाल मे राजा का दाह-सस्कार कर पीहर वापस चली आई।

"कस्वा नामक एक ठिकाने के राजा अशरफ बख्श मुसलमान एक छोटे ताल्लुके-दार थे। राजा के साथ अग्रेजो के विरुद्ध लडे थे, उनकी रियासत भी ज़ब्त हो गई।

"तुलसीपुर की रियासत ज़ब्त कर बलरामपुर को माफी मे दे दी गई।

"कहा जाता है कि बेगम ने राजा को पत्र लिखा था कि हमारी सहायता करो ? इसी से राजा ने उनका साथ दिया।"

ठाकुर नौरग सिह और राजा मनकापुर के सहयोग से गोडा मे राजा देवीबख्श सिह के स्मारक के रूप मे २५०००) रुपये की लागत का भवन बना है, जिसमे कॉग्रेस-दफ्तर भी है।

लखनऊ से चलते समय रेडियो के भाई राम उजागर जी दुबे ने मुझे श्री शान्ति प्रसाद शुक्ल एडवोकेट से मिलने के लिये भी कहा था। उनके यहाँ पहुँचा। शुक्ल जी गोडा के सफल और प्रतिष्ठित एडवोकेट है। दुबले-पतले, श्यामवर्ण, तितली मार्का मूंछ, बाल सफेद हो चले हैं। आयु अनुमानत पचास-बावन होगी। शुक्ल जी बात-चीत करने मे बडे मीठे और काम का नशा रखने वाले पुरुष हैं। गदर और राजा देवीबख्श की बात छिडते ही वे उसके प्रसगो को लेकर मग्न हो गये, राजा की कहानी कहना फिर गजेटियर निकाल कर उसके हवाले देना, वाजिबुल अर्ज़ देखने के लिये विचलित होना (और वह उनके पास न थी) फिर कहानी कहना, यह बाते मुझे बडी भायी। शुक्ल जी ने बतलाया "यहाँ देवीबख्श ने विद्रोह किया। बडा बलवान पुरुष था। उसका शरीर खूब गठीला और व्यक्तित्व विशाल था। राजा देवीबख्श अद्भुत रूप से साहसी पुरुष था। उसके लिये कहा जाता है कि चाँदी का रुपया अगूठे और उँगली मे दबा कर मोड देता था। वह बहुत ही चतुर घुड-सवार था, मल्लयुद्ध मे वह अद्वितीय था।

"डाक्टर सेन और मौलाना आजाद का विचार गलत है कि पुराने लोगो मे राष्ट्रीयता नही थी। राष्ट्रीयता उस तरह की, हो सकता है न हो, जैसी आज कल मानते हैं पर राष्ट्रीयता अवश्य थी। इस देश की सास्कृतिक, धार्मिक एकता को वे

क्यो भूल जाते है कि वह क्या थी ?

"अच्छा राजा देवीवख्श की वशावली वतलाता हूँ लिखिये—गोडा के मानसिंह ने जहाँगीर को जब कि वे युवराज सलीम थे, नेपाल के आस-पास कही से मँगाकर सफेद हाथियो का जोडा भेंट किया था। उस समय राजसत्ता अविच्छिन्न थी। जहाँगीर ने उनको वहुत-सा राज्य दे दिया। राजा देवीवख्श सिंह उन्ही की लाइन में जुडे है।"

"विसेनो का इलाका वाजिवुलअर्ज मे अवलोकनीय है। ग्राम इमरती विसेन और दत्त नगर विसेन विशेप हैं।"

"राजा देवी वख्श का विवाह गोडा वस्ती की सीमा पर वाँमी क्षेत्र मे हुआ था। वारह-चौदह वर्प की आयु मे वादशाह ने देवी वख्श को लखनऊ वुलवाया। इनके शौर्य, साहस और सुन्दरता की शोहरत वहाँ पहुँच चुकी थी, वे गये। दरवार मे वादशाह से इनकी प्रशसा की गई तथा इन्हें होनहार सामन्त वतलाया गया। वादशाह ने परीक्षा लेनी चाही। उन्होंने अपनी सनक मे यह कहा कि 'मेरे पास परीक्षा की एक कसौटी है।' एक दुर्दमनीय घोडा था। परीक्षा देते हुए अनेक नवयुवक उस घोडे द्वारा फेंके जा चुके थे, कई घायल हुए अथवा मर तक गये थे। इसी घोडे पर राजा देवी वख्श से चढने को कहा गया। राजा देवी वख्श अनायास ही घोडे की नगी पीठ पर चढ गये, केवल लगाम लगा कर। ऊपर वालाखाने मे वेगम यह दृश्य देख रही थी। उन्होंने इस नवयुवक का सुन्दर सुडौल रूप और उसकी वीरतापूर्ण आभा को देखा। उन्हे तरस आया, किन्तु कुछ कह भी न सकी थी कि घोडा हवा का घोडा वन कर भागा। देवी वख्श ने उसे इतना छकाया, इतना थकाया कि घोडा वेदम होकर इनके कावू मे आ गया। वेगम ने देवी वख्श को वेटा कह कर अपनी गोद में विठा लिया और इन्होने भी उन्हे 'माँ' कहा। और तभी से देवी वख्श वेगम का अनन्य भक्त हो गया। सन् १८५६ मे अवध के अंग्रेजी राज्य में मिलाये जाने के वाद जो घटनायें सन् १८५७ में हुईं, उसमें देवी वख्श वेगम का शपथवद्ध साथी हुआ। कहा जाता है कि उस दौरान मे एक वार घाघरा के इस पार राजा देवी वख्श सेना सहित कैम्प कर रहे थे और उस पार अंग्रेज सेनापति पहुँचा। उसने राजा देवी वख्श से कहलाया कि यदि वह वेगम का साथ छोड दे तो उनका राज्य जव्त नही किया जायगा। देवी वख्श ने कहा कि ये शरीर रहते अपनी माता का साथ नही छोड सकता। इस प्रकार राजा देवी वख्श ने विद्रोह का झडा ऊँचा रक्खा। एक आव युद्ध गोडा से पूर्व स्थानो मे भी हुए। वाद मे राजा देवी वख्श वलरामपुर

चले गये। बलरामपुर के तत्कालीन राजा दिग्विजय सिंह के आश्रय मे दोनो रानियो को छोड कर देवीबख्श नेपाल चला गया। दिग्विजय सिंह ने विश्वासघात कर अंग्रेजो के हवाले दोनो रानियो को करना चाहा। रानियो को खबर लग गई। वे छिप कर पालकी मे नेपाल भागीं, किन्तु राह मे अंग्रेजो ने घेर लिया। पालकी नीचे रखवा दी। रानियो ने अगूठी के हीरो की कनी खाकर प्राण दे दिये। ये जीती जागती किवदन्ती है। एक रानी ने मरते समय शाप दिया था कि बलरामपुर राजा का वश नही चलेगा।

"राजा देवी बख्श सिह वास्तव मे एक महापुरुष था। जगदीशपुर के कुँवरसिंह से उसकी मित्रता थी।

"राजा देवी बख्श के लिये हिन्दू-मुसलमान सब बराबर थे। उसे अंग्रेजो की सत्ता अखरती थी। भारतीयो की अवनति से उसे आन्तरिक पीडा थी। सन् ५७ से बहुत पूर्व ही उसके दरबार की यह परिपाटी थी कि मुहर्रम के अन्तिम दिन (अशरे के दिन) ताजिये कर्बला जाते हुए उनके सिंह द्वार पर आदर पाते थे। वहाँ रक्खे जाते थे। मुसलमान इसमे अपना गौरव मानते थे। राजा देवी बख्श की अभेदभाव नीति इसी से स्पष्ट है। वह प्रणाली और परिपाटी अब तक कायम है। आज तक मुसलमान उस टूटे सिंहद्वार पर ताजिये टिकाते है। उस खण्डहर सिंहद्वार की वन्दना मुसलमान करते हैं। वहाँ इतना जल-पुष्प चढाते हैं कि कीचड हो जाती है।

"महल का खण्डहर मौजूद है। देख कर आँसू आ जाते हैं। उनकी बैठक भग्नावस्था मे है। भीतर की बनावट अभी तक देखी जा सकती है, लेकिन दीवाने खास की छत बैठी जा रही है और कोई आश्चर्य नही कि इस वर्षाकाल मे छत बैठ जाय। उसकी रक्षा आवश्यक है। कोट के आस-पास की ज़मीन भी रक्षणीय है। इमारत क्रमश खण्डहर होती जा रही है। आँगन मे एक बडा भारी कुँआ है।

"राजा बाँसी वाले की कहानी भी प्रसिद्ध है—एक बार राजा देवी बख्श का एक राज-भाट सयोग वश बाँसी दरबार मे गया, उसने बाँये हाथ से सलाम किया। राजा बाँसी रुष्ट हो गये। भाट बोला कि राजन, मेरा दाहिना हाथ केवल राजा देवी बख्श को सलाम करता है। बाँसी के राजा ने कहा कि देखना है कौन श्रेष्ठ है। उनमे यह कह कर भाट के दाहिने हाथ मे चूडिया पहना दी। भाट ने आकर राजा देवी बख्श को दिखाया। देवी बख्श का तेज जाग उठा। उनने बाँसी पर चढाई कर दी, उसे पराजित किया और उसके राजद्वार का फाटक उखाड कर ले आया और अपने सिंहद्वार पर उसे लगाया। अब भी उस द्वार के भग्नावशेष देखे

जा सकते हैं। इस खण्डहर और महल पर इस समय धानीपुर के राजा चन्द्रभानु दत्त राम का अधिकार है। उन्होंने महल के एक भू-भाग को ज़िला कांग्रेस कमेटी का भवन वनाने के लिये दे दिया है। उसमे पूर्व दिशा मे वह फाटक है। उत्तर मे वस्तिया वसाई जा रही हैं। ऐतिहासिक स्थल पर ये नई वस्तियो का आक्रमण खलता है।"

शुक्लजी की वात एक दृष्टि से मुझे भी उचित मालूम पडती है। नई वस्तियाँ वसें, इससे वढकर सुख की वात और कोई नही, परन्तु हमे इस वात का ध्यान रखना चाहिये कि वीते हुये काल का भी अपना महत्व है। इतिहास के पृष्ठ हमारे आज और आगामी काल को सचेत कर आगे वढाते हैं। इसलिए उनकी मानरक्षा का सवाल वडा अहम है।

दूसरी वात, यदि किसी महत्वपूर्ण ऐतिहासिक स्थलो पर कारणवश हमे नये युग को स्थापित करना ही हो तो उस जगह का प्रयोग किसी एक मुहल्ले को वसाने के लिये नही करना चाहिये। ऐतिहासिक स्थल जन-जन की भावना का किसी न किसी रूप में प्रतीक होते हैं। दस-वीस-पचास परिवारो की आवादी वसा कर-सैंकडो हज़ारो की भावना को ठेस पहुँचाना ग़लत है, ऐतिहासिक स्थलो और इमारतो का उपयोग सार्वजनिक महत्व के कार्यों तक ही सीमित रहना चाहिये।

शुक्ल जी से मैंने तुलसीपुर की रानी के सम्वन्ध मे भी उनकी जानकारी प्राप्त करनी चाही। वे वोले "भाई, अधिक तो नही मालूम पर इतना मैंने भी सुन रक्खा है कि रानी वडी मनस्विनी और अहकारिणी थी। तुलसीपुर मे मिट्टी का किला था और ग़दर मे, वाद को राजा वलरामपुर ने अपने सेनापति जनरल वेणीमाधव को उसे उजाडने के लिये भेजा था। तुलसीपुर और वलरामपुर मे कुछ झगडा चला आ रहा था। वात कुछ ऐसी है—"

मैंने निवेदन किया "झगडे का इतिहास जानता हूँ, रानी के सम्वन्ध मे ही जानना चाहता हूँ ?"

शुक्ल जी वोले "रानी के सम्वन्ध मे वस यही कह सकता हूँ कि जनरल वेणी-माधव से दुर्भाग्य वश रानी हार गई। वह या तो युद्ध मे मारी गई या शायद आत्म-हत्या की, ठीक नही कह सकता। प्रसग वश आप को यह वतला दूँ कि मेरी माता जनरल वेणीमाधव की पौत्री हैं, यद्यपि यह लिखाने जैसी वात नही, फिर भी मैं जानता हूँ कि आप यह लिखेंगे ही।"

इस यात्रा मे अनेक सज्जनो से मेरी भेंट हो रही है, दस पाँच मिनट या घण्टे दो घण्टे तक साथ होता है। इतनी ही देर मे कइयो से अपनेपन का नाता अनुभव होने लगता है। यह स्पष्ट है कि इनमे से बहुतो से मेरी फिर कभी शायद ही भेंट हो। इसलिये अनायास अपनापन देने वाले व्यक्तियो की स्मृति वडे चाव से सहेज रखने को जी चाहता है। थोडी देर के साक्षात् परिचय मे शुक्ल जी ने वडे ही सहज भाव से मुझ पर अपना अधिकार मान लिया। चलते समय कहने लगे "नागर जी! इन नोट्स और इन्टरव्यूज़ का सग्रह आप चाहे यो ही छपायें या कोई और इस्तेमाल करें, इससे मुझे मतलब नही, मगर आप हमारे राजा देवी बख्श सिह पर एक कहानी अवश्य लिखें, खूब शौर्य और ओजपूर्ण हो साथ ही, करुणा पूर्ण हो। कहानी आप अवश्य लिखेंगे।"

"कहानी मैं अवश्य लिखूँगा शुक्ल जी, मगर देर सवेर की कैद न लगाइये।" मेरे चरित्र मे एक जगह अव्यवस्था है, उसी को सुधारने के लिये साहित्य मे अपने आप को अधिकाधिक सँवारने का प्रयत्न भी करता हूँ, घोर आलसी हूँ और उसे दूर करने के लिये ही अपने मस्तिष्क और शरीर को चुनौती के साथ दौडाता-धुपाता भी हूँ। राम-रावण की तरह मेरा अन्तर्द्वन्द्व जूझता ही रहता है। इसलिये हर काम तत्काल नही कर पाता। कुछ न कुछ देर-सवेर तो हो ही जाती है। गदर सबन्धी उपन्यास मे राजा देवी वख्श भी आयेंगे ही, भरसक शक्ति लगाकर मैं उस काल के जन-जीवन और उसके शौर्य प्रतीको द्वारा अपने महाभाव को पाने का प्रयत्न करूँगा। उसके वाद भी, ज़िन्दगी शर्त है, मैं अपने एक आदरणीय पाठक और श्रोता (रेडियो द्वारा) के गोडा नगर नायक राजा देवी वख्श को अपनी एक कहानी का नायक वनाऊँगा।

मैं 'लिखिया' वनना चाहता हूँ। डाकखाने के वाहर वैठ सवके पत्र लिखने वाला मुशी मेरा आदर्श है। वह मात्र टके कमाने के लिये लिखता है, मैं टको से अधिक किसी वडे सन्तोष के लिये भी लिखता हूँ। समय की माग से मैं मुक्त नही हो सकता, फिलहाल उसकी कामना भी नहीं करता। इसी वन्धन से वँध कर आज मेरा विकास हो रहा है, वरना मैं जनम का काहिल जाने कौन गति पाता। अस्तु।

शुक्ल जी से मैंने श्री जी० पी० श्रीवास्तव का पता पूछा। गोडा आऊँ और 'हास्य रस सम्राट श्री जी० पी० श्रीवास्तव' एक नाम और वेंत की कुर्सी पर वैठी, वडी मूँछें पिचके गाल, एक गाल पर उँगली रक्खे एक आकृति की वहुत वार पत्र-पत्रिकाओ और पुस्तको मे छपी हुई तस्वीर वाले व्यक्ति का दर्शन न करूँ यह कैसे

हो सकता है, परन्तु श्रीवास्तव जी की उस वरसो पुरानी छपी हुई तस्वीर का अव केवल कहानियो से ही सम्वन्ध रह गया है। श्रीवास्तव जी मुझे वहुत स्नेह देते हैं। मेरे कुछ निजी वुजुर्गो की तरह वे भी इस वात मे नाराज़ है कि मैने रेडियो की जमी-जमाई नौकरी छोड दी। मुझे देखते ही मगन हो गये और वैठते ही अपनी पुरानी शिकायत दोहराई "नागर तुमने रेडियो छोड दिया इस वात से हम भाई वहुत नाराज़ हैं तुमसे। हो सकता है कि तुम फिर अपनी पुरानी दलीलें दोहराओ मगर मैं तुम्हारा यह 'प्रोग्रेसिव पन' नही मानूंगा। भला वताओ, अच्छी खासी जगह वैठे थे, हमको भी यह 'फील' होता था कि रेडियो पर, मतलव यह है कि हमारा भी कव्जा था "कहते-कहते रुके तैश मे सिर झुकाया और पजा घुमाकर वोले . "खैर, यह अचानक गोडा कैसे आना हुआ ?"

मैंने अपना आशय निवेदन किया। श्रीवास्तव जी आराम कुर्सी पर सिर टिका कर लेट गये, कुछ रुक कर वोले "काम हास्य की 'फील्ड' का तो नही है, मगर उम्दा है। ये तमाम ग़दर के किस्से कहानिया साहित्य मे सुरक्षित हो जायेंगे, यह अच्छी वात है। तुम अपनी फील्ड के वाहर का भी वहुत काम कर लेते हो। तुम्हे देख कर वडी खुशी होती है। मगर वस यही शिकायत है कि क्या कहूँ अच्छी खासी कुर्सी छोडकर ग़दर के लिये दर-दर की ख़ाक छान रहे है साहव "फिर सर झुकाया सवा-लिये पजे हवा मे हिलाये—"हम अव पुरानी चाल के पड गये नागर। देखो, अव हमे कोई पसन्द ही नही करता।" मैंने कहा "आप इस तरह की वातो से अपने आप को परेशान क्यो करते हैं ? आप अव उस ऐतिहासिक महत्व को पा चुके, जिसे पाने के लिये हम प्रयत्नशील और इच्छुक है। और फिर भी यह नही जानते कि वह महत्व हमे मिलेगा या नही।"

वेनी कवि, भारतेन्दु, प्रताप नारायण मिश्र, वालकृष्ण भट्ट, शिवनाथ शर्मा, वाल-मुकुन्द गुप्त की चुटकिया भडौवे क्या कभी अपना ऐतिहासिक महत्व खो पायेंगे। जी० पी० श्रीवास्तव एक प्राय विनोद शून्य युग मे अवतरित हुए थे। हमारे देश मे चूंकि हजारो वर्प की पुरानी सस्कृति, दर्शन, इतिहास की अटूट परम्परा चली आ रही है, इसलिये हमारे वच्चे पैदा होते ही वूढे हो जाते है। राम जाने कव से यह वूरापथी हमारे देग की सास्कृतिक वुद्धि मे समाई है। हमारा जन साधारण का पुरखा सयम के अन्तरिक्ष से वँध कर भी वडा आनन्दवादी था। उस कौम के वच्चे मुर्दा हो जाते है, जो उचित श्रद्धा भाव रख कर भी अपने वाप से मज़ाक करने मे चूक जाते हैं। व्यग्य, विनोद, हास्य जीवन के लिये दाल तरकारी का नमक है।

इस यात्रा मे अनेक सज्जनो से मेरी भेंट हो रही है, दस पाँच मिनट या घण्टे दो घण्टे तक साथ होता है। इतनी ही देर मे कइयो से अपनेपन का नाता अनुभव होने लगता है। यह स्पष्ट है कि इनमे से वहुतो से मेरी फिर कभी शायद ही भेंट हो। इसलिये अनायास अपनापन देने वाले व्यक्तियो की स्मृति वडे चाव से सहेज रखने को जी चाहता है। थोडी देर के साक्षात् परिचय मे शुक्ल जी ने वडे ही सहज भाव से मुझ पर अपना अधिकार मान लिया। चलते समय कहने लगे "नागर जी! इन नोट्स और इन्टरव्यूज़ का सग्रह आप चाहे यो ही छपायें या कोई और इस्तेमाल करें, इससे मुझे मतलब नही, मगर आप हमारे राजा देवी बख्श सिह पर एक कहानी अवश्य लिखें, खूब शौर्य और ओजपूर्ण हो साथ ही, करुणा पूर्ण हो। कहानी आप अवश्य लिखेंगे।"

"कहानी मैं अवश्य लिखूंगा शुक्ल जी, मगर देर सवेर की क़ैद न लगाइये।" मेरे चरित्र मे एक जगह अव्यवस्था है, उसी को सुधारने के लिये साहित्य मे अपने आप को अधिकाधिक सँवारने का प्रयत्न भी करता हूँ, घोर आलसी हूँ और उसे दूर करने के लिये ही अपने मस्तिष्क और शरीर को चुनौती के साथ दौडाता-घुपाता भी हूँ। राम-रावण की तरह मेरा अन्तर्द्वन्द्व जूझता ही रहता है। इसलिये हर काम तत्काल नही कर पाता। कुछ न कुछ देर-सवेर तो हो ही जाती है। ग़दर सबन्धी उपन्यास मे राजा देवी वख्श भी आयेंगे ही, भरसक शक्ति लगाकर मैं उस काल के जन-जीवन और उसके शौर्य प्रतीको द्वारा अपने महाभाव को पाने का प्रयत्न करूँगा। उसके वाद भी, जिन्दगी शर्त है, मैं अपने एक आदरणीय पाठक और श्रोता (रेडियो द्वारा) के गोंडा नगर नायक राजा देवी वख्श को अपनी एक कहानी का नायक वनाऊँगा।

मैं 'लिखिया' वनना चाहता हूँ। डाकखाने के वाहर वैठ सवके पत्र लिखने वाला मुशी मेरा आदर्श है। वह मात्र टके कमाने के लिये लिखता है, मैं टको मे अधिक किसी वडे सन्तोप के लिये भी लिखता हूँ। समय की माग मे मैं मुक्त नही हो सकता, फिलहाल उसकी कामना भी नही करता। इसी वन्धन मे वँध कर आज मेरा विकास हो रहा है, वरना मैं जनम का काहिल जाने कौन गति पाता। अस्तु।

शुक्ल जी से मैंने श्री जी० पी० श्रीवास्तव का पता पूछा। गोंडा आऊँ और 'हास्य रस सम्राट श्री जी० पी० श्रीवास्तव' एक नाम और वेंत की कुर्सी पर वैठी, वडी मूँछें पिचके गाल, एक गाल पर उँगली रक्खे एक आकृति की वहुत वार पत्र-पत्रिकाओ और पुस्तको मे छपी हुई तस्वीर वाले व्यक्ति का दर्शन न करूँ यह कैसे

हो सकता है, परन्तु श्रीवास्तव जी की उम वरसो पुरानी छपी हुई तस्वीर का अब केवल कहानियो से ही सम्बन्ध रह गया है। श्रीवास्तव जी मुझे बहुत स्नेह देते है। मेरे कुछ निजी वुज़ुर्गो की तरह वे भी इस वात ने नाराज़ है कि मैंने रेडियो की जमी-जमाई नौकरी छोड दी। मुझे देखते ही मगन हो गये और वैठते ही अपनी पुरानी शिकायत दोहराई . "नागर तुमने रेडियो छोड दिया इस वात से हम भाई बहुत नाराज़ हैं तुमसे। हो सकता है कि तुम फिर अपनी पुरानी दलीलें दोहराओ मगर मैं तुम्हारा यह 'प्रोग्रेसिव पन' नही मानूंगा। भला वताओ, अच्छी खासी जगह वैठे थे, हमको भी यह 'फ़ील' होता था कि रेडियो पर, मतलब यह है कि हमारा भी कब्जा था "कहते-कहते रुके तैश मे सिर झुकाया और पजा घुमाकर बोले . "खैर, यह अचानक गोडा कैसे आना हुआ ?"

मैंने अपना आशय निवेदन किया। श्रीवास्तव जी आराम कुर्सी पर सिर टिका कर लेट गये, कुछ रुक कर बोले "काम हास्य की 'फील्ड' का तो नही है, मगर उम्दा है। ये तमाम ग़दर के किस्मे कहानिया साहित्य मे सुरक्षित हो जायेंगे, यह अच्छी वात है। तुम अपनी फील्ड के बाहर का भी वहुत काम कर लेने हो। तुम्हें देख कर वडी खुशी होती है। मगर वस यही शिकायत है कि क्या कहूँ अच्छी खासी कुर्सी छोडकर ग़दर के लिये दर-दर की खाक छान रहे हैं साहव "फिर सर झुकाया सवा-लिये पजे हवा मे हिलाये—"हम अव पुरानी चाल के पड गये नागर। देखो, अव हमे कोई पसन्द ही नही करता।" मैंने कहा "आप इस तरह की बातो से अपने आप को परेशान क्यो करते हैं ? आप अव उस ऐतिहासिक महत्व को पा चुके, जिसे पाने के लिये हम प्रयत्नशील और इच्छुक हैं। और फिर भी यह नही जानते कि वह महत्व हमे मिलेगा या नही।"

वेनी कवि, भारतेन्दु, प्रताप नारायण मिश्र, वालकृष्ण भट्ट, शिवनाथ शर्मा, वाल-मुकुन्द गुप्त की चुटकिया भडौवे क्या कभी अपना ऐतिहासिक महत्व खो पायेंगे। जी० पी० श्रीवास्तव एक प्राय विनोद शून्य युग मे अवतरित हुए थे। हमारे देश मे चूंकि हजारो वर्ष की पुरानी सस्कृति, दर्शन, इतिहास की अटूट परम्परा चली आ रही है, इसलिये हमारे वच्चे पैदा होते ही बूढे हो जाते हैं। राम जाने कव से यह धूरापथी हमारे देश की सास्कृतिक वुद्धि मे समाई है। हमारा जन साधारण का पुरखा सयम के अन्तरिक्ष से बँध कर भी वडा आनन्दवादी था। उस कौम के वच्चे मुर्दा हो जाते हैं, जो उचित श्रद्धा भाव रख कर भी अपने वाप से मजाक करने मे चूक जाते हैं। व्यग्य, विनोद, हास्य जीवन के लिये दाल तरकारी का नमक है।

जी० पी० श्रीवास्तव की 'लम्बी दाढी' जब भी पढूगा मुझे मजा देगी। जी० पी० श्रीवास्तव ने कालिदास की निरकुशता, भाषा की अनस्थिरता और स्वकीया-परकीया की मलखम्भ भँजायी के दिनो मे उपदेशो से ठस साहित्य के क्षेत्र मे अपनी 'लम्बी दाढी' कुछ इस ढव से हिलाई कि ज़माना हँस पडा। कौशिक जी, और शिव पूजन सहाय जी की हास्य व्यग्य भरी रचनाये किसी भी भाषा का साहित्य सहेज कर रखना अपने लिये गौरव की बात समझेगा। अन्नपूर्णानन्द आये तो मानो वत्तीसी का कमल ही खिल गया। ये माना कि हम हास्य के क्षेत्र मे गरीब हैं, मगर ऐसे कुछ भूखे-नगे भी नही हैं।

श्रीवास्तव जी हाल ही मे वहुत बीमार हो गये थे, उनपर लकवे ने आघात किया था। साहित्य से आमदनी नही रही। वकालत का ही आसरा है, जिसे अब वे कर नही पाते। लम्बी बीमारी ने किसी हद तक वकालत की दूकान भी ठप कर दी। अब साइकिल पर ढाई-तीन मील कचहरी जा नही पाते। और ताँगे पर आने-जाने के माने होते है एक नये खर्चे को जोडना। साथ खाना खिलाया, हैट पतलून चढाई और कचहरी चले।

आम तौर पर बुजुर्गों से मिल कर मुझे हर्ष होता है। अपने बचपन से ही साहित्यिको के प्रति मुझे अपार श्रद्धा रही है। सौभाग्य से रत्नाकर जी, किशोरी लाल गोस्वामी, गोपालराम गहमरी और शिवनाथ शर्मा के भी दर्शन प्राप्त किये हैं। उसके वाद की पीढी वाले साहित्यिक महापुरुषो मे से अनेक का स्नेहवन भी पाया है।

हम एक वात कहेंगे, हमारी हिन्दी मे यो वहुत कुछ उन्नति हुई है, पर हिन्दी परिवार टूट गया, परिवार का भाव टूट गया है। समाज की भी यही दशा है। संक्रान्ति काल के दुख-सुख तो भोगने ही पडेंगे। क्या किया जाय ?

श्रीवास्तव जी के छोटे भाई श्री वी० पी० सिनहा पत्रकार हैं और शायद वकालत भी करते हैं। उनसे गोडा के गदर के सम्वन्ध मे वातें हुई। राजा देवी वस्श, ऐसा लगता है कि गोडा के नागरिको के मन मे अवतारी पुरुष के रूप मे वास करते है। लखनऊ मे ठेला चलाने वाले गोडा ज़िला के निवासी जियालाल से लेकर शुक्ल जी और सिनहा जी तक अपने ज़िले के वीर नायक के प्रति प्राय एक ही भाव से वातें करते हैं। यद्यपि मैं उस क्षेत्र का गदर सम्वन्धी लोककाव्य सग्रह नही कर पाया, फिर भी यह सुना है कि उनके ऊपर सैकडो आल्हा बिरहे वने है।

राजा देवीवख्श उन कर्तव्यनिष्ठ महापुरुषो मे से एक थे जो अन्त तक अँग्रेजो का मुक़ावला करते रहे। वेगम हजरत महल और नाना साहव के साथ राणा वेणी माधव, राजा देवीवख्श, मोहम्मद हुसैन नाजिम, खान वहादुर खा, मम्मू खाँ, वाला साहव और ज्वाला प्रसाद अन्तिम मोर्चा साध कर नेपाल के पहाडो मे भागे थे। राजा देवीवख्श का देहान्त नेपाल के जगलो मे हुआ।

तुलसीपुर गोडा से लगभग चालीस-पैंतालिस मील दूर वतलाया जाता है। वलरामपुर के राजा पृथ्वीपाल सिह के मरने पर उनके एक भतीजे ने उनके पुत्र और सही उत्तराधिकारी नवलसिह को मार भगाया। तुलसीपुर के राजा ने शरण दी और अपनी दो हजार 'थारू सेना' भेज कर वलरामपुर पर कब्ज़ा किया, नवल सिह फिर राजा वने।

इसके कुछ ही वर्षों वाद तुलसीपुर के राजा को भी इसी विपत्ति का सामना करना पडा। वलरामपुर के राजा ने उसी तरह अपने सैन्यवल से तुलसीपुर के राजा को पुन उनकी गद्दी पर प्रतिष्ठित किया। तुलसीपुर वाले ने राजा वलरामपुर को डेढ हजार वार्षिक 'कर' देना स्वीकार किया। आगे चलकर तीसरी पीढी मे तुलसीपुर के राजा दानवहादुर सिह ने यह रकम अदायगी वन्द कर दी। इस पर वलरामपुर से लडाई झगडा भी खूब हुआ। दानवहादुर के शासनकाल मे अग्रेज गवर्नर जनरल तुलसीपुर मे शिकार खेलने आया और काफी प्रसन्न होकर लौटा। इससे दानवहादुर का प्रभाव कुछ वढ गया। दानवहादुर को फिर वाहरी शत्रु का भय न रहा, परन्तु वह अपने पुत्र दृगराजसिह के षड्यत्र के फलस्वरूप मारा गया। कहते हैं दृगराजसिह चरित्रहीन और क्रूर था। उसके पुत्र दृगनारायन सिह ने अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह किया। लखनऊ की कोई तवायफ दृगनारायन सिह की रक्षिता थी। राजा दृगराजसिह उस पर वदनजर रखता था। दृगनारायन सिह ने अपने वाप को जहर दिलवा दिया। इस सारी घटना के पीछे कही अग्रेजो का हाथ भी अवश्य रहा होगा, क्योकि अग्रेजो द्वारा अवध के अग्रेजी राज्य मे मिला लिये जाने के वाद उसने नये शासक को कर देना वन्द कर दिया था। वेचारा छोटी-सी रियासत का राजा अग्रेज शक्ति का सामना न कर सका, अन्त मे वन्दी वनाकर लखनऊ भेज दिया गया। वेलीगारद मे ही यातनायें सह-सह कर उनकी मृत्यु हुई।

गदर मे तुलसीपुर की रानी ने अपने राज्य की विरोधी शक्तियो को समाप्त कर वहाँ का शासन चलाया। गदर मे वह वरावर क्रान्तिकारियो के साथ रही और अन्त मे वेगम आदि के साथ ही वह भी नेपाल चली गई।

यह इतिहास मैंने गजेटियर के आधार पर यहाँ अकित किया है तुलसीपुर न जा पाने का वहुत दुख है। गदर मे हमारी देवियो का योगदान हमारे राष्ट्रीय इतिहास का गौरव बढाता है। श्री बी० पी० सिनहा के शब्दो मे "तुलसीपुर की रानी हमारे यहा की लक्ष्मीबाई थी।"

लक्ष्मीबाई भारतीय नारी का प्रतीक थी। गदर की प्रत्येक लक्ष्मीवाई भारतीय इतिहास का अमर गौरव है। इस नाम मे अव वह शक्ति आ गई है जो, सदियो तक भारतीय नारी को प्रेरणा प्रदान करती रहेगी।

बहराइच

१६ जून। अब तक के देखे हुये अवध के नगरो मे सुल्तानपुर को किसी हद तक छोडकर, मुझे फैजावाद के वाद बहराइच ही श्री-सम्पन्न लगा। वैसे वहराइच मजारो का शहर है। पुराने खण्डहर, जा-वजा इतिहास की पहेलियो से खडे है। बहराइच का शुद्ध नाम भराइच है। भरो की पहेली अभी तक किसी इतिहासकार ने नही सुलझाई। केवल डॉक्टर काशीप्रसाद जायसवाल ही अपने 'अन्धकारयुगीन भारत' नामक ग्रन्थ मे यह सकेत कर गये हैं कि भर और भारशिव सम्भवत एक ही थे।

पौराणिक काल का प्रख्यात गधर्व वन वहराइच ज़िले के उत्तर मे वतलाया जाता है। कहा यह भी जाता है कि ब्रह्मा जी ने चूँकि इस भाग को ऋषियो की तपो-भूमि के निमित्त वनाया था इसलिये इसका नाम ब्रह्माइच पड गया। मुझे यह नाम जबरदस्ती'खींचा ताना गया, पोगापन्थी और हिन्दुओ का ढकोसला लगता है। वस्ती के लिये 'ऐच' या 'इच' शब्द कम से कम मेरे लिये एक खासी पहेली है। पुर, ऊर, नगर, खेडा तो हमारे गाँवो के साथ जुडे हुये हैं ही, मऊ भी वस्तियो के नाम के साथ वहुत मिलता है। ये मऊ शब्द किस जाति की देन है, नही जानता। इसी प्रकार 'ऐच' या 'इच' शब्द भी मन में प्रश्न जगाता है। 'इच' के साथ जुडे हुये दो नाम जाने पडे हैं। एक इस नगर के साथ और दूसरा हिन्दी के प्रसिद्ध आलोचक डाक्टर नगेन्द्र नगाइच नाम के साथ। अस्तु।

वहराइच क्षेत्र उत्तर कोशल के नाम से प्राचीन इतिहास मे प्रसिद्ध है। भग-वान राम के पुत्र लव इस क्षेत्र के राजा कहे जाते है। राजा प्रसेनजित का नाम भी जाना माना हुआ है। भगवान बुद्ध का प्रिय नगर श्रावस्ती भी इसी क्षेत्र मे है। वहराइच का ऐतिहासिक महत्व भरो ने भी खूब वढाया। पहलेपहल गुप्त राजाओ के काल मे भरो की शक्ति टूटी, फिर भी इस जाति का प्रभुत्व एक दम

लुप्त न हो सका। तेरहवी-चौदहवी शताब्दी तक अवध मे जगह-जगह इनसे राजपूतो और मुसलमानो के मोर्चे हुए है। लेकिन वहराइच या भराइच तो इनका गढ ही था।

ग्यारहवी शताब्दी मे सैयद सालार मसूद नामक एक मुमलमान फकीर ने भारत पर आक्रमण किया। यह सुल्तान महमूद गजनवी का भाजा माना जाता है। जेहाद यानो धर्मयुद्ध की भावना से इमने इस देश को खूब रौंदा था। अवध मे मैं जानता हूँ कि सैयद सालार कई पीढ़ियो के लिये भय और आतक का प्रतीक वन गया था। सैयद सालार ने अयोध्या आदि अनेक स्थानो का नाश किया। अन्त मे सन् १०३४ ई० मे भर राजा सुहेलदेव के हाथो उसने मृत्यु पाई।

आज यहाँ दरगाह के मेले का अन्तिम दिन है। वहराइच नगर की सडकें दूर-दूर के गाँवो की भीड से भरी हुई हैं। सैयद सालार की दरगाह को प्रति वर्ष भक्तो की भेंट-पूजा की चढन से लाखो की आमदनी होती है। जहा दरगाह वनी है वहा, कहते हैं, पहले सूर्यकुण्ड और सूर्यमन्दिर था। वहराइच मे नव-ग्रहो के मन्दिर थे जो अव पीरो की मजारें हैं। मैंने कई छोटे-वडे मन्दिरनुमा मजार शहर मे देखे। मुकरू पीर, हठीले पीर आदि पीरो के नाम इन मजारो के साथ जुडे हुए है। एक राह चलते भद्रपुरुप ने वतलाया कि मुकुरू पीर शुक्र मन्दिर मे स्थापित है और हठीले पीर मगल मन्दिर मे। उन्होंने और भी पीरो के नाम वतलाये, जिन्हे भूल गया हूँ।

आज शाम को चूकि जिला सूचना अधिकारी को पूर्व निश्चत प्रोग्राम के अनुसार किसी गाँव मे दौरा करने जाना था इसलिये वाहर जाने का प्रोग्राम नही वनाया। शहर मे दो-तीन सज्जनो मे मिलने गया, परन्तु कुछ हाथ न लगा। इम जिले के वौंडी राज्य के रैकवार नरेश हरदत्त सिंह, वेगम हज़रतमहल के वडे सहायक रहे उनके कारण समस्त रैंकवार राजपूत वेगम के साथ थे। चर्दा के जनवार राजा भी इसी क्षेत्र के थे। अवध गजे़टियर लिखने वाले अग्रेज को इम वात का वडा आश्चर्य है कि "इम जिले के वडे जमीदारगण कैसे मुसीवत के समय हमारे विरोधी वन गये। प्रान्त पर पुन अपना कब्जा होने पर हमे उनके (विद्रोही जमीदारो के) अट्ठारह सौ अट्ठावन गाँव ज़ब्त करने पडे थे।"

गजे़टियर के अनुमार चहलारी के स्वामी राजा नहो, वल्कि ठाकुर कहलाते थे। नवावगज वारावकी के अमर नायक वलभद्र सिंह तेंतीस गाँव के ठाकुर थे और वे तेंतीसो गाँव ज़ब्त कर लिये गये। राजा धौरहरा के छब्बीस, वौंडी के तीन मौ

पाँच, चर्दा के चार सौ अट्ठाईस, तुलसीपुर के तीन सौ तेरह, अकौना के पाँच सौ छः, रेहुवा के चौदह, भिनगा के एक सौ अडतीस और टिपरहा के उन्नीस गाँव ज़ब्त हुए। बेगम हज़रतमहल ने कई महीनो तक बौंडी मे वास किया। महारानी विक्टोरिया के घोषण-पत्र के जवाब मे प्रचारित किया जाने वाला बेगम हज़रतमहल का ऐतिहासिक ऐलान बौंडी के किले से ही हुआ था।

इन समस्त राजाओ मे बलरामपुर नरेश ही देश के प्रति ग़द्दार निकले। उन्होने पूरी तरह अंग्रेजो का साथ दिया। गज़ेटियर में लिखा है "जब गदर आरम्भ हुआ तब इस भाग के सामन्तो में अकेले वही ऐसे थे, जिनकी आस्था कभी न डिगी तथा जो ब्रिटिश सत्ता को सदा सहयोग देते रहे।"

उनकी इस राजभक्ति के उपहार-स्वरूप अंग्रेजो ने उनके नाम के साथ कई हुरूफ़ जोड दिये और उनके राज में नई जागीर भी।

ज़िला सूचना अधिकारी श्री सिंह बलरामपुर रियासत के रहने वाले थे। उनको रह-रह कर यही कष्ट होता था कि राजा बलरामपुर गद्दार निकले। दो-तीन बार कहा "क्या बताऊँ नागर साहब, मुझे बडी शर्म आती है। रैकवार राजपूतो ने अपना क्षात्रधर्म निभाया, बैंस राजपूतो में भी राना वेनीमाधो आदि ने कैसा शौर्य दिखाया, पर हमारे जनवार राजपूतो के सिरमौर गद्दार निकले।"

मैंने कहा "आपकी जाति के सिरमौर भले ही गद्दार हो, परन्तु आपकी जाति के वीरो ने भी सहयोग दिया है। आखिर चर्दा के राजा भी तो जनवार राजपूत थे।"

सिंह साहब को मेरी इस बात से बडी तसल्ली हुई। मैं सोचने लगा, समय का परिवर्तन कैसा मन बदल देता है। सोचता हूँ, गदर के बाद जिन राजाओ की रियासतें गदर में भाग लेने के कारण जब्त हुई हैं, उनके वशजो को अपने वर्ग के उन सामन्तो द्वारा ओछी दृष्टि से देखा जाता होगा जो गदर मे अंग्रेजो का साथ देने के कारण उस समय दुनियादारी की दृष्टि से बडे बुद्धिमान और सफल माने जाते थे। सच है चलते का नाम गाडी है।

१७ जून। सुबह ही हम लोग बौंडी, चहलारी और मुरौवाडीह की यात्रा पर निकल पडे। अब तक देखे हुए ज़िलो मे बहराइच ज़िला अपने हरे-भरे पन मे कुछ अधिक सम्पन्न लगा।

मैदानो की अपनी शोभा होती है। अन्तरिक्ष के चारो ओर वृक्ष और धरती पर फैली हुई हरियाली मुझे जीवन की आस्था प्रदान करती हुई लगती है। धरती

इस फैलाव मे न जाने कितने इतिहास पलट जाते हैं, न जाने कितनी कटुता इसे हन करनी पडती है। फिर भी धरती माता सदा हरी-भरी और व्यापक रूप से उदार बनी रहती है।

यहाँ भी जगह-जगह प्रथम पचवर्षीय योजना, नलकूप, सहकारी बीज उद्यान ादि के नामपट देखने को मिलते हैं। सडक के दोनो किनारे आबादियो के आस-ास लोग-लुगाइया पेडी के नीचे महुआ के बीज फैलाते सुखाते हुए दिखाई पड ाते हैं। जवान स्त्रिया मोटर को आते देख पीठ कर खडी हो जाती है। एक ही ाध ऐसी मिली जो हमारी गाडी की तेज रफ्तार के साथ अपनी चढती जवानी ी मस्ती को लेकर होड लगाती थी। हमारी गाडी जा रही थी, सामने लगभग ाधे फर्लांग की दूरी पर कुछ नवयुवतिया और छोटे बच्चे खडे थे। 'हार्न' बजते ी बच्चे भागे। एक नवयुवती भी दौडी, दूसरी ने उसकी बाँह थाम ली, हमारी गाडी की 'स्पीड' कम करनी पडी। सिंह साहब देश की बदतमीज़ जनता पर झुझ-लाये। गाडी के निकट आने पर लडकिया हँस पडी और इठलाती हुई सडक के एक ओर चली गई। भरी 'स्पीड' मे चलती मोटर का रोका जाना या तो मैंने प्रोफेसर राममूर्ति के सर्कस मे देखा था या फिर चढते यौवन से मदमाती ग्राम बाला द्वारा अब देखा। बच्चे अक्सर मोटर को आता देख शोर मचाते हैं और तेजी से सडक पार करने का करतब भी दिखलाते हैं।

धूप बढ चली है। 'लू' के गर्म झोके भी गाडी की तेज स्पीड के साथ मजा दे रहे है। हम लोग बौंडी के निकट साई गाँव मे पहुँचे। यहाँ हमे रुकना नही था, केवल मुरौवाडोह का पता पूछना था। बौंडी लौटते समय रुकने का प्रोग्राम था। रुके तो गाँव वालो ने पानी के लिये पूछा, हमे प्यास लग आई। यद्यपि पानी हमारे साथ था पर मैंने सोचा कि सुराही के पानी को लम्बे सफर के लिये सुरक्षित रख कर इस ग्राम के तीर्थ से ही कण्ठ सींचा जाय। लगे हाथो पूछताछ भी कर डाली। एक ने कहा "परसनदीन बाबा बुजरुग हैं उन्हें गदर का हाल ढेर मालूम है।"

लोटे मे गुड का शर्बत आया, और प्राय साथ ही लकडी टेकते परसनदीन बाबा भी। उन्होने बतलाया "या बात सुनबे हई अकि बेगम लखनऊ ते भागी, भँउरी माँ पडाव किहिन।"

"ये भौरी कहाँ है ?"

"भँउरी अक मउजा आय फरुहा घाट के पास, तौ हुवाँ पडाव किहिन। तीके बादि राजा हरदत्तसिंह बौंडी का बुलवाइन अकि आप हमार मदत कइकै लखनऊ

की गद्दी पर बिठाय देव, औ हम आपका माफीक पट्टा लिखि देब । राजा हरदत्त सव राजे रजवारन का बोलाइन। गोंडा, चर्दा, पयागपुर, रेहुवा, नानपारा, टपरहा, मल्लापुर औ तुमरे का नाउ रामनगर—सब जुटाव किहिन । बौंडी मा इकट्ठा भे । चनहट माँ लडाई भय, वहैं जूझि के चहलारी के राजा सब रियासत पाइन, बौंडी के राजा नाही पाइन । राजा हरदत्त सिह मरिगे—"

मैने पूछा "कहाँ मरे ? लडाई मे या काले पानी मे ?"

"को जानी कहाँ, पहाड पर गरे है, सुना ।"

"फिर क्या हुआ ?"

"फिरु राजा महेसवकस औ महावीर सिंघ राजा हरदत्त के लरिका—उनका माफी मिली । हरदत्त नगर गिरन्ट पाइन । बस यहै मालूम है ।"

वेगम के आने का मार्ग फिर एक नई किवदती का सकेत दे गया । भौरी बौंडी से तीन-चार मील दूर फरुहा घाट के पास है । फरुहा घाट घाघरा के इस पार बहराइच जिले मे है । घाघरा के उस पार सीतापुर जिला लगता है । वहाँ ससड नामक स्थान से नाव पर चढा जाता है। भिठौली छोडने के वाद वेगम वौंडी आई थी, यह निश्चित है ।

यह बेगम वडी दिलेर मालूम होती है । अब तक जहा-जहा गया, वेगम का नाम जरूर सुना । गदर के सगठन कर्ताओ मे बेगम की हस्ती किसी से छोटी नही मालूम देती है । इनिस, चार्ल्स बाल, रसल आदि अग्रेज उनकी खुले दिल से प्रशसा करते हैं । सर विलियम रसल अपनी डायरी मे लिखता है "वेगम मे वडी पराक्रम-शीलता और योग्यता दिखलाई देती है । वेगम ने हमारे विरुद्ध न खत्म होने वाले युद्ध का ऐलान कर दिया । इन रानियो और वेगमो के शौर्य, स्फूर्ति भरे चरित्रो को देख कर ऐसा लगता है कि ये लोग अपने जनानखानो और हरमो मे यथेष्ट रूप से तीव्र वौद्धिक शक्ति सिद्ध कर लेती हैं।" लखनऊ के अन्तिम मोर्चे पर आलमवाग की लडाई मे हजरतमहल स्वय शस्त्र धारण कर सामने रण मे आई थी । वेगम की उदारता के उदाहरण भी अग्रेज लेखको की पुस्तको मे देखने को मिलते हैं । चार्ल्स वाल ने लिखा है कि विद्रोही क्रान्तिकारियो ने जव कैसरवाग के महलो मे कैद अग्रेज स्त्रियो की हत्या करने के लिये उन्हें माँगा तो, "स्त्रीत्व की मान रक्षा की हेतु, उनकी माँग वेगम द्वारा आत्मार्थक रूप मे, जहाँ तक स्त्रियो का सम्बन्ध था, अस्वीकार कर दी गई और उन्हें (कैद अग्रेज़ स्त्रियो को) तुरन्त अपनी निगरानी मे हरम मे वुला लिया ।"

बाराबकी ज़िले की यात्रा मे रजवाडो की सभाये करने के सम्बन्ध मे भी किंवदंतियाँ मिली थी। अमहट (सुल्तानपुर) वालो के पास आये हुए फरमान के अनुसार गोरो का साथ देने वाली हिन्दू-सिक्ख सेनाओ को मारने के बजाय केवल कैद करने की आज्ञा देना बेगम की सूझ-बूझ का परिचायक है। यह महिला बचपन से ही समाज की यातनाओ का शिकार रही। राम जाने किस कुल की थी। अम्मन और अमामन नामक दो कुटनियो द्वारा बचपन मे पकडी गई, इसे नाच-गाना सिखाया गया, शाहज़ादा वाजिदअली के परीखाने मे 'महकपरी' के नाम से दाखिल हुई और गदर मे वह काम कर दिखाया, जो इतिहास मे चिर स्मरणीय रहेगा। वाजिदअली शाह के हरम मे हर ओर भोग विलास का ही चर्चा रहता था, उनके गिरफ्तार हो जाने के बाद भी जहाँ उनकी और बेगमे अपने खतो मे इश्को-फुरकत की बिलबिलाती आहे भरती नज़र आती हैं, वहा बेगम हज़रतमहल का व्यक्तित्व ऊँचे-ऊँचे खानदान वाले मर्द-नामर्दों और बडे आबरूदारो की बुज़दिल विलासी बेटियो से कही अधिक ऊँचा उठा हुआ दिखलाई देता है। बेगम हज़रत महल वेश्यावर्ग की होकर भी अपने स्वाभिमान की इस शान से रक्षा करने के कारण पूज्य है, प्रणम्य हैं।

हम लोग आगे बढे। मुरौवाडीह मे बलभद्रसिंह के सम्बन्धी रहते हैं, यह सूचना मुझे बहराइच मे एक वकील साहब से मिली थी। वही जा रहे थे। श्री गिरिजाशकर सिह चहलारी के ठाकुर बलभद्रसिह की एकमात्र सन्तान—पुत्री के पौत्र है, ग्राम पचायत के प्रधान है। रास्ते मे एक जगह हमने उनका पता और उनके गाँव तक जाने वाली सडक के सम्बन्ध मे पूछताछ की। पता चला कि गिरिजाशकर सिह जी थोडी देर पहले ही यहा से अपने गाँव गये हैं और रास्ता थोडी दूर तक तो सीधा ही गया है, उसके बाद ऐसे और ऐसे और ऐसे मुडेगा। गाँव वाले हाथ उठा कर यो रास्ते का इशारा कर देते है, मानो पूछने वाला भी उन्ही की तरह उस जगह से परिचित हो। समस्या हल न हुई, इसलिये दो-ढाई फर्लांग आगे पीपरी गाँव की सीमा मे पहुँच कर खेत मे खडे एक जवान से फिर पूछा। उसने कहा "अइसी तें चले जाव आगे गद्दारन केर घर परी। वहिके आगे तें रस्ता है।"

गद्दार का घर सुन कर मैं बडी ज़ोर से चौंका, पहले तो मैं उस नवयुवक कृषक पुत्र के मुँह से यह शब्द सुन इसके अर्थ को लेकर भ्रम मे पड गया, सिंह साहब से पूछा. "यह कौन सा शब्द कह रहा है ?"

सिंह साहब ने उससे पूछा "गद्दार को आँय ?"

"अरे साहब जउन बडकवा का घर है, वहिके आगे ते रस्ता गवा है।"

सिंह महोदय ने फिर पूछा "गद्दार काहे कहत हौ उनका ?"

"साहब युहु तौ नाही जानित है। सुना है, तउनु कहिति है।"

सिंह महोदय भी आखिर सूचना अधिकारी थे। उन्हें तुरत ही ध्यान आ गया कि यह भूमि-भाग चहलारी के ठाकुर से ज़ब्त कर अंग्रेजो ने अपने मददगार एक सिक्ख को दे दिया था। मुझे पूरी बात जान कर बडा ही आश्चर्य हुआ। एक सदी बीत गई, किन्तु अभी तक परम्परा नही बदली है। हमारे गाँवो मे गदर का इतिहास यो सुरक्षित है।

मुरौवाडीह पहुँच गये।

हम इस समय उस स्थान पर हैं, जहा ठाकुर बलभद्र सिंह का निवास था—कोट था। यही उनका जन्म भी हुआ था। यहाँ से उत्तर पश्चिम के कोने पर लगभग एक फर्लांग दूर पर घाघरा नदी दिखलाई दे रही है। उत्तर दिशा मे गढ़ी का फाटक था, यह हमे बतलाया गया है। उसके पास ही जहाँ आम के पेड है वहाँ बुर्ज था। उसके उत्तर मे सेमल के पास दूसरे बुर्ज के निशान हैं।

कोट का डीह ऊँचा है। नीचे उत्तर मे फाटक की बतलाई जाने वाली सीमा के अन्दर ही एक तालाब है, जिसमे अब अधिक पानी नही है और बिलकुल टूटी अवस्था मे है। लोग उसमे खडे मछलिया पकड रहे हैं, घुटने-घुटने पानी है। कोट के चारो ओर खाई थी, जिसे यहा वाले पनिहासोत कहते हैं। इस खाई के भी निशान हैं। कहते हैं कि रात मे पानी भर दिया जाता था। दिन भर पनिहासोत के ऊपर पटरा पडा रहता था, लोग आते-जाते थे। रात मे पटरा उठा लिया जाता था। कोट के इस टीले पर चहलारी नरेश की पुत्री के वशज रहते हैं। दाहिने हाथ पर एक बरामदेदार घर बना है, जिसके एक भाग का खपरैल टूट गया है। फूस से छाये हुए चार मिट्टी [illegible] और हैं, एक कोठरी [illegible] टा पडा है। इस टीले के चारो ओर आम [illegible] पकरिया के वृक्ष [illegible] मोर शोर मचा रहे हैं।

फाटक के बाहर घाघरा की अ[illegible] । की [illegible] थी। लडाई की तैयारी वही हुई [illegible]

श्री गिरिजाशंकर सिंह तो थे [illegible]

अपने पुरखो से सुना हुआ कोट का

सौ वर्ष पहले का चित्र उपस्थित हो गया। नवावगज के नायक चहलारी के ठाकुर वलभद्र सिह के जन्म और निवास-स्थान पर आकर मेरी श्रद्धा वाँध तोडकर वह चली थी। ऐसे महावीर, उद्भट साहसी नवयुवक शहीद के प्रति किसकी श्रद्धा न उमडेगी ?

अपने मन को व्यवस्थित करने मे मुझे कुछ समय लगा, फिर अपनी पूछताछ आरम्भ की। श्रीवावूराम सिह ने वतलाया "वलभद्रसिह के एक लडकी थी। जिला शाहजहापुर के जेवाग्रामनिवासी कुँअर गजराज सिह से उसका विवाह हुआ था। चार सतानें हुई, चारो ही पुत्र थे। उनके नाम मुनुवा शिवदान सिह, देवीवख्शसिह, राजवहादुर सिह और हनुमान सिह थे। मुनुवा शिवदान सिह तथा देवीवख्श सिह मुरौवा आकर वस गये। राजवहादुर सिह और हनुमान सिह जेवा मे ही रहे।

मुनुवा शिवदान सिह के दो पुत्र हैं—गिरिजाशकर सिह और शकरवख्श सिह। देवीवख्श सिह के भी दो सतानें हुई—गणेशसिह और वावूराम सिह। गणेश सिह तीन सतानें छोड कर स्वर्गवासी हो गये।"

मैंने पूछा "आपके ताऊ और पिता अपना घर छोड यहा क्यो आकर वसे ? उनके नाना वलभद्र सिह की जागीर तो जब्त हो चुकी थी।"

श्रीवावूराम सिह ने उत्तर दिया "पीपरी राज भी पहले वलभद्र सिह का ही था, फिर एक पजावी को मिल गया। उन्होने पुराने राजवश को गुजारे के लिये ढाई सौ वीघा जमीन दी थी, इसीलिये हम लोग यहाँ आ वसे।"

श्री आशीर्वादी पाडे नामक एक सज्जन तव तक वहा आ पहुँचे। उन्होने वतलाया "वलभद्र सिह जव जूझिगे तौ रानी हिया ते भाजि कै नैहर चली गई। कारिन्दा लोग वकाइन कि अव आप हिया न रही तउ नैहर चली गई। उनके एक लरकी रहै। उयि वाद मा दरखास दिहिस तव वाइस सै वीघा जमीन मिली। चहलारी, थान गाँव, गगापुरवा, वछमरिया, भैंसी, राजापुर कला, वैंजवारी, अउ मुंजहना मा वाइस सै वीघा सीर मिली रही। औ विटिया दुइ सै रुपया महिना पिमिल (पेंशन) पावत रही। रानी न तौ मागिनि औ न उनका कुछौ मिला। विटिया जव मरि गई तौ पिसिल सरकार ते वद हुई गई। जमीदारी जव खतम भै तव सीर—"

"भी चली गई।" कहकर मैंने उनका वाक्य पूरा किया और पूछा कि जव राजा मुरौवा मे रहते थे, तो चहलारी के क्यों कहलाते थे ?

पाण्डे जी ने वतलाया "चहलारी मा कोठार रहा। रहति हियनै रहे मुल राजा चहलारी के वाजति रहे।"

बच्चे, जवान, बूढ़े सब धीरे-धीरे इकट्ठा होते चले जा रहे थे। बात क्रमशः गरमा रही थी। लोग चहलारी के राजा से अधिक जो जो राजा के साथ लड़े थे, उनके नाम चारो ओर इस तरह टपकाने लगे जैसे बरसात मे पतिंगे टपकते हैं। मैं मशीन तो हूँ ही। घबरा कर लिखना बन्द कर दिया। मैंने कहा कि व्यवस्थित होकर अगर यह नाम मुझे बतलाते जाँय तो सब लिख लूँगा। श्री आशीर्वादी पान्डे बोले "ई सब नाव 'जगनामा' मा लिखे हैं।"

कई तरफ से आवाजें उठी "हा, जगनामा मा है।"

'जगनामा', के प्रति मेरी उत्सुकता गहरी हो उठी, परन्तु कुछ पूछने से पहले ही पाण्डे जी सुनाने लगे—

"भाजि गये इलगी झिलगी।
भाजि गये गज के असवारा॥
हरदत्त कहै हम खेत लड़ब।
उड़ जाय लुकान नदी के किनारा॥
एक जीवत है बलभद्र बली।
जिन जाय झपटि अगरेज को मारा॥"

पाण्डेजी के बाद तुरत ही एक नवयुवक खड़ा होकर सुनाने लगा—

"बौंडी का राजा लौंडी भवा, रेहुआ भवा गुलाम।
बना रहै चहलारी क राजा—॥"

अन्तिम पंक्ति विशुद्ध गाली थी। आशीर्वादी पाण्डे ने उसे बड़ी जोर से डाँटा। और अपनी ओर से अन्तिम लाइन का शुद्ध रूप भी बतलाया "बना रहै चहलारी क राजा जो मुँह मारा पियावर क्यार॥ पियावर का मतलब हिया अगरेजन ते आय।"

लम्बी सफेद दाढी वाले पण्डित जगन्नाथ प्रसाद भी खड़ाऊँ खटकाते हुए आ पहुँचे। पाण्डेजी से लगभग दस-बारह वर्ष बड़े, चौहत्तर-पिचहत्तर के थे। पाण्डेजी ने उन्हे अपना गुरु बतलाया। पण्डित जगन्नाथ प्रसाद जी ने बतलाया "चहलारी वारे रहैं। गउना आवा रहै तउन वही ते लड़टाय दिहिन। बेगम आई रही तउन खिल्लत-उल्लत दिहिन। हिया वारे कोई लड़वइया तौ रहे नाहीं, सब आपन धूम-धाम करत हिया ते तोबैं (तोपे) दागति चले। हमरे दादा रहे तौ उनके साथ गे रहैं। तउन राजा उनते कहिनि कि आप लोधेसुरन महादेवा मा रहौ। तौ उइ रहिगे। बाकी हालु ननकऊ सिंह के 'जगनामा' मा लिखा है।"

'जगनामा' देखने के लिये अब मैं अधीर हो उठा, पता लगा कि उसके

यिता ठाकुर ननकऊ सिंह आयु मे सौ वर्ष के हैं । यहा से लगभग एक मील दूर 'टिकुरी गाँव' मे रहते हैं । राजा बलभद्र सिंह के भतीजे है ।

मुझे अब भला कहाँ चैन पड सकता था । फौरन ही श्री बाबूराम सिंह को लेकर टिकुरी पहुँच गया । भर दुपहर थी । लू का जोर था । बच्चे तक पेडो के नीचे सिमटे बैठे थे । हमारी गाडी पहुँचते ही गाँव चैतन्य हो गया । इधर-उधर हल-चल सी मच गई और ठाकुर ननकऊ सिंह के दरवाजे पर गाडी रुकते ही वह हलचल वहाँ सिमट आई । ठाकुर साहब अन्दर सो रहे थे, कुछ बीमार थे । श्री बाबूराम सिंह से मैंने कहा "आप उतावले न हो । घण्टा आध घण्टा, जब तक कि ठाकुर साहब न जागें, यहाँ बैठा रहूँगा । लेकिन बाबूराम सिंह अधिक देर रुक न सके । अन्दर गये और थोडी देर बाद ही जोर-जोर से बोलते सुनाई पडने लगे· " सरकार ते आये है लखनऊ ते आये है 'जगनामा' सुनिहैं ।" इत्यादि सुनकर यह स्पष्ट हो गया कि ठाकुर ननकऊ सिंह को अपनी बात सुनाने के लिये मुझे भी जोर से बोलना पडेगा । कुछ ही क्षणो बाद मैं उस कच्चे किन्तु बडे मकान के कमरे मे था । मेरे पीछे-पीछे गांव की भीड भी आ गई थी ।

कभी-कभी फोटोग्राफी की कला न जानना खल जाता है । घर मे एक भाई जाना माना 'सिनेमेटोग्राफर' दूसरा ख्याति प्राप्त चित्रकार है, ज्येष्ठ पुत्र को भी फोटोग्राफी की कला का अच्छा ज्ञान है, और तब भी मैं स्केच करना या फोटोग्राफ खीचना नही सीख पाया । इसके लिये अपने आलस्य को छोड कर किसे दोष दू ?

ठाकुर ननकऊ सिंह दुबले-पतले, गेंहुवे रग के व्यक्ति है । दाँत करीब-करीब सब बरकरार हैं । आँख कान चले गये, परन्तु आवाज अब भी कडकदार है ।

"अगहन माँ आँखी चली गई । बरम पैदा हो गया था, अब द्याखौ का होति है । अवही तलकु चलति आये—अब द्याखौ का होति है। जउने सन् मा कक्का जूझे रहे नवाबगज माँ, वहे साल हम पैदा भयन । अब जानौ सौवाँ बरस लागगा होई कि लागै वारा होई।" मैंने उनसे 'जगनामा' दिखाने की प्रार्थना की । उन्होंने अपने पुत्र को कापी लाने का आदेश दिया । आने पर उसे हाथ से टटोल कर देखा, कहा "हाँ, यहै है ।" और बडे जोश मे आ कर कवित्त सुनाने लगे । उनकी स्पीड बहुत तेज थी, उन्हे रोकना बहुत मुश्किल था क्योकि वे अपनी सुनाते थे दूसरे की कम सुनते थे । मैंने लिखना बन्द कर दिया और यह सोचने लगा कि यह 'जगनामा' कैसे प्राप्त किया जाय । मैने कहा "यह 'जगनामा' मैं अपने साथ ले जाना चाहता हूँ । इसकी एक नकल तैयार कर लौटा दूँगा ।"

ठाकुर साहब के पुत्र और तीन-चार अन्य सज्जन आपस मे एक दूसरे को देखने लगे। मैं समझ गया कि उनकी दृष्टि मे इनकार है। परन्तु इतनी दौलत हाथ मे आ जाने के वाद सहसा मैं भी छोड़ने को तैयार न था। मैंने ठाकुर ननकऊ सिंह के कान के पास जा अपनी बात कही। वे बोले "नकल हियाँ होई जाई। हाँ, करति करति चार-पाँच दिन तौ लागैं जइहैं।"

मेरा यह अनुभव रहा कि जो काम दूसरो पर छोडा वह आमतौर पर पूरा नही हुआ, इसलिये 'जगनामा' छोड़ना नही चाहता था। दुवारा ठाकुर साहब से कहा कि "मुझे आज ही जाना है। 'जगनामा' मेरे प्राणो से भी अधिक सुरक्षित रहेगा। और नकल कराने के वाद तुरन्त ही उसे वापस लौटा दूगा।"

ठाकुर साहब बोले "ठीक है। आप लै जाव। 'जगनामा' का प्रचार होई, हमरे कक्का को कीरत्ति वढैगी इससे। छपि है तौ हजारो लोग पढिहैं। गलत लिखा है तउन सुद्ध होई जाई। आप लै जाइये। खाली अपना पता-ठिकाना हमको लिख कर रसीद दै जाइये।"

मेरी जान मे जान आई। 'जगनामा' हाथ लगते ही लगा कि अनमोल वस्तु मिल गई।

लोगो ने ठाकुर साहब के सम्बन्ध मे मज़ेदार वातें सुनाईं। मुझे वतलाया गया कि नन्हकऊ सिंह वडे 'न्यारसी' अर्थात् कामकाजी व्यक्ति रहे हैं। उन्हें कागद-पत्तर और औजारो (हथियारो) का वडा शौक रहा है। आस-पास के पुरवो मे हर घर की जन्म-मृत्यु पहले स्वय अपने रजिस्टर पर दर्ज करते थे, अव लडके से करवाते हैं। किसका किससे किस वात पर झगडा हुआ यह भी उनके रजिस्टर पर वर्षो से वरावर टाका गया है। 'जगनामा' के अतिरिक्त उन्होने पौराणिक उपाख्यानो पर भी काव्य रचे हैं।

जव चलने लगा तो 'जगनामे' के सम्वन्ध मे उन्होने मुझ से फिर कहा "साहव, यह खूब छपै, खूब परचार होय, और जौन असुद्ध होय वहिका सुद्ध करिकै छपायो।"

जगनामा अपना एक इतिहास भी रखता है जो पुस्तक के अन्त मे इस प्रकार लिखा है "औवल मे जगनामा वेनीराम मिश्र-भदेवा निवासी जिला सीतापुर ने वनाये थे। श्री सुभ सवत् १९४१ विक्रमी मे मार्ग मासे, कृष्ण पच्छे, तिथौ पचम्याम शनिवासरे यह जगनामा मूल था। उसी की आर्स से यह जगनामा वहुत सनोमान के साथ लिखा गया है कि जो जो हाल छूटि गया था वही इसमे सामिल किया गया कोई शका करने योगि नही की जो सज्जन सूरवीर राजा के भेजे जखमी आये

उनसे सब चरित्र जानकर और युद्ध का कौतुक ज्ञात हुवा की सन् १८८९ ई० मे मैं लखनऊ मे था जो अर्व (?) सिविल हाकिम हालन साहेब को मिलने गये थे। वहाँ पर एक फौजी अफसर बूढा पिलसनदाँ मौजूद था। भेस वही फौजी सिपाही का था, एक तलवार जिसका कब्जा सोने का था वह कमर मे लगाये बैठा था। जब बातो से फरागत हुए तब वह हमसे कहा तुम कहा रहता है। तब मैं कहा की बहराइच मे। तब वह कहा कि बहराइच का राजा बलभद्रसिंह शूरो मे और वीरो मे एक था, ऐसा वीर न होगा। तब मैं रोने लगा। तब वह पूछा रोना क्यो आया तब मैं अधिक रोकर कहा की मेरा चाचा था राजा बलभद्र सिंह जो बकी मे जूझ गया। राजा का पिता श्रीपाल सिंह व मेरा दादा गर्गासिंह दोनो सगे भाई थे।

"राजा बलभद्रसिंह को शुर्गवास वीरगति से मिति जेठ सुदी ८ दिन इतवार सवत् १९१३ वि० था। राजा की अवस्था उस वक्त १८ बरस ३ दिन की थी।"

'जगनामा' काव्य की दृष्टि से भले ही महत्वपूर्ण न हो, परन्तु इतिहास की दृष्टि से बहुमूल्य है।

बाराबकी मे मुझे बराबर यह सुनने को मिला कि बलभद्रसिंह अपना विवाह कर लौट रहे थे कि अग्रेजो से युद्ध छिड गया। 'ब्याह क कँगना कर माँ बाजे, लक्खी मौर देयि बहार' वाली बात यथार्थ से तनिक दूर हटी हुई है। 'जगनामा' से पता चलता है कि बलभद्रसिंह अपने छोटे भाई छत्रपाल सिंह की बारात लेकर शिवपुर ग्राम गये थे। बेगम हज़रतमहल उस समय बौंडी मे निवास करती थी, बैसवारे के सामन्त और रैकवार नरेशो की सभा कर उन्होने सबसे सहायता माँगी, नवयुवक बलभद्रसिंह की वीरता का बखान सुना और तुरन्त उन्हें बुलाने के लिये हरकारे द्वारा पत्र भेजा। हरकारा राजा के शिवपुर मे होने की खबर सुनकर सीधे वही पहुँचा। बेगम का निमन्त्रण पाते ही बलभद्रसिंह बारात को घर जाने का आदेश दे सीधे बौंडी आये। बेगम ने उनका स्वागत किया। कवि के कथनानुसार—

"निज सुत को गोदी सो टारी।
राजहि लीन गोद बैठारी॥
तब बेगम बोली हरपाई।
राजा को लै कण्ठ लगाई॥
तुम सुत सरिस अहो प्रिय मोरे।
कहो मर्म तो मन प्यारे॥"

वेगम ने राजा को खिलअत वख्शी। चोदन्ता गज अम्वारी सहित दिया। रानी के लिये आभूषण दिये। लोगो के लिये पहरावर दी। वेगम ने अपने हाथ से वलभद्र को केसर तिलक किया, विरजीसकदर और मम्मू खा से भी तिलक कराया और साज-वाज सहित युद्ध क्षेत्र के लिये विदा किया।

कवित्त

"चरदा व अकौना नानपारा औ पयागपुर भिनगा समेत रहे भूप तौन जानिये।
वलरामपुर छयो द्वारा गगवलि जरवुलि तुलसीपुर को मानिये॥
रामनगर खानजादे व रामपुर कठवलि जागरे समेत सुघा सवको वखानिये।
चौंडी के राजा रैंकवारी के ठाकुर हरिहरपुर रैंहुवा औ टपरुहा समेत सव, भूपन गनाइये॥
येते सव राजा रहे मल्लापुरी समेत।
सव भाजे तव समर ते हम नहि तजिहै खेत॥
कोऊ ना मुहीम लीन्हो साहव सो छत्रीगन,
करिकै दगा फौज भाजी है सवार की।
पल्टनै तिलगन की थोरी सी लडत भई,
गोरेन को देखि तोप दगी ना गँवार की॥
रह्यौ ना सिहार कछु करनी भुलाय गई,
करिकै नामर्दी सैन चली वार पार की।
कहैं कवि मत्य महाराज वलभद्र सिह,
नाम राख्यो उत्तर को नाक रैंकवार की॥

इस जगनामे की एक विशेषता यही है कि उसमे जन-साधारण के, विभिन्न जातियो के अनेक शूरवीरो के नाम भी लिखे है। वे नाम इस प्रकार है—

(१) दरियावसिह, वलभद्रसिह के मामा, (२) हीरासिह, वलभद्रसिह के काका, (३) लोचनसिह, वैस राजा सिकन्दरपुर, (४) वखतसिह रघुवशी, (५) सिह वहादुर, (६) दर्शनसिह, (७) माधोसिह, (८) मगलसिह मजरे राजपुर स्थान किसनापुर के निवासी, (९) दमनसिह रघुवशी, (१०) उमरावसिह गौड क्षत्रिय, (११) भूदनसिह वहादुर, (१२) दलजीत, (१३) वल्लू, (१४) भगवन्त, (१५) रामवकस, (१६) जोघे, (१७) शिवदीन, (१८) गगादीन, (१९) कालिका थानगाँव के निवासी, (२०) नौरग, (२१) पडित विशुन पाण्डे, (२२) चन्दी पाण्डे, (२३) राम प्रसाद, (२४) परवन नाऊ, (२५) जगी, एक वेश्या पुत्र, (२६) गुरुवकस, (२७) भवानीदीन, (२८) वख्तावरसिह,

(२९) मुन्नूसिंह, (३०) रघुनाथ, (३१) जगतसिंह, (३२) शिवदीन, (३३) शिवबख्श, (३४) मगलसिंह, (३५) मायाराम, (३६) रामचरन, (३७) हरदत्त, (३८) छोटेसिंह, (३९) जानकी, (४०) सुखमगल पाण्डे, (४१) गौरी पाण्डे, (४२) ररमेसुर मिसिर, (४३) राघे दूबे, (४४) मुन्नू, (४५) महिपालसिंह, (४६) पहलवान सिंह, (४७) मान्धातासिंह, (४८) बलदी पाण्डे मुरवा ग्राम के निवासी, (४९) माधोसिंह, (५०) मुन्नूसिंह राठौर, (५१) कर्णसिंह, (५२) दृगपाल, (५३) रामचरन तिवारी, (५४) अमीर खा गोलदाज (५५) परवन रघुवशी, (५६) बल्दी दीक्षित, (५७) रावे पण्डित, (५८) रामचरन पुजारी, (५९) शिवप्रसन्न तिवारी, (६०) भवानीदीन, (६१) जोघे मिसिर, (६२) रामदयाल कहार नरपति पुरवा के निवासी, (६३) भन्तासिंह, (६४) गनेसी, (६५) सीतल, (६६) बिहारी नाऊ मुरवा ग्राम निवासी पुत्र सम्बन्धियो सहित, (६७) जोधासिंह सोमवशी (६८) गगादीन पाण्डे, (६९) कालिका, (७०) सन्तलाल, (७१) माखनसिंह, (७२) रामप्रसाद तिवारी, (७३) रामचरन तिवारी जिनका लडका सखी हो गया था, (७४) पण्डित गगादीन (७५) मुन्नूसिंह, (७६) सीताराम नाऊ, (७७) औसेरी नाऊ, (७८) अमरित, (७९) मुन्नू बारी, (८०) शिवदीन, (८१) भिखारी गाडीवान, (८२) बल्दी गाडीवान, (८३) दौलतिया गाडीवान, (८४) कान्हो गाडीवान, (८५) जवाहिर कहार, (८६) शिवदीन सिंह बैस, (८७) लोनिया बेलदार तीन जन, (८८) कुजविहारी, (८९) कुजविहारी का साईस, (९०) सुभान खाँ।

देश की स्वाधीनता के लिए लडने वाले जितने नरशूरो के नाम-ठाम मिलते हैं, उतना ही इतिहास अन्तरग होता है, 'एक दो नही, हजारो' वीर नायको का हुजूम देश की स्वतन्त्रता के लिए समर में आगे बढा, जूझा और अपने रक्तदान मे भावी पीढियो के लिये भी अनुपम आदर्श उपस्थित कर गया। तत्कालीन भारत अपनी नैतिक और सामाजिक मान्यताओ को लेकर अत्यन्त रूढ और पतनोन्मुख हो गया था, इससे कोई भी न्यायप्रिय व्यक्ति इनकार नही कर सकता, परन्तु १८५७-५८ की क्रान्ति यह भी सिद्ध करती है कि भारत मे कोई ऐसी विशेषता भी विद्यमान थी, जिसने उसको पतन मे भी अपनी महत्ता का ऐसा जोरदार प्रमाण प्रस्तुत कर दिया।

जगनामे मे दी हुई सूची इस बात का प्रमाण भी है कि सकट के अवसर पर जाति भेद और ऊँच-नीचपन भुलाकर हमारा समाज एक हो सकता है। कहार,

कबडिये, नाऊ, ठाकुर, मुसलमान, ब्राह्मण—सभी जातियो के शूर एक साथ एक उद्देश्य के लिए जूझे। हमारा देश यदि इस परम्परा को आज भी सुरक्षित रखे है, तो मैं दावे से कह सकता हूँ कि वह बडे से भी बडे सकट को पार कर जायगा, कोई शक्ति मर्जी के खिलाफ उसे झुका नही पायेगी।

सिह साहब अपने घर से भोजन बनवाकर ले गये थे। नीम तले बैठकर भोजन किया। बडा सुख पाया। आशीर्वादी पाण्डे, पण्डित जगन्नाथ, बाबूराम सिह आदि के साथ थोडी देर बैठकर सासारिक दुख-सुख की चर्चा की। सबसे बडा अपनापन मिल रहा था। पुराने समय मे सार्वजनिक शिक्षा का अभाव पण्डित जगन्नाथ जैसे वयोवृद्ध को भी बुरा मालूम होता था, यह जान कर मुझे हार्दिक सन्तोप हुआ। कहने लगे "पुराने जमाना मा ब्राह्मणन के सब लरिका भी पढबु-लिखबु नाही जानत रहे। अब दयाखौ कि विद्या का कस फैलाव बढ रहा है। मुलु पण्डित जी, दूसर पच्छ से जो हम विचार करित हइ, तौ हमका अस लागति हय कि अच्छर वोध अउरु उपरी टीमटाम वाला ज्ञान तौ जरूर बाढा है, बाकी विद्या का प्रचार नही भवा। यहौ होई जाय तौ अच्छर वोध का असिल लाभ होय।"

मैं खाट पर बैठकर खा रहा था, मैंने पूछा · "पण्डित जी मुझे इस प्रकार भोजन करते देख आप के मन को कैसा लगता है, सच कहियेगा।"

पण्डित जी से पहले पाण्डे जी वोल उठे "यह तौ आज का धरम है।"-

"ठीक कह्यो धरमय आय। अव दयाखौ कहा-कहा भटकि रहे हैं आप। कितना काम औ जिम्मेवारी आप लोगन पर रहता है। आप लोगन ते हमार लोगन का धरम नाही साधि सकति है। अरे, अपने पोता का हम रोजु देखिति है। स्कूल मा बहुत नाही पढ़ा मुलु तवहुँ हमार जइस नियम सजम उहु नाही कै पावति है। हम तौ कहि चुकेन, युहु समय का धरम आय। हम आपके धरम का बुरा न मानव। पर ई के साथ हम यहौ कहव अकि हमार धरम श्रेष्ठ आय।"

ललाई लिये हुए गौर वर्ण, सफेद बुर्राक दाढी और सिर के वाल, चन्दन चर्चित भाल के साथ उनकी वृद्धावस्था अपने विचारो का उद्‌घाटन कर मेरे लिये श्रद्धा और आकर्पण की वस्तु वन गई है। मैं भारत के हृदय मे वैठा हुआ हूँ, भरतो की भूमि मे, पण्डित जगन्नाथ उस भूमि का स्वर लेकर वोल रहे थे।

आशीर्वादी पाण्डे जी ने हमारा वडा आग्रह और प्रेम से सत्कार किया। मैंने आमतौर पर देखा कि गांवो मे सूचना विभाग की गाडी सिनेमा दिखाने वाली गाडी के नाम से अधिक ख्याति प्राप्त करती है। गांव के वच्चे उससे परिचित होते हैं।

सिनेमा दिखलाने की माँग गाँव के नेता से लेकर बच्चे तक करते हैं, यह भी इस यात्रा में अक्सर आजमाया। आशीर्वादी पाण्डे जी ने भी वही माँग की। सिंह साहब ने बीच मे पानी बरस जाने से गाँव के रास्ते खराब हो जाने की बात बतलाई। अब इधर मार्ग सूख चले हैं, तो शीघ्र ही सिनेमा मशीन लेकर आयेंगे।

बलभद्रसिंह की जन्मभूमि मुरौंवा या मुरुवा ग्राम मे बिता, वीर प्रसवनी भूमि को प्रणाम कर हम लोग चले। मेरा मन फिर बलभद्रसिंह को लेकर भर आया। बलभद्रसिंह सचमुच अवतारी नायक था। सर होपग्राण्ट के दिये हुए वर्णन के अनुसार बलभद्रसिंह लम्बी-चौडी देहवाला, तेजस्वी, व्यक्तित्वशील, चतुर, साहसी, फुर्तीला, और भयशून्य पुरुष था। आयु १८ वर्ष ३ दिन—इतने दिनो मे वह अपने व्यक्तित्व को अन्तिम क्षण तक कितना विकसित कर सका, जीवन को अन्तिम क्षण मे पूर्ण कर वह वीर रस का साधक अपने 'रसो वै ब्रह्म' मे लीन हो गया। लगन से बढ कर कुछ नही। लगन हो और उद्देश्य भी ठीक हो तो किसी भी दिशा मे कर्म करते हुए ऐसे ही अद्भुत पराक्रम का परिचय कोई भी व्यक्ति दे सकता है।

बलभद्रसिंह के व्यक्तित्व की दूसरी जीत यह थी कि उनकी सेना के खरे जुझारू वीर अपने नायक को बहुत चाहते थे। दूसरे जब साथ छोड कर चले गये तब बलभद्रसिंह के छ सौ वीरो ने अपने देश की एक-एक इंच भूमि की रक्षा के लिये रक्तदान दिया। होप ग्राण्ट और रसल दोनो ने ही उन छ सौ वीरो तथा उनके नायक बलभद्रसिंह चहलारी वाले को जी खोल कर सराहा है। जगनामे मे उन छ सौ लोगो मे से कम से कम नब्बे वीरो के नाम परिचय का ज्ञान हुआ।

नहर के रास्ते होते हुए हम बौडी के लिये, चले। चहलारी देखने की इच्छा मन मे दबा ली। मुरौआ तथा टिकुरी ग्राम मे मुझे काम लायक यथेष्ट सामग्री उपलब्ध हो चुकी थी। चहलारी जाकर कुछ वहाँ की जनता से बलभद्र की कहानियाँ तथा अन्य शूरो के नाम अवश्य पाता। पर यह काम कोई और करेगा। प्रत्येक जिले मे ऐसे व्यक्ति अवश्य होते है, जो अपने क्षेत्र की ऐतिहासिक, सास्कृतिक और साहित्यिक परम्पराओ के प्रति रुचि ही नही रखते, बल्कि काम भी करते है। क्या ही अच्छा हो यदि कुछ ऐसे व्यक्ति अपने-अपने क्षेत्रो से सत्तावनी क्रान्ति का इतिहास, तत्सबधी किवदतिया, लोक-गीत आदि सग्रह कर लें। ऐसी सामग्री का एकत्र किया जाना और एकत्र प्रकाशित किया जाना भावी पीढियो के लिये उपयोगी कार्य होगा।

बौंडी

राजा हरदत्तसिंह रैंकवार का कोट—

मुरौवा के कोट से निश्चित रूप से इसका क्षेत्रफल ढाई-तीन गुना बडा है। इस कोट के क्षेत्र मे घुमते ही दाहिने हाथ पर कपूरथला स्टेट का तहसील दफ्तर, बायें हाथ डिस्पेन्सरी प्रेस, और आगे चलकर बाये हाथ पर स्कूल है। सामने दाहिने हाथ पर एक खण्डहर खडा है। यही किला है ध्वस्त, खुदी हुई मिट्टी, लखौरी ईटें कुछ उनसे भी पुरानी लगने वाली ईंटें बिखरी हैं। एक कमरे का आकार दिखलाई देता है, ऊपर तक एक दीवाल खडी है। प्राचीनता की बस इतनी ही निशानी यहाँ बची है। एक किसान ने बतलाया कि हमरे पुरखा बतावत रहे कि 'राजा का घरु उइ कैंती रहा।' स्कूल के पीछे वाले भाग मे, जहाँ उस किसान के खेत हैं राजा का घर था। खेतो से ईटें निकलती है। यहा भी एक ने बतलाया कि कोट के चारो ओर बाँस के पेड लगे थे, फिर खन्दक़, फिर बाँस। चार फाटक, चार बुर्ज, चार तोपें थी।

बौंडी मे किसी को बौंडी के राजा और बेगम का हाल नही मालूम बस इतना ही लोग जानते हैं कि बेगम आई थी और राजा हरदत्तसिंह भागकर पहाड पर चले गये थे।

इकौना

दूसरे दिन प्रात काल हम इकौना के लिये चले। वहाँ के राजा उदित प्रकाश का नाम भी मैंने सत्तावनी सिलसिले मे सुना था।

सबसे पहले वहा के 'इण्टरमीजियट कालेज' के प्रिंसिपल से मिलने गये। उनके सम्बन्ध मे हमे यह बतलाया गया था कि इकौना के सम्बन्ध मे बहुत कुछ जानते हैं। बहराइच मे रहने वाले उनके भाई बाबू श्यामलाल वकील भी कुछ जानते हैं। पर प्रिंसिपल साहब न मिले, वे बहराइच गये थे।

फिर स्वर्गीय लाला सालिगराम के पुत्र श्री रामकुमार से मिलने गये। उन्होंने बतलाया "हमारे पूर्वज लाला किशन परशाद वाजिदअलीशाह शाही के क़ानूनगो थे। इकौना के राजा उदितप्रकाश ग़दर मे हार कर भागे, फिर वापस नहीं आये।

"मेरे खान्दान मे एक रवायत चली आती है कि जब १४ गाँव हमारे पुरखो ने कपूरथला को दिये, तब उसी आधार पर औरो ने भी अपने इलाके दिये। इस कारण ये लोग कपूरथला स्टेट के 'ज़ी-इज्ज़त' माने जाते हैं। चालीस रुपया महावार मिलता था, तीस हो गया। लिखा पढी की गई। कागजात भी हैं।"

इकौना एक छोटा सा सम्पन्न कस्बा है। परन्तु प्राचीन इतिहास की जानकारी रखनेवाले लोग वहा अधिक नही, यह बतलाया गया। मैंने सोचा बहराइच जाकर बाबू श्यामलाल वकील से मिला जायगा।

श्रावस्ती के खण्डहर इकौना से केवल चार मील दूर थे। यद्यपि सत्तावनी क्रान्ति से उन सदियो बूढे खण्डहरो का कोई सम्बन्ध नही, परन्तु इतने निकट आकर बुद्ध महाराज के जेतवन विहार को देखने की इच्छा रोक न सका। श्रावस्ती भगवान बुद्ध से भी सदियो बूढी नगरी बतलाई जाती है। पुराणो के अनुसार श्रवस्त नामक किसी सूर्यवशी राजा ने इस नगरी की स्थापना की थी। भगवान राम ने अपने पुत्र लव को यहा का राज्यपाल बनाया। यह नगर प्रसेन-जित के समय बडा मालदार और शानदार बतलाया जाता है। राजकुमार जेत की जमीन विहार बनवाने के लिये सेठ अनाथ पिण्डक ने खरीदी थी और मूल्य स्वरूप पूरी जमीन पर स्वर्ण मुद्राएँ विछा कर दी थी। श्रावस्ती की पटाचारा बौद्ध थेरियो मे बडी प्रसिद्ध हुई है। भगवान बुद्ध को जेतवन विहार अत्यन्त प्रिय था।

डेढ दो मील के घेरे मे—ऊँचाई से देखने पर क़रीब-करीब अर्धचन्द्राकार श्रावस्ती के खण्डहर पडे हैं। ऐसा लगता है जैसे यह सब कुछ किसी किलेनुमा चहारदीवारी मे घिरा हुआ था। जेतवन विहार मे वह चबूतरा अब तक है, जहा वृक्ष तले बैठकर भगवान् उपदेश करते थे। गन्धकुटी के पास खडे होकर मन अतीत की महत्ता से भर गया। पण्डित जवाहरलाल जी नेहरू तथा भारत सरकार के ज़ोरदार प्रचार के बावजूद मैं बौद्ध भले न होऊँ पर बुद्धदेव के प्रति मेरी श्रद्धा निष्कपट है। बुद्ध, जहां तक जानता हूँ, ससार के पहले धर्म-प्रवर्तक थे जिन्होने धर्म को सघबद्ध किया। जातिवाद तथा बलि-प्रथा के विरुद्ध आवाज़ उठाने वाले बुद्ध और महावीर अपने युग के महान् क्रान्तिकारी अवतारी पुरुष हुए हैं। बुद्ध के धर्म-चक्र प्रवर्तन सिद्धान्त के कारण भारत की वाणी को सबसे पहले विदेशो मे पहुँचने का अवसर मिल सका। मैं जहा तक समझता हूँ, धर्म का चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित करने की कल्पना ईसाइयो ने, शकराचार्य और मुहम्मद ने किसी न किसी रूप मे बौद्धो ने ही पाई है।

बुद्ध जयन्ती के सिलसिले मे सरकार ने यहा बहुत कुछ बनवा दिया है। जी की कहूँगा, अयोध्या की मनहूसियत श्रावस्ती आकर मुझे बहुत खली। भारतीय सस्कृति पर अयोध्या और मथुरा का जो ऋण है, उसे भुलाया नही जा सकता। अयोध्या मे पुरातात्विक खोजें न होना, उसे सुन्दर रूप न देना मुझे बहुत खलता है।

शाम को बहराइच मे बाबू श्यामलाल वकील से मिलने गया। उनसे यह सूचनायें प्राप्त हुई।

"नानाराव आये थे। उन्होने यहा पर सगठन किया। बौंडी भी गये। इकौना मे एक साधू बेरागी बाबा दुर्लभदास नानाराव की शक्ल-सूरत का था। गदर के बाद वह नानाराव के धोखे मे पकडा गया, लेकिन बाद मे शिनाख्त पुख्ता हो जाने के बाद छोड दिया गया। इकौना के राजा जनवार राजपूत थे। गदर मे लडे और कभी न लौटे।

"अच्छा साहब, एक किस्सा हमारे बचपन का है सुनिये। इकौना मे एक पागल रहा करता था, पाटनदीन, खाने के लिए वह भीख मे बस दाल (पहिती) मांगा करता था। कहा जाता है कि वह सन्' ५७ का कोई हीरो था। मगर ये सब शक ही शक था। राजा के कुटुम्ब वालो ने कभी उसकी खोज खबर नही ली, शायद वह भी वहाँ कभी नही गया था।

"इकौना का एक किस्सा और जानता हूँ कि वहाँ के राजा ने बेचू नामक एक ब्राह्मण का बडा अपमान किया था। कारण तो नही जानता। कहते है बेचू अविवाहित था। खैर साहब, राजा ने उसे बुलाकर गालिया वालिया दी और चोटी घसीट कर उसे निकलवा दिया—कुछ इसी तरह की बात थी। फिर साहब, वह ब्राह्मण महल के सामने ही बरगद के पेड मे फाँसी लगा कर मर गया। सबने कहा कि यह ब्रह्म हत्या हो गई। राजा को बडा कलक लगा। बाद मे उसने समाधी-उमाधी बनवा दी, मगर कलक तो लग ही गया। बेचू महाराज की समाधी पर आज तक मेला लगता है। और कहावत है कि उसी की बद्दुआ या शराप से इकौना का राजवश उजड गया।"

रेहुआ के कुँअर साहब

बौंडी और रेहुआ नरेशो के वशधर कुँअर इन्द्र प्रताप नारायण सिंह से भी भेंट

की। श्यामलाल जी की कोठी के पास ही इनकी कोठी थी, वही कुँअर साहव से मिलाने भी ले गये। कुँअर साहव ने वतलाया

"जिस समय वेगम और शाहजादा व्रिरजीस कदर हमारे यहाँ भाग कर आये, मैं पहले आप को अपने यहाँ की हिस्टरी वताऊँगा।

"हमारे वश के पूर्वज थे सालदेव-वालदेव। हम रैंकवार क्षत्रिय हैं। हमारी उत्पत्ति राकादेव से है, जो राठौड थे। यह मैंने वीकानेर से छपी क्षत्रिय जाति की सूची में पढा था। डाक्टर तेजवहादुर सप्रू ने एकवार मुझे वतलाया था कि जव महाराज राकादेव रायक (काश्मीर) मे राज्य करते थे तव उनके पुरखे राकादेव महाराज के पुरोहित थे। अच्छा खैर तो, यहा हमारे पूर्वज सालदेव-वालदेव थे। रामनगर घमेरी मे उनका राज्य था। फिर महाराज सालदेव अपने छोटे भाई वालदेव को रामनगर घमेरी का राज्य सौंपकर और मुरौवा के इधर वूढी सरजू (जिसे यहाँ 'वुढियार' कहते है) के निकट वँभनौटी, जिसे उस समय मे वँभनौगढ भी कहा जाता था, आये और उस पर कब्ज़ा किया। वहुत वर्ष तक हम लोग राज करते रहे। उसके वाद हमारे यहाँ महाराज हरिहरदेव और गजपतिदेव दो भाई हुए। महाराज हरिहरदेव वडे शूरवीर योद्धा थे, वैसे ही उनके भाई महाराज गजपतिदेव भी थे।

'तो एकवार, शायद जहाँगीर वादशाह का ज़माना था, दिल्ली की कोई वेगम वहराइच मे जियारत करने के लिये आ रही थी। चूंकि घाघरा के दोनो पार हमारा राज था, इसलिये जव वे इधर आई तो टैक्स माँगा गया। उन्होने आनाकानी की उन्हें रोक लिया गया—कहना चाहिए कि एक तरह से कैद या नज़रवन्द, जो समझिये, कर लिया गया। तव फिर वेगम मान गईं, एक हाथी दिया, दुशाले आदि दिये। वाद मे वापसी पर जव वेगम दिल्ली गई तो जहाँगीर वादशाह से शिकायत की इस पर वहाँ से फौज चल पडी। उस समय वँभनौगढ मे हमारे यहा एक व्राह्मण मत्री थे। उन्होने महाराज हरिहरदेव को समझाया कि शाहजहा से लडाई मोल न लें, और यह प्रार्थना की कि आप दोनो भाई तुरन्त दिल्ली जायें और जाकर कहें कि अपने राज मे कर लेने का हमे पूरा अधिकार था, सो लिया, इसमे हमने अपनी ओर से दुश्मनी करने की नीयत तो की नही थी। महाराज हरिहरदेव मत्री जी की वात मान गये। जव दिल्ली जाने लगे तो अपने तेरह-चौदह वरस के लडके को गद्दी पर वैठा गये और अपनी महारानी जी को वलिया वना गये—उनके उस लडके का नाम महाराज प्रसन्नदेव था।

"एक पुस्तक है 'नागकोशलोत्तर।' उसके लेखक का नाम बाबू गोरखप्रसाद सिंह उर्फ़ मुंशी बाबू है। नागकोशलोत्तर मे लिखा है कि जब ये जहांगीर बादशाह के दरबार मे पहुँचे तो उस समय इधर के दो राजा और भी दरबार मे बैठे थे। उन मे एक बांसी जिला बस्ती के राज थे, और दूसरे मझौली जिला देवरिया के राजा थे। बादशाह ने पूछा कि तुम तीनो मे कौन बडा है। कोई न बोला, महाराज हरि-हरदेव जी बोले कि सरकार, पूरब मे इन दोनो मे कोई तो बडा जतिहा (जाति वाला) और कोई बडा पँतिहा (पांति वाला) माना जाता है, पर सरकार इनमे सब से बडा बहादुर मैं माना जाता हूँ। जहांगीर बादशाह देखने लगा, फिर बोला कि अगर तुम्हारा बहादुरी का दावा है तो जाकर चुनार के राजा को परास्त करो, उसे गिरफ्तार कर यहां ले आओ तो मानूं कि बहादुर हो। इस पर दोनो भाई कुछ राजपूतो की शाही फौज और कुछ अपनी सेना लेकर चुनार पहुँचे। वहा जगल मे अपनी सेना छिपा दी और दोनो भाई सन्यासी का भेग धारण कर, अन्दर हथियार छिपा कर किले पर गये। इत्तिला कराई। महाराज चुनार मुंह हाथ धोकर चादी की चौकी पर बैठे थे, सन्यासियो को बुला लिया। पहुँचते ही मौका देख महाराज हरिहर देव और गजपति देव जी, दोनो भाइयो मे से एक ने महाराज चुनार की गर्दन पर तलवार रक्खी और दूसरे ने छाती पर रख दी और खडे हो गये। जरा देर मे खल-बली मच गई, लोग दौडे। महाराज हरिहर देव ने कहा कि आप लोग नबर मे ज्यादा है और अगर आप लोग हमे मारेंगे तो हम आपके महाराज को पहले मार डालेंगे। और हम लोग शत्रु नही हैं, शहन्शाह के हुकुम से महाराज को कैद करने आये हैं। अगर तुम्हारे महाराज सीधे-सीधे चलें तो कोई बात नही, वरना अभी हमारी सेना भी गढ घेर लेगी। महाराज चुनार दिल्ली जाने से घबराते थे, कहने लगे, बादशाह से मेरी पुरानी लडाई है, दिल्ली मे वह हमारा अपमान करेगा। महाराज हरिहरदेव बोले, हम पहले बादशाह मे वचन ले लेंगे तब आपको पेश करेंगे। और जो उस पर भी बादशाह ने आपका अपमान किया तो हम उसका भी यही हाल करेंगे जैसा आपका किया है। इस पर महाराज चुनार राजी हो गये। उनके साथ दिल्ली आये। उन्हे एक जगह छिपा कर दरबार मे गये। जहांगीर ने पूछा, कहिये महाराज हरिहर देव, आप अपनी बहादुरी का सबूत लाये। इन्होंने कहा कि हां सरकार, मगर पहले आप वचन दें कि महाराज की बेइज्जती नही करेंगे—वो भी आखिर महाराज हैं। और महाराज चुनार आपको खिराज देंगे। यह बात महाराज हरिहर देव ने निर्भय हो कर कही। बादशाह खुश हुआ और महाराज

चुनार के साथ ऐसा ही वर्ताव किया, खिलअत दी। इसी खुशी मे वादशाह ने महाराज हरिहर देव को लखनऊ मे गोमती के इस पार से लेकर डुडवा पहाड (यह शिवालिक की श्रखला है और अव नेपालराज मे है।) तक की भूमि दी जिसके फरमान आज तक हमारे वश मे होकर भी परिस्थितिवश गुम हैं।

"खैर, लौट कर आने पर महाराज हरिहर देव ने रेहुआ का राज अपने छोटे भाई महाराज गजपति सिह को तिलक करके दिया। अपने वेटे को चूंकि राजा वना गये थे, इसलिये उन्होने अपने वास्ते एक दूमरे इलाके वौनहा मे, जिसका हेड-क्वार्टर इस समय हरिहरपुर के नाम से चिलवरिया स्टेशन से तीन मील पर है, राजधानी स्थापित की, नया राज वनाया।

"वहाँ महाराज ने मुरावनी रक्खी। आप एक वात नोट कर लीजिये, गज़ेटियर मे लिखा है कि ब्राह्मणी रक्खी, मगर यह बात गलत है, महाराज अनुचित काम कर ही नही सकते थे। उन्होने मुरावनी रक्खी थी। और उससे उनकी सतान हुई। महाराज हरिहर देव ने मुरावनी से पैदा अपने वेटे को वौनहा का तिलकधारी राजा तो न वनाया पर वह इलाका उन्हें दे दिया। इस वश से आज भी रैकवारो का भात-सम्बन्ध नही है। ये लोग रैककार नही वल्कि रैकवारी के रैकवार कहे जाते हैं।

"अव राजा गजपति सिह की वात सुनिये। उन्होने रेहुआ के पास धर्मापुर मे एक छावनी स्थापित की और वहा आगये। इस पर वेंभनीगढ वाले भी उठ कर अपनी छावनी वौंडी मे चले आये। धर्मापुर के राजा के भाई की स्त्री वहा सती हो गई थी, इससे राजा ने उस जगह को मनहूस जान छोड दिया और रेहुआ मे किला वनवाकर वही अपनी राजधानी वसाई। रेहुआ उत्तर और वौंडी दक्षिण मे ठीक एक मील के फासले पर हैं।

"सन् १८३५ या ४० मे रेहुआ, वौंडी मे वैमनस्य हो गया। उन दिनो महाराज मान्धाता सिह वौंडी के राजा थे और राजा यशकरण सिह रेहुआ के थे। राजा यशकरण सिह की मृत्यु २४-२५ वरस की उम्र मे ही हो गई। वे नि सतान मरे। मरते समय उन्होने अपने मॅझले भाई के आठ महीने के पुत्र को वुलवा मॅगाया। उनको राजा यशकरण सिह ने अपनी छाती पर वैठाकर कहा कि इसको मैंने गद्दी दे दी, मेरे वाद यही राजा होगा। उनके मरने के वाद शिशु राजा के पिता धौंकल सिह राज-काज सम्हालने लगे, उन्हे भी सव लोग राजा साहव ही कहते थे।

"मैंने आपसे वतलाया कि वौंडी और रेहुआ के राजवशो मे वैमनस्य की गाँठ

पड गई थी, सो बराबर कसती ही गई। महाराज मान्धाता सिह लखनऊ जा रहे थे। उनके मन मे पुराने वैर का ध्यान आया। वे चालाकी कर गये, लखनऊ जाते हुए मुकाम कैसरगज के पास नौ गुइयाँ पर छापा मारा और घौंकल सिह को घेर लिया। इनके साथ दो हजार सिपाही थे घौंकलसिह बिलकुल औचक मे घेरे गये थे, उनकी कोई तैयारी तो थी नही, साथ मे सिर्फ पचास आदमी थे सो जूझ गये। महाराज मान्धातासिह ने राजा घौंकल का सिर लेकर उनके सिर की रण पूजा की ।"

"रण पूजा किस प्रकार होती है ?" मैंने पूछा।

"शत्रु का सिर भूमि पर रख कर उसपर अपना झण्डा गाडा जाता है।" कुँअर साहब ने समझाते हुए कहा, "हाँ, तो राजा यशवतसिह बेचारा छोटा ही था, परन्तु उसके चाचा, यानी राजा यशकरण सिह के छोटे भाई पृथ्वीसिह ने प्रण किया कि मैं मान्धातासिह को मार कर गोत्रवध का वदला लूंगा और अवश्य-अवश्य रण पूजूंगा।

"बौंडी नरेश माहाराज मान्धातासिह ने जब सुना तो क्रोध मे भरकर रेहुआ पर छापा मारा। उनके दरबारी कवि ईश्वरी ब्रह्मभट्ट ने मना किया कि ऐसा न कीजिये, अन्याय पर अन्याय होगा और आप अवश्य हारेंगे, आप अपने सगोत्रियो के रक्त से हाथ सान रहे हैं। परन्तु मान्धातासिह न माने। शाम को रेहुआ पर चढाई की। आप सेना सहित तामझाम पर लडने आये थे। पृथ्वीसिह ने किले से निकल कर अपनी सेना सहित अचानक इनको घेर लिया। इन्होंने ऐसा सोचा भी न था, वस पैर उखड गये। फिर तो मान्धातासिह की सेना जहा सीग समाया वही भागी और खुद मान्धातासिह जाकर अपनी रण्डी के घर मे घुस गये। मान्धातासिह जव भागे तव ईश्वरी ब्रह्मभट्ट ने वडी भद्दी गालियो का भँडौआ वनाया। तो पृथ्वीसिह वहाँ भी जा पहुँचे और जव देखा कि मान्धातासिह की कायरता का यह हाल है तो सोचा कि एक तो सगोत्री है दूसरे इतने वडे कायर कि वेश्या के घर मे पनाह खोजते हैं, तो जान नही ली, मगर चूंकि पृथ्वीसिह जी रण पूजने की प्रतिज्ञा कर चुके थे, इसलिये मान्धातासिह की पगडी उतार ली और उनकी रण्डी के एक स्तन की घुण्डी काट कर उसी पर रण पूजा कर ली। इसके वाद मान्धातासिह का स्वर्गवास हो गया। उनके दो लडके थे। वडे महाराज हरदत्तसिह नवाई और छोटे भया शिवप्रसादसिह। भया शिवप्रसादसिह के कोई सन्तान नही हुई। महाराज हरदत्तसिह के दो सन्तानें हुईं, जिनका जिक्र हम आगे करेंगे आपमे।

"खैर, तो इस आपसी झगडे का अन्त भी महाराज मान्धाता सिह के साथ ही साथ हो गया। महाराज हरदत्तसिह के समय मे रेहुआ वालो से सन्धि हो गई। उस समय रेहुआ में यशवर्तसिह की गद्दी पर राजा रघुनाथ सिह थे। उनके दो भाई थे भया हरपालसिह और भया हरिशरण सिह उर्फ कलक्टर सिह।

गदर मे महाराज हरदत्तसिह सवाई वौंडी नरेश थे।"

"ये सवाई की उपाधि किसने दी ?" मैंने पूछा।

"हमारे यहा किसी ने उपाधि नही दी, अपनी शक्ति के बूते पर, तलवार के ज़ोर पर हम लोगों के पूर्वजो ने राजउपाधिया और प्रतिष्ठा हासिल की थी।

"तो, जब लखनऊ की लडाई मे भारत वालो की हार हुई तव वेगम हज़रत-महल अपने शाहज़ादे विरजीसकदर को लेकर वौंडी आईं, महाराज हरदत्त सिह ने अपना धर्म समझ कर अंग्रेज़ो की ज़रा भी परवाह न करते हुए उन्हे शरण दी और उनकी मदद करने का प्रवन्ध करने लगे। रेहुआ नरेश राजा रघुनाथ सिह को दमे की शिकायत थी। उनके मंझले भाई भया हरपाल सिह आवे पागल थे। महाराज हरदत्त सिह ने भया हरिशरण सिह को अपनी सेना का 'कमाण्डिग अफसर' वनाकर वेगम की मदद को भेजा। उनके पैर मे गोली लगी और वे ज़ख्मी होकर लौटे। अग्रेज़ो की जीत हो गई।

"जिस ज़माने मे वेगम वौंडी के किले मे मेहमान थीं उसी ज़माने मे नानाराव पेशवा रेहुआ मे तीन दिन मेहमान रहे थे। महाराज हरदत्तसिह के वडे वेटे युवराज महेशवख्श सिह से विरजीसकदर की दोस्ती हो गई। दोनो एक ही उम्र के थे। हरदत्तसिह के छोटे लडके का नाम भया महावीरवख्श सिह था।

"जव लडाई मे हार हो गई तो महाराज हरदत्तसिह वेगम हज़रतमहल, नानाराव वग़ैरह जो खास-खास लोग थे भाग कर पहाडो पर चले गये।

"इसके वाद रियासतो की ज़व्ती हुई और रेहुआ का दुर्ग, खाई, १५२ तोपो की जगहें सव अंग्रेजो ने तुडवा दी। रेहुआ नरेश राजा रघुनाथसिह युद्ध मे जूझ गये। वौंडी नरेश, 'कुइन विक्टोरिया' के ऐलान के हिसाव से जो तारीख़ वतलाई गई थी, उसमे लौट कर न आये, उनकी मृत्यु पहाडो पर ही कही हुई।"

मैंने पूछा, "अवध गज़ेटियर मे लिखा है कि महाराज हरदत्तसिह पोर्ट ब्लेयर मे मरे थे।"

"ग़लत है। अंग्रेजो ने उनकी ग़ैर मौजूदगी मे ही उन पर मुकदमा चलाया,

काले पानी और ज़ब्ती रियासत की सज़ा दी, लेकिन जब वे यहा मौजूद ही नही थे तब काले पानी भेजा ही कैसे जा सकता था ? हाँ, रियासत ज़ब्त कर ली।"

"उनके दोनो लडको का क्या हुआ ?" मैंने पूछा।

"वही बतलाने जा रहा था। महाराज हरदत्तसिंह के दोनो राजकुमार अयोध्या नरेश महाराज मानसिंह के पास रहे। सूरजकुण्ड के पास अयोध्या नरेश का एक मकान बिजुलिया डीह पर था। वही वह लोग तेरह-चौदह बरसो तक रहे। महाराज मानसिंह के अलावा रेहुआ, रामनगर, धमेरी वाले भी उनकी सहायता करते रहे। बाद मे राजा साहब रामनगर धमेरी ने एक मौजा सरदहा नाम का महेशबख्श सिंह जी को नस्लन बाद नस्लन माफी दिया था जिसे बाद मे उनकी रानी साहब ने हमको अपनी कुल जायदाद के साथ वसीयत मे दिया, पर चूंकि मौजूदा राजा को मौजे का लालच लगा तो हमने आपसी झगडे से बचने के लिये उन्हे दे दिया।

"हमारा इतिहास इस प्रकार है कि रेहुआपति राजा रघुनाथ सिंह के बेटे राजा विजय बहादुर सिंह थे। वे हमारे पिता थे। वे बडे विद्वान और साथ ही साथ बडी ताकत भी रखते थे। पहलवानी मे उनका जोड नही था। एक बार यहा तक हुआ कि राज साहब नानपारा के शेर से उनकी कुश्ती बदने की बात हुई और ये राजी हो गये। मगर जस्टिस पिगेट और नवानगर के रजीतसिंह आदि मित्र थे, उन्होने यह कुश्ती न होने दी। हमारे पिता जी का छोटी उम्र मे ही स्वर्गवास हो गया। उनके दो पुत्र हुए। एक राजा रुद्रप्रताप नारायण सिंह जिनकी ३० सितवम्र सन् १९५३ मे मृत्यु हो गई, दूसरा मैं यानी कुअॅर इन्द्रप्रताप नारायण सिंह। मेरे बडे भाई की तीन कन्याएँ तथा एक पुत्र और मेरे एक पुत्री और एक पुत्र हैं। मैंने अपनी राजकुमारी की शादी नेपाल के राणा जगबहादुर के पडपोते से की, और कुमार शक्तिविजय सज्जनसिंह की उम्र अभी चौदह-पन्द्रह साल की है, ये पढते हैं। आगे देखिये अब जमाना हमारे वश वालो के लिये कैसा आता है। बस इतना ही हमारा इतिहास है।"

बातचीत के सिलसिले मे पता लगा कि जबलपुर, बांदा के कहार भी अपने को रैकवार कहते हैं। फतेहपुर, इलाहाबाद के चमार भी रैकवार कहलाते हैं। कारण जानना चाहिये। तुलसीदास जी के प्रमाण मे तो 'साहब को गोत, गोत है गुलाम को।" शायद यहा लागू हो जाय।

१९ जून। बहराइच जिले की गदरकालीन प्रमुख रियासतो मे अब केवल

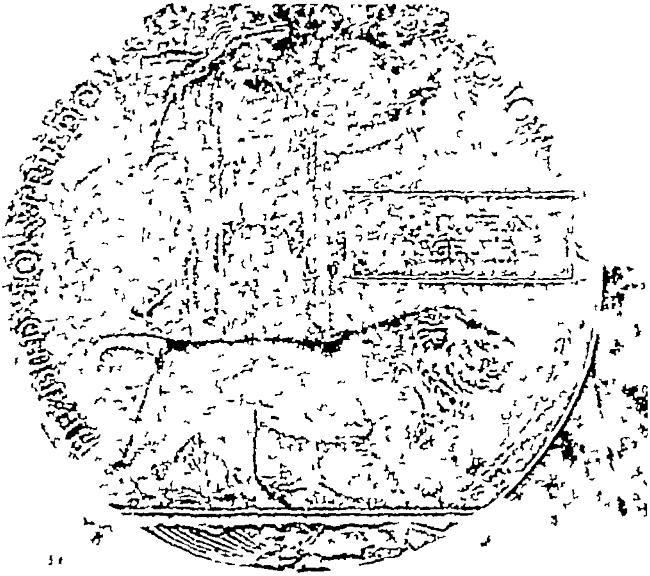

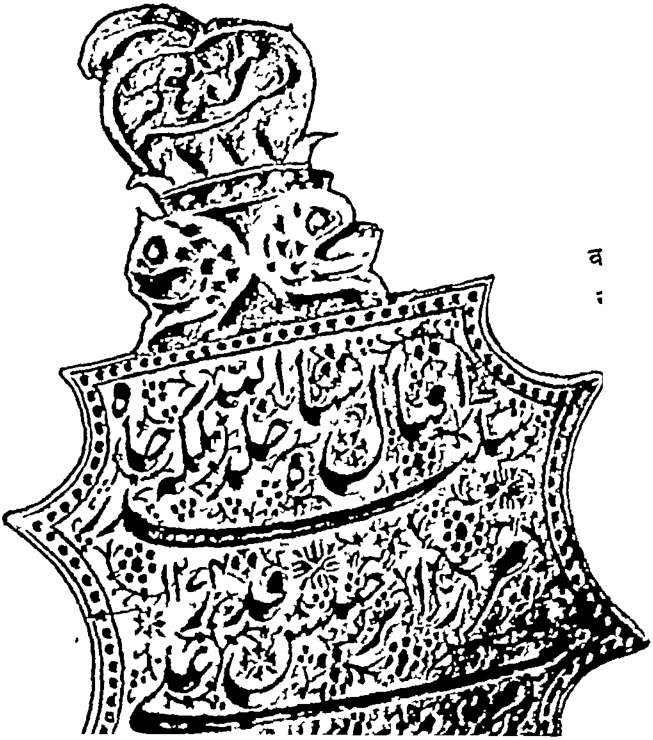

चर्दा के ही वंशजो से मिलना शेष रह गया है। चर्दा के भूतपूर्व राजा भारतीय सीमा के बाहर नेपालगंज में स्थित ढौंढे गाँव में रहते हैं। भर्वनिया के कांग्रेसी कार्यकर्ता श्री महेश्वर बख्शसिंह ने हमारा मार्गदर्शक बनने की कृपा की।

मार्ग में केवलपुर नामक ग्राम पड़ने पर उन्होंने कहा "यहाँ के रशीद मिया भी गदर की बातें बताते हैं। उनके पुरखे बेगम के साथ यहा आये थे।" हम लोग उनसे मिलने के लिये वहा रुके।

श्री रशीदुद्दीन किदवाई ने बतलाया "बेगम ने चर्दा में पनाह ली। उसके बाद जब अंग्रेजो ने वहा घेरा तो सुरङ्ग की राह से मस्जिदिया के क़िले में पहुँची जो वहा से आठ मील के करीब दूर है।"

मैंने पूछा "क्या इतनी लम्बी लम्बी सुरङ्गे वाकई बनाई जाती हैं ?"

"सुरङ्गो की बाबत जो आप का सवाल है तो अर्ज यह है कि मैं शिकार के वास्ते अक्सर दूर-दूर जङ्गलो मे जाया करता हूँ। मस्जिदिया किले से मान नाले तक एक मील की सुरंग के आसार नजर आते हैं। अङ्गूर कोट वगैरह सब सुरङ्गो से जुड़े हुए थे। हाँ, तो जब अंग्रेजो ने बेगम को मस्जिदिया के किले मे भी घेरा तो उसके बाद वो वहाँ से मान नाले से महादेवा पहाड के करीब एक मौजा है वहाँ से सोनार होती हुई नैपाल गई। कई जगह उनके दफीने के निशानात बतलाये जाते हैं। पत्थर लगे हैं, मस्लन महादेवा, सोनार, चर्दा, मस्जिदिया, अगूरकोट जो राजा तुलसीपुर का इलाका था—वहाँ सब जगह दफीनो की बात मैंने सुनी है। आज सात आठ साल हुए अगूरकोट शिकार खेलने गया था, तब सुना था कि कुछ मजदूरो को दफीना मिला। मैंने वहाँ ये जरूर देखा कि चारपाँच घडो के निशानात मिट्टी मे थे जैसे किसी ने उन्हें निकाल दिया हो।"

मैंने कहा "साहब, माफ कीजिऐगा, ये दफीनो की बात गले के नीचे नही उतरती। निशानात मौजूद हो, लोगो को मालूम हो, और वे जगहे रकम पाने के लालच ने इतने दिनो तक खोदी न जाय, ये बात कुछ अटपटी सी लगती है। खुद अंग्रेज ही क्यो छोडते!"

किदवाई साहब ने फर्माया "आप के सवाल का जवाब तो यही हो सकता है कि उन जगहो को खोदा जाय।"

मैंने कहा: "जी, अभी लखनऊ मे बतलाये गये निशानात के सहारे एक दफीना खोदने की कोशिश दो-तीन वर्ष पहले हुई थी। जन्तर-मन्तर, टोना-टोटका, सरकारी निगरानी, सब तरह के तमाशे हुए। खुदवाने वाले शाही खान्दान से ताल्लुक़

रखते थे, बेचारो के ढाई तीन हजार रुपये अपनी गाँठ के ही खर्च हो गये, मिला कुछ नही।"

किदवाई साहब बोले "आप का कहना ठीक है। हम तो सुनी हुई कहते है। अरबी में पत्थर लगे हुए हैं, यह तो मैंने भी देखा है। खैर, कुछ ज्वेलरी उन्होंने महाराजा साहब नैपाल को दी थी। दो हार दिये थे।

"एक बात और है कि बेगम के साथ बाराबकी से जो लोग उन्हें पहुँचाने के लिये यहाँ आये थे उनमे हमारे खान्दान के लोग भी थे। तब से हम यही रह गये। दादरे के अहमद हुसैन आये थे। बाराबकी मे मुख्तार अहमद वकील है। उनके दादा आये थे, उनकी फौत भी यही हुई।"

इसके अतिरिक्त चलते-चलाते किदवाई साहब ने अपने शिकारी मित्र एक बडे नेपाली सरदार का हवाला देकर यह बतलाया कि महाराज नैपाल और बेगम अवैध सूत्र से बध गये थे। बात जिस तरह कही गई वह ढग बेढगा था। राजा रानियो के चरित्र, जिस वातावरण मे वे जिन्दगी भर पाले जाते थे, यदि ठीक-ठीक भलेमानुसो जैसे न हो तो कोई अचरज की बात नही। महलो और हरमो का वातावरण गुप्त व्यभिचार को बढावा देने के अतिरिक्त और दे ही क्या सकता था? सत्तावन के अनेक नायक इस दृष्टि से बेदाग न मिलेंगे। बेगम और मम्मू खाँ का पारस्परिक नाता अनेक देशी विदेशी लोगो ने उजागर किया है।

यो यह भी उजागर है कि बेगम को बचपन मे तवायफ के घर के सस्कार मिले थे। बचपन मे उस समय की मशहूर कुटनियो अम्मन और इमामन द्वारा ये शाहजादा वाजिदअली के परी खाने मे बेची गईं। वाजिदअली ने इनका नाम महक परी रक्खा। नाच गाने की तालीम दी गई। शीघ्र ही इन्हे शाहजादा वाजिदअली से गर्भ रह गया। उसके बाद ही इन्हे परीखाने से हटाकर महलो मे रक्खा गया। इन्हे इफ्तिखारुन्निसा बेगम का खिताब मिला था। इनके पुत्र को बिरजीस कदर का। यह अमजदअली शाह के जमाने की बात है। अमजद अली शाह के बाद उनके बडे बेटे मुस्तफा अली खाँ को राजगद्दी न मिली, वाजिदअली शाहे अवध हुए। ताज पोशी की खुशी मे हज़रत ने अपनी महबूबा इफ्तिखारुन्निसा बेगम को हज़रतमहल का खिताब दिया। हज़रतमहल की मुहर पर १२६३ हिजरी अर्थात् १८४७ ई० अकित है। यही वर्ष वाजिदअली की ताजपोशी का है। हजरत के महलो मे दो बेगमो को यही खिताब मिला। दूसरी परी पैकर हजरतमहल कहलाती हैं। वाजिदअली शाह ने एक जगह ज़िक्र आने पर हज़रतमहल को 'जनेखानगी' लिखा है।

विरजीसकदर की माता के सम्बन्ध मे वाजिदअलीशाह आत्मकथा 'हुज्नेअख्तर' मे लिखते हैं :—

"जो वह चौथा शहज़ादा है रश्के वदर। उसे लोग कहते हैं विरजीसकदर ॥
वह चौदह वरस का है कुछ शक नही। कहूँ क्या कि वह है कही का कही ॥
मिलाऊँ जो हज़रत से लफ्ज़े महल। तो नाम उसकी मा का खुले वरमहल ॥
जो विगडी थी आगे से अग्रेज़ी फौज। उसे ले गई जैसे दरिया की मौज ॥
वह मह कब्ज़ये मुफ्सिदा मे है आह। वनाया है अपना उसे वादशाह ॥"

वाजिदअली शाह के इस वक्तव्य के अनुसार स्पष्ट हो जाता है कि विरजीसकदर की आयु गदर मे चौदह वरस की थी। हज़रतमहल को यह सन्तान छोटी उम्र मे ही हुई होगी। अधिक से अधिक पन्द्रह-सोलह वर्ष की रही होगी। गदर मे इनकी आयु निश्चित रूप से सत्ताइस-अट्ठाइस की रही होगी। भरी जवानी मे अगर उन्हें वद चलन वनने का ही शौक होता तो वे ऐसा सगठन न कर पाती। वेगम के प्रति लोगो मे आदर भाव था। जनता मे अव तक कही भी मुझे उनके प्रति सम्मूखा की वात छोड और कोई कच्ची वात सुनने को नही मिली।

वेगम यदि महाराज नेपाल की भोगाङ्गना वन जाती तो यह निश्चित वात है कि नेपाल मे उनकी सुख सुविधा के साधन भी खूव जुट जाते। वेगम और उनका परिवार वहाँ कष्ट मे रहा। उन्होने नेपाल मे शरण पाने वाले देहली के एक शाहज़ादे मिर्ज़ा दाऊदवेग की वेटी मुस्ताशन्निसा से अपने पुत्र विरजीसकदर का विवाह सन् १८६९ मे किया। नेपाल मे वेगम हर तरह से टूटी हुई, अपने कुटुम्ब से जुड कर रही। उनका स्वाभिमान जो महारानी विक्टोरिया और उनकी सरकार से टक्कर ले सकता था, मेरा तो खयाल है कि टूटी हालत मे भी उन्हें किसी राजा महाराजा की पर्यङ्कसेविका हरगिज नही वना सकता था। जव लोग लक्ष्मी वाई जैसी आचरण व्यवहार शुद्ध, कसरत कवायद की पटु, तेजस्विनी नारी पर भी कलक लगाने से नही चूकते, तो वेचारी हज़रतमहल के साथ तो 'जनेरानगी' शब्द ही जुटा हुआ है।

हम लोग भारत और नेपाल की सीमा पर पहुँच गये। गुरखे सिपाही ने रोका। श्री महेश्वरवख्श सिंह ने कहा : "वागीश्वरी के दर्शन करने जा रहे हैं।"

फिर आपत्ति नही की गई। सीमा पार कर गये किन्तु अभी तक प्राकृतिक दृश्य वोली-वानी, चेहरे मोहरे अवधी ही हैं। वागीश्वरी के दर्शन किये। मूर्ति चवूतकेरे अन्दर है जो सवा गज लाल तूल, सवा रुपया और जाने क्या क्या अल्लम-

गल्लम चढावा चढाने के वाद ही देखने को मिल सकती हैं। मैंने उस स्थल पर जाकर वागीश्वरी को ध्यान मे देख लिया, पुजारी के सौदे की वस्तु, पत्थर को देखकर क्या करता ? मन्दिर के सामने एक वडा तालाव है बीच मे थोडी दूर तक पुल वना कर सर्प डमरू धारी शिव की मूर्ति खडी है। मूर्ति सगमरमर की कदे-आदम है और अच्छी है।

नेपालगज मे पेडे वहुत अच्छे मिलते हैं। मिठाई की प्रशसा सुन कर मुझसे चखे वगैर रहा नही जाता। खैर, ढौंढे गाँव की तरफ चले। महेश्वरवख्श सिंह महोदय वोले "हमारा भी किस्सा नागर साहव लिख लीजिए।"

उन्होंने लिखवाया "राजा जोतसिंह के सुपुत्र राजा महीपत सिंह और सुपौत्र दुनियापत सिंह चर्दा नरेश थे। वे जनवार ठाकुर थे। इनका ननिहाल विसेन ठाकुरो मुन्नूसिंह, प्रकाशसिंह, चन्दनसिंह के यहाँ लोढियाघाटा जिला गौंडा मे था। थे लोग तीज लेकर चर्दा आये थे। उस समय यहाँ जग की धूम थी। ये तीनो भाई वडे वीर थे, अपने रिश्तेदारो पर सकट आया देख वही ठहर गये। राजा साहव ने तीनो भाइयो को मस्जिदिया किला, जो जगल मे रुपयिडिहा सरहद नेपाल पर है, वहाँ इनकी तैनाती कर दी। तीनों भाई वही शहीद हो गये। सन् सत्तावन के वाद जव जोतसिह ने वन्दीगृह से छुट्टी पाई और ब्रिटिश सरकार से कुछ मौजे पाये, तो हम लोगो यानी मुन्नूसिह, प्रकाशसिह और चन्दनसिह के वालवच्चो को तीन गाँव माफी मे दिये और यहाँ बुला लिया। तिकुरी, भवनियापुर और विजुली तव से हमारे वशवालो के पास हैं। जैसे जैसे परिवार वढा वैसे वैसे राजा चर्दा और महा-राजा वलरामपुर की ओर से हमारी परवरिश भी वढी।

"वनकुटी मे कत्ले आम हुआ। रफीखा ठेकेदार के पुरखे राजा जोत सिंह की रियासत के नायव थे। छोटे छोटे वच्चो की वहुत सी कब्रें वहा हैं। माताओ के स्तन काट लिये, वडा जुलुम किया प्रजा पर।"

विद्रोह दवाने के लिये जाते हुए तो अग्रेजो ने उन्ही गाँवो को, जिन पर विद्रोही झण्डे थे, या जहा सामना हुआ, तवाही की, परन्तु क्रान्ति दवा कर लौटती हुई अग्रेजी सेनायें जिस मार्ग से गुजरी है वहा के गाँवो, कस्वो का विजन तो वडा ही रोमाचकारी है। अग्रेजो ने अमानुपिकता की हद करदी। वनकुटी का हत्याकाण्ड उसी की कहानी है।

ढ़ौंढ़े गांव नेपालगंज–नेपालराज

सन् '५७ के वीर चर्दा नरेश राजा जोतसिह के पुत्र लगभग ८० वर्ष की आयु वाले

भूतपूर्व राजा शिवराज सिंह यहाँ रहते हैं यह जानकर हम आये हैं। यहाँ तक लोगो की बोली बानी अवधी, वातवरण भी वैसा ही है। वृक्षो के वैभव से समृद्ध, कही हरे भरे, कही (और अधिकतर) वर्षाकाल के स्वागत मे मिट्टी खुदे खेतों वाले, अन्तरिक्ष से लगे हुए गडी परात जैसे मैदान सब कुछ अभी तक चिर-परिचित हैं। कही कुछ एक गोरखे चेहरे देखने को मिल जाते हैं, जैसे कस्बे नेपाल गज मे देखने को मिल गये थे। बडे ही ऊबड-खाबड मार्ग से गाडी रामराम करके यहा पहुँची है। गाँव मे प्रवेश किया, पक्के मकान की कल्पना करते हुए आगे आये एक गली मे पहुँच गये। वहा एक व्यक्ति ने बतलाया, "पाछे मुडिकै फिर हुआँ वइसी जायो। वाँई लग वहै राजा साहब केरि कोठी आय।"

पहुँच गये। राजा साहब की कोठी से पहले एक बडा सा, ईंटो का मकान देखा, समझा यही होगी, परन्तु वह किसी मुसलमान किसान का घर था। उसके सामने ही दाहिने हाथ पर आम के पेडो की पाँत शुरू हो जाती है। धरती भी कुछ उठी हुई है। आम के पेडो के साथ ही पथ मुड जाता है। दाहिने हाथ पर एक दुमंजिला खपरैल का मकान है जिसकी एक मंजिला चहार दीवारी बहुत दूर तक चली गई है। दुमंजिले छोटे से पक्की ईंटो के बने मिट्टी पुते भवन से सटी हुई चहार दीवारी जहा से आरम्भ होती है, वही से बाहर का बरामदा भी आरम्भ होता है। इमारत के पास मिट्टी के ढेर पर दो बकरी के मेमने सो रहे हैं। बरामदे मे द्वार के अगल बगल दो बैल पडे हैं, बकरी बँधी है। बरामदे के बाहर दरवाज़े के सामने एक तखत पडा है। पास ही पशु शाला है, कई गाय बैल बँधे हैं, गोप सेवा कर रहे हैं। सामने इमली का वृक्ष है। इमारत के दाहिने ओर बने बाडे मे कुछ झोपडिया, एक ताज़ी बनी, सूखती हुई भी दिखाई दे रही है, अद्धे, लढिया खडी है। यही सब मिला कर राजा साहब की कोठी कहलाती है। कोठी के पूर्व मे लगभग दो मील मैदान दिखलाई देता है। उसके बाद जगल आरम्भ होता है, जो आरम्भ मे एक-डेढ मील तक तो छोटे जानवरो से भरा है, किन्तु आगे चलकर घना हो जाता है और वहा हर प्रकार के हिंस्र पशु रहते हैं।

हमारे साथ के एक साहब को राजा साहब चर्दा की कोठी देखकर कष्ट हुआ, बोले "इसी को वह आदमी कोठी कह कर बतला रहा था।"

दूसरे साहब बोले . "व्यग कर रहा होगा।"

मैं समझता हूँ कि इसमे व्यग करने की कोई बात नही। गाँवो के जन समाज मे राजा के प्रति अब भी एक उच्च भाव है। राजा भले ही बिगड जाय, मगर जहा

वह रहेंगे, महल या कोठी ही कहलायगा उस बेचारे ने सहज भाव से ही कहा होगा, उसके कहने मे व्यग का लटका मैंने तो नही पाया था । एक दूसरी बात भी है, राजाओ के रहन-सहन को लेकर हम शहर वालो या कुछ दिनो पूर्व के ताल्लुकेदार राजा महराजाओ की रियासतो मे रहने वाले लोगो को वडी भ्रान्तिया हो गई हैं । ये सामान्त राजे ऐसे ही मिट्टी के महलो और गढियो में रहते थे । इनके पास धन की शक्ति गडन्त होती थी और उसके द्वारा जन की शक्ति उजागर होती थी । रहन-सहन में वैभव का प्रदर्शन नही होता था । घने जगलो में मिट्टी की गढी और उसके अन्दर मिट्टी के ही महल दुमहले होते थे ।

यह सब तो है, मगर जिस काम के लिये आया हूँ उसमे निराशा ही हाथ लगी । यहा आकर पता चला, राजा साहव तो कल रात ही को दुविधापुर, भारतीय सीमा में चले गये । हमारे इस चर्दा वाले पुरखे ने खूब छकाया । खैर ।

राजा साहव के वडे पौत्र कुँअर हरनाम सिंह वाईस चौवीस के आयुष्मान् हैं । वडे सत्कार करने वाले हैं । हमारे साथ भोजन वँधा था । सिंह महोदय अपने घर से पराठे, आलू का साग और मेरे लिए मिर्च का अचार भी लेकर चले थे, परन्तु कुँवर जी का आग्रह प्रवल था, कहा कि कच्ची तैयार है, पक्की में हम थोडे समय की माफी चाहेंगे, मगर आये हैं तो भोजन करना पडेगा । हमने देखा, माने विना मुक्ति नही और कच्ची याने दाल भात के नाम से हम ललचा भी उठे । उन्होंने फिर पूछा, "अन्दर चलियेगा या—?"

हमारी मण्डली की राय हुई कि यही इमली तले आ जाय । कच्चा खाना रसोई के वाहर नही जाता, मगर वर्षो ने हमारे लिये तो जाने ही लगा है । थालिया आने पर हमारी मण्डली के एक सज्जन ने कुँअर जी के कार्यकर्ता (महराज) से कहा "तुमका तौ यू वहुत बुरा लागति होई, कि खाट पर वइठे कच्ची खाय रहे हैं ?"

महराज वोला "हमका काहे बुरा लागी । अरे, एक तुमहू क्वारे हौ, आधी दुनिया खाति है, तुम्हरे 'गौरमेन्ट आफ इण्डिया' मा जइस चलन चलाय दीन्हगा तइसै चलिगा औ हियाँ चलिगा ।"

थालिया आने के साथ ही कुँअर जी प्रवन्ध देखने आये और मुझ से कहा "हमारे पास हमारे वंश के कुछ कागज हैं । हमारे वावा ने और पुराने लोगो ने मिलकर एक पण्डित जी से वंश हिस्ट्री लिखाई थी "

मैंने उत्सुकता से पूछा "सत्तावनी क्रान्ति से सम्वन्धित ?"

बोले : "हा।"

मैं प्रसन्न हो गया। शिवराज सिंह जी से भेंट न होने पर भी उनके पिता के इतिहास से भेंट हो जायगी, आना अकारथ नही जायगा।

राजा साहब ने हाथ के बने पुराने चिकने कागज़ पर जन्मपत्री-नुमा अपने घराने का इतिहास लिखाया था। हिन्दी की लिखावट निब की, शैली बीसवी सदी की—'भारत मे अग्रेज़ी राज' की शैली से मिलती जुलती सी है। कुँअर जी दोनो ओर से फटा हुआ केवल उतना ही अश लाये, जितना उनके पुरखा और सत्तावनी क्रान्ति से सम्बन्धित था। विवरण इस प्रकार है—

"सन् १८४६ ई० से महाराज महीपत सिंह के स्वर्गवास के पश्चात् वीर राजा जगजोतसिंह के हाथ मे राज्य की बागडोर आई। उनके शासन के दस ग्यारह वर्ष बाद देश भर मे विद्रोह फैला। राजा जगजोतसिंह को भी इसमे भाग लेना पडा क्योकि व्यापार के लिये आये हुये अग्रेज़ हमारे देश की जनता को, यहा तक कि नवाब, राजा, महाराजाओ तक को अपमानित कर रहे थे और अत्याचार कर रहे थे। सन् '५७ के सगठन मे इन्होने भाग लिया और बागी घोषित हुए। पूज्य नानाराव पेशवा ने इनके किले मे आश्रय लिया और राजा जगजोतसिंह ने अन्त तक उनकी रक्षा की। अगरेजो ने उस समय उन्हें बडा लालच दिया और कहा कि पूज्य नानाराव पेशवा को हमारे हवाले कर दो और इसके एवज़ मे हम आप को बहराइच जिले का काफी इलाका देंगे, राजा जगजोतसिंह ने अग्रेजो का प्रस्ताव ठुकरा दिया। इस पर अग्रेज़ो ने चर्दा पर हमला किया। राजा जगजोतसिंह ने नाना साहब को अपने बहनोई राजा देवीबख्शसिंह की सरक्षता मे सुरंगो के रास्ते गुरखाली भेज दिया। स्वय लडे, एक तोप और कुछ सिपाहियो के सहारे तीन दिनो तक अगेज़ो से टक्कर ली। चौथे दिन किले के आसपास देसी दारू डाल कर आग लगा दी गई। राजा अपने परिवार और यथा सम्भव धनराशि को लेकर सुरग की राह भागे और तराई (दादन) मस्जिदिया के जगल में स्थित अपने किले में आये। चर्दा छोडने पर राजा जगजोतसिंह ने प्रतिज्ञा की कि जब तक बदला नही ले लेंगे किले में वापस नहीं आयेंगे। और फिर वे चर्दा कभी न गये।

"अग्रेज़ो ने मस्जिदिया पर भी आक्रमण किया। वहा से भी इन्हें भागना पडा। फिर ये नानपारा तहसील में नानपारा से पश्चिमोत्तर कोने पर जगल के किनारे अपने बरगदहा के किले में गये, वहां भी इनका पीछा किया गया। इन्होंने सकट झेलना स्वीकार किया, पर अँग्रेज़ो के आगे सिर न झुकाया, बराबर यथाशक्ति

मुकावला किया पर बाद में हर तरह से हताश होकर नेपाल चले आये । महाराजा ने उन्हे शरण दी, कुछ मौज़े दिये । महाराणा नेपाल ने लिखा-पढी की । दिल्ली दरबार होने से पहले जब लार्ड हेस्टिंग्ज (हार्डिज ?) को मालूम हुआ कि एक सत्तावनी वीर नेपाल में जीवित है तो देखने की उत्सुकता प्रकट की । महाराणा से कहा कि अपने साथ राजा जगजोतसिंह को भी अवश्य लाइये । इनको बागी कहलाने से माफी मिली । ये गये, वडा स्वागत हुआ । चर्दा वलरामपुर में मिलाया जा चुका था, पर इन्हे आज्ञा हुई कि किले में अपनी धन सम्पत्ति खोद सकते हैं । पर राजा जगजोतसिंह ने कहा कि मैं प्रण कर चुका हूँ, बदला पूरा हुए बिना चर्दा के किले मे पाँव नही रक्खूंगा । जब ये दमखम देखे तो वायसराय सशंकित हुआ । पुन विद्रोह न करें इसलिये आदेश दिया कि किसी स्थान पर तीन दिनो से अधिक न ठहरें तथा दस आदमियो से अधिक कभी अपने आस पास न बटोरें । वाद मे अंग्रेज़ो ने एक मौज़ा गमपुर मलावा तहसील जिला बहराइच मे वतौर माफी प्रदान किया ।"

हम लोग ढौंढे गाँव से चल दिये । कुँअर हरनाम सिंह साथ आये । दुविधापुर हमारे मार्ग से बहुत दूर नही था, इसलिये वहा जाना और वृद्ध भूतपूर्व नरेश से मिलना उचित समझा ।

दुबिधापुर

धरती तो न वदली किन्तु दो राज्यो की सीमा आरपार कर हम पुन नेपाल से भारत मे आ गये । दुविधापुर रुपयिडिहा के पास है। खेतो के किनारे-किनारे लम्बी गैल पार कर हम राजा साहब के पक्के चेहरे वाले कच्चे मकान पर पहुँच गये । यहा का वैभव ढौंढे गाँव से भी दवता हुआ था ।

अन्दर चबूतरे के पास कच्ची मिट्टी से मकान की मरम्मत चल रही थी । राजा साहब और कुँअर महाराजसिंह वरामदे मे वैठे हुए थे । राजासाहव की आयु लगभग सतत्तर-अठहत्तर वर्ष की होगी। चेहरे और हाथो पर झुर्रियो और लकीरो की नुमाइश हो रही थी । सफेद मूँछें जो कभी जरूर तिलोई जाती होंगी, अब भी दोनो सिरो पर चढी हुई थी । जैसा कि पहले ही ज्ञात हो चुका है कि राजा साहब सत्तावनी शूर राजा जगजोतसिंह के पुत्र हैं ।

मैने पूछा "सुना है कि आपके पिता जी वलभद्रसिंह चहलारी के साथ नवाबगज बाराबकी मे लडे थे ।"

राजा साहब थकी हुई आवाज़ मे धीरे-धीरे बोले "नही, लडाई हमारे यहा हुई।"

कुँअर महाराज सिंह ने कहा "बाराबकी जिले मे कही 'कानफ्रेंस' तो जरूर हुई थी, उसमे हमारे बाबा गये थे पर लडने नही गये। उस 'कानफ्रेन्स' मे चहलारी, चर्दा, गोडा, बलरामपुर, इकौना एकत्र भये रहे। पास भया कि अग्रेजो से लडना तो चाहिये ही, परन्तु हममे से किसी एक को अग्रेज की ओर भी रहना चाहिये जिससे कि अगर हमारी हार हो जाय या समर मे खेत रहें तो हमारे बच्चो की परवरिश करने वाला भी कोई रहे। बलरामपुर रियासत उस समय छोटी थी उनसे अग्रेजो का पच्छ लेने के लिए कहा गया। हमारे पास एक कागज़ था जिसमे बाराबकी ज़िले की कानफ्रेन्स का हवाला था। वह दरमल महराज दिग्विजै सिंह के हाथ की चिट्ठी रही कि हम अँग्रेज़ो की तरफ रहेंगे और जो आप लोग हारे तो आप के बाल बच्चो की परवरिश करेंगे। यह कागद हमने उनके ट्यूटर मिस्टर (अँग्रेज़ का नाम मुझ मे छूट गया) को दिया था। उस कागद की एवज मे हमारी गुजारे की रकम भी बढाई गई थी। यह कानफ्रेन्स कानपुर मस्कर (मँसेकर अग्रेजो का कत्लेआम) के बाद भई रही। हमारे बाबा को फौज की कमाण्डिग का अच्छा ज्ञान था, टुकडिया अलग-अलग लडते देखी तो कहा कि यो न जीत पायेंगे। फिर नानाराव पेशवा जी के कहने से चर्दा और गोडा नरेशो की कमाण्ड मे दो बार रेज़ीडेन्सी पर हमला भया। फिर लोगो ने नानाराव जी के कान भरना शुरू किया कि ये लोग आपको हटाकर बाद मे खुद राज करेंगे। इसमे पेशवा जी के मन मे लकीर पड गई। तब चहलारी, चर्दा, बौंडी, गोडा— ये लोग लौट आये। जब ये आ रहे थे, घाघरा पार अग्रेजो को पता चल गया। लडाई हुई। वहा से चारो ओर ये लोग हार कर भागे, फिर आपस मे ये लोग न मिल सके। राजा जगजोत सिंह चर्दा चले आये। इनके लखनऊ आने जाने की खबर अग्रेजो को कानो कान न लगी। जब लखनऊ मे बागी हारे तो नानाराव जी, बाला जी राव और तांतिया टोपे जी हमारे यहा आये। अग्रेजो को पता चल गया। अग्रेज़ो ने लिखा कि बागियो को हमारे हाथ सौंप दो। हमारे बाबा ने कहा कि हम विश्वास-घात नही करेंगे। फिर अग्रेजो ने लिखा कि अच्छा न सही, मगर इन्हें अपने सरण मत दो। बाबा बोले कि सरणागत को सरण देना छत्री का धरम है। इस पर अग्रेजो ने चालीस हज़ार गोरो की सेना भेज दी। जब गोरे नानपारा से आगे बढ आये तब बागी लोग चर्दा से भागे। गल्लिन्दिया पर लडाई हुई।—"

'कि चर्दा मे हुई ?" महेश्वरबख्श सिंह ने टोका।

महाराज सिंह "नही, मस्जिदिया मे हुई।"

राजा साहब "चर्दा मे कुछ नही भया। होता क्या, चर्दा का किला तो ये लोग छोड गये थे। अग्रेजो ने इसे उसी वखत तोडा या मस्जिदिया से लौट कर यह अब हमे याद नही।"

महाराज सिंह "गोलीबार मस्जिदिया के किले मे हुई। अग्रेज घेरा डाल कर पडे रहे। जब ये राशन से, और गोले बारूद से मोहताज होने लगे तब अग्रेजो ने जोरदार चढाई की। महागाव मे बन्दूको की करारी चाँदमारी हुई। किला खाली करने के वाद तो यह सब लोग पहाडो मे चले गये थे। वहा नैपाल के महाराणा ने हमारे बाबा के साथ वडी दोस्ती दिखाई, माफी का इलाका दिया। अग्रेज सरकार से भी वडी लिखा पढी की, बडा जोर दबाव डाला तब इन्हें हिन्दुस्तान मे एक मौजा मिला।"

राजा साहव, वेगम हज़रत महल के इधर आने के सम्वन्व मे क्या आप कुछ वतला सकेंगे ?" मैंने पूछा।

राजा साहब वोले "बेगम चर्दा भी आई थी, पर ठहरी हमारे यहा नही थी। हमारे यहा नानाराव पेशवा ठहरे थे। वेगम हमारे पिता महराज जोतसिंह को वहुत से कीमती हीरे देने लगी। महराज ने कहा, हम सभी मुसीवत मे हैं मदद करना हमारा धर्म है इसे ले लीजिये।"

शरवत पानी हुआ, दोहरा और पान आये मैंने राजा साहव से जनवार राजपूतो के सम्वन्व मे पूछा। राजा साहव ने वतलाया "जनमेजय से हमारा निकास है। दोहे का प्रमाण है—

जनमेजय से तिन जनवारा।
अत्रि गोत्र जानै ससारा ॥

जनवार राजपूत पावागढ, गुजरात, वरियार शाह से वहा आये। मुगल वादशाह के रिसालदार होकर भी आये। भरो की कौम वादशाह के कब्जे मे नही आ रही थीं, उन्हें हराया। तव जागीरें मिली। मूल इकौना राज था। फिर उसमे मे वलरामपुर, गँगवल और पयागपुर स्टेटें निकली, पयागपुर से चर्दा की ब्राच निकली। इस तरह जनवारो की रियासतें वडी।"

चलते समय राजा साहव ने अपना कापता हुआ हाथ मेरे कन्धे पर रख कर कहा "एक हजार रुपया साल की आमदनी रह गई है। हमारे यहा ने पहले

देश की लडाई शुरू हुई और हमारा ही यह हाल है। अब मेरे बहुत दिन नही बचे हैं, पर जान बचने का कुछ उपाय तो होना चाहिये। जो कुछ सीर मे मिलता है वह खर्च मे चला जाता है। टैक्स बहुत लगता है। नैपालगज वाली जमीन से आमदनी खास कुछ नही है, वहा जगल ही जगल है। बस यही दो सौ बीघा जो कुछ है सो है। कुछ हम लोगो का ख्याल भी होना चाहिए।"

मैने पूछा "आपके पिता को या आपको कहा-कहा से ग्राण्ट मिलती थी ?" कुँअर महराज सिंह ने बतलाया "नानपारा से तीन सौ रुपया साल, पयागपुर से सौ रुपया की माफी और पाँच सौ रुपया साल, बलरामपुर से बारह सौ रुपया साल और पाच रियायती गाँव, भिनगा से एक गाँव माफी, अँग्रेजो से रामपुर मन्नावा की जमीदारी और नेपाल राज मे छ सौ बीघा माफी, एक मौजा जमीदारी का मिला जो अब तक चला आता है।"

सामन्तो और महाजनो मे यह बडी अच्छी प्रथा देखी कि उनकी बिरादरी का कोई व्यक्ति यदि बिगड जाता है तो उसे उठाने के लिये चारो ओर से सहारा दिया जाता है।

यहा बाराबकी जिले की राजनीतिक कान्फ्रेन्स के सम्बन्ध मे एक नई बात यह मालूम हुई कि बलरानपुर वाले आपसी समझौते के कारण ही अग्रेजो से मिले। मेरे खयाल मे यह बात सम्भव है। लडवैये अपने बाल बच्चो के लिये आपस मे मे किसी को इस प्रकार अलग कर देते होंगे।

उसी रात लखनऊ के लिए ट्रेन पर बैठ गया।

सीतापुर

२६ जून, बुधवार। सुबह की ट्रेन पकडी, दस बजे सीतापुर पहुँचा। पानी बरस रहा था, डर लगा कि कहीं दिन बेकार न बीते, पर इन्द्रदेव कृपालु सिद्ध हुए। चाय-पानी होने तक जिला सूचना अधिकारी श्रीबसन्तकुमार वर्मा ने सीतापुर की गदर से सबधित दो-एक बातें सुना डाली। एक स्थानीय व्यक्ति का नाम लेकर बतलाया कि मिया साहब का परिवार बहुत बदनाम है। कजियारे के लोग कहते हैं कि गदर मे उनके पुरखे अग्रेजो का साथ देने की बढा-बढी मे स्वदेशबन्धुओ के इतने बडे शत्रु हो गये कि उनके प्रबन्ध मे विद्रोहियो को लिटा कर उन पर रोलर चलाया जाता था।

हे राम ! स्वार्थ मे मनुष्य कितना अधा और क्रूर हो जाया करता है ।

दूसरा महल वालो का परिवार है । कहा जाता है कि गोस्वामी तुलसीदासजी अपनी सीतापुर यात्रा के समय महल मे ठहरे थे । मितौली के राजा लोनेसिंह गदर के वाद यही नजरबन्द किये गये थे । राजा लोनेसिंह पर अग्रेजो के साथ दगावाजी करने का आरोप था, उन्होंने आपद्काल मे शरण लेने के हेतु आये हुए अग्रेजो और उनकी स्त्रियों-बच्चो को कष्ट दिया तथा बन्दी बना कर लखनऊ भेजा ।

जिले की दृष्टि से लोनेसिंह यद्यपि सीतापुर के न होकर खीरी जिले के थे, तथापि यही वे नजर बन्द हुये, मुकद्दमा चला और अण्डमान के लिये भेजे गये । जो अगरेज इनके द्वारा बन्दी बनाकर भेजे गये थे, उनमे सीतापुर के कमिश्नर की लडकी भी थी ।

यहा अग्रेजो द्वारा लिखे गये गजेटियर के वर्णन को भी ध्यान मे रख लेना उचित होगा ।

सीतापुर छावनी मे विद्रोह के प्रथम लक्षण २७ मई, १८५७ ई० को प्रकट हुए थे । उस दिन दो नबर अवध पुलिस की खाली लाइन्स मे बदूको का शोर हुआ । यद्यपि इस घटना को विशेष महत्व नहीं दिया गया, तथापि कमिश्नर क्रिश्चियन साहब ने सावधानी वरतते हुए अग्रेज स्त्रियो और वच्चो को अपने बगले से बुला लिया, और चार तोपें भी वही लगा ली । २ जून को अवध इर्रेगुलर के जवानो ने सिर उठाया । वाजार से आटे के बोरे आये थे । सिपाहियो ने कहा कि इसमे उन्हे धर्म-भ्रष्ट करने के हेतु अपवित्र वस्तु मिलाई गई है । सिपाहियो का रुद्र रूप देखकर वह आटा उनके सामने ही नदी मे प्रवाहित कर दिया गया । फिर भी सिपाहियो का क्रोध शान्त न हुआ, उसी दिन दोपहर को कुछ सिपाहियो ने सिविललाइन्स के वाग़ीचो मे फलो की लूट मचाई । वडी मुश्किल से उन्हे कावू मे लाया गया । मुहम्मदी मल्लावा आदि से सैनिक-सहायता भी मँगाई गई । ३ जून को फौजी जवानो की एक कपनी ने खजाना लूटा तथा अपने गोरे अफसरो को गोली का निशाना वनाया । क्रिश्चियन साहव, उनकी पत्नी, सवसे छोटा वच्चा और उसकी धाय भागते समय नदी किनारे मार डाले गये । इनके अतिरिक्त और भी कई गोरे मारे गये । वहुत से अग्रेज स्त्री-पुरुप वच कर भाग निकले । एक दल को रामकोट के जनवार राजा के यहा शरण मिली, वहा से २८ जून को वे लखनऊ पहुँच गये । कुछ स्त्री पुरुपो को एक गाँव मे शरण मिली, जहाँ उन्हे दस महीनो तक छिपा रहना पडा, एक पार्टी जगलो मे लुकती-छिपती लखनऊ पहुँची । इसी प्रकार गोरे

स्त्री-पुरुषो के एक दल को मितौली के राजा लोनेसिह ने अनिच्छा पूर्वक-शरण दी, शाहजहापुर से भागे हुये स्त्री पुरुषो को भी वही शरण मिली, परन्तु वाद मे यह लोग हथकडी-वेडी पहना कर लखनऊ भेज दिये गये, जहा उन्हे मार डाला गया।

सीतापुर जिले से अग्रेजो का राज्य उठ गया। रामकोट के राजा तथा विसवा के कायस्थ और सेठ ही अग्रेज भक्त वने रहे, वाकी सव विद्रोही हो गये। तवौर के वदेहसन विद्रोहियो के वडे नेता थे; महोली मे आग्ल-विरोधियो का शक्तिशाली दल था। ओयल तथा मितौली के राजाओ के सवध मे अग्रेज यह तय नही कर पाते थे कि वे लोग उनके साथ है अथवा उनके विरोधियो के। महमूदावाद के राजा नवावअली खा ने पहले तो अग्रेजो का साथ दिया, परन्तु वाद मे वे भी उनके प्रवल शत्रु हो गये। चहलारी के रैंकवारो ने भी अपने भिठौली और वौंडी के सजातीय नरेशो का साथ दिया। पूरा जिला 'वागी' सिपाहियो की हलचल से भरा था, तथा शासन की वागडोर खैरावाद के नाजिम वख्शी हरप्रसाद सम्हाले हुये थे।

मार्च सन् १८५८ मे लखनऊ के पतन के वाद ही अग्रेज इस जिले मे प्रवेश कर सके।

११ अप्रैल को सर होपग्राण्ट ने इस जिले के वाडी नामक स्थान मे प्रवेश किया, जहा मौलवी अहमदुल्ला शाह सेना सहित डटे हुये थे। सर होपग्राण्ट ने कुछ सफलता तो अवश्य प्राप्त की, परन्तु उसके पीठ घुमाते ही अग्रेजो की विजय निष्फल हो गई क्योकि मौलवी साहव और महमूदावाद के राजा नवाव अलीखा अपने तीन हजार सिपाहियो के साथ, गजेटियर के शब्दो मे 'विना दण्ड पाये ही निकल गये।' मौलवी साहव शाहजहापुर की तरफ वढे और वहा से फिर अवध रणाङ्गन मे प्रवेश किया। उस समय अग्रेज सेनापति सर कॉलिन कैम्पवॅल मुहम्मदी में सेना सहित पडाव डालना चाहता था। मौलवी साहव के साथ उनकी स्वातन्त्र्य-सेना ने जिले मे आजादी का झण्डा कही गिरने नही दिया। मौलवी साहव की शर्मनाक हत्या के वाद भी उनकी प्रेरणा से जागा हुआ सीतापुर १८५८ ईस्वी की गर्मियो तक स्वाधीन रहा।

इस ओर अवध मे क्रान्ति की सेनायें वेगम हजरतमहल के अनुशासन मे चल रही थी। उनका हेड क्वार्टर उस समय वहराइच जिले वौंडी-गढ मे था, रुइया के राजा नरपत सिंह, फीरोजशाह, राजा हरदत्त सिंह आदि उस समय वही थे। अवध के मरदाना राणा वेणीमाधव वख्श, गोडा के आजानुवाहु राजा देवीवख्श सिंह, क्रान्ति-

की महाज्योति नाना साहब पेशवा और बाला साहब—सभी वहा पहुँचते रहते थे। दूर युद्ध क्षेत्रो मे रहते हुए भी सत्तावनी क्राति के महारथी डोंडी से बँधे हुए थे।

अक्टूबर '५८ मे हरीचद ६००० की सेना लेकर सीतापुर से सण्डीला की ओर चले। जर्नल बार्कर द्वारा परास्त हुये। सर टॉमस सीटन शाहजहाँपुर मे थे जहा से वे मुहम्मदी तथा सीतापुर जिले की उत्तरी-पश्चिमी सीमा मे प्रवेश करने का उचित अवसर ताकता हुआ, धमकिया दे रहा था। प्रधान सेनापति लार्ड क्लाइड का यह आदेश था कि अवसर साव कर यह सेना मुहम्मदी और औरगा-बाद होती हुई सीतापुर की ओर वढे तथा इस प्रकार वढ़ते हुए क्रान्ति-सेनाओ को घाघरा पार जाने पर बाध्य करे, जहा लार्ड क्लाइड का जाल पहले ही फैल चुका था। अक्टूबर मे कॉलिन ट्रूप ने मितौली आदि को परास्त किया और फिर तो क्रमश हथियारो, गोला बारूद सगठन आदि के अभाव मे ८ नववर '५८ को सीता-पुर का पतन मेहदी के निकट हो गया।

सीतापुर के डिप्टी कमिश्नर श्री सतोपकुमार चौधरी ने मुझे बतलाया कि जहा आज 'प्लाईउड फॅक्टरी' है वह भूमि सौ वर्ष पहले कठिन युद्ध का मोर्चा बनी थी।

चौधरी महोदय ने मेरे लिये एक सुविधा और कर दी। खीरी जिले का मितौली ग्राम सीतापुर जिले से होकर अधिक सुगम और निकट है, उन्होने सूचना अधिकारी को जिले से वाहर मितौली तक जाने का आदेश दिया। मैं उनका कृतज्ञ हूँ।

सीतापुर मे डॉ० नवलविहारी जी मिश्र के दर्शन करने की वडी साव थी। वे स्वनामधन्य समालोचक और विद्वान पण्डित कृष्णविहारीजी मिश्र के अनुज तथा लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी-प्राध्यापक वन्धुवर डॉ० व्रजकिशोरजी मिश्र के चाचा है। वे सीतापुर की हिन्दी सभा के प्राण तथा अपने क्षेत्र की पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री के जानकार एव सग्रहकर्ता हैं। डाक्टर साहब की वडी प्रशसा सुन रक्खी थी। मैंने वर्मा जी से उनके पास ले चलने को कहा।

डॉक्टर साहब की सेवा मे पहुँचते ही हमारे बीच साक्षात् का अपरिचय समाप्त हो गया। वे आत्मीय गुरुजन की तरह मिले। डॉक्टर साहब नगर के प्रसिद्ध चिकि-त्सको मे से हैं, रोगियो से कम अवकाश मिलता है, पर ज्ञानार्जन की लगन ऐसी प्रबल है कि उसके लिये हर समय अवकाश निकाल लेते हैं। उनकी मेज़ की दराजों मे अलग अलग फाइलें हैं। किसी रोगी से नया मुहावरा अथवा किसी शब्द का

नवीन प्रयोग सुनते ही फाइल मे दर्ज कर लेते हैं। इसी प्रकार अवधी के शब्दो का कोश सचित किया है, पुरातात्विक जानकारी उनके पास जिले भर मे इसी प्रकार आती है, प्राचीन ग्रथो की पाडुलिपिया, प्राचीन काव्य ग्रथ उन्होने इसी लगन से इकट्ठा किये हैं, अवधी की लगभग चार सौ लोक कथायें लोगो से सुन कर लिखी हैं। डॉक्टर मरीजो का इलाज करते हैं और मरीज डॉक्टर का। देख कर बडी श्रद्धा होती है, प्रेरणा मिलती है।

डॉक्टर साहब से मिलने आये हुये पडरिया के श्री गुरुप्रसाद दीक्षित ने मेरी झोली मे एक सत्तावनी सूचना डाली —

"बनापुर पडरिया के सूबेदार मेजर जोधासिंह को वाजिदअली शाह (?) का फरमान मिला बुटवल जाने के लिये। अग्रेजो की सेना का सामना था। उन्होने शत्रु से समर किया और गोरो के छक्के छुडाये। लडते-लडते उनके सिपाही थक गये थे पर इतने मे एक बाहरी अग्रेजी सेना और मदद को आ गई। जोधासिह को गोली लगी।

"जोधासिह के बडे भाई से बेगम ने कहा कि हमे नैपाल ले चलो। बेगम के पैरो से खून बहता था। बिरजीसकदर गोदी मे थे। बेगम पडरिया आईं, वहाँ पता लगा कि दीक्षित के घर अग्रेज आये थे तो वहा से भागी। नैपाल चली। रास्ता मे चहलारी पडी। राजा बलभद्रसिंह का नाम बेगम ने सुन रक्खा था, उनसे मदद माँगी। बलभद्रसिह ने मदद देना स्वीकार किया।

"चहलारी के राजा का खास नाऊ रामचरन था। उसका लडका पहले तो भागा पर फिर चुनौती पाकर बहादुर की तरह लडा और जूझ गया।

"बेगम ने हवलदार गगाबख्श को भाला इनाम और साथ मे पत्र भी लिखकर दिया कि इसने मुझे हिफाज़त से हद्द पार करा दी। बाद मे दीक्षित भी बनापुर लौटकर आये और आते ही अग्रेजो ने उन्हे गिरफ्तार कर लिया।"

डॉक्टर साहब ने मेरे साथ मितौली तक चलने का वचन दिया, इससे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई।

मितौली

मितौली के ब्लॉक डेवलपमेण्ट अफसर ने राजा लोने सिंह की बातो के जानकार व्यक्तियो को पचायत भवन मे बुलवा लिया।

मुहम्मद सैकलन साहब ने सुनाया —

"इस इलाके मे शाही-सरकार की तरफ से दो ओहदेदार यहाँ रहा करते थे। एक तो सैयद मीरनजान चकलेदार खीरी जिनके इस ज़िले के तमाम रजवाडो से ताल्लुकात थे—ओयल, कैमारा, महेवा सभी से गोया सबध था। और दूसरे शख्स थे ज़हूरुलहमन जो बहैसियत जासूस के यहाँ शाही वकील बनकर रहते थे। जितने ज़मीदार थे, सबके यहा जाते थे।

"औरगाबाद मे अग्रेज़ो से लडाई हुई। अग्रेज़ मारे गये। उनकी कब्र अब तक मौजूद है। इस इलाके मे वही गदर हुआ। वहाँ से पाँच-छ अग्रेज़ और एक औरत भाग कर यहाँ आई। गालिबन कप्तान ओर की बीवी थी। राजा लोने सिंह ने अपने यहा बुला लिया। खातिर की।

"गदर शुरू हो ही चुका था और ये माना जाना था कि अग्रेज़ी राज उठ गया। उसी ज़माने मे मुशी ज़हूरुलहमन का दौरा हुआ। उन्होने राजा लोने सिंह से कहा कि आप ये क्या गजब कर रहे हैं जो अग्रेज़ो को छिपाये है, इन्हे लखनऊ दरबार भेज दीजिये। चुनाचे राजा ने भेज दिया।"

"क्या हथकडी बेडी डालकर भेजा था?" मैंने पूछा।

"जी नही, हाथियो पर बिठला कर भेजा था, सुना है। उसके बाद यह बतलाया जाता है कि जब ये अटरिया के उधर निकल गये, तब यहा खबर आई कि बुरा हुआ, अग्रेज़ी राज तो फिर कायम हो गया। मगर तब तक अग्रेज़ कैदी लखनऊ भेजे और मारे जा चुके थे—सिर्फ औरत नही मारी गई।

"इस खुशनूदी मे लखनऊ से बाईस पार्चे का खिलअत आया और आधा इलाका औरगाबाद देने का वादा किया गया।

"उनके बाद जब तमल्लुद हो गया, तो वो औरत जो बच गई थी, उसने लोने सिंह मुतअल्लिक मुखबिरी की।"

मैंने पूछा "खजन नगर मे लडाई कब हुई?"

सैकलन साहब बोले "खजन नगर मे लडाई नही हुई। खजन नगर मे जगल था। जिसमे शिकार तो होता था। मगर लडाई का मौका नही आ सकता था। लडाई मिर्तानी के ही किले पर हुई थी। राजा लोने सिंह को उम्मीद थी, कि कैमारा, महेवा, ओयल, रामपुर, मुडवारा, जलालपुर, कुटवारा वगैरह रजवाडे जो उनके रिश्तेदार थे, उनकी मदद करेंगे, पर डर की वजह से किसी ने साथ न दिया। खुद राजा के भाई माधोसिंह ने भी मदद नही की, कह दिया कि हमारा

इन से कोई सम्बन्ध नही । बात असिल मे ये रही कि बागियोपर इतनी सख्तियाँ की जाती थी कि लोग डरते थे ।

"इनके किले मे सिर्फ दो या तीन गोले ही छोडे गये थे, कि राजा की फौज ने हाथ पैर छोड दिये । बस उसके बाद ही राजा गिरफ्तार हो गये । गिरफ्तार करके रगून ले गये । गिरफ्तारी के बाद से राजा ने खाना-पीना, दातून करना वगैरह सब छोड दिया और जब कलकत्ते मे उतारे गये, तो लाश ही निकली ।

"उन्होने हमारे दादा को पहले तो गढी मे ही मकान दिया था, फिर जेठ वदी ७ सन् १२४९ फस्ली को गाव (पेन्सिल से लिखा गाँव का नाम घिस गया) दिया था ।

"आदमी राजा लोने सिह उम्दा थे मगर कजूस थे । उनके मुतअल्लिक जो तहीरीरें मिली हैं उनसे ज़ाहिर होता है कि आदमी भले थे ।

"गढी के ऊपर दो कब्रें हैं जो कभी महल के अन्दर ही रही होगी । कब्रें मुसलमानो की हैं । बाज यह कहते हैं कि कोई दो सूफी फकीर थे, जिन पर राजा लोने सिह के पुरखो को वडी अकीदत (श्रद्धा) थी । बाज लोग यह कहते है कि राजा के पुरखो को राज कायम करने मे दो सैयद भाइयो ने मदद दी थी इसलिये उनकी कब्रें गढी मे बनी । राजा लोने सिह के कोई औलाद नही थी ।"

राजा का इतिहास बतलाने वाले दूसरे व्यक्ति कचूरा निवासी सज्जन थे । उन्होने अपना नाम, परिचय तथा राजा का हाल इस प्रकार लिखवाया "मेरा नाम लिखिये, अवधेश्वर बख्श सिह अवघेश' हरिब्रह्म गौड क्षत्रिय, भारद्वाज गोत्र, ऋग्वेद कात्यायनी शाखा, पीताम्बरी निशान । हम कचूरा, जिला सीतापुर के निवासी है । हमारा इतिहास यह है कि हमारे बुजरुग लोग गजनी से आये थे । अजमेर मे ठहरे फिर नार कजरी बगाल आये वहा से पीपर गाँव दखलौर जिला सीतापुर आये । अब राजा का इतिहास लिखिये । राजा लोने सिह की बुआ ठाकुर बरवण्ड सिह कचूरा वाले को ब्याही थी । जब राजा लोने सिह की गढी लूटी गई तो कुछ सामान पुरखो की निसानी समझ के कचूरा पहुँचा दिया गया । यहा के खैर की लकडी के बडे भारी-भारी मुग्दर वहा पहुँचाये गये । हमारे यहा राजा लोने सिह के दिये हुए कुछ मोती हैं, जो उन्होंने हमारे पुरखो को दिये थे । राजा साहब यहा नही पकडे गये, सीतापुर मे पकडे गये थे । टाममन साहब ने गिरफ्तार किया था । उनका फोटू कलकत्ते के अजायबघर मे टँगा है । और अभी जब १० मई आई थी तो साहब यहा सुतत्रता सग्राम का जल्सा किया था तौ हमने राजा लोने सिह पर एक कविता सुनाई थी ।"

कविता मैंने सुनी, पर नोट नही की ।

श्री इन्दुपाल शुक्ल ने वतलाया "राजा लोने सिह का राज्य पश्चिम मे मुहम्मदी के जूनियर हाई स्कूल तक समझिये, इधर उत्तर मे भीरा और पालिया के वीच शारदा नदी तक था और दक्षिण मे महोली तक ।

"राजा लोने सिह चार भाई थे—खजन सिह, लोने सिह, भगवत सिह और माधो सिह । भगवत सिह का खान्दान लिलसी मे रहता है। लोने सिह के एक लडकी थी जो ज़िला मैनपुरी मे व्याही गई थी । वाकी भगवत सिह के दो लडके थे, और किसी भाई की सन्तान नही ।

"महेवा के युद्ध मे जो महेवा का सरदार था, उसका चित्र एक शिवाले मे वना है। लोने सिह राजा की लडाई का हाल आपको राजा साहव महेवा से प्राप्त हो सकेगा । एक प्राचीन पुस्तक 'वलभद्र विलास' है, उसमे भी उनका हाल लिखा है। राजा लोने सिह ने गोलागोकरण नाथ मे एक धर्मशाला वनवाई और एक वर्दाश्त• खाना । वर्दाश्तखाने मे गरीवो को भोजन, जाडे मे जडावर इत्यादि वांटी जाती थी । यह इमारतें गौरमेंट के पास है। पूर्व दिशा मे भूलनपुर और वैल (ओयल) के वीच मे जमुवारी नाले पर राजा लोनेसिह ने एक पुल भी वनवाया । वहां के लोगो ने राजा की प्रशसा मे गीत भी वना रक्खे है। राजा साहव का सामान राजा साहव पुवायाँ के पास कुछ है। उनके कुछ कपडे, रानी के कपडे हम १० मई के जलसे के लिये, ठाकुर अहिवरन सिह मेमरावा से लाये थे। अभी वह हमारे पास हैं। आप देखना चाहे तो मँगा दूं ।"

वस्त्र मँगाये गये, देखे। कोट से अनुमान लगता है कि राजा लोने सिह वहुत लम्बे न रहे होंगे, चौडे अवश्य थे ।

किले का टीला भी देखा । दो-चार दीवारें अव तक खडी हैं। एक वडी कोठरी के आकार की जगह पूजा गृह वनलाई गई । खेत मे पाताल फोड इन्दारा है जो कभी किले की सीमा के अन्दर था। कब्रे पुरानी, मध्यकालीन ईंटो की, हैं। उनके पास ही इमली का पुराना पेड है। ईंटें, ककड, मिट्टी के वर्तनो के कत्तल दूर-दूर तक विखरे पडे हैं।

"ई सव ईंटन से पटो है।" श्री इन्दुपाल शुक्ल वोले । 'ईंटन ते पाटा है' के वजाय पटो है सुन कर लगा कि वोली का क्षेत्र वदल गया । अवध मे वोली के तीन प्रमुख रूप है, गँजरिहा, वँगरिहा, वँनवारी । 'पटो हैं' जहा तक मेरा ख्याल है, गजरिहा और वगरिहा दोनो वोलियो मे समान रूप से प्रयुक्त हो सकता है ।

खीरी-लखीमपुर बागर का क्षेत्र है। गाजर और बागर के बीच का क्षेत्र पडेहर कहलाता है। सेमरावा मे ठाकुर शिवराज बख्श सिह से मिला। आप लोने सिह के परिवार के है। ठाकुर साहब ने बतलाया।

"इतिहास लोने सिह का यहै रहै कि गदर मा बगावत हुइ गई रहै।" उन्होने बतलाया कि वाजिदअली शाह की ओर से मोहम्मदी में चकलेदार रहते थे, वहा कुछ अग्रेज भी नौकर थे, जहूरहसन वकील थे। मोहकमसिह बडा गाँव के राजा ने दबा लिया। उसपर शिवराज बख्शसिह जी के बाबा ने दावा किया कि यह इलाका छुटभइयो का है इस लिये हमे मिलना चाहिये। राजा लोनेसिह जी ने उज्रदारी की, जहूरहसन (ज़हूरुलहसन) वकील लोनेसिह की उज्रदारी करने मोहम्मदी गया। तभी गदर का पैगाम मिला। 'कप्तान ओर' तथा उसके अजीज औरत मर्द थे। जहूरहसन सबको मितौली ले आया और मितौली तौर 'पेरा गिरन्ट' मे छिपा कर बँगले बनवा दिये। वहा अग्रेज छिप कर रहे। बाद में जब गदर यहा हुआ तब यह लखनऊ भेजे गये। जहूरुल हसन के पास अग्रेजो की पन्द्रह सौ मोहरें थी। उसी के लोभ मे उसने राजा से कहकर गोरो को लखनऊ भिजवाया। "उइ बेधर्मी कहिसि नाही कि तुम्हारी रियासति जब्त हुइ जइहै।" जहूरहसन की सलाह के अनुसार राजा ने गोरो को काँटेदार बेडी डाल कर दो तोपो और दो सौ आदमियो के साथ लखनऊ भेज दिया।" जब लोहिया पुल पर पहुँचे तउ बागी अँगरेजन का मारिन। याक मेम भागिगै, एकु अँगरेजु लइगा। जब तसल्लुद भा तब मितौली पर धावा किहिनि, मेम सब हालु बताइसि सो धावा भवा, फौज या कठिनै नदी के पार-पार आई, महोली मा पुलु उतरी।"

उस समय मितौली मे सभी सामत नेता एकत्र थे। रुइया वाले नरपत सिंह, गुलाबसिंह, नजीबाबाद के फीरोजशाह, लखनऊ के बिरजीस कदर और उनकी माँ 'नैपालिन बेगम' साथ आई।

शिवराज बख्श जी से मैंने पूछा "ये नैपालिन बेगम कौन थी ?"

"वाजिदअली शाह ढेर बेगमैं किहिनि, उनमा यह नैपालिनिउ रहै। वह कहिस कि सहजादा औ हमका हमरे मइके मा छोडि आव।" उस समय अग्रेजो ने इन पर धावा बोल दिया था। राजा की बाईस तोपें तोड डाली थी, पेडो की आड से बम फेंक रहे थे। राजा लोने सिह ने सब सेकहा कि आप लोग मुक़ाबला करें, हम बिरजीस क़दर और नैपालिन को नैपाल छोड आयें। एक हाथी पर बैठाकर राजा उन्हें कौडियाला नदी के पार उतार आये। लौटने पर ओयल के राजा अनिरुद्धसिह ने

उन्हे मार्ग मे ही वतलाया कि मितौली हार गई, अव वहा न जाना। "उनसे मालूम भा कि फौज सीतापुर मा है। फौज का मालिक वालमीन-साहव रहै, महराज उनतें जाय कै मिले। ऊ काहिस अच्छा ठहरो। ठहराय दिहिसि। फिर मुकदमा भा, काले पानी की सजा भई। मेम बयान दीन्हिसि, रानी बुलाई गई। रानी कहिनि हम न जाव तव सीता लौंडी का पहिराय उढाय कै भेजि दीनगा।" लोने सिंह की पत्नी को डेढ सौ रुपया महीना गुजारा मिला।

राजा लोने सिंह को कलकत्ते पहुँचाने के लिये वहली पर विठला कर इलाहावाद तक ले गये, वुधुआ खानसामा साथ गया था। वहा से अगिनवोट पर कलकत्ते भेजे गये।

उसके वाद रियासत जब्त हो गई। 'कुसैला' की इब्तिदाई मिसिल बन्दोवस्त सरसरी मे इनकी फाइल है। उसका नम्वर शायद ८२।८३ है।

"मेम जो मुखवरी किहिसि"—उसे मितौली-राज के सात सौ गाँव मिले। उसने तीन लाख रुपए मे अपना इलाका राजा अमीर हसन महमूदावाद को वेच दिया और विलायत चली गई।

मेरे यह पूछने पर कि क्या लोने सिंह सीतापुर मे महल मे रक्खे गये थे, शिवराज वख्श जी ने कहा कि राजा महल मे नही रहे, तम्वू लगवा कर रक्खे गये थे, मुकदमा दूसरे दिन हुआ।

राजा पर रचे गये लोककाव्य के सम्वन्ध मे पूछने पर ठाकुर साहव ने कहा कि उन्होंने नही सुना।

"राजा लोने सिंह लडे थोरै। उइ तौ चले गये।"—फिर भला उन पर काव्य क्यो रचे जाते? राजा लोनेसिंह के सम्वन्ध मे, मैंने लखनऊ के दैनिक 'स्वतन्त्र भारत' मे प्रकाशित श्रीराम सेवक पाण्डेय का एक लेख भी पढा था। लोनेसिंह ने अपना राज वढाने के लिये पडोसी सामन्तो से छीना-झपटी, मार-काट वहुत की। महेवा के एक नौ सोलह गाँव छीन लिये, ओयल राजा से जटवापुर, शकरपुर छीना मुन्नू सिंह का राज छीन लिया, कुकेरा मैलानी का इलाका जीत कर दवा लिया। यह देश का दुर्भाग्य रहा कि क्षत्रिय सामन्त आपस मे ही वीरता दिखलाते और सगोत्रियो के सर काट कर रणपूजते रहे। शिवराजवख्श सिंह जी के तथा गजेटियर के विवरणो से इनसे लोनेसिंह का चरित्र देखने को मिल जाता है। अगरेजो के अनुसार राजा ने उन्हे अनिच्छा से शरण दी और उन के साथ रूखा वर्ताव वरता। शिवराजवख्श जी के कथनानुसार मुशी जहूरुलहसन के वहकाने पर उन्होने अग्रेजो को लखनऊ दरवार के हवाले कर दिया।

राजा लोनेसिंह कायर था, वह निश्चय ही न कर सका कि जीत किसकी होगी। इसीलिये उसने अंग्रेजो को शरण तो दी, मगर अपनी घबराहट के कारण उनके साथ अच्छा व्यवहार रखने मे चूक गया। मान लीजिये कि वे अंग्रेज अन्त तक उसके यहा सुरक्षित रहते तव भी वे राजा लोनेसिंह के प्रति विशेष कृतज्ञता अनुभव न करते। जव तक देशी सेनायें चढती पर रहती तब तक वह अंग्रेजो को अपने एहसान से घौंस-घौंस कर तुच्छ वनाता ही रहता और अंग्रेजो के अच्छे दिन आने पर वह फिर उनकी खुशामद करने लगता। ऐसे चरित्र का कोई आदर नही करता। लोनेसिंह अपने अनिश्चय के कारण बीच ही मे फँस गया। मुहम्मद सैकलन साहब के वक्तव्य से भी यही वात स्पष्ट होती है कि पहले तो यह समझा जाता था कि अंग्रेजों का राज उठ गया, इसलिये जहूरुलहसन के वहकावे मे आकर अंग्रेजो को कैद करवा दिया। वाद मे जव अंग्रेज "अटरिया के उवर निकल गये तव यहा खबर आई कि बुरा हुआ, कि अंग्रेजी हकूमत फिर से कायम हो गई।" आस-पास सबसे दुश्मनी किये वैठे थे। और यदि पडित रामसेवक जी पाण्डेय की वात सच है तो पुवायाँ नरेश, राजा के साढ़ू ने कपट कर झूठा विश्वास दिला कर अंग्रेजो के सामने लोनेसिंह द्वारा आत्म समर्पण करा दिया। इससे स्पष्ट है कि अपने साढ़ू से राजा के रिश्ते अन्दर ही अन्दर अच्छे न रहे होगे। यो पुवायाँ के राजा जगन्नाथ सिंह ने सत्तावन मे अपनी अंग्रेज भक्ति और देश द्रोह का अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत किया था। आप ही वो महाप्रभु हैं जिन्होने मौलवी अहमदुल्ला शाह को अपने यहा बुला, धोका देकर मरवा डाला। आपा-वापी और सकीर्ण स्वार्थ वाला अहकार अच्छा नही होता। देश चौपट हो जाते हैं, व्यक्ति मिट्टी मे मिल जाते हैं। लोनेसिंह और उनके साढ़ू भाई जगन्नाथ सिंह दोनो ही व्यक्ति १८५७ की पराजय के प्रतीक चरित्र हैं।

वडा गाँव वाजार बीच ही मे पडता था। मैंने सोचा लोनेसिंह के प्रति अपने मत की मोहरे-इलाही लगाने से पहले रामसेवक जी पाण्डेय से भी भेंट कर लूँ। डॉक्टर साहव ने वतलाया कि वे अच्छे व्यक्ति हैं।

वडा गाँव पहुँचे। अच्छा क़स्वा है। किसी के यहाँ विवाह था, दरवाजे पर झण्डिया लगी थी, चहल-पहल थी और लाउड स्पीकर पर मिस लता मगेशकर आस-पास के वायु मडल को अपने स्वर से आन्दोलित कर रही थी। गाँव हो या शहर, फिल्मी गीतो के वगैर अब जलसे नही हो सकते। वैसे वडा गाँव का महत्त्व प्राचीन है, यहा वट वृक्ष के पास एक अति प्राचीन मदिर के ध्वसावशेष, टूटी

मूर्तियाँ पडी है। गुप्त काल की नक्काशी वाली ईंटें नज़र आती हैं, पकाई हुई मिट्टी की मूर्तियां भी हैं और पत्थर की खण्डित मूर्तियो के नमूने भी उम्दा हैं।

पडित रामसेवक पाण्डेय अच्छे आदमी है। दुबले-पतले, हीरक जयती के आस-पास की आयु वाले, मधुरभाषी और भावुक हैं। डाक्टर साहब का उनसे घनिष्ठ परिचय है। पुरानी पोथियो का पता लगाने में पाण्डेय जी डाक्टर साहब के सहायक जान पडे। पाण्डेय जी ने सक्षेप मे कुछ बातें बतलाईं, कहा, "स्वतत्र भारत मे लेख छप चुका है, कहिये तो आपको प्रति दे दूं।"

मैंने कहा वह लेख मैं पढ चुका हूँ। पाण्डेय जी बोले "राजा लोनेसिंह ने बेगम को बडी सहायता दी। एक समय मे उनकी राजधानी मिनौली विद्रोहियो का केन्द्र बन गई थी। बेगम, बिरजिसकदर, नजीबाबाद के फीरोज शाह, धौरहरा, और रुइया वाले सब एकत्र हो गये थे। इस बडा गाँव मे ही सीतापुर की तीसरी रेजीमेन्ट के केप्टन हियरसे सीतापुर से भाग कर आये थे। यहा उनका हाथी छूट गया जिससे दो दिन उन्हे बडा गाँव मे रुकना पडा था। राजा लोनेसिंह के सेनापति सरदार खन्नासिंह बडा गाँव के ही निवासी थे, वे बेगम की सहायता के लिये सेना लेकर लखनऊ गये थे और वही शहीद हुये।

मेरी समझ मे तो गदर मे लोनेसिंह का नायकत्व फिसल पडे की हरगगा ही था।

पण्डित रामसेवक जी पाण्डेय ने बखतलोध की एक रोचक कथा सुनाई। बखतलोध दरौरा के ठाकुरो का हलवाहा था। गदर मे कुछ अग्रेज बालको को वह बडी तरकीब से सकुशल बरगदिया घाट पहुँचा आया था। उसने छकडे पर कपडा तान, अपने कतिपय आत्मीयो को ढोल थाली आदि बजाने को कहा तथा यह प्रचारित किया कि वह अपने बच्चो का मुडन कराने के लिये नैमिपारण्य जा रहा है। गदर शात होने पर अग्रेजो ने उसे कई मौज़े दिये—कुँअरपुर, लच्छा, मटिया, बख्टापुर आदि।

दरौरा के ठाकुरो ने कहा कि साले, तू हमारे बराबर का ज़मीदार बनेगा?—और जबर्दस्ती आधा इलाका हथिया लिया।

मनवा का कोट

२७ जून, श्री सुन्दर लाल लिखित 'भारत मे अग्रेजी राज' नामक पुस्तक में पढा था कि अम्बरपुर मे अवधवासियो और अग्रेजो की सहायक नेपाली सेना मे जबर्दस्त युद्ध हुआ था। अम्बरपुर के किले मे केवल चौंतीस भारतीय सिपाही थे लेकिन इन चौंतीस वीरो ने विशाल नेपाली सेना के छक्के एक बार तो छुडा ही दिये। ये चौंतीस वीर तो कट ही गये, परन्तु इतनी ही देर मे उन्होने नेपाली सेना के तेईस आदमी घायल किये सात मार डाले। स्वतन्त्रता के इन चौंतीस सिपाहियो का बलिदान चिरस्मरणीय रहेगा।

अम्बरपुर का नाम मेरे लिये वर्षो से चिरपरिचित था। अवधी के श्रेष्ठ कवि तथा यथार्थवादी कहानी लेखको मे अग्रणी स्वर्गीय बलभद्र दीक्षित 'पढीस' अम्बर पुर के ही निवासी थे। सन् १९३६ से लेकर सन् १९३९ तक शायद एक भी दिन ऐसा नही गया जब मेरे यहा भाई रामविलास शर्मा (डाक्टर), पढीस जी और भाई नरोत्तम नागर न आये हो। 'निराला' जी नियमित तो नही थे, फिर भी उनकी शामे अधिकतर हमारे साथ ही कटती थी। पढीस जी स्वभाव और आचरण से भी किसान थे। अति विनम्र, सकोची और कम बोलने वाले, पर निजी गोष्ठी मे बैठकर खूब बोलते, मजेदार बातें कहते, बडी बारीक और मीठी चुटकिया लेना उनकी बात के लहजे मे था। हिन्दी, अग्रेजी और उर्दू फारसी जानने के बावजूद उन्होंने कवितायें अपनी मातृ भाषा अवधी मे ही लिखी। जो बेहूदगी और स्वाभिमान की कमी अब तक है वह पच्चीस-तीस वर्ष पहले तो बहुत ही अधिक थी—यानी शहरी शिक्षा पा जाने वाले ग्रामवासी दिहाती बोलने मे अत्यधिक लज्जा का अनुभव करते थे, काव्य आदि रचना तो दूर की बात थी। पढीस जी के सहज स्वाभिमान ने जमाने की गलत लीक पर चलने से इनकार किया। वे बडे प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। अक्सर सम्पादक किस्म के लोग उनसे कहते, 'आप दिहाती छोड कर हिन्दी मे लिखा कीजिये।' पढीस जी अपनी बडी-बडी मूंछो मे मुस्कुरा कर बडे लोगो की इस सलाह को 'जीहा बहुत अच्छा' मे टाल देते। उनका व्यग धरती की सोधास लेकर फूटता था। कहानिया खडी बोली मे लिखी। एक सग्रह 'लामजहब' गगा-पुस्तक माला से प्रकाशित हुआ। यदि हिन्दी गद्य-साहित्य के अच्छे समालोचक होते (जो दुर्भाग्यवश अब तक नही हैं।) तो पढीस जी का वह अकेला कहानी-सग्रह ही उनकी ख्याति को चिरस्थायी करने के लिये

काफी होता। सन् १९३७ मे मैंने हास्य रस का साप्ताहिक 'चकल्लस' निकाला। पढीस जी का इसी नाम का एक कविता सग्रह प्रकाशित हो चुका था। पत्र का नाम रखने से पूर्व हमारी मित्र मण्डली अन्त मे इसी निर्णय पर पहुँची कि पढ़ीस जी के काव्य सग्रह का नाम ही पत्र का नाम भी हो। पहले अक से ही पढीस जी उसके नियमित लेखक थे। वे आयु मे हम सव से वडे थे, प्राय 'निराला' जी के ममकालीन। उनका लेखन-काल करीव-करीव वही था, जो मेरा और रामविलास जी का था। इस तरह पढीस जी का हम लोग वडा आदर भी करते थे और वडी मित्रता भी थी। वे व्यवहारिक आदर्शवादी थे। अपने आदर्श की रक्षा के लिये ही उन्होने कसमण्डा राज्य की नौकरी छोडी, आल इण्डिया रेडियो छोडा। अपने गाँव के पुरातन पन्थी ब्राह्मणो, सजातीयो, का प्रवल विरोव सहकर भी उन्होने हरिजन वालको को पढाया और स्वय हल चला कर एक झूठी परम्परा की लीक तोडी। खेत मे काम करते हुये हल का फाल पैर मे लग जाने से उन्हें ज़हरवाद हुआ और स्वर्गवास हो गया।

पढीस जी के ज्येष्ठ पुत्र वुद्धिभद्र मे भी पिता के समान ही अद्भुत प्रतिभा थी। नौ वर्ष की छोटी सी आयु मे ही वह इतनी अच्छी सरोद वजा लेता था कि लोग मुग्ध हो जाते थे। स्व० हिमाशुराय ने उन्ही दिनो वाम्बे टॉकीज की स्थापना की थी। उन्होंने उस वालक को अपने सगीत विभाग मे स्थान दिया। वुद्धिभद्र कुशल अभिनेता और लेखक भी था। वच्चो की कई सुन्दर कहानिया उसने लिखी, पुस्तकें भी प्रकाशित हुई। 'मतई काका' के रूप मे वह रेडियो पचायत घर प्रोग्राम पर छा गया था। सन् १९४१-४२ मे, प्राय छ महीने के अन्दर ही अन्दर पिता और पुत्र दोनो ही इस दुनिया मे सिधार गये।

अम्बरपुर का नाम आते ही पढीस जी और उच्चन (वुद्धिभद्र) का ध्यान आना मेरे लिये अनिवार्य था। मुझे मालूम था कि अम्बरपुर के पास ही 'मनवा का कोट' नामक एक प्राचीन स्थान है। मेरी कल्पना थी कि चौंतीस वीरो की लडाई उसी स्थान पर हुई होगी।

सिधौली मे सूचना अधिकारी वर्मा जी ने सुविधा के लिये उस हल्के के एक पचायत राज इन्सपेक्टर को भी साथ ले लिया। हम मनवा के कोट पहुँच गये। दो-ढाई मील के घेरे मे यह टीले अति प्राचीन काल की ईंटें, खण्डित मूर्तिया और मिट्टी के वर्तनो के टुकडे अपने सिर पर लादे खडे हैं। सरायन नामक छोटी सी नदी टीले के पश्चिम से होकर वहती है। इस ध्वस्त स्थान को लेकर दो किंवदन्तिया

प्रमुख रूप से प्रचलित हैं। एक किंवदन्ती के अनुसार यह अर्जुन तनय वीर बभ्रुवाहन का तथा दूसरी के अनुसार रघुवशी राम के पूर्वज मान्धाता का किला है। जो भी हो, ऊपरी सतह पर यह गुप्तकालीन वैभव लिये हुये खडा है। शिव, नन्दी, गणेश, विष्णु आदि की कई सुन्दर मूर्तिया कोट के टीले पर देखने को मिली। कुछ मूर्तिया वहा का एक माली अपने घर उठा ले गया है और उनकी नुमाइश लगा, भक्तो से टके चढवाता है। टीले पर एक जगह से भुने हुये जौ, सुपारियाँ आदि निकली हैं, किसी पुराने यज्ञ का स्मरण कराती हैं। किसी योगी ने अपनी साधना के लिये टीले मे छोटी सी गुफा खोदी थी। टीले के लम्बे फैलाव मे कुछ निशानिया ऐसी भी दिखलाई दी, जो मनवा के कोट को ईसा के बहुत पहले की सदियो मे ले जाती हैं। नीचे, उत्तर दिशा के नाले के पास खडे होकर टीले को देखने पर पुराने किले का आकार स्पष्ट नजर आता है। वहा पुरानी ईंटो की कुछ दीवारें अब तक हैं।

मैंने फिर गदर की स्मृतियो की तलाश आरम्भ की। एक वृद्ध श्री भगवान दीन मिले। उन्होंने मुझ से कुछ अवधी कुछ खडी बोली मे कहा "हमका सन् १८८७ तक की यादि है, तब हम दस साल के रहे। औ गदर की बातैं हम ये सुनी हैं कि ग़दर के बाद हमारे मकान का कुआ बन्द हुआ था। हमारे चाचा और पिता बतलावत रहे कि उडमा—उसमे गदर वाले अपने औजार छोड-छोड़ कर भाग गये रहे।"

मैंने पूछा "यहा नैपालियो से लडाई हुई थी ?"

"अब इत्ता तो साहब हम पढे लिखे नही, जो कुछ सुना रहा सो बताय दिया।"

इतने मे श्री बराती पासी आ पहुँचे। उनकी आयु भी पिचहत्तर-छियत्तर के लगभग थी। श्री भगवान दीन ने उनसे कहा "साहेब कहति हैं अकि हिया नैंपालिन ते लडाई भै रहै ? हमका तौ मालुम नाही तुम सुने हो तौ बताओ।"

श्री बरातीजी बोले, "भाई नैपालिन ते तौ हम नाही सुना, मौलुवी ते औ अंगरेजन ते भई रहै थ्रू जरूर सुना है। हिया ते डेढ दुइ मील पर तेली का तालु है। नाँउ तौ वहिका फतेअली क ताल रहै बाकी बोलत चालत उहु तेली क ताल होइगा। हुवँ ते अँगरेजन की फते भई। मौलुवी भागिगे। हिया सब पँवार बर्वांर रहे तौ कोई मदत नाही दिहिस। तबहे मौलुवी भागिगे।"

इन दो वृद्धो के अतिरिक्त वहा पर और कोई पुराना आदमी न था। चौंतीस वीरो की लडाई का कोट यह नही है। पर अम्बरपुर मे तो कोई कोट नही, यह मुझे अच्छी तरह मालूम था। समस्या पडी कि वह लडाई हुई कहा ?

खैर, अम्बरपुर पहुँच गये। दिन दोपहर का समय था। गाँव मे घुसते ही एक आँगननुमा मैदान मे पेड के पास कई लोग मिले। कुआ भी पास ही बना हुआ था। हमारे पहुँचते ही चारपाइया विछ गई। गाँव जुट आया। मैंने पढीस जी के दूसरे पुत्र चिरजीव चुन्नी के सम्बन्ध मे पूछा। पता लगा कि वह कुर्क अमीन हो गया है, खैर काम की बातें शुरू की। पण्डित रामसेवक शुक्ल, जिनकी आयु लगभग चौहत्तर-पिचहत्तर के है, सुनाने लगे "पुरखा लोग कहति रहैं कि तेली के तलाव पर अँगरेजन ते लडाई भै। मौलवी आये रहै औ हियैं जूझिगे। कुछ् वाँहे मा वाँधे रहै तौ उनका गोली न लागै, जब उनकी बाँह ते तबीज छुटाय दीनगा तब उई मारेगे।

"औ भगदडि भै रहै। लोग गाँवे के भागे रहैं। ई वरुआ नारे के पास, मरायन गोमती के सगम पर जाय कै जगलन मा छिपे। हमरे गाँव मा एक घनस्यामदास रहैं। उयि वडे दरिद्र रहैं। जलमु भरि वडा दुखु पाइनि। तौ जब भगदडि परी अउरु सब लोग अपन-अपन सोना-चाँदी बटोरय लागे —औ का लै जाई का न लै जाई करै लागे, तब घनस्यामदास बडे मगन भे। अपन एकु टुटहा तवा अउरु एकाध वासन अउरु जो रहा होय, उठाय कै अपनैं ते कहिनि कि 'दरिद्र दास तुम आजु काम आये।" 'दरिद्रदास' का दर्शन मजा दे गया।

दूसरे वृद्ध पण्डित राममुख शुक्ल, जो रामसेवक जी के वडे भाई हैं, सुनाने लगे "पहिले जब मोलवी आये तौ सब लोग कहिनि साथ देव, बाद मा नाही दिहिनि। मोलवी मारा गा। मोलवी कहिनि कि हमका ध्वाखा (धोखा) दिहे हौ, तुम्हार वसु नासि होयि जाई। औ जब लडाई भै तौ हिया भगदडि परी। गाँव के सब जन भागि गे। बस केसरीदास रहे। उयि जाति के नाऊ रहैं पर बडे पहुँचे भये लोग रहैं। तौ अउर सब भागिगे, उयि कहिनि कि हम न जाब। तौ याक पासिन रही, गगा पासी की दुलहिन, हमरे गावैं की रहै, उयि के लरिका भवा रहै। अउरु बिजन जायगा—पासैं अँगरेजी फौजैं आय गई रहैं। वहिके घर वाले सब भागिगे रहैं। तौ बिचरउनी पासिन बहुतु बदरानि। दौरि के केसरीदास के पास आई, कहिसि कि सब चलेगे अब मैं कइसे बचौं। केसरीदास कहिनि कि जब तक मोर देही मा प्रान है तुइ चिन्ता न करु। पर फिर बिजन हिया न आवा। मोलवी मारिगे।"

नेपालियों की लडाई का यहा भी पता न चला। हा, यहा आकर यह पता अवश्य लगा कि एक अम्बरपुर और है, महमूदाबाद के पास है। यह स्थान मौलवी अहमद उल्ला शाह के अद्भुत आकोशल का परिचायक अवश्य रहा है। मार्च '५८

में लखनऊ की फ़तह के बाद मौलवी अहमदउल्ला शाह बाडी में तीन हज़ार सैनिको के साथ जमा हुए। सर होप ग्राण्ट को छकाते हुए वे आगे बढे। उन्होंने एक ऊँचे ध्वस्त टीले (इसी मनवा के कोट) पर तोपें चढा, अपने आपको सुरक्षित कर, अग्रेज सेनाओ को अपने गोलो के खतरे मे डाल दिया था। मौलवी साहब अदम्य साहसी और वीरपुरुष थे। पुवाया नरेश ने उनका सिर काट कर पचास हज़ार रुपये का इनाम अग्रेजो से अवश्य पा लिया, पर अनन्त सदियो के लिये अपने नाम को कलकित कर गये। जगन्नाथसिंह जैसे गद्दार के कारण ही बेचारा पुवाया ग्राम इतिहास मे चिर काल तक बदनाम रहेगा।

अम्बरपुर मे मुझे मालूम हुआ कि अटरिया के श्री प्रयागदत्त शुक्ल सौ वर्ष से ऊँचे हैं और उन्हे गदर का बहुत हाल मालूम है। अटरिया गाँव कुछ दूर नही था। पहुँच गये। शिवाले के पास ही पण्डित प्रयागदत्त बुढापे की ग़फलत मे अपने बरामदे मे पडे हुए थे। उनके पुत्र ने उनके कान के पास जाकर ज़ोर से हमारे आने का आशय समझाया। प्रयागदत्त जी बैठ गये, उनकी स्मृति, बोली, कान और आँखें सभी अग शिथिल हो गये है। ओबरी बाराबकी के साहबदीन इनसे अधिक कठकठे हैं, टिकुरी बहराइच के ठाकुर ननकूसिंह कान और आँखो से अवश्य लाचार हो चुके हैं परन्तु स्मरणशक्ति और वाणी मे ओज है। एक सदी के आसपास वाली आयु के पुरुषो-स्त्रियो से मिलने मे एक विचित्र प्रकार का अनुभव होता है—हम जीवित इतिहास से प्रत्यक्ष मिलते हैं।

पुत्र के आशय समझाते ही प्रयागदत्त जी उठ बैठे। उन्होने कहना आरम्भ किया

"गदर का हाल हम का जानो। बहिके दुयि बरिस बाद भयेन। सन् ४६ (फसली) मा गदर भा। हिया पहिले एकु अगरेजु आवा रहै मुलुक छाखै। हुआ तें हुकुम भा, गगाघाट पर मिलो। छह अगरेज रहे किस्ती पर चले, बक्सर घाट पर राव रामबक्स काटि डारिन। दुबारा फिर नवाब नक्की कहिन अकि मिलो। अगिनबोट बोर दिहिन।

"हिया उमरिया बदली। नवाबगज मा बलभद्रसिंह लरे हैं। उमरिया मा तीन सौ गोरा मारेगे। तेली के ताल मा भई। मनवा के कोट पै मौलवी तोपैं चढाय लैगे। बेगम भागी, राजा मानसिंह नेपाल के आगे नघाय आये।

"मौलवी जौन तेली के ताल पै लडा हैं, वास्सा जौन रहे उनके माफिक रहे मौलवी। तीन उयि लडे रहे। यहँ तीर मौलवी कटिगे तेली के ताल पै।"

यह वार्ता मैंने पैराग्राफो में उसी क्रम से प्रस्तुत की है जिस क्रम से वे एक

साँस मे बोले हैं। उनके रुकने के साथ ही पैरा बन्द कर दिया है। इस बार प्रयाग• दत्तजी कुछ लम्बे रुके। यह देख मैंने उनके पुत्र से कहा · "पूछिये, यहाँ नेपालियो से लडाई हुई।"

पण्डित जी ने अपने पिता के कान मे ज़ोर से कहा। बडे पण्डित जी फिर कहने लगे "नेपाली फौज अगरेजन क मददु दीन रहै। नैपाली तब आये रहे जब लखनऊ मा लडे रहे। लखनउआ लूटै मा परिगे याही ते हारे। नवाब नक्की मिलिगे। बेगम तौ कहिनि, वक्त खराब है सब मच्छी भवन मा कयि दीन जाँय, मुलु चार-पाँच सै डोला मा अंग्रेजी फौजैं आय गईं। मार काट मचिगै। अगरेजी फौजैं इटौंजा महोना हुइकै, मनवा हुइकै, बाडी कयिती गईं। रस्ता भर जहाँ जहाँ चबे हुआ बिजन करत चले।"

पण्डितजी फिर लम्बी चुप्पी साध गये। मैंने उनके पुत्र, जिनकी आयु लग-भग पचपन-साठ के होगी, से कहा "पूछिये, गदर मे प्रजा किसका साथ देती थी, अंग्रेज़ो का या बेगम का?"

उत्तर आया "अगरेजन के साथ सब रहैं बाकी मान बेगम का देत रहैं।"

किंवदंतियो मे सत्य-असत्य कुछ ऐसा गड्ड-मड्ड होता है कि उसका रूप ही अनोखा हो जाता है। जैसे पहले अंग्रेज मुनुक देखने आया उसने वहा याने विला-यत मे जाके कहा, फिर गगाघाट पर फौजें आईं, आदि उन्होने बतलाया। मेरे मन मे यो आता है कि पहला अगरेज कर्नल स्लीमैन, अवध का रेजिडेंट है जो गदर के तीन-चार वर्ष पहले ही अवध के दौरे पर निकला था। गगाघाट आदि की घटनायें बहुत बाद की—गदर काल की हैं। बेगम हज़रतमहल राजा मानसिंह के साथ नेपाल गईं। इस सूचना की भी एक ही रही, मगर इससे यह अवश्य स्पष्ट होता है कि राजा मानसिंह बेगम के साथ भी थे। मनवा के कोट पर मौलवी साहब द्वारा तोप चढा ले जाना, अंग्रेजी फौज का मार्ग आदि बातें ठीक हैं। लख-नौये लूट मे पडे थे यह बात भी अपनी जगह पर बिलकुल सच है, पर हार के जिस प्रसग मे जुड कर आई है उससे उनका कोई नाता नहीं। अपने अंतिम मोर्चो पर लखनऊ ने बडा रक्तदान दिया है। लखनऊ मे तिलगो की लूट चिनहट के युद्ध ३० जून '५७ से पहले की बात है। इसी प्रकार नवाब नकीअली खा का अगरेजो मे मिलना और कानपुर मे वगिन घाट का फँसना दूसरी।

फिर भी किंवदंतियो का महत्व मेरी दृष्टि मे बहुत है।

शाम को नवाव नक्की का प्रसग छिडा तो डाक्टर नवल विहारी जी ने एक वात सुनाई। कहने लगे " एक वार मछरहट्टा गाँव के एक व्यक्ति ने किसी दूसरे व्यक्ति के वारे मे कहा कि डाक्टर साहव, वो शख्स तो नक्की निकल गया।" मुहाविरो के शौकीन को नई रकम मिली, पूछा अर्थ क्या है ? उत्तर मिला, "धोखे वाज़ या गद्दार।"

नवाव अलीनकी खा की जन्म भूमि मछरहट्टा ने अपने नक्की नवाव को खूव अमर किया है।

मैंने डाक्टर साहव को अपना वहराइच ज़िले का अनुभव सुनाया। अग्रेज़ो से पुरस्कार मे ज़मीदारी पाने वाले कुटुम्व को 'गद्दारन का घर' कहा गया था। डाक्टर साहव वोले . "मैं आपको एक मुहावरा और देता हूँ। वचपन मे हम भाइयो मे एक वडा चुगलखोर था। वह सदा वडो की दृष्टि मे भला वनने की नीयत से हम लोगो की चुगली खाता था। हमारे चाचा कहा करते थे कि ये ससुरा पूरा वगाली है।"

मैं अवाक रह गया। फिर पूछा . "अच्छा, हिन्दी मे एक मुहाविरा भूखा वगाली भी चलता है।"

मेरी धारणा है कि उनकी रिश्वतखोरी से आया होगा। वगाली वावू का पेट वडा, उसकी भूख भी वडी है। यो शायद खाने मे तेज भी होते हैं।

अवध के प्रवध मे सहायता करने के लिये वगाली आये थे। अँग्रेज के साथ वगाली वावू उनका ट्रेण्ड क्लर्क वन कर आया। आम तौर पर अवधी भारतीय का विधाता वगाली भारतीय था। कलकत्ते का यह वावू स्वय अपने ही प्रदेश के दिहाती सवधियो से जो व्यवहार करता था उसका वर्णन शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय अपने उपन्यास 'श्रीकात' मे कर गये हैं। इन्द्रनाथ के एक 'वावू' कलकतिया भैया आप तो जाडे की रात मे अपने से छोटो के कोट भी उतरवा कर छाती से चिपका रहे थे, मगर नाव फँस जाने पर इन्द्रनाथ और श्रीकान्त को पानी मे उतर कर नाव ढकेलने की डाँट फटकार भरा गर्मा-गर्म आदेश देने लगे। ऐसे खुदपरस्त वावू अपने प्रदेश से दूर, विहार, आगरा अवध या दिल्ली, पजाव आदि स्थानो की भारतीय प्रजा के साथ न जाने क्या व्यवहार करते होंगे। घर के घर मे यदि कोई भाई किसी को परिस्थितिवश आतकित कर दवा कर रखता है तो उसके विरुद्ध घृणा हो ही जाती है। आगरा कालेज के प्राध्यापक डा० सत्यनारायण दुवे ने मुझे मैन-पुरी जिले की एक पुरानी कहावत सुनाई थी 'कमाये टोपी वाला, लूटे धोती

वाला।' टोपी वाले से तात्पर्य है अंग्रेज और धोती वाले का अर्थ है बंगाली बाबू। डाक्टर मजूमदार ने अनेक बंगाली बाबुओं की डायरियों के हवाले दिये हैं। 'पुरबियों' ने अवश्य उन पर क्रूरतायें की, मान लिया, पर बंगाली बाबू ने ठंडे दिनों में 'पुरबी' प्रजा को 'हिन्दुस्तानी कूकुर, शाला छातूखोर' की—ओछी दृष्टि से देख देख कर बड़ा तुच्छ बनाया था। वह क्या क्रूरता नहीं थी ?

डाक्टर मजूमदार विद्वान् ठंडे मस्तिष्क से विचार करने वाले मनुष्य हैं। अरे, बंगाली भाइयों की डायरियां होतीं तो उनके एक एक शब्द पर विश्वास भी किया जाता, बंगाली बाबुओं की डायरियों को उनके बाबूपन से अलग करना बड़ा कठिन है।

मगर मैं तो कहूँगा कि वाह री जनता! तेरे शब्दों और मुहावरों के पीछे जाने कितना इतिहास भरा होता है!

खैराबाद

यह नगरी गदर से पहले जिले की राजधानी थी। मुंशी हरप्रसाद नाजिम और मौलवी फज़लहक़ के कारण गदर में खैराबाद का महत्व बढ़ा।

वर्षों पहले एक मित्र की बारात में यहां आया था। छोटा सा कस्बा है, लखौरी ईंटों के पुराने मकान और मनहूस खण्डहरों से बस्ती भरी पड़ी है। मेरी अपनी धारणा यह है कि पच्चीस-छब्बीस वर्ष पहले जब पहली बार खैराबाद को देखा था तब से अब वह और अधिक उजाड़ है। यों खैराबाद का नाम तो किसी खैरू पासी की बदौलत पड़ा पर गजेटियर के अनुसार विक्रमादित्य का नाम तक इसकी हिस्ट्री में जुड़ा हुआ है। किसी समय अरबी भाषा के विद्वानों तथा इस्लामी दार्शनिकों का बहुत बड़ा केन्द्र था। मौलवी फज़लहक़ एक ऐसे ही विद्वानों के परिवार के वंशज और स्वयं भी महापण्डित थे। उनकी अरबी कविता का लोहा स्वयं अरब के साहित्यिक मानते थे। हम मियां की सराय में मौलवी साहब के पोते मौलवी हकीम जफरुलहक साहब से मिलने गये। वर्मा जी खैराबाद म्युनिसिपैलिटी के चेयरमैन साहब के यहां ले गये? उन्होंने हकीम जफरुलहक़ साहब को अपने यहां बुलवा लिया। मौलवी साहब ने फरमाया "सन् '५७ में बहुत से उलेमाओं ने शिरकत की थी। बहुतों को काले पानी की सज़ायें हुईं थीं। मेरे दादा साहब भी कालेपानी की सजा पाकर अण्डमान गये थे। वहां

उन्होने अरबी मे सन्' ५७ के कुल वाकयात 'सूरतुल्हिन्द' किताब मे लिखे हैं। यह किताब उन्होंने जेल के अफसरान से चुराकर कही फटे पायजामो की चिन्दियो मे, पत्तो पर, चमडे पर, लिख-लिखकर जो कैदी हिन्दुस्तान की तरफ आते गये उनके हाथो मेरे वालिद के पास भेजते गये। फिर यहा उसकी एक बाकायदा नक्ल तैयार की गई। अग्रेजो के जमाने मे तो उसके छपवाने का सवाल ही नही उठता था। अब शाया हुई है और वह भी इस तरकीब से कि एक पुश्त पर अरबी मे छपा है और उसके सामने उर्दू मे तर्जुमा शाया किया गया है। एक बात और अर्ज कर दूँ जो मैं जानता हूँ कि बाद बहुत कोशिशें करने के मेरे वालिद यानी मौलवी फज्रलहक साहब के बेटे उनकी रिहाई का हुक्मनामा लेकर जब अण्डमान पहुँचे तो पता लगा कि मौलवी फज्रलहक साहब की लाश को अभी-अभी कब्रिस्तान ले गये है। बाकी और कुछ मैं जानता नही। कुछ दिन हुये 'कौमी आवाज़' मे रतनलाल बसल साहब ने मेरे दादा पर एक आर्टिकिल शाया करवाया है। आप उसे पढ जाइयेगा। उसमे कुल हालात मिल जायेंगे। हा, एक बात और जानता हूँ। मेरे दादा ने एक फतवा पेश किया था जिसके मुताबिक गदर की लडाई को उन्होंने अग्रेजो के खिलाफ जेहाद करार दिया और हर मुसलमान का उसमे शरीक होना मज्रहबी फर्ज़ बतलाया। इसी पर तो उन्हे कालेपानी की सज़ा हुई थी। मगर ये कुल बातें आपको उस आर्टिकल मे मिल जायेंगी।"

मैंने पूछा "वे कपडे के टुकडे, चमडे के पट्टे और पत्ते, जिनपर मौलवी साहब ने अण्डमान मे गदर के हालात लिखकर भेजे थे, क्या आपके पास हैं?"

"जी नही, हमारे घर मे नही है।"

मौलवी फज्रलहक बचपन से ही बहुत कुशाग्र बुद्धि और प्रतिभा सम्पन्न थे। तेरह वर्ष की आयु मे ही, [सन् १८०९ मे उन्होंने पढ़ाई पूरी कर ली और अपने पिता के शिष्यो को पढाने लगे। बसल जी के लेख मे एक मजेदार घटना का उल्लेख है। एक बडी उम्र के साहब मौलवी साहब से पढने आने लगे। गुरूजी छोटे और चेले बहुत बडे। गुरूजी की बुद्धि कुशाग्र और चेले का यह हाल था कि कुयें के पत्थर थे जिस पर महज़ दो-चार बार रस्सी आने जाने की रगड से निशान नही बना करता। मौलवी फज्रलहक साहब पहले ही दिन उनसे झुझला उठे। किताबें फेंक दी और कह दिया कि यह आपके बस का रोग नही है, मेहरबानी करके कल से तकलीफ न कीजियेगा। वे साहब बेचारे बडे दुखी हुए

और उन्होंने मौलवी फज़लहक के पिता मे जाकर अपना दुख निवेदन किया। पण्डित पिता ने फौरन ही अपने पण्डित बेटे को बुलवाया और एक थप्पड रसीद करते हुये कहा "बेवकूफ, तू यह नही सोचता कि तेरा जैमा दिमाग सब कहा से पा सकते हैं ? तू मालदार का लडका ठहरा, किसी चीज़ की कमी नही महसूस की, जिसके पास बैठा उसने खातिरदारी मे पढाया। हमेशा अच्छा खाने को, अच्छा पहनने को मिला, लेकिन इन बेचारो को यह सब कहा से मिले।" विद्वान् और अनुभवी पिता की शिक्षा मौलवी साहब के व्यक्तित्व को आजीवन के लिए सँवार गई।

मौलवी साहब दिल्ली के अग्रेज रेज़ीडेण्ट की अदालत मे सरिश्तेदार हो गए। बादशाह अकबर शाह तथा रेज़ीडेण्ट इन्हे बहुत मानते थे। सन् १८२८ ई० मे मौलाना मुफ्ती बनाये गये। तरक्की तो हुई पर अग्रेजो से पट न सकी। वे लोग खुशामद पसन्द थे और मौलाना किसी की खुशामद करना जानते नही थे। अफसर नाराज हो गये, सरकारी वकील बनाकर इनका तबादला इलाहाबाद मे कर दिया गया। वहाँ इन्होने कुछ रोज काम किया, बाद मे इस्तीफा दे दिया।

इसके बाद मौलवी फजलहक साहब रियासतो मे घूमते रहे। झज्झर, अलवर, सहारनपुर, टोक, लखनऊ, रामपुर आदि स्थानो मे रहे। दिल्ली के बहादुरशाह भी इनका बहुत मान करते थे। इन्होने क्रान्ति आरम्भ होने पर दिल्ली का विभिन्न रियासतो से सम्पर्क स्थापित कराने मे बडा श्रम किया। जनरल बख्त खाँ रुहेला भी मौलवी साहब को बहुत मानते थे। इन्होने यह फतवा दिया कि इस लडाई मे लडना हर मुसलमान का धार्मिक कर्तव्य है। मुसलमान जनता पर उसका बडा प्रभाव पडा। गदर के बाद अग्रेजो ने इन्हे खैराबाद मे गिरफ्तार किया। अग्रेज जज इनसे पढ चुका था। उसने फाँसी के बजाय कालेपानी की सज़ा दी। वही १८६१ मे इनका स्वर्गवास हो गया।

मुँशी हरप्रसाद नाज़िम के सबध में मुझे कोई जानकारी प्राप्त न हो सकी। चौधरी अचलविहारी लाल खैराबाद के पुराने ताल्लुकेदार वश के है। उन्होने बतलाया "राजा हरपरशाद यहा नही रहते थे। उनकी तरफ से उनके समधी यानी हमारे परबाबा चौधरी रामनरायन यहा का इतज़ाम सम्हालते थे। चौधरी रामनरायन पर तोप रखने का मुकदमा भी चला था, कहा जाता है कि उनके पास तोप बिरजी थी। राजा हरपरशाद के खानदान वाले जायस के करीब नसीराबाद में रहते हैं।"

राजा हरप्रसाद का हाल तो न मिला मगर उनके समधी चौधरी रामनरायन की बातो के बहाने मुझे शाही ओहदेदारो और ताल्लुकेदारो के सबध जानने को अवश्य मिल गये। यह तो पहले भी कई जगह सुन चुका था कि अवध के ताल्लुकेदारान शाही खजाने में आमतौर पर एक झझी कौडी भी देना अपनी शान के खिलाफ समझते थे। आमतौर पर जब नाजिम या आमिल की फौजें आती ताल्लुकेदार गढ़ी छोड कर भाग जाते। अक्सर मुठभेड भी हो जाती। पकड जाने पर आमिल लोग राजाओ की बडी दुर्गत करते। उनके मुँह पर पाखाने का तोबडा बाँधा जाता। नाखूनो में कीलें या काँटे ठोके जाते, पैरो में काँटेदार बेडिया डाल कर डडे के जोर मे दौडाया जाता। बाज राजे जमीदार ऐसे कजूस होते थे कि दमडी के लिये अपनी चमडी की मुतलक परवाह न करते थे।

कैसे जगली न्याय के दिन थे वे भी। राजा, ताल्लुकदार, आमिल,—अपने दाँव पर कोई किसी को नही छोडता था। शक्ति सचय करने का मात्र उद्देश्य यही था कि जो कमजोर पडे उसे खूँख्वार भेडिये की तरह दबोच लिया जाय। आज भी यद्यपि शक्तिशाली अशक्त पर ऐसे ही अन्याय कर लेता है, परन्तु सभ्यता के विकास ने जीवन की मान्यतायें बदल दी हैं। इस तरह की बातें अब रोज सुनने में नही आती। निरकुशो पर अपेक्षाकृत न्याय का अकुश है।

नैमिषारण्य

प्रात काल नैमिषारण्य के लिये चल दिया। नैमिषारण्य और मिश्रिख हिन्दू मात्र के लिये अत्यन्त पवित्र तीर्थ हैं। सत्यनारायण की कथा सुनने वालो ने 'एकदा नैमिषारण्ये' बहुत बार सुना होगा। अट्ठासी हजार ऋषियो के सम्मेलन की कथा भी नैमिषारण्य के साथ जुडी हुई है।

मेरे पास पौराणिक कथाओ को धार्मिक दृष्टिकोण से अपनाने लायक मन नहीं। मैं अपने देश का प्राचीन ऐतिहासिक एव सास्कृतिक रूप देखना चाहता हूँ। यह भी प्रचलित 'कुलट्यूर' फैशन के प्रभाव में नही वरन् मेरे मन में सचमुच यह बहुत बडा सवाल है कि अपने देश को किस रूप में देखूं। जैसा किसी भी समझदार व्यक्ति के लिये उचित होता है, मेरे लिये भी है, अर्थात अपने देश के योग, दर्शन, साहित्य, शिल्प आदि की महान् परम्पराओ को देख कर गौरवान्वित होता हूँ। मैं सचमुच भाग्यशाली हूँ कि मेरा जन्म भारत देश में हुआ है। परन्तु मेरा यह गौरव भाव इस परम धार्मिक मानवीय दृष्टिकोण वाले महान् सास्कृतिक

देश के घोर अधार्मिक, अत्यन्त अमानुषिक रूप और अमान्कृतिक परम्पराओ की ओर से भी आँखें नही मीच पाता। उदाहरण के लिये, धर्म के नाम पर आत्म-हत्या करना, काशी करवट लेना, सतीदाह करना, प्रायश्चित के नाम पर किसी को जीते जी जला देना, कानो में गर्म सीसा पिघलाना, पशु-बलि करना—धर्म के नाम पर इन अमानुषिक कृत्यो को करने वाले मनुष्यो से घृणा होती है, तीर्थों के पण्डो और मन्दिरो के पुजारियो से घृणा होती है। देवदासियो के नाम पर स्त्रिया धर्माधिकारियो के अनाचार अत्याचार का साधन बनाई गई, सर्वत्र मात्स्य-न्याय प्रचलित हुआ। धर्म के नाम पर क्रूरता कठोरता का अत न रहा। यह सब भी 'महान् भारतीय सस्कृति' में समाता है। मुझे भारत देश के—अपने—इस रूप से घोर घृणा है। मुझे यह भारतीय व्यक्तित्व का भयकर विरोधाभास प्रतीत होता है। 'सर्वखल्वमिद ब्रह्म' वाले देश में धर्म के नाम पर ब्राह्मणो, बौद्धो, जैनो आदि ने पारस्परिक धर्म प्रतीको को तोडा है। यह सब क्या है ? क्यो है ?

ऋग्वेद में सघबद्धता के आदर्श की धूम है, बुद्ध ने भी उसी सघबद्धता को मान कर आगे बढाया। क्या कारण है कि वह साघिकता हमारे दैनिक व्यवहार में बैर और फूट बन गई ?

दक्षिण के विशाल मदिर देखे। अपने शिल्पी पुरखो के प्रति अपार गौरव का बोध हुआ। इस देश के मनुष्य ने पत्थर में प्राण डाल दिये हैं। जडता में चेतना उत्पन्न कर दी है। आमतौर पर हर मदिर से बाहर निकलने पर दूसरा अनुभव यह हुआ कि भिखारी, बच्चो, स्त्रियो और पुरुषो की भीड यात्रियो के पीछे चरचेंटे सी चौंटती हैं पण्डे उन्हे मारते हैं, यात्री मारते हैं। वे आपस में मारपीट करते हैं, उनकी बुरी गत देख कर बुरा लगता है पर उन भिखारियो को यह सब कुछ नही व्यापता। उनकी चेतना जड हो गई है। जो देश अपने लिये इतना सौंदर्य चाहता है वह स्वय अपनी ही मनुष्य जाति को इतना असुन्दर बनाना कैसे सह पाता है ?

इसी प्रकार के प्रश्नो ने ही मेरी इतिहास की भूख जगाई है। मै अपनी और समाज की उलझनो को समझकर स्वय सुलझना चाहता हूँ।

मेरे मन मे नैमिषारण्य का अट्ठासी हज़ार साधुओ का सम्मेलन, कथायें, माहात्म्य—सब कुछ एक नये सामाजिक सगठन का आभास कराते हैं। यह बौद्ध धर्म के पराभव और ब्राह्मण धर्म के पुनरुत्थान का काल था। ब्राह्मणो द्वारा बतलाई गई धार्मिक राह पर चलने वाले राजा-महाराजाओ ने अपार धन व्यय

किया होगा, तब यह महान् साधु सम्मेलन होना सम्भव हुआ होगा ।

जायसवाल जी के 'अधकार युगीन भारत' के अनुसार बौद्ध-धर्म के पतन का एक कारण विदेशी कुषनो का बौद्ध-धर्म ग्रहण करना भी था । विदेशी शासको को अपने द्वारा पराजित और शासित प्रजा स्वाभाविक रूप से तुच्छ प्रतीत होती होगी । बौद्धो और ब्राह्मणो की शत्रुता इस देश में थी ही । कुषन राजा जब बौद्ध बन गये तब उन्हें ब्राह्मण-बौद्ध सघर्ष की साम्प्रदायिक आड में अपने द्वारा शासित प्रजा पर अधिक अत्याचार करने का बहाना मिल गया । राज्याश्रय पाकर बौद्ध आचार्य, भिक्खुगण बहुत मोटे हो गये थे । साम्प्रदायिक घृणा ने उन्हें सकीर्ण हृदय वाला बना दिया था । जनता में उनके प्रति आदर नही रहा था । ऐसे समय में शिव का भार अपने कन्धे पर उठा कर चलने वाले भारशिवो ने विदेशी कुषनों को खदेड-खदेड कर भारत से बाहर निकाल दिया । जहा तक मुझे याद पड रहा है, जायसवाल जी ने अपनी पुस्तक में नैमिषारण्य सम्मेलन का श्रेय भारशिवो को दिया है । मैं नही जानता कहा, पर हाल ही में कही यह भी देखा था कि उक्त सम्मेलन का आयोजन पाण्डवो के वशज किसी राजा ने कराया था । इसमें सत्यासत्य क्या है यह तो इतिहास के विद्वान् जाने, परन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि बिना किसी जोरदार सगठन के ऐसा काम हो ही नही सकता ।

नैमिषारण्य सम्मेलन का एक महान् उद्देश्य सूत द्वारा महाभारत बाचना भी है । सत्यनारायण की कथा, सिद्धिविनायक की कथा, हरतालिका व्रत की कथा, ऋषिपचमी की कथा, सत्यविनायक की कथा, जो विविध पुराणो से ली गई हैं, सब नैमिषारण्य की धरती पर सूत-शौनक सम्वाद के रूप मे फूटी हैं । इनमें बहुत सी जगहो पर ख्वाहमख्वाह नैमिषारण्य और सूतादिको का नाम जोडा गया होगा, फिर भी ऐसा लगता है जैसे बडे आयोजित ढग से सनातन धर्म का पुर्नसगठन हुआ था । नैमिषारण्य एक प्रकार से कथावाचक सूतो और मुनियो, साधको का विश्वविद्यालय बन गया था । आश्चर्य है कि काशी जैसे प्राचीन केन्द्र के बजाय नैमिषक्षेत्र ब्राह्मण धर्म की राजधानी कैसे बना ? कुछ न कुछ ऐतिहासिक कारण तो होगे ही । टॉयन्बायज् ह्वीलर ने अपने 'भारत के इतिहास' मे अपनी एक मजेदार अनुभूति बखानी है । वह कहता है कि यो तो इस देश के सामाजिक धार्मिक जीवन मे विशेष अन्तर नही पडता—सिकन्दर और मेगस्थनीज़ के समय मे जनता सूर्य, चन्द्र और नदियो को पूजती थी, विष्णु और शिव को बलि चढाती थी और नगे योगियो का आदर करती थी । उसके

एक हजार वर्ष वाद चीनी-यात्री हुएन्-साग ने भी भारत मे वही दृश्य देखे और उसके एक हजार वर्ष वाद अग्रेजो ने भी यहा आकर वही सव पाया ।

एक तरह से यह ठीक है, पर भगवान्-द्वय बुद्ध और महावीर ने अपने व्यक्तित्वो का वडा जवर्दस्त प्रभाव इस देश पर डाला था। बुद्ध ने एक वडी जोरदार वात उठाई थी। उन्होने लोगो से कहा कि धर्म को विना सोचे समझे मत ग्रहण करो, जो बुद्धि को उचित जँचे वही धर्म है। ब्राह्मण के लिये यह वात करारी चुनौती थी। समाज से ब्राह्मणो का एकाधिपत्य उठ रहा था। उन्होने वौद्धो और जैनो का घोर विरोध किया। परन्तु ब्राह्मण इन प्रगतिशील शक्तियो के सामने हारे। सम्राट अशोक के वाद तो लोक मे बुद्ध और जैन तीर्थंकरो के अतिरिक्त और भी अनेक पूज्य धार्मिक प्रतीक थे। कुछ लोग विष्णु को प्रधान देवता मानकर पाँचरात्र धर्म मानते थे, कुछ शिव को मानकर पाशुपत धर्म, कुछ देवी को प्रधान शक्ति मानकर शाक्त मतावलवी थे। सूर्य, गणपति, कार्तिकेय, विभिन्न नदिया, वृक्ष और सर्प, गरुड, हनुमान भी इस देश की जनता द्वारा पूजे जाते थे। इन सव मे भी खूव लडाई थी। लेकिन ऐसा लगता है कि एक प्रवल विरोधी को परास्त करने के लिये सारे धर्मों ने मिलकर सयुक्त मोर्चा बनाया। महाभारत के पाठ से यह सयुक्त मोर्चा जमाया गया। महाभारत ग्रन्थ जिस रूप मे आज हमारे पास है वह महात्मा सौति की देन है। विद्वान् मानते हैं कि महर्षि श्री द्वैपायन व्यास ने 'जय' नामक ग्रन्थ रचा था। उनके एक शिष्य वैशम्पायन जी ने उस ग्रथ को कुछ और वढा-चढा कर 'भारत' के नाम से पाण्डव अर्जुन के पौत्र परीक्षित को सुनाया। इस नये 'महाभारत ग्रन्थ' मे पाचरात्र, पाशुपत, शाक्त आदि सव मतो को एक झडे के नीचे ले आया गया। पुरानी कहानियो का सग्रह कर उन्हे व्यवस्थित रूप दिया गया।

मुझे यह सच लगता है कि यदि नैमिषारण्य सगठन न होता तो वैष्णवो का गुप्त साम्राज्य स्थापित न होता। नैमिषारण्य में एक वहुत वडे समन्वय का आयोजन हुआ था लेकिन वह फिर अधी दौड की तरफ भगाये लिए जा रहा था। हमारा ब्राह्मण पुरखा वडा तेजस्वी तपस्वी होते हुये भी तानाशाह था। वह जिज्ञासुओ की जिज्ञासा शान्त न कर उसे घुडकता था। वह कहता, "वस-वस, तुम इस कार्य में श्रद्धा रक्खो और करो। तुम्हारे लिये इतना ही जानना काफी है कि इससे तुम्हारा कल्याण होगा। वाकी सव सव कुछ जानने का अधिकार ब्राह्मण को है, तुम लोगो को केवल ब्रह्मवाक्य का प्रमाण ही मानना चाहिये।"

नैमिषारण्य के पुनरुत्थान आयोजन द्वारा वडा समन्वय तो अवश्य हुआ परन्तु तानाशाही न गई। भगवान् शकराचार्य ने उस तानाशाही को तोडा। उन्होने वौद्धिकता को वढावा दिया , प्रश्न उठाये, शास्त्रार्थ किया, अन्धनिष्ठा के धर्म को तर्क और बुद्धि की ज्योति दी। चूकि पुरोहित वर्ग का उनके धर्म प्रसार से लाभ हो रहा था इसलिये उनका वडा आदर तो किया मगर उन्हे प्रच्छन्न वौद्ध कहने से भी न चूके। खैर, मेरा मन तो इस समय नैमिपारण्य से जुडा है। विदेशी कुषनो को हँकाल देने के वाद नये सिरे से जो सामाजिक, धार्मिक और नैतिक क्रान्ति हुई उसके प्रमुख केन्द्रो में नैमिपारण्य प्रमुखतम है।

वीस मील का रास्ता आनन-फानन में कट गया। गाडी ने मुझे एकदम चक्रतीर्थ के निकट ही ला खडा किया।

चक्रतीर्थ नैमिपारण्य का प्रमुख आकर्षण केन्द्र है। तमिल भाषा में, विशेष रूप से तमिल ब्राह्मणो की वोलचाल में पानी को तीर्थ कहते मैंने वहुत सुना है। हमारे यहा, जनसाधारण की समझ में तीर्थ माने कोई मन्दिर, कुँआ, घाट, नदी वाला क़स्वा विशेष होता है। नैमिपारण्य आते हुये मुझे लगा कि उत्तर भारत में और कही का जनसाधारण भले कुछ का कुछ समझे मगर सीतापुर ज़िले का मनुष्य तीरथ के वही अर्थ जानता है जो तमिल भाषा में हैं। मेरा साथी ड्राइवर मुझे मिश्रिख और नैमिपारण्य के सभी तीर्थ घुमायेगा, यह उसने मुझसे आते समय कहा था। उसने एक तीर्थ यहा, एक वहा और फिर वहा जो कहना शुरू किया तो मैंने टोक कर पूछा . "क्यो भाई, तुम तीरथ किसको कहते हो ? जहा-जहा तुम मुझे ले जाओगे वहा क्या है जो तीरथ है ?"

"वहा पानी के कुण्ड है साहव, नीमसार मे चक्कर तीरथ है, चरन कुण्ड है, गोदावरी कुण्ड है। मिसरिख मे दधीच कुण्ड है, सीता कुण्ड है। अभी नीमसार में व्यास गद्दी के पास जव मिट्टी के लिये खोदाई भई तो एक पुराना तीरथ उसम से और निकल आया। आप को वह भी दिखाऊँगा।"

नैमिपारण्य विशेष रूप से अपने चक्रतीर्थ और ललिता देवी के मन्दिर के कारण प्रसिद्ध है। कहते हैं यहाँ विष्णु का सुदर्शन चक्र वृत्तासुर को मार कर पृथ्वी फोड पाताल चला गया था। चक्रतीर्थ अव नये सिर से वनवा दिया गया है। मुज़ैक की वेंचें जगह-जगह पडी हैं। दूर-दूर तक चारो तरफ फर्श पक्का है। चक्रतीर्थ पर मैंने गुजराती और दक्षिणी भारतीय यात्रियो को भी देखा। एक वृद्ध पण्डित जी से, जो मुझे सरकारी गाडी से उतरते देख पास आ गये थे, मैंने अपनी

धरम कहानी छेडी । पण्डित वल्लू प्रसाद ने वतलाया "कोटरा रियासत कमालपुर के अहलकार मुशी चण्डी सहाय गुरुमहाय ने यहाँ कोठी वनवाई थी । उन वेचारो का भी गदर मे सफाया हुइगा अउर गुलाव सिंह विरुआ के सरदार रहे । विरुआ के राजा तो घघरिया ओढनिया पहिरे भागिमे । मगर गुलाव सिंह ज्वान मर्दाना थे, असिल छत्री । तौ उन्होने अगरेजन को अपनी तरवार का पानी दिखाया । गुलाव-सिंह हियाँ आये रहे । तरवार हाथ माँ लीन्हे उइ चक्रतीर्थ मे नहाये औ, फिर चले गये । पुरखे वतावत रहै कि नैपाल भाग कर गये रहे । औ पेशवा—"

"जी हाँ, पेशवा नाना राव तो मैंने सुना यहाँ कई वरस रहे ।"

"हाँ साहव कई बरस रहे । दुई साधू यहाँ ऐसे आये । एक व्रह्मानन्द व्रह्मचारी करिकै दुसरे कैलासन के बावा करिकै मसहूर हते । उइ तौ साहव चेहरा-मोहरा ते दिक्छनी मशहूर भये औ हते । यह सव छिपे नाम ते रहे । आवैं खूव खरिचा करैं, वच्चन का फल मिठाई देवैं, ललिता देवी मे सगमर्वल का पत्थर लगवाया । उनके पास साहव एक छडी हती । वस रोजु उसमे से खोलके एकठे नग निकाल लें औ वेचि देवैं औ खरचा चलै । बडे चेले कारिन्दा—पूरा लाव लस्कर उनके साथ रहा साहेब ।"

"वो यहाँ कितने दिन रहे ?"

"वहुत दिन रहे । फिर यहाँ किसी से उनका झगडा होइ गया तौ फिर उठिकै कैलासन चले गये ।"

"किस बात पर झगडा हुआ ?"

"आप ललिता देवी के मन्दिर मे मथुरा माली से मिलिये । उहिकी उमिरि अस्सी वरिस तै ज्यादा है साहेब । उइ आप को बतावैंगा ।"

'कैलासन! कैलासन के बावा—' रह रह कर मेरे मन मे उठने लगा कि यह नाम पहले भी सुना है । किसी कन्नौज—मीरा की सराय के साधू के सम्बन्ध मे अपने मित्र मिश्र जी से सुना है । वो वाद में नैमिषारण्य चले आये थे और कैलाशन के वावा के नाम से प्रसिद्ध हुये थे । कानपुर के इतने निकट मीरा की सराय में या नैमिषारण्य में इतने ठाठ-वाट से रहने की गलती नाना धोडूपत पेशवा जैसा वुद्धिमान मनुष्य करे, अपना असली नाम गुपचुप ढग से ही सही मगर इतना प्रचारित करे कि वच्चा-वच्चा जान जाय, उस पर फिर झगडा करे, उसके वाद जाय भी तो महज चार-पाँच मील दूर कैलास मन्दिर में जाकर बैठ जाय

लकिन यहाँ ठहरू, झगडा करने की वात मिश्र जी की कहानी में भी थी ।

मिश्र जी ने एक वार प्रसगवश अपने गाँव मीरा की सराय (कन्नौज) के पास की एक कथा सुनाई थी वह इस प्रकार है ·

"विश्वनाथ का टीला कन्नौज से चार-पाच मील दूर पर स्थित है। उस टीले पर कोई जाता नही था। किंवदती है कि गदर में वहा बहुत से लोग मारे गये थे, अंग्रेजो द्वारा विजन हुआ था, तव से वह स्थान भुतहा माना जाता था। एक दिन एक सन्यासी वहा आये, देखने में वडे तेजस्वी और चेहरे-मोहरे से दक्षिणी लगते थे। लम्वे शरीर पर सफेद चोलना धारण किये हुए थे। उन्होने स्थान पूछा। किसान लोग थे, उन्होने ठाकुरो का घर वतला दिया। वह ठाकुर वश भी गदर का वागी वश था। वहा उनकी सेवा हुई। सामने टीले को देख कर उसकी कथा पूँछी, पता लगा कि ऊपर एक शिवालय भी है। वस, यह सुनते ही वे उठ खडे हुए और ठाकुर से कहा, हमारे साथ चलो। उस भुतहे टीले पर जाने का नाम सुनते ही काँप गया। विश्वनाथ का टीला महा भुतहा स्थान माना जाता था, वहा और उसके आस-पास कोई दिन में जाने का साहस भी नही करता था। परन्तु सन्यासी जी न माने वे अकेले ही चले। एक युवक को भी जोश आ गया, उनके साथ गया। मन्दिर की जीर्णावस्था देखी, शिव जी के आसपास कूडा देखा। साफ करने लगे। फिर पानी के लिए पूछा, पता लगा कि पुराना कुंआ भी है। यह सव देखभाल कर वह नीचे उतर आये और आकर कहा कि जल तभी ग्रहण करूँगा जव ऊपर का कुंआ साफ हो जायगा। उसके वाद वे फिर उस भुतहे टीले पर जम गये। पुराना समय था, सन्यासी की वात की प्रतिष्ठा थी। कुंआ साफ कराया गया। फिर सन्यासी जी ने मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया, सगमर्मर आदि लगवाया। यह किसी ने नही जाना कि सन्यासी जी रुपया कहाँ से लाते थे। वस दिन में एक वार स्नान करने के लिए ही नीचे उतरते थे। शिवजी का अद्भुत् शृंगार करते थे, इत्र की रूह का लेपन करते थे। मेरे वावा वहाँ जाया करते थे और उन्होंने ही यह किस्सा सुनाया था। उनकी सिद्धि का वडा चमत्कार था। और लोग यह भी कहते थे कि ये नाना पेशवा हैं।

"एक वार दो भाइयो मे गृह-कलह हुई। क्रोधवश एक भाई ने दूसरे भाई के एक वच्चे को दूर ले जा कर मार डाला और लाश कुँए में डाल दी। हत्या करने के वाद ही उसे बुद्धि उपजी और वह सीधा सन्यासी जी के पास आया। उसने अपना पाप उनसे कह डाला। सन्यासी जी कुछ क्षण तो चुप रहे, फिर कहा कि काम तो तुमने वहुत बुरा किया, परन्तु कह दिया इससे मैं तेरी रक्षा करूँगा।

"सन्यासी जी ज्योतिप विद्या के भी वडे सिद्ध पण्डित माने जाते थे। जब दूसरे भाई का लडका घर न पहुँचा और सब ढूंढ हारे तब हत्यारे का भाई सन्यासी जी की शरण में पहुँचा। सन्यासी जी ने उसे सात्वना दी और क्रमश उपदेश करते हुए उन्होने सत्य प्रकट कर दिया। फिर कहा कि अब तुम इस पर केस आदि न चलाना उसे ज्ञान मिल चुका है परन्तु जिसके पुत्र की हत्या हुई थी वह न माना मुकद्दमा चला। सारा केस सन्यासी जी की गवाही पर ही आधारित था। सन्यासी जी को कोर्ट जाना पडा। मगर सन्यासी जी अपने शरणागत को अभय-दान दे चुके थे, अत कोर्ट में 'उन्होने नरो वा कुंजरो वा' जैसा झूठा वयान दिया, कहा कि वह मेरे यहा था। अभियुक्त छूट गया।

"इसके वाद ही नाना पेशवा के नाम से अफवाहो में प्रख्यात सन्यासी जी वहा से चले गये। जाते समय मेरे पितामह उनके पास थे। उनसे उन्होने कहा: 'अपने इस पाप का प्रायश्चित न जाने मुझे किस प्रकार करना पडेगा।' इसके वाद वो नैमिषारण्य चले गये थे। वहा भी सुना कि उन्होंने ललिता देवी के मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया और कैलासन के वावा के नाम से प्रसिद्ध हुए।"

कैलासन के वावा की कथा का पूर्वार्द्ध भी यही सिद्ध करता है कि ये व्यक्ति नाना पेशवा हरगिज नही हो सकते। न तो अग्रेज सरकार का खुफ़िया पुलिस विभाग ही इतना गावदी था और न नाना साहब ही।

वाराबकी के श्री दीन दयालु दीक्षित ने अपने वावा और सन्यासी नाना साहब की नैमिषारण्य में भेंट होने की कथा मुझे लिख कर दी थी। याद पडता है कि बीस-बाइस वर्ष पहले नैमिष में नाना साहब के स्वर्गवास होने का समाचार पत्रो में छपा था।

दस बारह वर्ष पहले आबू गया था। अम्बा जी से कुछ मील आगे कोटेश्वर महादेव का बडा रम्य स्थान है। वहा एक छोटे से मण्डप मे एक काठ की जीर्ण-शीर्ण नक्काशीदार चौकी पर एक क़लमी चित्र रक्खा है। मुझे बतलाया गया कि यह नाना पेशवा का चित्र है, उन्होंने यहा तपस्या की थी।

लगभग पाँच-छह वर्ष हुए जौनपुर ज़िले का एक युवक लखनऊ आया था। प्रेस ट्रस्ट ऑफ इडिया के तत्कालीन लखनऊ स्थित सवाददाता श्री दिवाकर निगुडकर ने उसे मेरे पास भेजा। उसने कथा सुनाई कि नाना पेशवा जौनपुर ज़िले मे रहे, किसी अहीरिन स्त्री (या राजपूत स्त्री) से विवाह किया। सतान हुई। वह युवक अपने को नाना साहब का पौत्र बतलाता था। कहता था हमारे पास प्रमाण हैं।

मैंने कहा . "लेकर आओ।" वह आज तक नही आया।

चक्रतीर्थ से मैं ललिता देवी के मदिर गया। श्री मथुरा माली से भेंट हुई। उन्होने बतलाया —

"अब मेरी उमिर अस्सी बरस की है। हम दस-बारा साल के हुइबा तब नाना-राव पेसवा बाबा बन के आये थे। इमली के खाले रहे। बह्मनन को न्यौता करैं, खूब खिलावैं। देवी के मदिर में सब पत्थर उन्ही का लगवाया है।"

मैंने पूछा "क्या वो कहते थे कि मैं नानाराव पेशवा हूँ ?"

"कभी अपनी जबान से तो नही कहा पर नौकर बतलावैं कि यही नानाराव पेसवा हैं।"

"देखने में कैसे थे ?"

"बडे गोरे, लाल-लाल बदन रहा। यहा साल सवा साल रहे। फिर कैलासन चले गये। वहा बहुत रोज रहे।"

"उनका यहा किसी से झगडा हुआ था ?"

"झगडा-वगडा नही भया। अरे वो किसी से न बोलैं न चालैं। कुबडी पकडे रहत रहैं औ भजन-पूजा मे रहैं। नौकर-चाकर सबको खिलावैं-पिलावैं।"

"उनके पास कोई खजाना था ? खर्चा कहाँ से करते थे ?"

"ये हमैं नही मालूम बाबू।'

ये व्यक्ति और चाहे जो हो पर नाना पेशवा नही थे। बडे नेताओ को जनता इतना प्यार करती है कि उनकी मृत्यु का खयाल भी नही सहन कर पाती। नेताजी सुभाषचद्र बसु असख्य भारतीयजनो के विश्वासानुसार आज भी जीवित हैं।

व्यास गद्दी का स्थान भी देखने गया। ऊँचे टीले पर व्यास जी का मन्दिर बना है। यहा आकर यह कल्पना नही होती कि हजारो साधु इस छोटी सी जगह में बैठे होगे, मगर बात उठ कर भी कोई खास असर न डाल सकी। दो हजार वर्ष पूर्व इस जमीन की स्थिति क्या रही होगी यह कौन जान सकता है। व्यास गद्दी पर भी नया निर्माण और सुधार हुआ है। नैमिषारण्य की सुव्यवस्था देख कर बडा सुखी हुआ। कुछ वर्षो पहले तक यहा पहुँचने का मार्ग भी दुर्गम था, यह जगह और भी सुन्दर बनाई जा सकती है। क्या ही अच्छा हो यदि रिसर्च के विद्वानो के लिये साथ ही मेरे जैसे उन हज़ारो जिज्ञासु लोगो के लिये, जो अपने देश की परम्पराओ को समझना चाहते हैं, यहा एक अच्छा पुस्तकालय क़ायम हो। लोग ठहरें और सस्ते दर पर रह सकें, ऐसे छोटे-छोटे क्वार्टर भी

वनाये जाने चाहिये। नैमिषारण्य प्राकृतिक दृश्यो के लिये भी सुन्दर स्थान है।

पाण्डवो का किला भी देखा। किले के टीले के नीचे महावीर जी की विशाल मूर्ति है, लगभग सत्रह-अट्ठारह फिट ऊँची होगी। वतलाया गया कि यह पाण्डवो के किले पर मन्दिर मे प्रतिष्ठित मूर्ति की नकल है। शायद पुराने आक्रमण-कारियो को धोखा देने के लिये वनाई गई हो। किला, जैसा कि नाम से ही ज़ाहिर है पाण्डवो का वनवाया हुआ वतलाया जाता है। उसके ऊपर स्थित महावीर जी के मन्दिर के पास ही १२ इच लम्वी ८ इच चौडी और ३॥ इच मोटी ईंटो का ढेर देखने को मिला। ऐसी ईंटे मैं लखनऊ के लक्ष्मणटीले से भी पा चुका था। ये भारशिव काल की ईंटें वतलाई जाती हैं। मेरे ख्याल मे यह किला उस समय का होगा जव यहा धार्मिक पुनरुत्थान का आयोजन हुआ था। हमारा पुरातत्व विभाग यदि फिलहाल सव जगह नही तो कम से कम ऐसे ऐतिहासिक महत्व के स्थानो पर अपना ध्यान अवश्य केन्द्रित करे। पाण्डवो के टीले से गोमती और उसके पार का दृश्य वडा ही मनोरम लगता है। टीले मे साधको द्वारा खोदी गई दो तीन गुफायें हैं, पता लगा एक मे अव भी एक ऐसे साधु रहते हैं जो कई वर्षों पहले यहा आये परन्तु आज तक नैमिषारण्य मे घूमने नही निकले, चक्रतीर्थ तक भी नही गये, प्रात सायकाल केवल देह धर्म पालन के लिये ही वाहर निकलते हैं। नैमिषारण्य अव भी साधको की भूमि है।

लौटते समय आम के लाख पेडो वाले उपवन से गुजरते हुए मिश्रिख का दधीचि कुण्ड और मन्दिर भी देखा। देवकार्य के लिये अपनी देह विसर्जन करने वाले महात्मा के प्रति श्रद्धा जागी। परन्तु ऐसी जगहो को पण्डो ने दुकानदारी के के ऐसे ठिकाने वना रक्खे हैं कि देख कर घृणा होती है। काशी, अयोध्या, मथुरा, मदुरा, चिदम्वरम् कन्याकुमारी—कोई जगह हो, पण्डे गन्दगी फैलाने वाली वरसाती मक्खियो की तरह वुरे लगते है। ब्राह्मणवाद इन पण्डे पुरोहितो के स्वार्थवश होकर घृणित और जघन्य हो गया। अन्धनिष्ठा इस देश के लिये कालकूट विष के समान रही है। ब्राह्मण, वौद्ध, जैन सभी धर्मो के पोपो ने इस देश के ज्ञान पर अच्छी झाड़ू फेरी है। वह कौन सा शुभ दिन होगा जब हमारा देश इन पापियो से मुक्त होकर तपस्वी महात्माओ की उन पावन सिद्धियो को मानव कल्याण के लिये अर्पित कर सकेगा जिनके कारण यह देश पूज्य माना जाता है। जिस दिन हमारे समाज से पण्डे पुरोहितो का धर्म विदा हो जायगा उसी दिन तपोभूमि भारत देश मानवता का कल्याण करने के लिये विश्वविद्यालय के समान हो जायगा।

मध्यान्तर

अवध के छ जिलो मे ग़दर सम्बन्धी किम्वदन्तियाँ बटोरते हुए मेरे पास अब इतनी सामग्री अवश्य हो गई है कि उस पर विहगम दृष्टि डालते ही १८५७ की रूप-रेखा स्पष्ट हो जाती है। वारावकी में महादेवा या हज़रतपुर में, सामन्तो की सभा में वेगम हज़रतमहल की जोशीली स्पीचें देना एक क्रान्तिकारी सगठन के सकेत प्रस्तुत करता है। वेगम हज़रतमहल नि सन्देह बडे जीवट की स्त्री मालूम पडती हैं। महादेवा में उनका भाषण करना और फिर उसके परिणाम-स्वरूप हज़ारो हिन्दू-मुसलमानो का तलवारें उठा कर देश के लिये मर मिटने की कसमें खाना मन में सचमुच ही बडा स्फूर्तिदायक दृश्य प्रस्तुत करता है।

गज़ेटियर लिखता है कि वारावकी ज़िले के ताल्लुकेदार अग्रेज़ो के विरुद्ध होकर भी प्राय मौन थे। यह सच है परन्तु अन्य ज़िलो से आये हुए सामन्तो और उनकी सेनाओ की प्रेरणादायिनी जोशीली कारगुज़ारियो को देख कर क्या बारा-बकी ज़िले का जनसाधारण अछूता बच गया होगा ? मुझे ऐसा नही लगता उसी जिले के अनेक लडवैयो के नाम लोगो ने वतलाये है। वहराइच और सीतापुर ज़िले के रैकवार सरदार भले ही वारावकी की भूमि पर लडते, परन्तु यदि उस ज़िले की जनता का उनके साथ सहयोग न होता तो सौ वर्ष वाद आज भी उन किस्सो को सुनाते हुए वहा का मनुष्य इस तरह जोश मे न भर उठता जैसा मैंने उसे देखा है। एक सदी से भी अधिक आयु वाले साहवदीन का वलभद्रसिह नाम लेते ही सहसा पुरानी स्मृतियो से दीप्त हो उठना असम्भव होता। वलभद्रसिह की लाश तीन घण्टे तक लडती रही, अँग्रेज़ 'जन्त्री' पढे थे सो औरत वुलवाई और उसके छूते ही लाश गिर पडी—इस प्रकार की वातें सत्य न होने पर भी हमारे यहा वीर-जुझारू नायको के लिये परम्परा से कही जाती हैं। मैंने लक्ष्मी वाई के सम्बन्ध मे भी सुना, ठाकुर ननकऊसिह के 'जगनामे' मे अनेक सिरकटी लाशें लडती हैं। यह परम्परा चन्दवरदाई के प्रिथीराज रासो, जायसी के पद्मावत, तुलसी के रामचरितमानस, केशवदास की रामचन्द्रिका, जगनिक के आल्हखण्ड आदि मे भी दिखलाई देती हैं। नायक की वीरता की पराकाष्ठा दर्शाने का यह एक प्रकार से मुहावरा वन गया है।

अयोध्या फैजावाद मे हिन्दू-मुसलमानो का साथ-साथ लडना, (अयोध्या मे तीन वर्ष पहले के हिन्दुओ के विरुद्ध भीषण जेहाद की पृष्ठभूमि मे) हमारी एक

सदी पहले की उमगती हुई राष्ट्रीय-चेतना का जाज्वल्यमान प्रमाण है। किसी भी और नगर मे यह एकता प्रमाण देने के लिये दर्शायी जा सकती है, परन्तु अयोध्या मे यही चीज प्रतीक बन कर और भी अधिक स्फूर्तिदायक प्रतीत होती है।

सुल्तानपुर मे दो रूप देखने को मिलते हैं। एक तो अमहट के खानज़ादो का जुझारू रूप जो बेगम की प्रेरणा से स्वातत्र्य युद्ध मे शरीक हुए और इस प्रकार व्यापक सगठन का परिचय दिया। दूसरा चित्र पुराने सुल्तानपुर के खण्डहरो से मिलता है। गदर मे केवल भारतवासियो की क्रूरता को ही देखने वाले भारतीयो से करबद्ध हो मेरा सविनय निवेदन है कि एक बार पुराने सुल्तानपुर नगर के खण्डहर अपनी आँखो से देख आयें। अँग्रेज़ो ने गाँव के गाँव घेर कर जलाये हैं, जलते हुए मनुष्यो के भागने पर सगीनो की चौहद्दी बाँध कर उन्हे आग मे ढकेला है, अमानुषिक प्रतिहिंसा से भारतवासियो का कत्ले आम किया है—इन पढी-सुनी बातो का प्रत्यक्ष प्रमाण पुराने सुल्तानपुर नगर के खण्डहर है। अँग्रेज़ो के द्वारा किये गये अत्याचारो का आभास कराने के अतिरिक्त ये खण्डहर सौ वर्ष पूर्व के सामाजिक जीवन की झलक भी दिखा देते हैं। जैसा कि शायद मैं पहले लिख चुका हूँ, इन खण्डहरो मे एक जगह मदिर और मस्जिद की जुडवाँ इमारतो के ध्वसावशेष भी विद्यमान हैं।

गोडा-बहराइच मे राजा देवीबख्श और 'जगनामे' मे वर्णित बलभद्रसिंह सहित अनेक छोटी-बडी जातियो के वीरो के नाम और काम क्या आज भी हमारा हौसला नही बढाते? क्या ये सामूहिक एकता के चित्र सत्तावनी क्रान्ति को खरे अर्थ मे क्रान्ति नही सिद्ध करते? बेगम, रैकवारो के मुखिया की गढी मे बैठ कर युद्ध का सूत्र सचालन करती हैं, अवध के प्रमुखतम हिन्दू सामन्त उनके साथ हैं।

सीतापुर ज़िले मे भी हमे मौलवी अहमदउल्ला शाह और बेगम हज़रतमहल का अपने समय के लोगो पर ज़बर्दस्त प्रभाव और उनकी अद्भुत सगठनात्मक प्रतिभा के प्रमाण मिलते हैं। नैमिपारण्य मे लोगो को हलुआ पूडी खिलाने वाली नाना साहब की किम्वदन्तिया मेरे मन से बरसो के कूडा-करकट की तरह साफ हुई, इससे बडा सन्तुष्ट हूँ। लोग प्यार मे अपने जननायको पर कभी-कभी बेतुकी और अतिरजित प्रशसा लाद कर उनके व्यक्तित्व को भोडा और अविश्वसनीय बना देते है। नाना साहब जितने ही गम्भीर, चतुर और मेधावी थे, उतने ही वे कैलासन के बाबा के रूप मे ब्राह्मणो को हलुआ-पूडी खिलाते हुए, नौकरो की दबी ज़बान से अपने नाम का प्रचार करवाते और झगडा-झझट करते हुए

ओछे लगते हैं। मेरे पास प्रमाण तो नही परन्तु सर जॉन के, वसु, सुन्दरलाल और सावरकर लिखित इतिहास पढ कर मुझे इस वात का विश्वास है कि बगाल आर्मी के स्वाभिमानी विद्रोही सूवेदारो की क्रान्ति योजना को सामन्तो नवावो और दिल्ली तक पहुँचाने मे नाना साहव धोडूपत वाजीराव पेशवा तथा अज़ीमउल्ला खा का वहुत वडा हाथ था। योरप से लौट कर अजीमुल्ला खा ने कलकत्ते मे नि सन्देह अँग्रेज़ो के खिलाफ ज़हर उगला होगा। अवध के पदच्युत शासक और उनके 'नक्की' वज़ीर से उसकी भेंट होना भी कोई आश्चर्य की वात नही। अली नक़ी खा लखनऊ मे प्रचलित जनश्रुतियो के अनुसार और अपने गाव मछरहट्टा की जनता द्वारा वनाये गये मुहावरे के अनुसार ग़द्दार हैं, परन्तु अँग्रेज़ो से धोखा खाने के बाद क्या यह सम्भव नही कि उन्होने वदला लेने की भावना से विद्रोह की आग भडकाने का आयोजन किया हो ? मुझे तो यह तनिक भी अटपटी वात नही मालूम होती। अलीनकी खा मटियावुर्ज छोड कर कलकत्ता शहर मे रहने के लिये चले गये थे, यह वात सुनने मे आती है। क्या यह सम्मव नही कि अग्रेज़ो के खिलाफ साज़िश रचने के लिये ही उन्होंने मटियावुर्ज से वाहर रहना उचित समझा हो ? अजीमुल्ला उनके साथ भारतीय सूवेदारो के सामने क्रीमिया युद्ध के दृश्य बखानने, वहा की नक्शावन्दी वताने के लिये जा सकता है। स्वय मजूमदार महाशय यह मानते हैं कि रूस के इगलिस्तान से अधिक तगडे होने की अफवाह इस देश मे अजीमुल्ला खा के द्वारा ही फैली थी। अली नक़ी खाँ ने अवधी सूवेदारो से, अयोध्या के राजा मानसिह से तथा अन्य सामन्तो से मिलकर योजना को आगे बढाने के लिये प्रयत्न किया होगा। अज़ीमुल्ला खा की प्रेरणा से नाना पेशवा का विद्रोह के लिये जाग पडना भी कोई आश्चर्य की वात नही। तीर्थ यात्रा के वहाने नाना साहव का सगठन करने के हेतु निकलना कुछ अजीव सी वात तो नही लगती जो विश्वास न किया जाय। ग़दर के समय के एक मराठी यात्री विष्णु भट्ट गोडशे ने पेशवा की कानपुर की लडाई का वर्णन किया है। उस चित्र मे नाना पेशवा का व्यक्तित्व वोलता है। नाना और उनके दल के वाला साहव, राव साहव, राम राव और सव से बढकर महासाहसी तात्या टोपे अपनी शूरवीरता और सगठन शक्ति के अनोखे उदाहरण छोड गये हैं।

इतनी जगह घूम कर मेरी आस्था वलवती हुई है। अपनी शक्ति के अलावा अपनी कमज़ोरिया भी सामने आई हैं। खीरी के लोनेसिंह पास-पडोस के सामन्तो को दवोच कर कूप-मण्डूक की तरह अपने को वडा क्षत्रिय समझते हैं। वौंडी और

रेहुआ के सकुटुम्बी सगोत्री सामन्त ईर्ष्यावश हो एक दूसरे के सिर काट कर रण पूजने की महत्वाकाक्षा रखते है, पचास हज़ार रुपये की लालच के लिये पुवाया के जगन्नाथसिह मौलवी अहमदउल्लाशाह को मार डालते हैं, अपने साढ लोनेंसिह को धोखा देकर गिरफ्तार करवा देते हैं—यह बातें हमारी कमज़ोरी का प्रमाण हैं। इक्के-दुक्के अंग्रेजो को पकड कर उनके प्रति क्रूरता बरतना, सब कुछ कह-सुन कर भी हमारी कायरता का अत्यन्त लज्जाजनक उदाहरण है। अंग्रेज़ो ने भी ऐसे अनेक उदाहरण छोडे है। मुशी ज़हूरुलहसन अंग्रेजो की स्वर्ण मुद्रायें हडपने के लिये उन्हें गिरफ्तार करा देते हैं यह भी शर्मनाक घटना है।

इस प्रकार मुझे अपनी अच्छाइयो और बुराइयो के प्रमाण मिले। बुराइया हैं, पर हमारी अच्छाइया भी उनके मुकाबले मे कुछ कच्ची या कम नही बैठती। अट्ठारहवी-उन्नीसवी शताब्दी मे फैली हुई देशव्यापी घोर अराजकता से सगठन, साहस और वीरता के यदि ऐसे उदाहरण हमे मिलते हैं तो बहुत ही मूल्यवान जान पडते हैं। अगर हमारे राष्ट्र मे इतनी भी शक्ति न होती तो गदर मे बुरी तरह कुचले जाने के बाद भारत की बहुमुखी प्रतिभा शतदल की भाँति इस प्रकार विकसित ही नही हो सकती थी जैसा कि हमारे इतिहास ने उसे प्रत्यक्ष देखा है। रामकृष्ण परमहस, दादा भाई नौरोजी, रानाडे, तिलक, गोखले, दयानन्द, विवेकानन्द, गाधी, रवीन्द्र, अरविन्द, बकिम, भारतेन्दु, रामतीर्थ, जगदीश चन्द्र बसु, रामानुजम्, रामन्, जवाहर, सुभाष आदि सभी अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्तित्व गदर के बाद उन्नीसवी सदी के उत्तरार्ध मे ही अवतरित हुए। सनातन भारत, चीन, मिस्र,—प्राचीन सभ्यता की परम्परा वाले प्रत्येक देश तथा इनके अतिरिक्त रूस, तुर्की, बगदाद, जापान, अफ्रीका सभी के लिये एक प्रकार से उन्नीसवी सदी बडी क्रातिकारी सिद्ध हुई थी। पतनशील सामन्ती प्रथाओ के कोढ से कुरूप, अरसे से गतिहीन, भौतिक विज्ञान की नई और महान् शक्ति से शून्य प्राचीन काल की महान् सभ्यता वाले अनेक देशो मे एक ऐसा परिवर्तन होता दिखलाई दिया जैसा कि सदियो से नही हुआ था। विज्ञान की शक्ति बडी थी पर उसका उपयोग करने वाले स्वार्थी और अपेक्षाकृत हीन सस्कृति के थे। पुरानी सभ्यतावाले देशो के लिये वे चुनौती थे। भारत का गदर ऐसे अवसर पर हुआ था जबकि अन्य देशो मे भी उथल-पुथल मची थी। दूर बैठे मार्क्स, एगेल्स् भी भारतीय क्रान्ति के समाचार पढ-पढकर, पृथ्वी के इस भाग मे नव-जागरण को देखकर वैचारिक स्फूर्ति पा रहे थे। इग्लैण्ड, फ्रास, इटली आदि देशो के समाचार-पत्र हमारी लडाई

पर उत्साह से टिप्पणिया देते हुए समाचार छाप रहे थे ।

मेरी आज तक यह समझ मे नही आता कि हम आज कल के पढे-लिखे भारतीय सत्तावनी क्रान्ति के सिपाही विद्रोह उर्फ गदर नाम से आखिर चिढ़ते क्यो हैं। यदि किराये से किसी के लिए भी लडने वाला अचेत भारतीयजन तक अँग्रेज मालिको से चिढकर विद्रोह कर उठा तो क्या इससे भारतीय क्रान्ति की नाक कट गई या नीची हो गई ? सामन्ती शक्ति भी साथ थी, यह मान लिया, कुलीनो का भी कुछ अश (महत्वपूर्ण अश) क्रान्ति मे सक्रिय सहयोगी था, यह होते हुए भी सिपाही विद्रोह को हमे छोटी चीज नही मान लेना चाहिये । सन् सत्तावन का सिपाही विद्रोह ऐसा ग़ज़ब का था कि एक बार सारे उत्तराखण्ड मे व्याप्त हो गया । सिपाहियो के जोश से अफीमची, विलासी और अपने मिथ्या दम्भ मे सगोतियो के सिर पर रण पूजने की कायरता रखने वाले, फूट मे पडे सामन्तो की भुजाओ मे भी क्षात्र-रक्त हुमक पडा । यह क्या मामूली वात है ? सिपाहियो के परिवार वाले और उनके जैसे लाखो ग्रामीणजन जिस ज्वाला मे खेलते-खेलते वढ़ गये उस ग़दर और उस सिपाही-विद्रोह को कोटि-कोटि प्रणाम । यह मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूँ कि हमारी जनता १८५७ के गदर के कारण 'गदर' शब्द को क्रान्ति का पर्याय मानती है। 'गदर' शब्द का मूल अर्थ जो है सो है, परन्तु हमारी जनता की समझ मे जो नया अर्थ है वह भी कोशकारो को ग्रहण करना ही होगा ।

रायबरेली

११ जुलाई । कारणवश अधिक दिन लखनऊ मे रुकना पड़ गया । आज प्रात सात वज कर पाँच पर यहा पहुँच गया । रायबरेली ज़िले के सूचना अधिकारी श्री हरिश्चन्द्र मेहरोत्रा मेरे सहपाठी और वाल-वन्धु हैं । उनका घर स्टेशन के सामने ही था । घर पहुँच गये । हरिश्चन्द्र ने कहा "चन्दापुर और नायनराज के वशज रायवरेली मे ही रहते हैं और ये लोग आज कल मे लखनऊ जाने वाले हैं, इसलिए उनसे आज ही मिल लिया जाय ।" इच्छा तो यह थी कि शीघ्र से शीघ्र अवध के मर्दाना राणा की पुण्य-भूमि शकरपुर के दर्शन करू, परन्तु उस प्रोग्राम को दूसरे दिन के लिये रख कर सवसे पहले चन्दापुर के वशजो से मिलने चल दिया । 'स्वतत्र भारत' मे श्री अजनी कुमार के लेख मे ही इस ज़िले के नाम पाये थे । उक्त लेख मे गदर मे भाग लेने वाले चन्दापुर

के राजा का नाम शिवदर्शन सिंह था। तब तक मुझे यह नही मालूम था कि शिवदर्शन सिंह दरअस्ल लोक-काव्य में प्रसिद्ध 'सुदरसन काना' हैं। चन्दापुर के श्री जितेन्द्र सिंह नवयुवक है, भले हैं। लखनऊ के कालविन ताल्लुकदार कालेज में पढते थे, तब वहा भी किसी सभा समिति के सिलसिले में अपने सहपाठी, मेरे आयुष्मान् ओमप्रकाश खुनखुन जी के साथ मुझसे मिल भी चुके थे। ज़मीदारी से पूर्व श्री जितेन्द्र सिंह गोद द्वारा अधिकार पाकर चन्दापुर राज के गद्दीधर सामन्त थे, अब भी राजा ही कहलाते हैं।

राजा शिवदर्शन सिंह पहले तो राणा वेणीमाधव के सगठन में थे, बाद में कमज़ोर पड गये। लोककवि श्री दुलारे उन्हें अमर कर गये हैं। राजा 'सुदर्शन' के बहाने मैं उस पूरे गीत को लिखने का लोभ सवरण नही कर सकता जिसे मैंने बहुत पहले सुना था और जिसके द्वारा ही राणा वेणीमाधव बख्श से मेरा करीब-करीब प्रथम परिचय हुआ था

अवध मा रानाँ भयो मरदाना ॥
पहिल लडाई भई बक्सर माँ सेमरी के मैदाना।
हुवाँ से जाय पुरवा माँ जीत्यो तबै लाट घबडाना॥
नक्की मिले मान सिंह मिलिगे मिले सुदर्सन काना।
छत्री बस एकु ना मिलिहै जानै सकल जहाना॥
भाई बन्ध औ कुटुम कबीला सबका करौं सलामा।
तुमतो जाय मिल्यो गोरन ते हमका हैं भगवाना॥
हाथ माँ भाला बगल सिरोही घोडा चले मस्ताना।
कहैं 'दुलारे' सुन मोर प्यारे यो राना कियो पयाना॥

अब तो राणा वेणीमाधव के सम्बन्ध इतना कुछ जान चुका हूँ कि गदर के के सिलसिले में उनके नाम स्मरण मात्र से ही मन स्फूर्ति पा जाता है। देश के लिये सर्वस्व बलिदान करने वाले हुतात्माओ की स्मृतियाँ इसीलिये तो सहेजी जाती हैं। अस्तु।

वर्तमान राजा जितेन्द्र सिंह के पिता श्री चन्द्रलोचन सिंह भूतपूर्व राजा चन्द्रचूड सिंह, सी० आई० ई० के भाई हैं। उनसे पूछा "राजा शिवदर्शन सिंह के सम्बन्ध में कोई पुराने कागज-पत्र या लेख आदि हो तो—"

"लेख मिलब तौ मुसकिल है। एक किताब है 'कनपुरिया बस'—वहिमाँ राजा सिउदर्सन सिंह का हाल लिखा है। लडाकू हमेसा के रहे। नवाबी हुकूमत

रही। तबहूँ चकलेदारन ते लडाई होत रही। एक का तौ मारै डाला। फिर जब गदर भा तब अगरेजन ते लडे।"

श्री चन्द्रलोचन सिह द्वारा दिये गये विवरण के अनुसार राजा सुदर्शन उर्फ शिवदर्शन सिह ने मालगुज़ारी कभी अदा न की, न नवावो को और न अँग्रेजो को ही। शारीरिक शक्ति बहुत थी, चाँदी वाला रुपया चुटकी से मसल देते थे। घुडसवार एक नम्बर के थे, घाघरा और गगा के बीच में पूरे सवार माने जाते थे। घाघरा के उस पार इकौना के राजा मुन्ना और बलरामपुर के महराज दिग्विजय सिह पूरे सवार माने जाते थे। उधर के लोग इन्हें आधा सवार कहते थे और इस प्रकार ढाई सवारो में इनकी गिनती थी।

पहले राणा बेणीमाधव के साथ इनकी टुकडी थी। बाद मे अग्रेजो ने चदा-पुर की तोप पकडी। उस समय शिवदर्शन सिह मौजूद थे। तोप से चन्दापुर का नाम मिटवाया गया, फिर भी पूरी तरह न मिटा। शिवदर्शन सिह ने कहा कि तोप हमारी नही है। इस पर अँग्रेजो ने तिलोई के छोटे भाई बाबू ठाकुर प्रसाद पर फैसला छोडा। तिलोई और चन्दापुर मे वैमनस्य चला आ रहा था। बाबू ठाकुर प्रसाद ने कह दिया कि तोप पर नाम तो चन्दापुर का ही लिखा हुआ है। इस पर इनका आधा इलाका जब्त करने का हुक्म हुआ। शिवदर्शन सिह से कहा गया कि या तो एक लाख रुपया दो या आधा इलाका। हाँ, इलाके मे यह रिआयत अवश्य की गई कि जो मौजे राजा देना चाहें उन्ही को अग्रेज सरकार स्वीकार कर लेगी।

लोगो ने सलाह दी कि एक लाख रुपया दे दो। राजा शिवदर्शन सिह ने कहा· "सारेन का रुपैया न देव। रुपैया लयिकै विलाइत चले जैहैं, औ मौजन पर तौ आगे कबहू कब्जा कयि लीन जाई।"

राजा का इलाका सौ मौजो का था, पचास जब्त हो गये। उन्होंने वे मौजे न दिये, जिनमे ब्राह्मण ठाकुरो की बस्ती थी, कहा "मौका आने पर इन्ही उच्चवर्ण वालो की सेना लेकर जब्त किये जाने वाले इलाके पर फिर से अधिकार कर लेंगे।"

आधा इलाका जब्त कर इनका नाम बाग़ियो मे लिख दिया गया। तब राजा सुदर्शन उर्फ शिवदर्शन सिह ने अपने जीते-जी अपने पोते जगमोहन सिह को गद्दी सौंप दी और राज-काज से अलग हो गये। राजा के अपनी कोई सन्तान नही थी। उन्होंने अपने भतीजे हरप्रसाद सिह को गोद लिया था। हर प्रसाद सिह

अपने पुत्र जगमोहन सिंह के जन्म के वाद ही परलोकवासी हो गये थे, इस लिये गद्दी जगमोहन सिंह को मिली। चदापुर मे एक तोप और थी। उसे चरक पर चढा रातोरात अटरा भेजा जा रहा था। रास्ते मे चरक टूट गया। तोप वही एक खेत मे तोप दी गई। लेकिन वाद में पता चल गया। लोगो ने कहा कि यह चदापुर की तोप है। कमिश्नर ने कहा कि आप कबूल कर लें। पर राजा जगमोहन सिंह ने ऐसा न किया। लोगो ने कहा कि अटरा वाले राम वख्श सिंह के घर के लोग पकडे जाय तो कबूल कर लें। वहा की औरतें तक पकडी गईं। पेड पर लटका कर सख्ती की गई। तव तक राजा रामवख्श सिंह भी आ गये और राजा जगमोहन सिंह से कहा कि 'हा' न कहना। जव स्त्रियो पर अत्याचार होने लगा तो राजा जगमोहन सिंह कहँ "वावा, अब वताय देई ?" राजा रामवख्श सिंह ने तब भी न कहने दिया।

फिर मामला रफा-दफा हो गया, मैक्डानल्ड साहब के जमाने तक ये लोग वागी लिखे गये, परन्तु उनसे चूंकि मित्रता थी इसलिये, उनके प्रयत्न से राजा जगमोहन सिंह का नाम बागियो की सूची से निकाल दिया गया। दो जब्तशुदा मौज़े भी लौटा दिये गये, एक तो जपालमऊ जो मऊ और मुरैंनी के वीच मे है और दूसरा राजापुर जो भिरथुआ और सीवन के बीच मे है।

राजा शिवदर्शन सिंह के जब्त किये गये आधे इलाके मे से नौ मौज़े 'डियरा' वालो को मिले, छोटा बडा 'पारा' और 'तौली' मौरावा वालो को मिले, राघो पुर आगा अहमद जान पजाबी को दिया गया, जेओना सरवर मिया वकील के वावा को मिला, ठिकुरहा, माझ गाँव, भैयापुर, ताजुद्दीनपुर चौधरी साहव सुवेहा को दिये—ऐसे ही सब सरकारी खैरख्वाहो मे वह आधा इलाका बाँट दिया गया।

श्रीमान चन्द्रलोचन सिंह ने चन्दापुर घराने से सबधित एक और कथा भी सुनाई। नसीरुद्दीन हैदर के समय में चन्दापुर के निकटवर्ती ग्राम ताजुद्दीपुर (ताजुद्दीनपुर) के एक दलजीत सिंह थे। वे नसीरुद्दीन हैदर की अर्दली में थे और उसकी नाक के बाल हो रहे थे। दलजीत सिंह और घनिया महरी नसीरुद्दीन हैदर का घर खूब लूटते थे। दलजीत सिंह ने वडा माल मारा।

नसीरुद्दीन को सूजाक की बीमारी थी। हकीम ने बैंगन खाने पर प्रतिवन्ध लगाया था। नसीरुद्दीन ने वडा हठ किया तो दलजीतसिंह ने बैंगन खिला दिया। सयोग से उसी रात नसीरुद्दीन का देहान्त हो गया।

उसके बाद ही दलजीत सिंह के यहा दौड आई। लूट हुई। दलजीत सिंह के यहा की स्त्रिया गहने आदि बहुमूल्य सामग्री लेकर चन्दापुर की ओर भागी। राजा शिवदर्शन सिंह ने भी अपने आदमियो को लूटने भेजा। उन स्त्रियो से आभूषण छीन लिये गये। उन आभूषणो में एक नौलखा हार भी था। एक शाल थी, जो बहुत मूल्यवान थी। जब पता चला कि दलजीत सिंह का माल चन्दापुर मे है, तो यहां भी दौड आई। राजा शिवदर्शन सिंह ने वह माल अपने मित्र सूर्यपुर बहरेला के राजा के यहा रखवा दिया। यह रियासत बाराबकी ज़िले मे थी। सूर्यपुर पर अयोध्या के राजा मान सिंह ने आक्रमण किया और बहुत सा माल लूट ले गये। उस लूट में वह नौलखा हार और शाल अयोध्या चला गया, बहुत दिनो तक वह हार अयोध्या में रहा।

फिर अयोध्या की एक रानी थी। उनके प्राइवेट सेक्रेटरी एक प्रसिद्ध पुरुष थे जिनका रानी जी पर बडा प्रभाव था। प्राइवेट सेक्रेटरी महोदय ने अपने लडके के विवाह के अवसर पर रानी से कुछ ज्वेलरी, जिसमे वह नौलखा हार भी शामिल था, शादी के लिए उधार मांग ली। उसके बाद रानी ने कई बार तकाज़ा किया पर प्राइवेट सेक्रेटरी महोदय बराबर टालते रहे और वह हार उनके यहा ही रह गया।

दलजीत सिंह को श्री चन्द्र लोचन सिंह ने देखा था। उस समय दलजीत सिंह वृद्ध था, हर तरह से तबाह हो चुका था और आजीविका के तौर पर मरहम बेचा करता था।

नौलखा हार व्यापक सामती दुराचार की कहानी का प्रतीक है।

दिन मे हम लोग चन्दापुर कोट भी देखने गये। राजा शिवदर्शन के समय तक जो पुराना कोट था, वह उन्ही के काल में ध्वस्त हो गया था, राजा जगमोहन सिंह ने नई कोठी बनवाई थी।

श्री जितेन्द्र सिंह ने बडे उत्साह से एक-एक कमरे, एक-एक जगह दिखलाई। पुराने काग़ज़ात, जिसकी लालच में यहा आया था, देखे, मगर राजा शिवदर्शन अथवा गदर से सबधित कागज पत्र जान पडता है, चुन-चुन कर नष्ट कर डाले गये थे। राजा जगमोहन सिंह को 'कम्पेनियन ऑफ दि मोस्ट एमिनेंट ऑर्डर ऑफ दि इडियन एम्पायर' (सी० आई० ई०) बनाया गया, दोयम नबर के ऑनरेरी मजिस्ट्रेट बने, दरबार मे 'मेडिल ऑफ ऑनर' मिला, वे भला फिर ऐसे कागज-पत्र घर मे रहने देते।

श्री चन्द्रलोचन सिंह जी ने काग़ज़ात के सबध मे तो पहले ही कह दिया था

कि नही बचे, भूल-चूक से कोई कागज़ शायद रह गया हो तो हो, मगर घराने से सबधित गदर या पुराने इतिहास का विवरण शायद हस्त-लिखित ग्रथो मे हो सकता है । पुस्तको का इस राजवश मे किसी समय बडा आदर रहा है । राजा चन्द्रचूड सिह बडे ही विद्याव्यसनी पुरुष थे । उनके देहान्त के बाद इक्कीस-बाईस हज़ार पुस्तके रायबरेली के शारदा सदन पुस्तकालय को दे दी गई थी ।

हस्तलिखित पोथियो मे प्राय समस्त पुराण, महाभारत, दर्शन सबधी साहित्य अब भी चन्दापुर महल के एक पोशीदा मालखाने मे पुरानी टूटी अलमारियो में धूल और मकडी के जालो के साथ-साथ बाकी बच गये थे, कुछ अग्रेजी उपन्यास और पुरानी छपी हुई किताबें भी थी । आप्टे के सुप्रसिद्ध और अप्राप्य सस्कृत-अग्रेज़ी कोश की दो प्रतिया देखी । मनुआ डोल गया, एक प्रति का दान मागने मे मुझे तनिक भी लाज न आई । श्री जितेन्द्र सिह बेचारे सकुचित-से होने लगे, बोले "आप अवश्य ले जाइये । और भी जो पुस्तक चाहे ले लें ।' मैंने मतलब की एक और पुस्तक भी ले ली । सन् १८९३ ई० मे मेकमिलन कपनी से प्रकाशित 'दि गोल्डेन बुक ऑफ इडिया' मे गदर के बाद के भारत, लका और बर्मा देशो के हिज़ हाइनेस, राजा बहादुर, राय बहादुर, नवाब बहादुर, ए बी सी डी एक्स वाई ज़ेड आदि सब किस्म के टाइटिल पाने वालो का सक्षिप्त विवरण दिया गया है । इस 'गोल्डन बुक' के दर्पण मे बहुत से सुनहरे सर्दार अपनी गदर की गद्दारी का स्पष्ट प्रतिबिब झलकाते दिखलाई पड जाते हैं । राजा जितेंद्रसिह ने राजा शिवदर्शन सिह की एक छडी तथा एक अन्य छडी भी मुझे भेंट की ।

हम पडोस के जनई ग्राम गये । किसी प्राचीन को दबाये हुये ढूह वहा पडे हैं, उन पर मध्यकालीन ईंटो की एक मीनार खडी है । थोडी दूर पर ही एक इदारा (बडा कुआँ) भी है, जिसकी ईंटें किसी प्राचीन काल की निशानी-सी अब शायद सौ-पचास ही बच रही हैं । कुँये मे एक बडे साप की केचुल भी लहरा रही थी ।

हमारे साथ एक सरल हृदय भक्त मार्का ठाकुर युवक भी थे जिनका तकिया कलाम 'राम जी की इच्छा से' आते-जाते रास्ते भर मज़ा देता रहा । रामजी की इच्छा से वे सोशलिस्ट पार्टी के 'आँग्लमूर्ति हटाओ' आन्दोलन मे जेल गये और अपनी पूजा-पाठ आदि मे विघ्नबाधा देख रामजी की इच्छा से माफी माग कर लौट भी आये । एक क्षत्रिय जातीय-सभा मे एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पेश कर उसे पास कराने के लिये ज़ोरदार स्पीच दे डाली, वह प्रस्ताव रामजी की इच्छा से स्वय उनके विवाह का ही था । परन्तु रामजी की इच्छा से भक्त ठाकुर अब तक कुँआरे ही हैं ।

सायकाल नायन राजवश के श्री शिवदुलारे से भेंट हुई। नायन के राजा भगवान वख्श सिंह का नाम भी गदर के सबध मे पढा था।

श्री चद्रलोचनसिंह ने नायन राज से सबधित एक बडी मजेदार कथा सुनाई थी। श्री शिवदुलारे की बातें यहाँ उद्धृत करने के पहले उस गदर के पहले की बात का उल्लेख कर देना उचित होगा।

नवाबी शाही सरकार को मालगुजारी न देना सामतो का आम रिवाज था, यह मैं पहले भी कई स्थलो पर लिख चुका हूँ। नायन वाले भी सरकारी खजाने मे झझी कौडी नही देते थे। इसलिये उस क्षेत्र के शाही चकलेदार खानअली से उनकी आये दिन की अदावत रहा करती थी। एक बार खानअली नायनगढ का ध्वस कर उस जगह तालाब बनवाने का प्रण कर निकला। उसने अपनी सेना को ललकार दी कि—

"मारौ मुरगा खाओ कलिया।
नायन खुदाय करौ तलिया॥"

नायन वालो तक यह बात पहुँच गई। उन्होंने अपनी सेना से कहा—

"मारौ बकरा खाओ कलिया।
टका न पाई खान अलिया॥"

गदर मे, श्री शिवदुलारे के कथनानुसार, भगवान वख्श का विशेष हाथ न था, वे सयोग से उसमे फँस गये थे। बात यो हुई कि केशवापुर मे अग्रेजो का जिला दफ्तर और छावनी थी। केशवापुर नायन राज मे ही था। जब गदर मचा तो नायन वालों ने छावनी लूटने की नीयत से हमला किया और बहुत सामान उठा लाये। उस सामान मे सादे स्टाम्प कागजो का बडल भी था। इन लूट के स्टाम्प कागजो पर बाद मे गोस्वामी तुलसीदास जी की 'विनय-पत्रिका' की नकल की गई। लूट के कागजो पर रामनाम की लूट का विनय भरा लेखा लिखने का खयाल भी खूब है।

जीत हो जाने पर अग्रेजो ने जब नायन वालो की गिरफ्तारी का प्रबध किया तो यहा पचायतें बैठ गई। नायन के कई पट्टीदार थे। सबने मिल कर यह तय किया कि घर मे जो सबसे बूढा हो उसे गिरफ्तार करा दिया जाय तो बाकी लोग और राजपाट जब्त होने से बच जायगा। भगवान वख्श सिंह सत्तर-अस्सी वर्ष के बूढे थे। उन्हे समझा दिया गया।

दूसरे दिन वे ही अग्रेजो की कचहरी मे हाजिर किये गये और उन्होंने कह दिया कि दोषी मैं ही हूँ और कोई नही।

अग्रेज़ो ने वाकी पट्टीदारो का हक तो न छीना मगर इनकी पट्टीदारी का का भाग गुज़ारे के लिये एक गांव देकर ज़ब्त कर लिया गया। फिर तो भगवान-वख्श वडे छटपटाये, वडे-वडे तर्क लगाये मगर कोई असर न हुआ।

अग्रेज़ो से जो माफीनामा नायन वालो ने पाया था उसके शब्द श्री शिवदुलारे के कथनानुसार कुछ इस प्रकार थे "रऊसा-ए-नायन सल्तनते नवावी के पाले-पोसे हैं। महज तमाशा की वजह से इन्होंने केशवापुर फूंक दिया था, लिहाजा इनका कसूर माफ किया जाता है।"

इनके अतिरिक्त 'कनपुरिया क्षत्रिय वश परिचय' नामक पुस्तक से, जो श्री जितेन्द्रसिंह के पास देखने को मिली, मुझे तिलोई टिकारी और मानसिंह घराना के गदर से सम्वन्धित होने की वात मालूम हुई।

तिलोई राजा के सम्वन्ध मे उक्त पुस्तक मे लिखा है "राजा वुनियादसिंह ने अपने भतीजे जगपालसिह को गोद लिया। इन्होने पहले तो सन् १८५७ ई० के गदर मे भाग लिया, परन्तु शीघ्र ही उसे छोडकर अग्रेज़ो को सहायता देना प्रारभ किया। इसका परिणाम यह हुआ कि वैस वागियो ने इन्हें वहुत सताया, परन्तु गदर की शाति होने पर इन्हे अठेहा के कनपुरिया रामगुलाम सिंह से ज़ब्त किया हुआ एक वडा इलाका मिला।"

टिकारी रियासत के वावू सर्वजितसिह ने १८५७ ई० के सिपाही विद्रोह मे अँग्रेज़ो की सहायता की—"कई भटकते हुए अँग्रेज़ो को अपने कोट मे सुरक्षित रख कर इलाहावाद पहुँचाया। इस सेवा के बदले मे उन्हें भागूपुर की रियासत मिली, जो नायन ग्राम के कनपुरिया वाग़ी भगवानवख्श सिंह से ज़ब्त कर ली गई थी। इसके अतिरिक्त अठेहा के कनपुरिया ठाकुर रामगुलाम सिंह के ज़ब्त किये हुए चार गाँव मिले और यह भी रियायत हुई कि उनके जीवन काल तक वे माफी रहेगे। इसके अतिरिक्त पुरानी और नई रियासत का शुमार अवध की ताल्लुकदारी रियासतो मे हो गया और टिकारी के ताल्लुकदार होने की सनद वावू सर्वजित सिह को मिल गई।"

गोस्वामी जी ने ऐसो की भी वदना की है, उसी परिपाटी के अनुसार इन देश-जाति-द्रोहियो का वदन करता हूँ।

टिकारी रियासत की एक पूर्वकालीन कथा भी वडी रोचक है और कायर सर्वजित सिह के स्वाभिमानी वीर पितामह से सम्वन्ध रखती है।

कथा इस प्रकार है · वावू जगवहादुर सिंह का जन्म सवत् १८१८ विक्रमी

अर्थात् सन् १७६२ ई० मे हुआ था। यह राज्य-प्रवन्ध मे इतने कुशल और वीरता मे इतने वढ़े-चढे थे कि इनका मान वादशाही दरवार मे भी होता था। उन दिनो ज़मीन की मालगुजारी वसूल करने के लिये ठेका दिया जाता था, और ऐसे ठेकेदारो की चकलेदार सज्ञा होती थी। राज्य शासन सुदृढ होने के कारण ज़मीदार लोग प्राय सरकारी मालगुज़ारी नही देते थे, कभी छिप जाते थे, कभी युद्ध करते थे, कभी पकडे जाकर कैद मे रहते थे, कभी अनेक दण्ड सहते थे। चकलेदारो को प्राय पूरा अधिकार था कि जिस प्रकार चाहे रुपया वसूल करें। यद्यपि ये लोग नादिहन्द ज़मीदारो को अमानुषीय दण्ड देते थे, जैसे नाखूनो मे वाँस की फरचिया ठुकवाना, विष्ठा का तोवरा मुँह पर चढवाना, जलते हुए लोहे के सूजे से पीठ पर लकीरे खिचवाना, मुश्कें कस कर पेड मे वँधवाना आदि, तथापि प्रधान लक्ष्य रुपया वसूल करना था, और इसके लिये अन्य वलवान ज़मीदारो को जव मालूम हो जाता था कि अमुक वलवान जमीदार चकलेदार की सहायता पर है तो वे चुपके से मालगुजारी दे देते थे। ऐसे वलवान ज़मीदार वावू जगवहादुर सिह भी थे, यह जिसकी सहायता करते थे उसी की जीत होती थी, अत इनकी धाक जमी थी।

वावू जगवहादुर सिह इतने स्वाभिमानी थे कि मुसलमानी राज मे हिन्दुत्व की आड लेकर "न वदेत् याविनी भाषा प्राणै कण्ठगतैरपि" की पूरी पावन्दी करते थे। फारसी-अरवी के हज़ारो शव्द उस समय तक साधारण वोल-चाल मे प्रचलित हो गये थे, परन्तु इनकी धुन थी कि जिन शव्दो को यह अरवी-फारसी शव्द समझते थे उनका उच्चारण मुँह से नही करते थे। यह वात धीरे-धीरे सर-कारी अधिकारियो को भी ज्ञात हो गई। एक दिन एक चकलेदार ने परीक्षार्थ पूछा कि वावू साहेव, आप फारसी 'अस्प' को क्या कहते हैं, तुरन्त उत्तर दिया कि 'अश्व' कहते हैं। फिर पूछा कि 'फीलवान' को क्या कहते हैं, कहा 'महावत' कहते हैं।

जो लोग इनसे ईर्ष्या रखते थे उन्हे शिकायत का पूरा मौका मिला। उन लोगो ने वानू वेगम साहिवा से, जो उस समय फैजावाद मे रहती थी और जिन्हे नवाव अवध की ओर से सलोन और अठेहर परगने जागीर मे मिले थे जाकर खूव गहरी शिकायत की कि यह आदमी आपके मुसलमानी धर्म का कट्टर विरोधी है, अन्य फारसी शव्द तो कहता ही नही, आपको भी 'वेगम साहेवा' न कहकर 'तुर-किन रानी' कहता है। यह सुनकर वेगम साहेवा क्रुद्ध हो गई और मौका देखने लगी।

कुछ ही दिनो मैं मौका हाथ आ गया। वावू जगवहादुर सिंह के जिम्मे सरकारी मालगुजारी बाकी रह गई, इसी कारण उन्हे सन् १८२१ ई० मे कैद कर लिया। फिर भी वेगम साहेवा को वही पुरानी वात याद दिलाई गई। उन्होंने कहा परीक्षा की जाय। सामने एक खेमा गडा था और एक भिश्ती मशक मे पानी भरे आ रहा था। वावू साहेव से खेमे की ओर इशारा करके पूछा गया कि यह क्या है, उत्तर दिया कि यह तो 'कपडे का कोट' है। फिर मशक की ओर इशारा करके पूछा गया कि यह क्या है, उत्तर दिया कि यह 'पानी की मोट' है। प्रकट रूप से तो वेगम साहेवा ने प्रशसा की कि यह वडा वीर पुरुप अपने धर्म का पक्का है, परन्तु भीतर-भीतर कुढती रही कि इस काफिर को हमारी जवान से इतनी घृणा है।

अत मे इन्हे दण्ड देने का मार्ग निकाला गया। वेगम साहेबा की सेना ने इनके गाँव भागीरथपुर पर धावा किया जहाँ इनके ज्येष्ठ पुत्र वावू विन्ध्या सेवक सिंह शासन करते थे। युद्ध हुआ और उसमे वावू विन्ध्या सेवक सिंह का शिर काट लिया गया। जब शिर वेगम साहेवा के सामने पेश हुआ तो उन्होने आज्ञा दी कि यह शिर जगवहादुर सिंह को दिखला कर पूछो कि किसका शिर है। हार्दिक दु ख पहुँचाने की पराकाष्ठा की तदबीर यही थी कि ज्येष्ठ पुत्र का कटा हुआ शिर दिखाया जावे। ऐसा ही किया, वावू जगबहादुर सिंह ने पहचान कर अभिमान के साथ कहा कि किसी वीर पुरुष का होगा। यह भी कहा कि "हमारे वश के एक वीर पुरुप राजा बलभद्र सिंह थे जिन्होने अपना शिर दे दिया था, और दूसरा वीर पुरुप यह है, इसकी वीरता के लक्षण अब भी मुझे इसके हँसते हुए-से मुख पर प्रतीत होते हैं।-

कनपुरिया क्षत्रियो मे मानसिंह घराने के ठाकुर रामगुलाम सिंह का नाम भी सत्तावनी क्रान्ति के सिलसिले मे आता है। 'कनपुरिया क्षत्रिय वश परिचय' मे इनके सम्बन्ध मे लिखा है "ग़दर के समय रामगुलाम सिंह ने शकरपुर के बाग़ी राना वेनीमाधो बख्श का इतना बडा साथ दिया कि उसके दण्ड मे इनकी सब जायदाद ज़ब्त करके तिलोई के राजा को देदी गई, इनके पास केवल चार गाँव गुज़ारे के लिये रह गये। ये भी पीछे से टिकारी के ताल्लुकदार को दे दिये गये। इस प्रकार एक पुरानी रियासत का अन्त हो गया।

"स्थानीय जाँच मे हमे ठाकुर रामगुलाम सिंह का जो हाल मालूम हुआ वह लिखते हैं। इसके लिये कोई प्रामाणिक कागज़ नही मिले किन्तु ज़बानी बातें मालूम

हुई हैं। ठाकुर रामगुलाम सिंह मुसलमान शासक की ओर से रियासत का प्रबन्ध करने के लिये नियत थे। कारतूस काटने के झगडे में जो भारी बलवा हुआ और जिसमे कई फौजें बिगड गई उसी के सिलसिले मे अनेक तालुकदारो ने लखनऊ के बिरजीस क़द्र की सहायता के लिये आपस मे एक अहदनामा लिखा कि अंग्रेज़ो का सामना करना चाहिये। जब काला कांकर के राजा हनुमन्त सिंह के पुत्र लालना प्रतापसिंह प्रतापगढ जिले के बिसनाही हल्के के चाँदा स्थान पर मारे गये तब राजा हनुमतसिंह तथा तिलोई के बाबू ठाकुरप्रसाद सिंह ने ठाकुर रामगुलाम सिंह के पास खबर भेजी कि अहदनामा तोड देना चाहिये। यह बात उनको पसद न आई, और यद्यपि तालुकदार लोग उनके विरोधी हो गये, तथापि उन्होंने बागियो की सहायता करना बन्द नही किया। जब टक्कर साहेब का पडाव अठेहा मे आया तब उन्होंने ठाकुर रामगुलाम सिंह को बुलाकर सुलह की बातचीत की, परन्तु उत्तर पाया कि हम इस समय बागियो के हाथ मे हैं, यदि उनका साथ छोड देंगे तो वे हमे जिन्दा न छोडेंगे। इस पर दोनो ओर विचार होने लगा। रामगुलाम सिंह ने भीतरी भाव से अंग्रेज़ो की सहायता का इरादा किया, और टक्कर साहेब ने उनकी रक्षा का कोई उपाय सोच कर भगवानदास कारिन्दा के हाथ सन्देश भेजा। परन्तु वह कारिन्दा ठाकुर साहेब के पास नही पहुँचा। इधर रामगुलाम सिंह ने उद्योग करके जनरल बेरू साहब को केशवापुर मे बागियो के हाथ से बचाकर अपने साले, राजा हनुमत सिंह के पास भेज कर खबर दी कि इन्हे रक्षा के साथ इलाहाबाद भेज दीजिये। राजा हनुमतसिंह को अपनी खैरखाही दिखाने का अच्छा अवसर मिल गया। परन्तु रामगुलाम सिंह की मौजूदगी मे पूरी नेक नामी राजा साहेब को नही मिल सकती थी, अत उन्होंने सोचा कि रामगुलाम सिंह को पहले चूर्ण करा देना चाहिये। निदान उन्होंने किसी प्रकार समझा बुझा कर बेरू साहेब ही से रामगुलाम सिंह पर आक्रमण करा दिया। तीन पहर लडाई हुई जिसमे २ अंग्रेज ८५ अफ़सर ९५० सिपाही मारे गये। अन्त मे रामगुलाम सिंह शंकरपुर के राना बेनीमाधो के यहा चले गये और वहा से नैपाल भाग गये। कुछ दिनो पीछे जब रामगुलाम सिंह की नेकनियती का सुबूत अंग्रेजो को मिला तब टक्कर साहेब ने खून माफ करके उनको नैपाल से बुलाया और उन्नाव ज़िले मे चार गाँव गुज़ारे मे दिये। उनकी रियासत जो तिलोई को इन्तज़ाम करने के लिये दी गई थी वहीं रह गई।"

ठाकुर रामगुलाम सिंह की कुछ सिफारिशी चिट्ठिया जो हमे उनके

उत्तराधिकारियो से मिल सकी हैं उनकी प्रतिलिपि नीचे दी जाती है। कोई नाम ठीक-ठीक नही पढ़े जाते।

ठाकुर रामगुलाम सिह की सिफारिशी चिट्ठियो का हिन्दी अनुवाद नीचे दिया जाता है।

[पत्र १]

रामपुर खजुरिहा के भूतपूर्व ताल्लुकदार रामगुलाम सिंह को मैं यह चिट्ठी देता हूँ। सन् १८५८ ई० के अन्त मे हमारी सेना ने उनका कोट उडा दिया, तव वह अपना अपराध अक्षन्तव्य समझ कर नैपाल भाग गये थे, परन्तु उसके दूसरे ही वर्ष के अन्त मे उन्होने आत्म-समर्पण कर दिया। चूंकि वह निर्दोष मनुष्य थे, और हमारी सरकार के प्रति किसी द्वेष के कारण नही किन्तु अनुचित परामर्श के कारण उन्होने हानि उठाई थी, इसलिये उनके गुज़ारे के लिये मैंने उन्हें लार्ड कैंनिग से एक छोटी रियासत दिलवाई। तबसे उनका चाल-चलन बराबर ही बहुत अच्छा रहा है।

लखनऊ, २८ फरवरी, १८६६ ई० द सी० बिग फील्ड

[पत्र २]

इधर कुछ ही दिनो मे कई बार ठाकुर रामगुलाम सिंह से मिल कर मुझे हर्ष हुआ। किसी समय जिला प्रतापगढ के कुल परगना अटेहा के मालिक थे, परन्तु सन् १८५७ ई० के गदर मे किसी अश मे सन जाने के कारण उनकी कुल रियासत जाती रही। उनके पुराने इलाके मे मुझे कितने ही मामलो की जाँच-परताल करनी पडी, और उनके बारे मे मैंने बहुत कुछ सुना, परन्तु किसी समय कोई बात उनके प्रतिकूल न सुनी। अब उनका चालचलन बहुत ही अच्छा है, उनके पास यूरोपीय अफसरो की सिफारशी चिट्ठिया हैं, जिनमे विगफील्ड साहेब (भूतपूर्व चीफ-कमिश्नर) की भी चिट्ठी है। एक बडी रियासत के स्वामित्व की वैभवमयी अवस्था से गिरकर अब वह एक गाँव के ठाकुर की नीची हैसियत पर आगये हैं, इसका कारण लोगो की बुरी सलाह थी, न कि हमारी सरकार के प्रति उनका कोई द्वेषभाव था। इसलिये वह विशेष ध्यान के अधिकारी हैं। मैंनें उन्हें सदा एक शीलवान सज्जन पाया।

द एम० फेरार, ए० एन० ओ० कैम्म कुढ़िया, ९-३-६९।

[उक्त पुस्तक की सन् १९३० ई० मे केवल छह सौ प्रतिया वितरणार्थ छापी

गई थी। रियासत वेरारा जिला रायबरेली के रईस बाबू रणवहादुर सिह ने पण्डित चन्द्रमौलि सुकुल, एम० ए०, एल० टी० से उसे तैयार कराया था।]

ठाकुर रामगुलाम सिह के लिये लिखे गये अग्रेजो के सिफारशी पत्र यह स्पष्ट करते हैं कि सत्तावनी क्राति के असफल होने के वाद अनेक 'स्वाभिमानी' क्षत्रिय, ब्राह्मण और उच्च वर्गीय मुसलमान ताल्लुकेदार अग्रेजो के प्रति खैरख्वाही दिखलाते हुए उनके तलवे चाटते थे। अग्रेजो के सार्टीफिकेट वटोरने की, नाक रगडने की वात देख, यह सोच कर हैरत होती है कि आखिर हमारे इन ताल्लुकदार पुरखो का क्षात्र धर्म और स्वाभिमान कहां चला गया था। इन चरित्रो को देख कर कवि दुलारे के लोकगीत की राणा सवधी वे पक्तिया याद आती हैं।

"भाई वध औ कुटुम कवीला सवका करौं सलामा।
तुम तौ जाय मिल्यो गोरन ते हमका है भगवाना।।"

मैं सोचता हू नैपाल के जगलो मे भटकते हुए हमारे सत्तावनी क्राति के नायकों को अपना राजपाट जाने, अग्रेजो से हारने का शायद इतना ग़म न होता होगा जितना कि अपने साथियो के दुनियादारी की लालच से धोखा देकर साथ छोडने और अग्रेजो के मददगार वन जाने का हुआ होगा। इन सामतो ने आपस मे अहदनामे किये थे, इस वात का नया प्रमाण ठाकुर रामगुलाम सिह की इस पुस्तक मे दिये गये परिचय से भी मिलता है।

एक दूसरी वात के प्रति भी सकेत मिलता है जब किसी सामत के सगठन छोड कर अग्रेजो से मिल जाने की वात का पता क्रातिकारी सगठन के लोग पाते थे तो भगोडे सामत को वहुत सताते थे। ऐन लडाई की गर्मी मे मैं क्रातिकारियो के इस 'पाप' को भी पाप मानने के लिये तैयार नही हूँ, कारण कि कठोर सघर्ष के काल मे जो साथी दगा देता है उससे यह भी भय लगता है कि वह शत्रु पक्ष को सगठन की गुप्त वातें भी प्रकट कर देगा।

तीसरी वात यह मिली कि हमारे सामतो मे अनेक ऐसे थे जो 'पीसनहारी ने पीसा और समेटनहारी ने जस लूटा' वाली कहावत को चरितार्थ करते हुए आपस मे घोर दग़ावाजी कर जाते थे। अग्रेजो को वचाकर राजा हनुमन्तसिह की मार्फत इलाहावाद भेजने का आयोजन करने वाले रामगुलाम सिह राजा हनुमन्त सिह से ऐसा ही धोखा खा गये। राजा हनुमन्त सिह, इस पुस्तक के अनुसार ठाकुर रामगुलाम सिह का जस लूट ले गये और उस लूट को सुरक्षित रखने के लिये उन्होने रामगुलाम सिह की झूठी शिकायत कर उन्हें तबाह भी करवा दिया।

ठाकुर रामगुलाम सिंह गुनाह-बेलज्जत शहीद हुए, न खुदा ही मिला, न विसाले सनम ।

कनपुरिया क्षत्रियो मे एक भी ऐसा दिलेर न उठा जो बैस क्षत्रिय राणा, बिसेन क्षत्रिय देवीबख्श सिंह, और रैकवार वीर बलभद्रसिंह की तरह सत्तावनी इतिहास पर अपनी छाप छोड जाता ।

वैसे विभिन्न क्षत्रिय जातियो मे कनपुरिया ही ऐसे हैं जो मूलत अवधवासी कहे जा सकते है । कनपुरिया वश के निकास की कथा भी बडी रोचक है । अश्वत्थामा के वश मे सत्याधर और वामदेव से कान्यकुब्ज शुक्ल और पाण्डेय लोगो के वश चले । इन पाण्डेय लोगो मे गेगासो के पाण्डेय बहुत ऊँचे माने जाते हैं । गेगासो जिला रायबरेली मे गगा तट पर बसा हुआ एक ग्राम है जिसका शुद्ध नाम गर्गाश्रम बतलाया जाता है । इसी ग्राम के एक पाण्डेय सूक्ष्म मुनि के नाम से प्रसिद्ध थे । लगभग साढे सात-आठ सौ वर्ष पूर्व मानिकपुर के गहरवार राजा मानिकचन्द नि सतान होने के कारण दु खी रहते थे । वे मुनि की सेवा मे लगे । मुनि के वरदान से उन्हे एक कन्या उत्पन्न हुई । चूंकि कन्या के पिता ने मुनिवर को यह वचन दिया था कि मेरे जो भी सतान होगी, आपकी सेवा मे रहेगी सो वह कन्या बडी होने पर मुनि की सेवा मे रहने लगी । एक दिन मुनि ने प्रसन्न होकर उस लडकी को पुत्रवती होने का वर दिया । कन्या सहम गई, बोली, आपके वरदान से मुझे कलक लग जायगा । मुनि बोले, कि पुत्र तेरे कान से उत्पन्न होगा । इस प्रकार कान से उत्पन्न होने वाले पुत्र से कनपुरिया क्षत्रियो का वश चला ।

इस अनहोनी सी किवदन्ती के अतिरिक्त एक उचित लगने वाला तर्क भी मिलता है । अविवाहिता कन्या से उत्पन्न होने वाला पुत्र कानीन कहलाता है । राजा मानिकचन्द्र की कन्या के गर्भ से उत्पन्न गेगासो के सूक्ष्म मुनि का पुत्र कानीन कहला सकता है ।

कनपुरियो का पूर्व इतिहास उनकी वीरता के अच्छे उदाहरण प्रस्तुत करता है, फिर भी समझ मे नही आता कि १८५७ की क्रान्ति मे कनपुरिया क्षत्रियो का इतिहास तुतलाता क्यो रहा ।

डलमऊ

दूसरे दिन भीरा गोबिन्दपुर और डलमऊ का प्रोग्राम बनाया । भीरा मे राणा वेणीमाधव की अगरेजो से जबर्दस्त मुठभेड हुई थी और डलमऊ मे मौलवी अहमद

शाह के सवन्ध मे कुछ जानकारी प्राप्त होने की आशा थी। मौलवी साहव डलमऊ मे रहे थे, वहा से उन्होंने राणा वेणीमाधव वख्श को पत्र लिखा था। वह पत्र मैंने डाक्टर रिज़वी के पास देखा भी था।

डलमऊ मे मुझे दुर्भाग्यवश मौलवी साहव के सवन्ध मे कोई सूचना प्राप्त न हो सकी। गदर के प्रति वहा के लोग उदासीन थे, उसकी चरचा छेडने पर वे भरो और मुसलमान राजाओ की लडाई का हाल सुनाने लगते, मैंने उसी को प्राप्त कर अर्द्ध सन्तोष पा लिया। डलमऊ पचायत के प्रधान पडित गोपीनाथ जी ने डलमऊ मे गगातट पर स्थित भरो के पुराने क़िले के सवन्ध मे वतलाया।

यह किला भरो का है, फगुए के दिन इस पर हमला किया गया था। फाग मे भर लोग हथियार नही छूते थे। यो वडी वहादुर कौम थी, पर दारू पीने की लत उन्हें पडी हुई थी। सो होली मे सव भर सिपाही, राजा दारू पिये मस्त पडे थे, उसी मे हमला हो गया। कहते हैं कि किले मे पानी के फाटक भी थे। जब शर्की राजा के आदमी किला तोडकर अदर घुस गये तो भरो ने अपनी औरतो की इज्ज़त वचाने के लिये पानी के फाटक खोल दिये, स्त्रिया डुवा दी गई, दुश्मन उनकी इज्ज़त नहीं ले पाया।

उस खून भरी होली की याद मे डलमऊ गाँव के लोग आज भी होली के दिन होली नही मनाते। तीन दिन तक सूतक लगता है, गाव मे किसी के यहा तवा नही चढ़ता।

डलमऊ डाल वाल सात भाइयो का वसाया हुआ है, सातो भाइयो के मेले यहां लगते हैं। डाल वाल का मेला डलमऊ और पखरौली के वीच भादो मे अमावस के वाद सोमवार को लगता है। कहते हैं कि डाल वाल जव लडते हुए भागे तो वहा पहुँचने पर तँवोली से कहा कि पान खिलाओ। तँवोली वोला कि तुम अपना सिर तो गँवा आये, अव पान कैसे खाओगे। तँवोली के यह कहते ही डाल वाल की सिरकटी लाशें धरती पर गिर पडीं। वही मेला लगता है। तीसरे भाई ककोरन थे। ककोरन का मेला मनिहर शर्की के पास सावन मे लगता है। चौथे भाई वैंदान थे, वैंदान का मेला होली के वाद पहले सोमवार को वहाई मे लगता है। कुम्हार गधे की मूरत वनाते हैं, जो उनकी समाधि पर चढाई जाती है। पाँचवे भाई का नाम रहमाल था, रहमाल का मेला यहा से लगभग, पाँच मील दूर गगापार होता है। यह मेला भी भादो मे ही होता है और उसमे वडे-वड़े दगल होते हैं। वाकी दो

भाइयो का हाल नही मालूम । मनिहर शर्की मे ककोरन के इर्द-गिर्द भरवटिया अहीरो के वहुत से घर हैं । उनके यहा भरो के वहुत से किस्से मिल सकते हैं ।

पडित गोपीनाथ जी ने आगे कहा कि गदर के मौलवी का किस्सा शायद लतीफन पतुरिया वतला सके । उसकी अवस्था ८५-९० वरस की है ।

मुसम्मात लतीफन से भेंट हुई । एक तो वह वहुत ऊँचा सुनती थी, दूसरे गदर का हाल उन्होने कुछ नही सुनाया । वार-वार उनकी स्मृति को खोदा तो कहने लगी "अब्बा वतलावत रहैं कि हिया नीचे तोपैं लागी रहैं, और ऊपर से तोपैं लागी रहैं । वादसाह दिल्ली से आये रहैं । लियाकत हुसैन के वेटे मुन्नन के पास तवारीख है । अउरु मंहिका ज्यादा कुछ खवरि नाई है । आप वडी दूरि से आये हो, हम किस्सा नही सुना सके, पर एक ठई लावनी जरूर सुने जाव ।"

वी लतीफन ने अपनी पिच्चासी की आयु को जवानी के दिनो की सान पर चढा दिया । एक भजन किस्म की लावनी सुनाई ।

वडी वी ने पूछने पर वतलाया कि चालीस-पचास वर्ष पहले डलमऊ मे तवायफो के अनेक घर थे, अब कोई नही रहा । रगरेज़ भी वहुत थे अब नही रहे । इन दो का रहना क़स्वे की समृद्धि और न रहना उसकी दरिद्रता का सूचक है ।

हम किले की तरफ चले । इस किले की कहानी 'निराला' जी ने अपने उपन्यास 'प्रभावती' मे सदा के लिये सजीव कर दी है ।

अजीव है ये दिमाग की मशीनरी । वर्षो के अतर मे न जाने कितनी वातो, घटनाओ और रोजमर्राह हुजूम मे जो वातें खो जाती हैं, वह मौके पर अचानक ताज़ा तस्वीर की तरह मन की दृष्टि के सामने यो आ जाती हैं जैसे अभी हो रही हो । किले के ध्वस्त फाटक की ओर वढते हुए दूर एक कमरे के खण्डहर को देखते ही मुझे लगभग इक्कीस वर्ष पहले का एक दृश्य याद हो आया । लखनऊ, भूसामडी, हाथीखाना वाले मकान मे, ऊपर सडक के सामने वाले वडे कमरे मे, टहलते हुए ठीक कमरे के बीचोबीच कहानी सुनाते-सुनाते रुक कर 'निराला' जी भाव मे तन्मय होकर अपना हाथ और आँखें सडक की ओर ऊँचे उठाते हुए वोले "मैंने—मैंने अपनी आँखो देखा, जैसे प्रभावती ऊपर के कमरे से उस चाँदनी मे उतरती हुई गगा की ओर आ रही है ।" रामविलास जी, 'पढीस' जी तो थे ही शायद कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह जी भी वही वैठे थे । डलमऊ मे 'निराला' जी की ससुराल है । यहा के कुल्ली भाट भी 'निराला' जी की लेखनी से अमर हुए हैं ।

ज्यो-ज्यो ऊपर चढता गया, डलमऊ आकर अपनी गदर वाली झोली खाली रह जाने का दु ख भूल इस स्थान के प्राचीन वैभव की कल्पना मे खोता गया। फाटक की बनावट, इक्का-दुक्का खडे खण्डहर और किले के टीले का फैलाव, उसके अपने समय के मजबूत और शानदार किलों मे से एक होने के प्रमाण देते है। ऊपर आते ही गगा के दर्शन होने लगे। बडा ही रमणीय स्थान है। नैमिपारण्य में पाण्डवों के किले के ऊपर से घुमाव लेकर बहती हुई गोमती और उसके आस-पास का दृश्य देखकर मुग्ध हो गया था, किन्तु यहा आकर उसे भूल गया। गगा जी की शोभा ही निराली है और यहा इतिहास की स्मृतिया लिये खण्डहरो वाला विशाल टीला मनहूस न लगकर करुण बन जाता है। चारो ओर ईंटें ही ईंटें बिखरी हुई हैं—मुझे एक क्षण के लिये ऐसी लगी जैसे रणक्षेत्र मे हजारो सैनिको के शव पडे हो। यह बर्बरता जो हजारो बरस से दुनियां बराबर सहती आई है, वह सभ्यता की सुमेरु-सी इस बीसवी सदी के उत्तरार्ध-काल मे भला कैसे सही जाती है ? आये दिन अखबारो मे बड़े-बडे विध्वसक आविष्कारो की अफवाहे आती है। क्या खूब है कि मनुष्य का मस्तिष्क नित नूतन विकास कर रहा है और फिर भी बर्बरता से पीछा नही छूटा।

और ऊँचे पर कुछ बना-चुना स्थान दिखाई दिया, कुटिया झलकी। पूछने पर भाई हरिश्चन्द्र ने बतलाया कि "कुछ वर्षों से एक साधु यहा रहते है, उन्होने ही ऊपर सब साफ कर लिया है। ये ईंटें बटोर-बटोर कर ही ये देखो दीवारे खडी की हैं। उनके कारण यहा जगल मे मगल हो गया है।"

बाबा जी से भेंट हुई, कोई पच्चीस-छब्बीस वर्ष की आयु होगी। सीधे, भले, अपने रस मे आधे बावले बाबा जी प्रेमी जीव हैं। बताशे खिला कर ठडा पानी पिलाया, फिर गीता पर बातें होने लगी, फिर मैंने पूछा "यहा आपको रहते कितने वर्ष हो गये ?"

हँस कर बोले "उँगलियो पर तो याद नही फिर भी अन्दाज मेरा ये है कि नौ-दस बरिस पहिले आये रहे।"

"ये स्थान खोदकर चौरस करते समय आपको पुराने सिक्के या मूर्ति इत्यादि या और कोई पुरानी वस्तु मिली ?" मैंने पूछा।

"तीन ठईं ताला निकले, पुराने जमाने की तुलसी की गुरिया मिली, हाथी के दांत मिले और जब इँदारे की सफाई शुरू की तौ तीन ठई बड़े-बडे सर्प भी निकले, अब वो प्राचीन काल का इँदारा बिलकुल साफ हो गया है, उसमे जल निकल

आया है, वही जल आप लोगो ने इस समय पान किया है।" निकली हुई वस्तुयें बाबा जी ने कही इधर उधर फेंक दी, सर्प इसी टीले पर अन्यत्र छुडवा दिये।

हम बारहदरी देखने के लिये गगा के किनारे की एक दीवाल पर चढकर ऊपर गये। यही वह बारहदरी है, जिससे 'निराला' जी की 'प्रभावती' उतरी थी। किले का एकमात्र यही स्थान अब तक पूरा बना बचा हुआ है। बारहदरी के ठीक नीचे गगा मोड लेकर आती हैं। उस पार दूर-दूर तक वृक्षो से छाये हुये मैदान गगा के प्रसाद से हरे-भरे मनोरम लगते हैं। बारहदरी के नीचे ही पक्का घाट है, छोटा सा मन्दिर, उससे कुछ दूर आगे दिखलाई पडने वाले शिखर और उसके बाद वृक्षो के समूह के बीच-बीच मे खण्डहरो की बस्तिया।

यहा से किले का पूरा टीला देखकर उसकी महत्ता का चित्र सामने आ जाता है। बाबा की कुटी का स्वच्छ स्थान, उसके बाद खण्डहर और ककड ईंटो से भरा टीला, दूर पर दूसरे बुर्ज के ढूह—लगता है कि किसी समय उधर भी बुर्ज और बारहदरी रही होगी। अनोखे प्राकृतिक सुहावनेपन वाले डलमऊ मे खण्डहरो की बस्तिया दूर तक फैली हुई, बडी पीर जगा देती हैं।

भीरा गोविन्दपुर

हम लोग भीरा गोविन्दपुर की ओर चल दिये।

भरो के खण्डहरो से युक्त इस गाँव मे पहुँचते ही हमे कुछ विद्यार्थी मिल गये। हमारा आशय जान उन्होंने बैठने का प्रबन्ध किया और आनन-फानन मे लोगो को बुला लाये। थोडी ही देर मे पच्चीस-तीस व्यक्ति जमा हो गये।

पडित भगवती प्रसाद भट्ट ने बतलाया कि पुराने बुजुर्गों के कथनानुसार गाँव के लोग भाग गये थे। अगरेजो ने कहा था कि चौबीस घटे के अदर गाँव खाली कर दो, फिर भी कुछ लोग अपनी जायदाद बचाने के मोह मे यही छिपे रह गये। हमारे एक बुजुर्ग भी छिपे रह गये। छत पर बैठे थे, इसी रास्ते पर अगरेजो की पलटन गारद लगा रही थी, किसी अगरेज ने देख लिया। गोली मार दी। उनकी लाश आँगन मे गिर पडी। कई दिनो बाद जब गाँव वाले लौटे तो हमारे घर के लोगो ने उनकी लाश विकृत अवस्था मे पडी हुई देखी। यह घटना कार्तिक की देवउठान एकादशी के दिन हुई थी।

श्री केदारसिंह ने बतलाया कि पिता बतावत रहे गौरिमट की फौज लालगंज

से वडैला तालाव के किनारे किनारे आती थी । इस गाव मे हमारे पुरखो की जमीदारी थी । यहां से लोग दही, मुर्गी, खाने पीने का सामान लेकर पहुँचे । अंग्रेजो ने पूछा कि यहा कोई लडने वाला तो नही है । लोगो ने कहा, नही हुजूर । पर तभी राना की फौज शकरगज, महेरू से होती हुई आ रही थी । गाव के पास एक भीठ है, वही राना की सेना पहुँची । वहा से अंग्रेजो की सेना देखी । राना ने कहा कि यह गाव हमे वहुत प्यारा है, यहा लडाई न हो । मगर साथ के लोग वोले कि आज एकादशी है शत्रु सामने है, छोडना न चाहिये । वस फिर क्या था । राणा के साथ एक तोप थी, फायर आरभ कर दी । सग्राम होने लगा । वाद मे इस गाँव मे वडा अत्याचार हुआ । पहर दिन चढे लडाई शुरू हुई और दो दिन तक होती रही । फिर राणा की फौज भागी । अंग्रेजो ने वडी काट छाँट से काम किया, उत्तर और पूरव दो ओर से राणा की फौज घेरी । पश्चिम की तरफ भागे । राणा साहव के कई आदमी गाव के घरो मे छिपे रहे । जिनके पास मसाला (गोली वारूद) था, उन्होंने वडी मार मारी । जव तक मसाला रहा, लडते रहे, फिर मारे गये ।

श्री गयादीन ने वतलाया "हमरे परपाजा एकादसी का मरे । लराई मा मरे। हमरे घरे के केवाँडन मा कुल्हाडी का घाव वना है ।"

श्री शिवचन्द्र मणि ने अपने घर के बडे-वूढो से सुनी हुई वात सुनाते हुए कहा कि अंग्रेजों ने स्त्रियो पर वडे अत्याचार किये । राजवहादुर सिंह के मकान मे एक स्त्री थी, जव अंग्रेजो ने देखा तो उसकी ओर दौडे, उसने छत से कूद कर प्राण दे दिये । अनेक घर फूँके गये । यह भी कहा जाता है कि प्रातः काल की पूजा राणा ने यहीं की थी ।

श्री लक्ष्मीनारायण शुक्ल ने वतलाया "राणा हिंया मौजूद रहे, उनके आदमी मौजूद रहे, विनहरा की ओर ते अंग्रेजन की फउजै जात रही । हिंया लोगन ते पूछिन कहा है दुश्मन । वतावा गा कि वनहुरा मा है ।"

राणा के सवन्ध मे कहा "सामने से फउजैं निकली, सिपाही कहिन कि दुश्मन जाय रहा है । राना वोले कि निकल जाय देव । मुलु सिपाही न माने, फैर किहिन । दुइ ओर ते डगर लागि । जव मसाला चुकिगा तौ राना कहिनि कि चलौ भागौ । पर एक सिपाही कहिसि कि हम न भागव । राना तौ घोडा प असवार होइकै चले गये; मुलु सिपाही फुट-फैर करत रहे । हमरे पचम सिंह वतावत रहे कि याक घरे मा घुसगे तउन अंग्रेज वहिमा आगि लगाय दिहिन । अवही तलक वहुत से गोला विरवन मा लगे रहे ।

"फिर—वहुत दिनन की बात है—हम बच्चा रहे, दस-बारा वरिस के, तब एक मनई गेरुआ वस्तर पहिने रहै, दुइ कुत्ते साथ रहै, उइ केसरुआ के मैदान मा गूलर के तरे उतरे रहैं। उइ दुइ दिन रहे, पूछैं पचम सिह हैं, फलाने सिह हैं, फलनिया हैं, ई सब पूछैं। फिर कहैं हमरे साथ चलौ। फिर कोउ गा नाही। जानै वाले कहैं कि यहै राना है। मँझोले कद के रहैं, पक्की छोटी दाढी रहै। उनके वेटा का चहलारी मा गुजारा मिला।"

भीरा गोविन्दपुर मे मुझे राणा सवन्धी अनेक नये-पुराने लोक गीत सुनने को मिले। सर्व श्री गयादीन, सूरजवकस सिह, भजनिया सत्यनारायन, कृष्ण नारायन, शिवचन्द्र मणि शुक्ल, रामशकर शुक्ल, भोलानाथ, वजरगसिह और शारदाप्रसाद ने अनेक नये-पुराने गीत सुनाये। श्री रामशकर शुक्ल की सरदारी मे गाव के युवको ने ढोल, मँजीरा आदि के साथ यही गीत फिर गाकर सुनाये। उस समय पानी झमाझम बरस रहा था। हम लोग घटा-डेढ घटा तक रस-मग्न रहे। फिर वडैला ताल देखते हुए रायबरेली की ओर चले। गाडी दलदल मे धँस गई। खैर, वहा वाजार था, आनन-फानन मे सहायता मिल गई। लगभग चार फर्लांग वाद नहर के रास्ते पर फिर गाडी धँस गई। हम वडी चिंता मे पडे। ड्राइवर वेचारा फिर भीरा गया, घन्टे भर मे भीरा से पचीस-तीस आदमी आ पहुँचे। गाडी फूल सी उठा कर अलग खडी कर दी। और फिर 'ठोकर' मार्ग से अर्थात् मजवूत सडक से पक्की सडक तक पहुँचाने के लिये भी कुछ लोग हमारे साथ आये। भीरा वालो ने आजन्म के लिये मुझे वाध लिया।

शकरपुर

दूसरे दिन सुबह शकरपुर पहुँच गये। राणा वेनीमाधव के नाम से सयुक्त यह स्थल, पावनपुरी की तरह मुझे प्रतीत हो रहा था। अपने बचपन मे गदर सवन्धी वातें सुनते हुए तीन चार नाम मेरी स्मृति मे सदा के लिये बैठ गये थे, झासी वाली रानी, नाना, बिरजीस कदर, हज़रतमहल वेगम और राना। राणा के सवन्ध मे एक वात यह भी याद थी कि छत्रपति शिवाजी की भाँति उन्हे भी देवी ने प्रकट होकर अपने हाथ से तलवार दी थी।

शकरपुर के निकट पहुँचते ही पेडो के झुरमुट के पास एक मन्दिर की ओर सकेत कर भाई हरिश्चन्द्र ने कहा "यही देवी का मन्दिर है, जहा राणा पूजा

करते थे।"मेरा मन श्रद्धा से भर गया—इस समय देवी के प्रति नही वरन् राणा के प्रति।

सादा बना हुआ मन्दिर है, बहुत बडा भी नही है। यहा मूर्ति नही, देवीपीठ है, अर्थात मन्दिर के बीचोबीच एक चौकोर चबूतरी है, जो बीच से ढाल नुमा उठी हुई है। आलो मे दो खण्डित मूर्तिया रक्खी हुई हैं। अन्दर की चारो दीवारो मे चार चित्र बने हुए हैं, दो पुरुषो के दो स्त्रियो के, एक चित्र पट्टेदार दाढी वाले साफाधारी व्यक्ति का है जो राणा बेणी माधव वख्श बतलाये जाते हैं। उसके ठीक सामने दूसरी दीवार पर लटकती हुई बडी मूछो वाले व्यक्ति राणा के पिता हैं। नारी छवियो मे एक ओर राणा की माता है और दूसरी ओर उनकी पत्नी। ये तस्वीरें भद्दी बनी हैं।

मन्दिर के बाहर आलेनुमा एक स्थान मे कुछ घिसी खण्डित मूर्तिया रक्खी हैं। एक गणेश जी की है, एक तलवारधारी किसी व्यक्ति की है। मूर्तिया भद्दी हैं।

यह मन्दिर कभी किले के सीमा के अन्दर था, मर्दाने भाग मे फाटक के पास स्थित था।

मन्दिर के दाहिनी ओर एक पुराना वटवृक्ष है और दूसरी ओर बाल क्रीडा केंद्र, जिसका उद्घाटन राज्य के मुख्य मत्री डा० सपूर्णानन्द जी ने किया था। मन्दिर के सामने ही स्मारक भवन का भी शिलान्यास हो चुका है। पत्थर लगा है, परन्तु उसके आस-पास ईंटें खिसकने लगी हैं। देवी के मन्दिर के सामने लगभग दो सौ गज दूरी पर एक और छोटा मन्दिर दिखलाई देता है। कहते हैं कि यह किले के जनाने भाग मे स्थित था और सुन्दर बना हुआ माना जाता था। यह मन्दिर अब शून्य पडा है। जनाने मन्दिर के आगे आगन था, यह बतलाया जाता है। इस मन्दिर के पीछे एक तालाब है, यह भी किले के अन्दर ही था। पास की बस्ती के एक सज्जन, कही फाटक बतलाते थे, कही पर कोठरिया। मैं वीरान पडी उस जगह मे इन सब की कल्पना करता फिरता था। मदिर के पास ही एक पुरवा बसा है, जिसे फुलवारी का पुरवा कहते हैं। यह फुलवारी कभी किले के अन्दर ही थी। क़िला अपने वैभव काल मे काफी बडा रहा होगा। चार्ल्स बाल ने अपनी किताब मे उक्त किले का वर्णन लिखा है, जिसके अनुसार किले के चारो ओर घना और कटीला जगल था, जिसके अदर होकर किसी शत्रु का आना अत्यत कठिन था। किले के चारो ओर गहरी खाई थी और उसका फाटक बहुत मजबूत था। अदर सभा भवन, दीवानखाना और जनानी हवेली कीमती साज सामानों से पटे पडे थे।

फुलवारी के सज्जन ने बतलाया कि ठाकुर गजाधर सिंह राणा का सारा हाल जानते है, वही हमारी सहायता कर सकेगे और राणा के सबन्ध मे आल्हा बिरहा फाग आदि सुनाने वाले दो सज्जन जो फुलवारी मे रहते हैं उन्हे लेकर वे भी शीघ्र ही वहा पहुँच जायेंगे ।

ठाकुर गजाधर सिंह का मकान किले के क्षेत्र से लगभग दो फर्लांग दूर था। बडा मकान, बडा फाटक ठाकुर साहब के वैभव का परिचय दे रहा था। उनकी आयु साठ-पैंसठ के लगभग होगी। वे शकरपुर पचायत के प्रधान भी है। ठाकुर साहब के वृद्ध मामा, युवक पुत्र और आस-पास के दो एक व्यक्ति जुट आये ।

ठाकुर गजाधर सिंह ने बतलाया "यूं तो जहाँ आप बैठे है वह भी शकरपुर ही कहलाता है मगर असली जगह वही है जहा आप होके आये हैं। देवी के मदिर के पास उत्तर मे जो पुरवा बसा है वह गदर के बाद का है पहले वहा फुलवाडी थी इसी लिये उसे फुलवाडी का पुरवा कहते हैं। ताल के किनारे की शिवलिया गढी के आगन मे थी, ताल गढी के बाहर था ।

"पहले ठाकुर शिवप्रसाद सिंह शकरपुर के मालिक थे। फतेबहादुर सिंह उनके बेटे थे। राम नरायन सिंह उनके छोटे भाई थे। फतेबहादुर का पुरवा उत्तर-पूरब के कोने मे हैं और आज कल शकरपुर ही कहलाता है। फतेबहादुर का देहान्त अपने पिता ठाकुर शिव प्रसाद सिंह के सामने ही हो गया था ।

"रामनरायन सिंह के तीन बेटे थे राना बेनीमाधो, बाबू नरपतसिंह और बाबू युवराजसिंह। जगतपुर मे पुलिस स्टेशन के पीछे उत्तर की ओर एक बडे मकान का खण्डहर आज भी पडा है। यही रामनरायन सिंह का मकान था ।

"शिवप्रसाद सिंह के बाद बेनीमाधो ने अपने ताऊ की गद्दी पाई। राना बेनीमाधो तब तक सयाने नही हुये थे, छोटे ही थे। उनके दोनो छोटे भाइयो मे से मँझले नरपतसिंह तो अपने पिता के मकान मे ही रहे मगर छोटे युवराज सिंह भवानीबख्श के पुरवा मे रहने लगे। वहा उनकी गढी है जो पुराना थाना के नाम से प्रसिद्ध है। और जो बेनीमाधो के पिता का मकान है, वह बाबू बगाली की कोठी के नाम से प्रसिद्ध है। ये बाबू बगाली अग्रेजो के खैरख्वाह थे। राना की जायदाद जब्त होने पर बगाली को उनके बीस गाँव और वो मकान इनाम मे दिया गया था। लगभग पैंतालीस बरस हुये बाबू बगाली दक्षिणारजन मुखर्जी, जिनको ये जगह इनाम मे मिली थी उनके पोते कुँवर भुवन निरजन मुखर्जी अपनी जायदाद खजूर गाँव वालो को बेचकर चले गये ।

"राना वेनीमाधी के एक चाचा और थे, उनका नाम ठाकुर शिवगोपालसिंह था।

"राना की जब अंग्रेज़ो से लडाई हुई तो वे अपने भाई, लडके, परिवार के सब लोगो को लेकर लडते-भिडते चले गये। राना के नैपाल जाने के बाद उनके भाई और पुत्र सब लौटकर यहा आ गये। गौरमिन्ट की ओर से उन्हे चहलारी मे गुज़ारे के लिये जगह मिली। राना वेनीमाधो के वेटे राना रघुराज सिंह नि सतान मरे। तब उनके चाचा ठाकुर शिवगोपाल सिंह के लडको को वह इलाका मिल गया। उस वश के चन्द्रभाल सिंह, शिवदयाल सिंह और सूर्यविक्रम सिंह की रानिया मौजूद हैं। शिवदयाल सिंह के कई लडके हैं, पर एक का नाम मालूम है, इकवाल वहादुर सिंह।

"राना वेनीमाधो के वेटे राना रघुराज सिंह के नाम से रघुराजगज वाज़ार वसाया गया।

"राना की ननिहाल नायन वालो के यहा थी। जब खान अली ने नायन पर हमला किया तब राना छोटे थे और अपने ननिहाल वालो की ओर से लडे भी थे। उस लडाई मे उन्हें घाव भी लगा था।

"लखनऊ की नवावी सरकार मे ये नाज़िम थे। वाजिदअली शाह ने नाज़िम वनाया था। ये उनकी तरफ से कही लडने गये, नवाव से वीडा लेकर गये और फ़तह किया। इस पर नवाव ने इन्हे 'सिरमौर राना वहादुर दिलेर जग' का ख़िताव दिया। सभी कुछ दिया।

"पहले इनके दो सौ उन्तालीस गाँव थे। अंग्रेज़ो ने जब नवाव का राज लिया तो इनका भी कुछ इलाका जब्त कर लिया। ये अंग्रेज़ो के वडे खिलाफ हो गये। इन्होंने वेगम का और विरजिसकदर का साथ दिया। पहले अंग्रेज़ो ने इन्हें मिलाने के जतन किये। इनकी वीरू साहव से दोस्ती थी, इन्होंने कभी वीरू साहव की जान बचाई थी। वीरू साहव ने कहा कि आप मिल जाइये, जितना इलाका हम जीतेंगे उसका आधा आपको दे देंगे। मगर राना ने कहा कि हम 'वरम के वदे लडव वेगम और विरजिस कदर का साथ न छोडव।'

"अंग्रेज़ी फौजें एक परसदेपुर की ओर से और दूसरी गुरवकमगज की ओर से आई, एक सेमरी मे थी वो रास्ते मे मिली, भीरा गोविन्दपुर मे राना से लडाई हुई।

"शकरपुर से निकलकर राना 'गढी नारेपर' (नरेन्द्रपुर) गये, वहा से भीरा पहुँचे। राना का विचार यही था कि यहा लडाई न हो, इसीलिये निकल गये।

"राना दुर्गाजी के वडे भक्त थे। दुर्गाजी के मन्दिर मे वे वडी देर तक पूजा किया करते थे। कहते हैं कि पूजा करते-करते उनकी तलवार म्यान से वाहर निकल आती थी। कहते है कि यह मन्दिर गढी की खिडकी मे था और उनके नमय मे कोठरी की तरह बना था।

"गदर के वहुत वरसो वाद साधू के भेष मे दो वार राना यहा आये थे। पहली वार तो मेरी उमर छोटी थी, समझ नही पाया। दूसरी वार जव आये तव मैं चौदह-पन्द्रह वरस का था। राना लाल वस्त्र पहने थे, गेहुँआ रग था और छोटे कद के थे, वे अपना नाम रविनाथ ओझा लाल वस्त्रधारी वतलाते थे।"

मैंने पूछा "दूसरी बार जव आये, उस वात को आपकी वर्तमान आयु के हिसाव से कितने वरस हो गये।"

ठाकुर साहव ने कहा "आप यो जोड लीजिए कि सन् चौदह वाली वडी लडाई वाद मे हुई थी, उसके साल सवा साल पहले आये थे। तो उस समय की वात आपको सुनाता हूँ। वैसन की उमरी मे एक परसन महराज रहते थे। वो राना की फौज मे रह चुके थे। दूसरी वार जव राना वेनीमाधो यहा आये तव परसन महराज अधे हो चुके थे। परसन वावा मिलने आये और उन्होने राना की परिच्छा ली, कहा 'हमैं दिखात नाही महराज। भीरा के हवाल बताओ।' तव राना वोले, 'का करिहौ।' परसन बाबा फिर कहिनि कि नाही महराज बतउबै करौ। तौ उइ कहिन कि एक कुचडी दही। यह सुन कर परसन बाबा 'अरे मोर राजा' कह कर उनसे लिपट गये और रोने लगे। इसकी किहानी ये रही कि भीरा मे राना को घोडे से उतरने का मौका न मिला और वह बहुत भूखे थे। तो परसन बाबा कही से जुगाड कर के उनके लिये एक कुचडी दही ले आये। वही याद दिलाई थी।

"मेरे पिता जी का नाम ठाकुर यदुनाथसिंह था, वे भी रोज राना की कचहरी करते थे। राना जब दुसराय के बावा के भेस मे आये तव की वात है। एक दिन राना साहव ने उनसे कहा कि हमने सुना है कि शिवराज पर कर्जा हो गया है। उनको हमने वुलाया था, पर वो आये नही। आते तो हम उन्हें अपना खजाना वता देते।"

मैंने पूछा "ये शिवराज कौन थे?"

"शिवराज सिह, खजूर गाँव के राना।"

ठाकुर साहव के वृद्ध मामा ठाकुर जगतपाल सिह भी वही वैठे थे। उन्होंने कहा "जव राना यहा आये थे तो मैं भी आया था। मदिर के पास उनकी कचहरी

लगती थी, मैं भी गया। मुझसे पूछा, 'कहा के रहने वाले हौ ?' मैं वताया जिला प्रतापगढ तरौल के, तब राना तरौल के वावू गुलावसिंह का हाल कहने लगे। कहा कि वावू गुलाव सिंह से हमारी दाँतकाटी रोटी रही, वडी दोस्ती रही। उनके यहा से वहेलिये यहाँ हमे शिकार कराने आते थे, कहते-कहते उनकी आँख मे आँसू आ गए।"

ठाकुर गजाधरसिंह ने कहा "एक वार हमारे पिता जी ने पूछा कि महराज आपका खर्चा कहा से आता है, तो वोले वेगम परवन्ध कर गई है, हमको मिलता है उनका दस-वीस रुपये रोज का खर्चा था। एक अग्रेजी पास सेवक, चाहै सिकिटरी कहौ चाहे कुछु कहौ, उनके साथ रहता था। तीन चार सेवक और थे।

"राना महाभारत वहुत वाँचते थे—पहले भी वाँचते रहे। और पहले वे शिकार के भी वडे शौक़ीन थे। कहा करें कि जिस राजा के राज मे हिरन वुढाय के मर जाय उस राजा को नरक होता है।

"राना साहेव जव वावा के भेस मे आये तो नवावगज से लल्लन रडीआई। कहा कि महराज आये हैं, मैं नाचूँगी। राना साहेव ने उसे एक दुशाला और कुछ रुपया दिया।

"अली और इमामी यहाँ के अडे पहलवान थे। अली मिलने आया। उसने पूछा कि तुम्हारा भाई इमामी कहा है। उसने कहा कि मर गया। अली पहलवान फिर वोला कि महराज हम आपके नाम पर डका देंगे। राना ने कहा, 'रहै देव, का होई।' पर वह नही माना तो वोले कि अच्छा। उसने डका वजाया, उसको भी कुछ इनाम दिया।

"राना साहव के गुरू रहे, सराय के त्रिवेदी। उनके वस के लोगो को भी वुलाया और भोजन करा के दक्षिणा दी।

"राना साहव का चेहरा-मोहरा ऐसा था कि जैसे शेर का हो। लेकिन जव उठते थे तो कमर ज़रा झुक जाती थी।"

मैंने पूछा . "वे यहा कव तक रहे ?"

"दुसराय के जव रहे, तव पद्रह रोज रहे।"

मैंने फिर पूछा . "राणा दो वार यहा आये, छिपे-ढके नही रहे, सारी खिलकत ने जाना। आप वताते हैं डका वजा, नाच गाना हुआ—तो क्या अग्रेज़ सरकार को खवर नही पडी होगी ?"

ठाकुर साहव वोले "पहिली वार जव आये रहे तो वावू वगाली के सरवराकार ने कहा कि आप यहा से चले जाइये। तो वोले कि तुम हमको नही हटा सकते। फिर दुर्गा जी के मदिर की ओर हाथ उठा के कहा कि इन्होने हमे हटा

दिया। आस पास जो आदमी थे वे सर्वराकार को मारने झपटे। फिर उसके बाद ये यहा से चले गये पर कही गिरफ्तार कर लिये गये। लखनऊ भेजे गये किसी ने उनकी 'सिनाख्त' नही की। एक तो उनके समय के आदमी ही कम रहे थे और दूसरे जो मौजूद थे, वो राना साहेव को फाँसी पर नही चढवाना चाहते थे। इस लिये छोड दिये गये। दूसरी बार भी बाबू बगाली ने इनकी रपट लिखाई थी। राना साहेव ने जलाने के लिये बबूल के पेड कटवा डाले थे। थानेदार आया, उससे कुछ बातें हुईं। थानेदार फिर चुपचाप चला गया। उसके दो-चार रोज बाद राना भी चले गये।"

श्री विजय बहादुर सिह ने ठाकुर गजाधरसिह को कालीबकस की कथा की याद दिलाई जो ठाकुर साहब ने कभी उन्हे सुनाई होगी। ठाकुर साहब के हा कहते ही विजय बहादुर सिह सुनाने लगे "सिध्दौर के एक ठाकुर काली बख्श थे। उनको राणा साहब कालीचरण कहते थे। वो भी मिलने आये थे। काली बाबा ने राणा की पीठ पर तलवार का घाव देखकर पहचाना यह घाव राणा साहब को नायन की लडाई मे लगा था। काली बाबा और राणा साहब गले मिलकर खूब रोये।"

मैंने ठाकुर साहब से पूछा "मैंने सुना था कि राणा एक बार रायबरेली के किले मे कैद किये गये थे। किसी हीरा पासी ने उन्हे छुडाया था। क्या आपने भी यह घटना सुनी है?"

"हाँ-हाँ।" ठाकुर गजाधरसिह बोले "जब नवाबी रही तब नवाब इनसे किसी बात पर बिगड गये। रायबरेली के किले मे कैद हो गये। एक पासी था, उसका नाम, हमारी जान मे, शिवदीन था। जब जब किले मे गजर बजता तब तब वह दीवाल मे कीलें ठोकता था। शिवदीन बडा नामी और चालाक चोर था। वह बडी तरकीब करके किले मे राना के पास पहुँच गया और उनसे कहा कि महराज, चलिये। राना बडे खुश हुये, चले। रस्सी छोटी थी, पासी ने अपना साफा उसमे जोड दिया, तब भी कम पडी, पासी ने अपनी धोती भी बाँध दी। राना बोले, अब भी छोटी है। पासी ने कहा कि महाराज अब मैं लाचार हूँ। तब राना साहब किसी तरह उसी के सहारे उतरे। किले के बाहर आये। इनका सब्जा घोडा तैयार खडा था, उसी पर आ गये। शकरपुर के किले मे यह हुकुम था कि जैसे ही रात के बारह बजें वैसे ही एक तोप दागी जाय। यह धोका देने के लिये किया गया था कि लोग समझें राना किले मे पहुँच गये और जिससे फिर सिपाही उनकी तालाश मे न निकलें। ऐसा ही हुआ। राना साहेब सही सलामत किले मे पहुँच गये। बाद

मे उस पासी ने इनाम मे यही माँगा कि महराज, मेरी चोरी माफ की जाय ।"

श्री धर्मेन्द्रवहादुर सिंह ने सुनाया : "एक किस्सा ये है कि राना वेनीमाधो लोधवारी की तरफ घोडे पर जा रहे थे । वहा कोई पासी औरत लडके से कह रही थी कि जा, सुअर चरा ला । लडके ने कहा कि मैं नही जाऊँगा । मा वोली तो फिर क्या करेगा । लडका वोला कि राना की फौज मे भरती हो जाऊँगा । राना वेनीमाधो वही सुन रहे थे, वोले, राजा की फौज मे वही भरती होता है जिसका दिल वडा होता है । लडका वोला कि मेरा दिल भी वडा है । राना वोले, अच्छा परिक्षा दो । यह कह कर लडके की छाती पर घूँसा मारा । लडका झेल गया । उसे भरती कर लिया ।"

श्री गजराजसिह ने सुनाया "एक बुढिया थी । उसके कोई न था । उसके घर वालो ने राना वेनीमाधो और उनके पुरखो का नमक खाया था । वखत-वखत पर इनाम-भेंट मे सोना रुपया पाया था । बुढिया ने सोचा कि मेरे वाद इस धन का क्या होगा । सो वह लौटाने आरही थी । रास्ते मे वडी थक गई । सयोग से राना वेनीमाधो सब्जा पे सवार उधर से निकले । बुढिया वोली कि मुझे राना साहेव के घर पहुँचा दो । राना साहेव ने उसे अपने घोडे पर वैठा लिया और आप उसकी रास पकडे किले पर आये । सवसे इसारे से मना कर दिया कि चुप रहना । राना वेनी माधो ने उसे अदर ले जाकर विठा दिया और फिर राना वनकर उसके सामने आये ।"

श्री गजाधर सिंह ने वतलाया "जव वलवा शुरू हुआ तव यहा छत्तीस हज़ार फौज थी । वलवाइयो की फौजें अलग थी । और जव राना नवाव विरजीसकदर से वीडा खाकर आये कि हम अग्रेजो से लडेंगे तो खजूर गांव अपने भाई के द्वारे गये । उनसे मेल नही था तो भी गये । घर मे औरतो वच्चो को भी कुछ लिया दिया । छोटे भाई युवराजसिह ने कहा कि कहो तो वदला ले लें । राना वोले कि अव नही । अव हम वेगम के साथ हैं । खजूरगाँव के रघुनाथ सिंह ने कहा कि आप अग्रेजो मे न लडो । राना वडे ही हठी थे, वोले, जो ठान लिया सो ठान लिया । रघुनाथ सिंह वोले कि अच्छा अपने वेटे को हमारे यहा छोड जाइए । उसे अग्रेजो के साथ रहने दीजिए । राना वेनीमाधो वोले कि ये भी नही हो सकता । अगर जीतेंगे तो सव कुछ होकर रहेगे और जो हारे तो फिर तुम तो रहोगे ही ।

"एक वात आप और लिख लीजिये कि शाहावाद के वावू कुँअरसिह जो वडे वहादुर वागी थे, उनकी लडकी से राना वेनीमाधो के वेटे राना रघुराजसिह का व्याह हुआ था ।"

इस प्रकार :—

करिके सबको बखाना चल्यो गयो जग से राना ॥
पहिल लडाई लडयो भीरा मा, दूसर सिमरी मुकामा ।
तीसर धावा भा पुरवा मा गया बिलाइति बखाना ।
लाट सुनि कै घबराना ॥१॥
लाट साहेब ने लिखा परवाना राना तुम मिल जाना ।
जल्दी हाजिर होउ बक्सर मा काहे फिरत दिवाना ।
राना पढि के मुस्काना ॥२॥
राना बुलाइन आपन बिरादर सबको करत बखाना ।
तुम तौ जाय मिले गोरन ते हमका है भगवाना ।
करब अपना मनमाना ॥३॥
मारपीटि के राना निकरिगे गोरन मन खिसियाना ।
भगवतदास कहै कर जोरे अमल करै भगवाना ।
भजो मन रामै रामा ॥४॥
चल्यो गयो जग से राना ॥

परशुरामपुर ठिकहाई

ठिकहाई मे श्री बैजनाथ बख्श सिह, नायन के गदर वाले भगवानबख्श सिह के पौत्र रहते हैं, यह मुझे श्री शिवदुलारे ने बतलाया था। वैसे भगवानबख्श सिह के बारे मे अधिक कुछ जानने के लिये मुझमे हौसला नही रहा था, फिर भी सोचा कि इतने पास आकर उनके सगे पौत्र से भी कुछ जानकारी प्राप्त कर लेना बुरा न होगा। गदर मे जिनकी जायदादें ज़ब्त हुई हैं, उन सबको ही हीरो मानकर नमन करूँ, यह बात मेरी समझ मे नही आती। उनके प्रति सहानुभूति बरती जा सकती है, मगर सहानुभूति की भी एक सीमा है। अभी कल ही की बात है, एक सज्जन बातो के दौरान मे कहने लगे कि माना राजा लोनेसिंह ने कोई खास काम नही किया, पर उनकी जायदाद ज़ब्त हुई, बेचारे काले पानी भेजे गये इसीलिये उनका स्मारक तो ज़रूर बनना चाहिये। मैंने कहा कि ऐसी लगन हो तो अवश्य बनवाइये, पर वह स्मारक प्रेरणा क्या देगा ? लोनेसिंह स्वेच्छा से नही वरन् परिस्थितियो मे घिरकर स्वतत्रता प्रेमी वीरो के साथ जुड गये। ऐसे ठाकुरो को

मेरी पूजा प्राप्त नही हो सकती। लोनेसिंह से कही अच्छा आदर्श गोरखपुर के मोहम्मद हुसैन नाज़िम ने प्रस्तुत किया था। उन्होने सकट मे पडे अग्रेज़ो को उबारा, उन्हे सुरक्षित स्थान तक पहुँचाया औरउस के वाद भी वे अग्रेज़ो के शत्रु वने रहे। इसी प्रकार भगवानवख्श भी यदि कोई वडा उदाहरण प्रस्तुत कर सके होते तो उनके प्रति मन मे जोश होता। नायन वाले केवल लूट-पाट के शौक मे ही देशभक्तो के दल में मिल गये थे। हाँ, भगवानवख्श सिंह ने अपने परिवार के लिये अवश्य त्याग किया। जो हो, राणा वेणीमाधव के घर आकर उनके ननिहाली सम्वन्धी के पौत्र से मिल लेना उचित समझा। नायन वाले कम से कम इस वात पर तो अवश्य गर्व कर सकते है कि अवध के महान् नेता प्रात स्मरणीय राणा वेणीमाधव वख्श की माता उनके कुल की थी।

श्री वैजनाथ वख्श सिह ने वतलाया "सन् १८५७ मे हमारे आजा भगवान-वख्श सिंह ने अग्रेज़ो से वग़ावत की। इससे उनके वारह गांव जव्त हुये और गुज़ारे के लिये एक मौज़ा उन्नाव मे मिला।

"सुनने मे आया है कि भगवानवख्श सिह राना वेनीमाधो के साथ वृन्दावन मे थे। राना वेनीमाधो भाग गये, भगवानवख्श सिंह पकड लिये गये। इनसे पूछा गया कि आपको कितने खर्च की दरकार है, आपके यहा कितने लोग है?

"उन दिनो यह अफवाह थी कि वागियो के घर वाले सव गोलियो से मार दिये जायेंगे। तो हमारे आजा ने इसलिये किसी का नाम न वताया। कह दिया कि हम तो अकेले हैं—वस घोडा है, सहीस है और हम है। खरचा भी दो रुपये रोज़ का वता दिया। इसलिये उन्हे मन्या तहसील उन्नाव परगना हडहा मे गुज़ारे के लिये दिया गया।

"भगवानवख्श दो भाई थे। दूसरे भाई की शाखा अग्रेज़ो के भय से छिपी रही। जव इन्हे गुज़ारा मिला तो हमारी दूसरी शाखा वालो ने भी रुस्तमपुर मे आकर अपने को उजागर कर दिया। कुछ दिन वाद वे चदनिहा चले गये। चद-निहा रियासत से हमारा कुछ सम्वन्व था। भगवन्तपुर चदनिहा वैसो का इलाका था और हम लोग कनपुरिया वश के है।

"चदनिहा से वसाढ आये। थोडी पून्जी मे महाजनी शुरू की। फिर धीरे-धीरे हमने पट्टीदारी के इक्कीस मौजे कर लिये। और तो कोई खास वात हमे मालूम नही। हाँ, यह भी सुनने मे आया है कि असवापुर की छावनी मे लडाई हुई थी। और नायन वालो की ऐसी मरजाद थी कि तिलोई मे नायन वालो के सिवा और किसी का डका नही वजता था।

हरचन्दपुर और कठवारा

'दैनिक स्वत्रत भारत' मे हरचन्दपुर के यदुनाथ सिह का हवाला पाया था। परन्तु हरचन्दपुर आने पर वहा के ठाकुर जय देव सिह से पता लगा कि हरचन्दपुर मे कोई रियासत नही थी और उन्होने यदुनाथ सिह का नाम भी नही सुना। अब तक जिन सूचनाओ के सहारे भ्रमण किया उनमे यही सूचना निराधार निकली। यह बात दूसरी है कि प्राप्त सूचनाओ मे से कुछ लोग मध्यम श्रेणी के चरित्र साबित हुए। खैर, ठाकुर साहब से बातें होने लगी। उन्होने अपना सारा जीवन अवधी सामतो के दरबारो मे बिताया है। किस ताल्लुकेदार को दरबार मे किस नबर की कुरसी मिलती थी, किसकी कैसी शान थी, यह सब बड़े उत्साह से सुनाते रहे। कुर्री-सिधौली के राजा सर रामपाल सिह रियासत से तो छोटे थे, मगर उनका दबदबा बहुत था। वे अपने पास अग्रेजी पढे-लिखे लोगो को रखते, उन्हे सेटक्रेटरी का काम सिखाते और रियासतो मे नौकर रखा देते। इस तरह करीब-करीब हर जगह उनके आदमी मौजूद थे, और जैसा इशारा वे करते थे, वैसा ही उनके चेले लोग अपने मालिको को सिखाते थे। राजा साहब का अग्रेजो के ऊपर भी बडा रोब था। और सब राजा जूते उतार कर अंग्रेजो के कमरो मे जाते थे, मगर राजा रामपाल सिह जूता पहन कर जाते थे।

एक मज़ेदार किस्सा उन्होने गदर के बाद का सुनाया। दरबार हुआ, सब राजाओ को सनदें मिली, खजूर गाव के राणा साहब को न मिली। सबको बुरा लगा कि हमारे एक भाई का यो अपमान हो रहा है। राजा साहब महमूदाबाद को बडा गुस्सा आया, सनद उठा कर बोले क्या हम अब इसी कागज़ के राजा रह गये हैं ?—फिर राजा साहब खजूर गाँव को भी सनद मिल गई।

पडित शिव सहाय तिवारी ने हरचन्दपुर मे किसी युद्ध के न होने की बात दोहराई। एक पुरानी कविता उहोने अवश्य सुनाई, जिसका एक चरण वे भूल गये थे

"देखि कै फिरगिन की जगी फौज जग सेल,
भागिगे तिलगा लोग, बन की गली लई।
जज्ञपाल, हिन्दपाल लाल माधो रघुनाथ,
नेक से निगोडे जिन पाछे से दगा दई॥

० ० ० ०

वीर शिव रत्न सिंह कीरति भली लई ।।
भापै कवि वच्चू सव भूपन की नाक काटि,
वीरता अकेले सग राणा के चली गई ।।"

तिवारी जी ने कविता मे आये हुए नामो के सवन्ध मे वतलाया कि यज्ञपाल सभवत. राजामऊ के राजा थे, राजा हिन्दपाल कुर्री मिघौली के राजा थे, लाल माघो अमेठी के राजा थे, और वच्चूलाल कवि वछराया के थे ।

इन नामो के साथ मैं सोचने लगा कि ये लोग वाद मे अग्रेजो की कृपा से भले ही अपने मुँह मिया मिट्ठू वन गये हो, परन्तु देश की जनता ने उन्हे गद्दार ही समझा। कवियो ने उनका कलक सदा के लिये अमिट कर दिया । ठाकुर ननकऊ सिंह के 'जगनामे' मे भी अनेक गद्दारो के नाम पीढियो द्वारा घृणा की दृष्टि से देखे जाने के लिये सुरक्षित हैं । देश और मानवता के शत्रुओ के साथ यही व्यवहार होता हैं ।

हरचन्दपुर के श्री वजरंग वली शुक्ल ने वतलाया कि कठवारे मे वेगम के एक सरदार रहते थे । वेगम लखनऊ से यहा आई और अपने लडके विरजीस कदर के नाम पर प्रजा से सहायता मागी । राना वेनीमाधो आदि सव लोग कठवारे मे वेगम के लिक्चर मे वडे प्रभावित हुये और उनके साथ हो गये ।

यह कथा सुन कर मुझे ऐसा लगा कि हो न हो, विरजीस कदर के गद्दी पाने के वाद वेगम ने कई जगह स्वय जा जाकर सगठन किया था । उनकी वाणी मे नि सदेह वडा ओज होगा । और इसी से मुझे लगता है कि विक्टोरिया के घोपणा पत्र के उत्तर मे वेगम हज़रत महल के ऐतिहासिक ऐलान का मजमून स्वय उनका ही लिखा होगा । वेगम हज़रत महल की सगठन शक्ति सचमुच ही वहुत ऊँचे दरजे की थी ।

शुक्ल जी की सूचना के अनुसार हम लोग कठवारा गये, वह हमारे रास्ते मे ही पडता था । श्री मगलू खाँ ने वतलाया " खान वहादुर साहव को ही राना-वेनी माघो अपनी जागीर दे कर चले गये थे । खान वहादुर साहव को जानवरो तक से वडा प्यार था । उन्होने अपने घर के कुत्ते, विल्ली, तोता, मैना तक की कव्रें वनवाई । एक गाँव कुतियामऊ था जिसकी कमाई कुत्ते खाते थे ।

"गोरे लोग खान वहादुर साहव को कैद करके ले गये । इलाका जब्त कर लिया । खान वहादुर साहव का इलाका अन्नी, हिलालगज, कुतियामऊ, दक्खिन पच्छिम तक और पूरव मे सोरा के पास तक था । कुछ इलाका गुजारे के लिये खानदानियो को मिला । कठवारा भी गुज़ारे का ही इलाका था । कठवारे मे

फाटकबन्दी थी, खाई थी, उसकी भीतें अब तक मौजूद है। गाँव के किनारे एक शिवाला है जिस पर अग्रेजो ने गोले बरमाये थे। उसके निशान मौजूद है।"

मैंने पूछा "लखनऊ की बेगम यहाँ आई थी?"

मगलू खाँ बोले "मैं कह नही सकता। बात यह है कि अब हमारे यहा बुजुर्ग तो रहे नही। और मैं बचपन से बवजह गरीबी अपनी मेहनत-मजदूरी मे लगा रहा। गाँव वालो ने अब मुझे परधान बना दिया है। मगर हो सकता है कि बेगम साहबा यहा आई हो। उनकी सल्तनत थी, वे कही भी जा सकती थी।"

मैंने श्री मगलू खाँ के साथ वह शिवाला भी देखा जिसकी दीवाल मे गोलियो के निशान और तोप के गोलो से हुए भभक मौजूद हैं। वह जगह भी देखी, जहा खान बहादुर साहब दफन है। खान बहादुर और उनकी पत्नी मे किसी बात पर यहाँ तक अनबन हो गई थी कि दोनो ने आजन्म एक दूसरे की सूरत नही देखी। जब खान बहादुर की पत्नी मरी तो वसीयत कर गई कि उन्हें उनके पति के साथ मकबरे मे न दफनाया जाय। मरने के बाद भी वे अपनी कब्र पति की कब्र के पास नही रखना चाहती थी। दोनो मे यहा तक परदा रहा। पति और पत्नी की कब्रो के बीच मे दीवार खडी है।

जाने कौन सी कहानी लेकर उनकी हड्डिया यहा सो रही है।

मकबरे के बाहर खान बहादुर के कुत्ते, बिल्ली, तोता मैना भी पक्की कब्रो मे दफन है।

सेमरी और गढी बैहार

रायबरेली के काग्रेसी नेता, वकील, कवि, कहानी लेखक और सवाददाता पण्डित अजनी कुमार ने अपने मित्र सेमरी के लाल साहब को पत्र लिख कर हमारे आने की सूचना दे दी थी। हम लोग सेमरी चले। पण्डित जी रास्ते भर अनेक साहित्यिक विषयो पर बातें करते रहे। उन्होने पढा खूब है, प्रतिभाशाली भी हैं। देश सेवा, वकालत और साहित्य सेवा—इन तीनो की कशिश उन्हे आजीवन छकाती रही, एक के न हो सके तो किसी के न हो सके। बराबर जेल गये, बडा काम किया, किसी समय रायबरेली की जनता इनके नाम पर मरती थी, जिला काग्रेस के प्रधान थे। वकालत भी खूब चली, मगर उसमे रुचि नही थी, कभी जमकर प्रेक्टिस न की। लिखने का शौक ही इन सब शौको मे सर्वोपरि था, मगर उसके लिये समुचित अवकाश न निकाल सके।

पण्डित जी तो खैर आयु की ढाल पर उतर आये है और काम-काज से भरा जीवन बिताया है, पर मैंने आमतौर पर छोटे नगरो और कस्बो के कवियो, लेखको और कलाकारो को कुण्ठित होते देखा है। लिख कर भी उन्हें लिखना नही आता और लिखते-लिखते वे स्वयसिद्ध महान् हो जाते हैं। यह विपमयी महानता अमरबेल की तरह है, जिस हरे-भरे वृक्ष से लिटपती है उसी को जीते जी मार डालती है। इनमे अनेक आरम्भ मे सचमुच प्रतिभाशाली होते है। प्रतिभाओ का नष्ट होना किसी भी उन्नतिशील राष्ट्र के लिये अत्यन्त अशुभ है। मेरे विचार से तो एक ऐसे अर्द्ध-सरकारी सगठन की आवश्यकता है जो इन कस्बो मे भी सस्थाएँ स्थापित करे। उन सस्थाओ मे कलाकार अपनी रचनायें सुनायें, उन पर बहस हो। जो रचनाये स्थानीय गोष्ठियो मे उत्तम मानी जायँ वे अन्य नगरो और कस्बो की गोष्ठियो मे साइक्लोस्टाइल कर सुनाने के लिये भेजी जायँ। जगह-जगह के लोगो की राये और सुझाव उगती हुई शक्तियो को प्रगति का सही मार्ग सुझा सकेगी। सिद्धहस्त लेखको से उनका सशोधन करवा केंद्रीय सगठन उन्हे प्रकाशित करे। इसी प्रकार उगते हुए सगीतज्ञ, अभिनेता, चित्रकार, नर्तक, मूर्तिकार आदि भी सही तौर पर पनपाये जा सकते हैं। ऐसा सगठन पूर्णरूपेण सरकारी नही होना चाहिये। गैरसरकारी इस लिये नही हो सकता कि अब ऐसे शुभ कार्यो को चन्दा देकर चलाने वाले उत्साही रईस प्राय बहुत कम होते जा रहे हैं। अर्द्ध सरकारी सस्था जनता और उसके द्वारा चुनी गई सरकार के सहयोग से बडा काम कर सकती है। मैंने रायबरेली मे कई व्यक्ति पाये। नीलम, बालकृष्ण अच्छे कवि हैं। अमरबहादुर सिंह 'अमरेश' ने घूम-घूम कर राणा बेणीमाधव के सबन्ध मे लोक साहित्य और उनकी जीवनी एकत्र कर एक पुस्तक लिखी है। भीरा गोविन्दपुर के युवक गायको की टोली और उनके युवक गीत लेखक श्री चक्रपाणि भी प्रोत्साहन से बहुत आगे बढ सकते हैं। रायबरेली के बडे प्रतिभाशाली कवि स्व० कृष्णशकर शुक्ल 'कृष्ण' ने आयुमान् तो कुछ भी न पाया परन्तु बाईस वर्ष की आयु मे 'बेनीमाधव बावनी' लिखकर वे अमर हो गये। आचार्य द्विवेदी जी, हरिऔध जी, मैथिलीशरण जी आदि अनेक पूज्य पुरुषो ने मुक्त कठ से 'कृष्ण' कवि की सराहना की थी। 'बेनीमाधव बावनी' गाँव-गाँव मे प्रसिद्ध है, कई जगह उसके छन्द भी लोक गीतो की माग करने पर मुझे सुनने को मिले। स्व० 'कृष्ण' के पिता साहित्य भूषण पण्डित रामावतार शुक्ल 'चातुर' जी ने 'कृष्ण' जी के राणा सबन्धी तीन ऐसे छन्द दिये जो अबतक अप्रकाशित है।

तेरी तेग ताव माँहि तडपत जात 'कृष्ण',
काटि काटि मुड झुण्ड डुण्ड पटकतु है।
मच्छिका समान ही उडावती है शत्रु शीश,
गौरग सुअग को सुअंग सो रगतु है।
खड्ग कोपि तोपि देत तोपन को लोथिन सो,
गनन गनन को तो कछु न गनतु है।
सरपै समान अिस, सर पै समान अरि,
सर पै नहाय रक्त सरजा करतु है।

(२)

वेनी वीर वाना वैस वश मरदाना,
वाकी भूपति जनाना ठानठाना भरी घात है।
इन्द्रपाल, माधवसिंह, चन्द्रपति, रघुनाथ,
मिलिकै फिरगिन दगा दई सो ज्ञात है।
ताना देखि भ्रकुटी सुयुद्ध मे दिवाना देखि,
कम्पनी विलायत सकल विललात है।
छीन्यो तोपखाना तव शत्रु है सकाना,
रन राना विरझाना आज खाना नही खात है।

कृष्ण जी की तीसरी कविता वाजिदअली शाह की विलासिता को अवध की राजधानी मे अग्रेज़ी ध्वजा फहराने का कारण बतलाती है।

वाजिदअली शाह था नवाब औध 'कृष्ण कवि',
शासन विधान अधकूप मुगलान को।
हीजडन साथ कीन्ही, वेश्यन विलास कीन्ही,
नाश कीन्ही दास भारत महान को।
जान को जहान को ईमान को न परवाह,
खान-पान ज्ञान औ न मान हू कुरान को।
वाही समै वेली वेलीगारद गारत कीन्ही,
नभ फहरायो है फिरगिनी वितान को।

हमारे देश मे, स्वप्रदेश मे कृष्ण कवि जैसी प्रतिभावान न जाने कितनी उगती कलिया विन खिले ही मुरझा जाती हैं। यह सचमुच हमारा दुर्भाग्य है।

सेमरी पहुँच गये। पता लगा लाल साहब इकौनी गये हैं। सोचा, यह तो सारा दिन नष्ट करने का योग उपस्थित हुआ है। पण्डित जी ने साइकिल पर पत्रवाहक भेजने का प्रस्ताव किया, मगर इससे हमारा कुछ काम न वनता। लाल साहब बैल-ताँगे पर गये थे। पत्र पाकर भी आते-आते दो सहज ही मे वज जाते। मैंने कहा, मोटर से आठ मील तय करना समय की वचत और कार्य सम्पादन के लिये अधिक वुद्धिमत्ता की वात होगी। आठ मील कच्चा रास्ता तय कर इकौनी पहुँचे। जिला वोर्ड स्कूल के मास्टर ठाकुर साहब के यहा अतिथि हुये, उत्तम रसोई जीम, लाल साहब को साथ लेकर पक्के रास्ते से चले। मार्ग मे वैसो के पूर्वज महाराज सातन का शिवालय सातनपुर मे देखा। वहा सातनेश्वर का प्राचीन मदिर है। मदिर मे कुछ पुरानी नवावी काल की चित्रकारी के वडे मामूली से नमूने है सर्प, मयूर, सिह, मयूर-नृत्य, कीर्तन करते ऋषि आदि वने हैं। मूर्ति प्राचीन है, वाहर भी खण्डित मूर्तिया एक जगह एकत्र कर रक्खी गई हैं। वनावट से हज़ार-ग्यारह सौ वर्ष पुरानी लगती है। मूर्तियो का शिल्प ढलते सूरज-सा, अपने उतार के ज़माने की गवाही देता है। मदिर का चबूतरा पुरानी ईंटो का और मदिर आसफी लखौरी का वना है।

लाल साहब सेमरी के कथनानुसार यह वैसो का पूज्य स्थान है। महाराज सातन वडे प्रतापी थे। मुसलमानो ने महाराज से डोला माँगा। महाराज सातन ने इकार किया। काकोरन मे उनकी खाल खीची गई। मरने से पूर्व उन्होंने दो वातें वसीयत मे कही। पहली वसीयत यह की कि 'वैसो मे कन्या को जनमते ही मार डाला जाय। दूसरी वसीयत यह की कि मेरा क्रियाकर्म खान्दान मे वही करे जो शत्रुओ से मेरा वदला ले।' लिहाज़ा एक वार नवावी मे वैसो ने राना वेनी माधो की सर्दारी मे उन पर हमला किया। नवाव ने कहा कि अव तो हम कमज़ोर हो ही चुके हैं, अव हमसे वदला लेकर क्या करोगे? इस पर राना वेनीमाधो और वैस लोग लौट आये।

हमारा पिछला एक-हज़ार वर्ष का इतिहास वडे ही विचित्र उत्थान-पतन का द्योतक है। हिन्दुओ मे फूट थी। सामती प्रथा की लूट मार वाली महोच्च-क्षात्र-मान्यता इस फूट को जड मे काम कर रही थी। किसी ने सच कहा है, सफल लुटेरा ही राजा और सम्राट् वनता है। हमारे यहा और सव जगह अपना राज वढाना राजा का परम धर्म माना जाता था। भारतीय क्षत्रिय, अक्षत्रिय राजा हरदम अपना राज वढाने की चिंता मे वडी मछली के समान छोटी मछलियो को

निगला करते थे। फिर वडी मछलिया परस्पर मे निगला-उगली कर मच्छ, महा-मच्छ वनती थीं। इस क्षात्र-कर्म मे कभी तो देश सुशासन-सगठन पाकर उन्नतिशील वनता था और कभी विखरने लगता था। मैं वडे आश्चर्य के साथ अपने वुद्ध, सिकन्दर काल से मान्य इतिहास के नक्शे को देखा करता हूँ। सिकदरी आक्रमण के समय पाटलिपुत्र मे शूद्र नद का वडा राज्य था और वहुत से छोटे-वडे राज्य थे, जो परस्पर मे ईर्ष्या और शत्रुता वरतते थे। सिकदर के आक्रमण के समय हमने अपनी वीरता मे कमी नही पाई। जीतने के वावजूद सिकदर के सिपाही महाराज पुरु की भारतीय सेना की मार से इतना सहम गये थे कि आगे वढने से इन्कार कर दिया। वहरहाल वीरता की कमी के कारण नही वरन् फूट के कारण भारत ग़ारत हुआ। मानो इस लाज की प्रतिक्रियावश शक्तिशाली मौर्य साम्राज्य पनपा। चद्रगुप्त और उसके मत्री-गुरु महामति चाणक्य कौटिल्य विष्णु गुप्त ने एक सुव्यवस्थित शासन की नींव डाली। उनकी चलाई हुई मशीनरी ने ऐसा जलवा दिखाया कि देश मे दिनोदिन सपन्नता वढी, चेतना का विकास हुआ। हमे यह वात नही भूलना चाहिये कि यदि देश मे शाति सुव्यवस्था और मौर्य सरकार की अच्छी साख न होती तो सम्राट् अशोक वे शातिवादी महान् कार्य करने का अवसर कदापि न पाते जिनके कारण वे इतिहास मे अमर हैं। अशोक के वाद धीरे-धीरे मौर्य साम्राज्य शिथिल होता गया। सरकारी मशीन विगड गई, देश फिर उस हद तक असगठित हो गया कि विदेशी कुपन न केवल आक्रमण कर सकें वल्कि देश के वहुत वडे भाग मे अपना साम्राज्य भी स्थापित कर सकें। कुपनो की दासता ने फिर राष्ट्रीय शक्ति जगाई, भारशिवो, वाकाटको ने देश को मुक्त किया। मौर्य, अशोक और फिर कुषन सम्राटो का आश्रय पाकर वौद्ध धर्म वहुत मोटा हो गया था। ब्राह्मण धर्म एक तरह से अपना प्रायश्चित्त-काल पूरा कर नई शक्तियो के साथ लौटने के लिये तैयार हो चुका था। वौद्ध विहारो, मदिरो के स्थान पर वैदिक-अवैदिक-तात्रिक प्रतीको तीर्थों आदि की पूजा का दौर चला। शकराचार्य, ब्राह्मण धर्म के भगवान् वुद्ध थे। यो भी वहुत से ब्राह्मण उन पर प्रच्छन्न वौद्ध होने का अपराध आरोपित करते हैं। वे भावुक भक्त, कवि और वेदात-शास्त्र-निधि महापण्डित थे।

ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियो मे 'एकदा नैमिषारण्ये' वाली लहर दौड रही थी। वहा लघु सत्र और दीर्घकालीन सत्र चला ही करते थे। सूत-परम्परा पुराणों की रचना करती जा रही थी। प्रात-प्रात मे पुराणिक, कथावाचक, गागरिया

भट्टो का जाल फैल गया। कथा और गाथा से सारा देश एक प्रकार के सैद्धान्तिक ढाँचे मे ढलने लगा। यज्ञो से अग्नि देव को अजीर्ण हो गया, व्रत, उपवास, गगा, गोदावरी, कृष्णा, महानदी आदि तीर्थों का माहात्म्य वढ गया। वौद्ध-जैन धर्मो से प्रभावित भारत देश मे फिर से अपने पाँव जमाने के लिये ब्राह्मण धर्म ने भी अहिंसा को प्रमुख मान्यता दी। वाजपेय, अश्वमेध आदि महायज्ञो का पुण्य गगा नहाने, कथा सुनने और व्रत उपवाम करने से मिलने लगा। पिछले युग के ब्राह्मण धर्म मे यज्ञो का तमाशा इतना वढ गया था कि राजाओ को राजकाज करने का अवसर नही मिलता था। राजा जव यज्ञो की दक्षिणा देते-देते दीवालिये होने लगे, देश की (इहलोक की) आर्थिक दशा परलोक चिन्ता के कारण जव विगडने लगी तो राजाओ ने वौद्ध या जैन धर्म से नई जीवन-ज्योति पाई। जैन से अधिक यहा वौद्ध-धर्म का जोर हुआ। जनता ने भी पहले के धर्म मे घुटन और नये धर्मो मे ताजी साँस पाई। वही हाल वौद्ध धर्म का उसके भारत मे पतन काल के समय हुआ। ब्राह्मण धर्म इस वार उदार होकर आया था। धार्मिक, सास्कृतिक एकता से गुप्तो और हर्षवर्द्धन के साम्राज्य पनप सके; ढाई सवारो मे कन्नौज के साम्राज्य का नाम भी लिया जा सकता है।

एक हजार वरस करीव-करीव सुख चैन और प्रगति के वीते। अजन्ता, एलूर की कैलास गुफा, पुराण, श्रीमद्‌भागवत, कालिदास, पातजलि, जयदेव हुये, विदेशी व्यापार-वाणिज्य का प्रसार हुआ, गजलक्ष्मी समुद्र की वेटी भी वन गई, हूणो ने हमला किया तो मुह की खाकर लौटे—हर दृष्टि से देखिये, ईसवी सन् के पहले हजार वर्ष सव मिलाकर उम्दा हैं, उन्नतिशील दिखलाई देते हैं, उसके वाद ब्राह्मण फिर कठोर हो जाता है। वलि-प्रथा शाक्त धर्म के प्रभाव से फिर वढती है।

देश की आस्था फिर विखरने लगती है। ब्राह्मण गुटो-सम्प्रदायो मे, राजाओ मे और लाजिमी तौर पर इनकी प्रेरणा से जनता मे भी फूट की शक्तिया वढने लगती हैं।

गजनी, अफगानिस्तान आदि की भूमि पर वौद्ध धर्म और सस्कृति का पुण्य-प्रभाव तव तक क्षीण हो चुका था। इस्लाम धर्मावलम्वियो से पराजित हो ये राष्ट्र प्राय. पौने सोलह आने भर इस्लाम धर्म के अनुयायियो से नये रूप मे सगठित हो गये थे। वैर-फूट के देश भारत मे उनकी दौडें आईं। गजनी के महमूद को, और उसकी मुसलमान सेना को दुहरा-तिहरा लाभ हुआ, एक तो काफिरो को जीतकर उनकी आस्था वलवती हुई, दूसरे अपने द्वारा हराये गये देश मे तरह-तरह की

मौजें ली, तीसरे लूट का वेशवहा माल वाँधकर घर ले गये। गजनवियो को लूटने का चस्का पड गया। वे अपने सुल्तान के साथ वार-वार आते थे। फिर गोरी आने लगा। वह युग पृथ्वीराज-जयचन्द जैसे फूट-परस्तो का युग था।

और इसके वाद भी सब पृथ्वीराज और जयचन्द जैसे राजे-महराजे ही रह गये। हमारे इन पृथ्वीराजो मे वैयक्तिक वीरता की कमी नही है, उस युग की जनता मे भी नही हैं। हम उस वीरता को वडी श्रद्धा की दृष्टि से सस्कार वश देखते आये हैं, परन्तु कभी-कभी झुँझलाहट भी होती है, समझ मे नही आता कि हम विना बुद्धि की अधी शूरवीरता को कहा तक चाटें-दुलरायें ? आपसी वडप्पन का जोम हमे खा गया। ब्राह्मण थे, वे सब पढ-पढ कर वडे पण्डित हो गये थे, ब्रह्म-रूप हो गये थे। और ये ब्रह्म आपस मे इस वात पर चुटिया झुटौवल करते थे कि उनमे सर्वश्रेष्ठ ब्रह्म कौन है। मुसलमानो के इस देश मे पैर जमाने के कारण देश की जनता को चाहे जो नुकसान हुआ हो, पर उसके वौद्धिक, धार्मिक नेता, ब्राह्मण वर्ग, को यह लाभ अवश्य हुआ कि उसके उखडते पैर फिर जम गये। वौद्धो-जैनो का ब्राह्मण-वेद विरोधी स्वर तो वहुत पुराने जमाने से था ही, छठी-सातवी शताब्दी से फिर नये स्वर जोर पकडने लगे थे। मुमलमानो के आते ही अनेक वेद-ब्राह्मण विरोधी स्वर खट से वद हो गये। वे सब वेद-ब्राह्मण धर्म के झण्डे तले आ गये। जो न आ सके वे मुसलमानो के कैम्प मे चले गये। ब्राह्मण इस प्रकार नया गौरव पा वडा कठोर हो गया था। मुसलमान तलवार के जोर पर गांव के गांव मुसलमान वनाते चलते थे। ब्राह्मण धर्मी उन पीडितो को अपनी अहम्मन्यता से, घृणा से और भी पीडित करते थे। नतीजा यह हुआ कि नये भारतीय मुसलमान हिन्दू भारतीयो के सवसे प्रबल शत्रु हो गये। सच है, सगे भाई यदि पारस्परिक शत्रुता पर कमर कस लें तो उनसे वडा शत्रु और दूजा नही होता।

इस प्रकार भारतीव जन फिरे फूट गया, उनकी आस्था विखरने लगी। ईसा की दूसरी सहस्राब्दि के प्रारम्भिक दिन हमारे लिये वडे कठिन थे। अवध की भूमि को भी उस काल की कठिन परीक्षा देनी पड रही थी। हिंदुओ मे वीरो की सख्या मे कोई कमी नजर नही आती, और फिर भी वे वरावर हारते चले गये। भारतीय मुसलमान अपने देश मे एक नई शक्ति के रूप मे सगठित हो रहे थे। इसलिये पुराने फूट-परस्तो का नया सयुक्त मोर्चा वन गया। विदेशी मुसलमानो को ऐसी परिस्थिति मे भारत पर आक्रमण 'कर और लूटने-जीतने का स्थायी पासपोर्ट मिल गया।

टूटी हुई आस्था का मनुष्य भी कितना दयनीय होता है। उसमे एक से एक सुन्दर गुण होते हैं पर उन सब गुणो के सगठन से एक अति सुन्दर व्यक्तित्व ढालने लायक शक्ति नही होती। और इस तडप मे वह न जाने क्या क्या कर डालता है, कभी अच्छा, कभी बुरा। उसे सराह कर भी सराहा नही जा सकता, कोस कर भी कोसा नही जा सकता।

हम गढी बैंहार पहुँच गये। यह स्थान यो तो जिला उन्नाव मे है, पर हमारे आज के यात्रा-क्षेत्र से यह स्थान बिलकुल मिला हुआ था। इसलिये और विशेष रूप से लाल साहब के साथ होने के कारण हमने वीरवर शिवरत्न सिह और जगमोहन-सिह के वशजो से मिलने का निश्चय किया। बैंहार असल मे विहार शब्द का बिगडा हुआ रूप है। लाल साहब ने बतलाया कि वहा आस-पास पुराने जमाने के ढूह खडे हैं।

ऊँचे टीले पर मिट्टी से लिपा-पुता एक बडा भवन है। इसी मे गदर कालीन वीर शहीद के वशज रहते हैं। लाल साहब ने ऊपर चढ़ते समय बतलाया कि शिवरत्न सिह नि सन्तान मरे थे, और जगमोहन सिह के तीन प्रपौत्रो से इस समय वीरो का वह वश चल रहा है। ऊपर मकान के बाहर फूस का एक लम्बा बरामदा सा बना है। एक सज्जन चारपाई पर लेटे हुये मासिक पत्र 'कल्याण' का पारायण कर रहे थे। हम लोगो को देखते ही बैठ गये। लाल साहब ने श्री वेंकटेश्वर सिह से हमारा परिचय कराया। वेंकटेश्वर सिह जी जगमोहन सिह के मँझले प्रपौत्र हैं तथा उन्नाव के भगवन्त नगर इन्टर कालेज मे अध्यापन कार्य करते हैं, उनसे छोटे प्रतापबहादुर सिह भारतीय सेना मे सूबेदार पद पर हैं। सबमे बडे श्री विन्ध्येश्वरी सिह घर पर रह कर जमीन जायदाद सम्हालते है। श्री वेंकटेश्वर सिह ने हमारे आने का आशय जानकर अपने बडे भाई श्री विन्ध्येश्वरी सिह को बुलवा लिया। श्री विन्ध्येश्वरी सिह ने बतलाया . "शिवरतन सिह और जगमोहन सिह के पिता दुर्गाबख्श सिह अग्रेजो के प्रबल विरोधी थे। सन् १८६८ ई० मे अवध के अर्थ कमिश्नर बरो साहब ने उन्हें 'परसिस्टेन्ट रिबेल'—दृढ विद्रोही लिखा है। सन् १८५७ मे वो राणा बेनीमाधो के साथ अहदनामे मे शरीक हुए। दुर्गाबख्श सिह तो वृद्ध हो चुके थे, शिवरतन सिह ने स्वतत्रता-सग्राम मे बडा भाग लिया। दोनो भाई सिरियापुर के पास लोनी नदी के किनारे १३ मई सन् १८५८ को अग्रेजो से लडते हुए मारे गये। इसके बाद हमारा पाटन बिहार का ताल्लुका जब्त कर लिया गया। इस जगह पर हमारी गढ़ी थी, उसे अग्रेजो ने नष्ट कर डाला और हमारी धन

सम्पत्ति भी लूट ले गये । सर होप ग्राण्ट की किताव मे उसका वर्णन है ।"

इन भाइयो ने अपने वीर पुरखो के सम्बन्ध मे ग्राण्ट और गजेटियर के वर्णन टाइप करा कर अपने पास रख छोडे थे । तुरत मँगवाये ।

सर होप ग्रॉण्ट लिखता है "१२ मई को सवेरे मैं नगर पहुँचा । वहा सुना कि शत्रु ने वहा से पाँच मील पूरव सिरसी मे मोर्चा जमाया है, यह सुन कर मैं दोपहर मे उस ओर वढ चला । मौसम बुरी तरह गर्म था और हमारी परेशानी को वढाने के लिये ववडर उठाती हुई तेज़ लू भी चल रही थी । फिर भी शाम के पाँच वजे तक हम लोग पहुँच गये । दुश्मन का मोर्चा मजवूत पाया । लगभग पन्द्रह सौ पैदल और सोलह सौ घुडसवार सेना दो तोपो के साथ नाले के पास खडी थी । उनके पीछे घना जगल था और आस-पास की जमीन टूटी हुई थी । उनके घुडसवार हमारी दाहिनी ओर हमारे माल-असवाव पर टूट पडने की नीयत से तैयार खडे थे, लेकिन मेरा मन उस ओर से हलका था क्योकि मैं अपना असवाव पीछे सुरक्षित स्थान पर छोड आया था, उसकी रक्षा के लिये दो सौ प्यादे, दो तोपें और घुडसवारो की एक टुकडी भी तैनात कर आया था । हमारी ओर से तोपो ने छर्रा और वममारी शुरू की । हमारी राइफल और सिक्ख सेनायें भिडकर युद्ध कर रही थी, ३८ वी और ९० वी सेनायें वडे तोपखाने की रक्षा करती हुई रिज़र्व मे थी । हमने शीघ्र ही नाले को विद्रोहियो से साफ कर दिया, धनी और प्रभावशाली ताल्लुक़दार अमरतन सिह और उसके भाई को मार डाला तथा दो तोपें छीन ली । शत्रु वडी तेजी से पीछे हट रहे थे । मैंने भी अपना एक सेना-दल उनके पीछे छोड दिया और पडाव डालने का आदेश दिया । आधी रात मे अचानक चीख-गुहार मचने तथा घोडे की टापो के शोर से हम जाग पडे । अँधेरी रात का लाभ उठाते हुए शत्रुओ के घुडसवारों ने हमारे ऊपर अचानक हमला कर दिया था, जिससे बडी गडबडी मची । एक वैल गाडीवान मारा गया, तो तोपखाने के कप्तान गिवन दो वार धक्का खा कर उलट गये और अन्त मे दुर्घटनावशात् अपनी ही रिवाल्वर से घायल हुये ।"

ठाकुर विन्ध्येश्वरी सिह ने हमे यह भी वतलाया कि अमरतनसिह, शिवरत्न सिह का ही दूसरा नाम था । उन्होने कहा कि दुर्गाबख्शसिह अपने ज्येष्ठ पुत्र का असली नाम न लेकर इसी के नाम से पुकारते थे । —

"आप तो जानते ही हैं कि हमारे हिन्दुओ मे माता-पिता अपने वडे लड़के का नाम खासतौर पर नही लेते ।"

ग्राण्ट द्वारा उल्लिखित 'नगर' नामक स्थान का पूरा नाम भगवन्तनगर है, श्री विन्ध्येश्वरी सिंह ने यह भी बतलाया कि जमीपुर ग्राम मे 'शिवरत्न सिंह जूनियर हाई स्कूल' सत्तावनी क्रान्ति के वीर नायक की स्मृति में चलता है, जिला बोर्ड से उसे मान्यता भी मिली है। उन्नाव जिले की कांग्रेस कमेटी ने शिवरत्नसिंह का स्मारक भी बनवाने का निश्चय किया है।

श्री विन्ध्येश्वरी सिंह ने मुझे बतलाया कि बाद मे शिवरत्न सिंह तथा जगमोहन सिंह के पिता दुर्गाबख्शसिंह अंग्रेजो द्वारा गिरफ्तार हुए थे। महीना-दो-महीना कैद मे रहे। उनसे पूछा गया कि तुम रानी विक्टोरिया के माफीनामे वाले एलान पर क्यो नही हाजिर हुए ? वे बोले कि अगर मैं ऐसा करता तो नवाब के प्रति विश्वासघात होता जो कि वीर के लिये कलक की बात है।

फिर पूछा गया कि क्या अंग्रेजो, स्त्रियों, बच्चो के मारने मे आपका हाथ था ? वे बोले कि यह उससे भी बढ़कर कलक की बात होती—वीर के लिये यह सबसे अधिक कायरता का काम है। मैंने अपने लडको, सिपाहियो तक को यह आदेश दे रक्खा था कि ऐसा घृणित काम कोई न करे।

गढ़ी बैंहार या बिहार से हम लोग सेमरी आये। लाल साहब के पास राणा वेणीमाधव बख्श का एक पुराना कलमी चित्र था, जिसे उन्होंने वर्षों पहले अपने एक ऐसे प्रजाजन से प्राप्त किया था जिसका पितामह राणा के साथियो मे से था। लाल साहब कहने लगे "बहुत दिनो से सोचता था कि कोई भला आदमी मिल जाय तो उसे यह तसवीर दे दूँ।"

मैने कहा "भले के बजाय यदि आप मुझे इस समय बुरा आदमी कह कर भी यह चित्र देते तो भी आपका आजीवन उपकार मानता।"

लाल साहब सेमरी उन ताल्लुकेदारो मे से हैं जिन्होने गाधी के सविनय अवज्ञा आन्दोलनो मे सक्रिय भाग लिया था। उन्होंने आन्दोलन के ज़माने मे अपने राज मे जवाहरलाल नेहरू के नाम पर स्कूल भी स्थापित किया जो अब कालेज हो गया है।

राणा का चित्र देखकर मेरा प्रभावित होना अत्यन्त स्वाभाविक था। बीच ने दो भागो मे बँटी हुई उनकी रोबीली दाढी, निश्चयात्मक दृष्टि, लम्बी नाक उनके व्यक्तित्व की शोभा थी। चित्र देखते ही यह स्पष्ट हो जाता है कि इसमे आँका गया व्यक्ति असाधारण था।

राणा वेणीमाधव जन-सगठन और छापेमार युद्ध की कला मे अपने युग के किसी भी प्रभावशाली व्यक्ति से कम नही थे। तात्या टोपे, मौलवी अहमदउल्ला शाह, राणा वेणीमाधव वख्श और उनके सम्वन्धी वावू कुँअरसिंह अपने ढग के अनोखे नायक थे। जव शकरपुर घेरा गया तव अग्रेज शायद यह कल्पना भी न कर पाये होगे कि उनके जबर्दस्त घेरे के वीच से चकमा देकर कोई व्यक्ति अपनी पूरी सेना, खजाना, तोपखाना और परिवार की स्त्रियो को लेकर साफ निकल जायगा। सर विलियम रसल ने सिद्धहस्त उपन्यास लेखक की तरह १६ नवम्बर सन् १८५८ की रात का वर्णन अपनी पुस्तक 'माई डायरी इन इण्डिया' मे किया है। चारो तरफ पक्तियाँ वैठाई गई थी। अग्रेजो के प्रधान सेनापति लार्ड क्लाइड स्वय दक्षिण-पूर्वी भाग मे घेरा डाले पडे थे। और उत्तर पश्चिम मे सर होप ग्राण्ट जैसा कुशल सेनानी डटा हुआ था। चाँदनी रात थी, दो वजे तक राणा चुपचाप वैठे रहे। फिर अन्धेरे मे इतना बडा लाव-लश्कर लेकर पश्चिम दिशा से, सर होप ग्राण्ट की दाहिनी चौकी के वीच से होकर साफ निकल गये। सवेरे उठकर जव अग्रेजो ने किला खाली पाया तो भौंचक रह गये। 'सघर्षकालीन नेताओ की जीवनियाँ' नामक पुस्तक के पहले भाग मे श्री श्रवणकुमार श्रीवास्तव महोदय ने राणा की जीवनी मे अग्रेज लेखक केवेना के सस्मरणो से एक अग्रेजी गीत उद्धृत किया है। राणा की राह तकते हुए ऊवकर गोरी सेना के किसी गोरे ने 'तुम कहा हो वेनीमाधो! वेनीमाधो!!' गाते-गाते एक पूरी तुकवन्दी जोड डाली थी। अग्रेज राणा का लोहा मानते थे। राणा वेणीमाधव वख्श नि सन्देह महान् नेता थे।

लाल साहव हमे फिर मानपुर के तिहत्तर वर्षीय वृद्ध ठाकुर रणदमन सिह से मिलाने ले गये। ठाकुर रणदमन सिह सचमुच मिलने योग्य व्यक्ति हैं। उनका जोश अव भी किसी से हार मानने को तैयार नही। अपने आगे किसी की नही सुनते। इधर साल-दो वरस से वे वैसो का इतिहास लिखवा रहे हैं। उनकी पोथी धीरे-धीरे ही आगे वढ रही है। गरीबी ने उन्हे किसी हद तक तोड दिया है। इस वर्ष उनके पोते ने सस्कृत भाषा मे विशेषता के साथ प्रथम श्रेणी मे इण्टरमीजियेट पास कर जिले मे इस वर्ष का अद्वितीय गौरव प्राप्त किया है। ठाकुर रणदमन सिह इस बात को दुहराते नही अघाते हैं। ठाकुर साहव एक धुन मे वातें करते ही चले जाते हैं। उन्हे टोक कर अपनी राह पर मोडना मुझे वडा कठिन जान पडा। मेरी कठिनाई को ताडकर लाल साहव आगे आये और ठाकुर रणदमन सिह को अपनी ओर हाथ पकडकर मुखातिव करते हुए उन्होने कहा कि पहले इनकी वातों

का जवाव दे दो। राना वेनीमाघो और गदर का जो कुछ हाल जानते हो वतलाओ।

"हाल सुनावैं म का कउनी छप्पन टका खर्चु होति है ? अरे, हालै हाल सुनाये देइति है।" यह कह कर उन्होने वतलाया कि जव अंग्रेजो ने अवध का राज वाजिद अली शाह से ले लिया तो राणा वेणीमाधव ने वैसवारे के सव लोगो को माल गुजारी अदा करने से रोक दिया। वस एक तिलोई के राजा ने इनका कहना न माना। राना उन्हे घेर कर पकड लाये।

इतना लिखवाते-लिखवाते ठाकुर रणदमन सिंह फिर जल्दी-जल्दी एक के वाद एक इतिहास के लच्छे इतनी तेजी से छोडते चले गये कि मेरे लिये लिखना कठिन हो गया। उम्दा शार्ट हैण्ड लेखक ही रणदमन सिंह जी की वातो को लिपि-वद्ध कर सकता था।

लाल साहव ने फिर रणदमन जी को अपनी ओर आकृष्ट कर कहा . "राना साहव जव सेमरी माँ आये तौ का भा ?"

"सेमरी माँ तीन हजार आदमी रहा, सोरह सौ पैदल, पन्द्रह सौ सवार। तव दुपहर माँ नगर माँ गोरे आये।

"राना वेनीमाघो सेमरी माँ आय कै पडाव किहिनि। तव तउ महराज के हिया कोऊ मरद मानुम रहा नाही, ठकुराइन साहव रही। राना आय कै हुकुम लगाइनि कि खाना लाओ। ठकुराइन भला राना वेनीमाघौ का का समझैं। उयि घर की वडी वूढी रहैं। राना साहेव उनके आगे वच्चा रहै। ठकुराइन कहवाइनि कि खाना खाय के होय तौ लरिका की तरह घर मा आय के खाय जाओ औ जो अपने वडे गुमान मा हो तौ वताये देइति है, हियैं पडियारे नाला पर तुमरे सव घोडन की पूंछै कटाय ल्याव। ई पर राना वेनीमाघौ तुरन्त हाँ आजी हाँ आजी करति आये और चुपचाप पाटा पर वइठि क खाना खाय लिहिनि।"

मामन्तो मे यह चलन है कि जव कोई वडा मामन्त अपने से छोटे सामन्त के घर भोजन करने जाता है तो विना नजर लिये खाना नहीं खाता। राणा वेणीमाधव वक्श सरदारो के मरदार थे, परन्तु कुनवे की वडी वूढी के सामने अपनी मर्यादा को वालाये ताक कर चुपचाप भोजन करने चले गये, यह उनकी महानता का परिचायक है।

सेमरी के युद्ध के समय जव जमीपुर के टीले पर गोले गिरे तो महारानीगज का वरखण्डी वनिया और हर प्रसाद सिंह ठकुराइन साहवा को नदी द्वारा वरहा

मौजा मे सुरक्षित पहुँचा आये।

"शिवरतन सिह् बैहार वाले सिमरी आवति रहैं तउन मैदनवा मा भूँजि डारेगे।" सेमरी मे उस समय अरहर कट चुका था, खेतो मे उसकी खूंटिया निकली हुई थी, सेमरी के कुँओ का पानी खारा है। अंग्रेजो ने पहले तो यह इल्ज़ाम लगाया कि विधवा रानी ने खेतो मे खूंटिया गडवाई और कुओ मे जहर घुलवाया है। रानी बाग़ी है। बाद मे एक अग्रेज़ मे लिखा कि विधवा रानी और नाबालिग़ ऐसा नही कर सकते। सेमरी मे 'नकटी' और 'बलदेव बाण' नाम की दो तोपें थी, उन्हें अग्रेज़ उठा ले गये।

डौंडिया खेरे के राव रामबख्श से ठाकुर रनदमन सिह् प्रसन्न नहीं देखते थे, उन्होंने कहा कि राम बकस ने राना साहब को फँसा दिया "राम बकस राना साहेब ते कहिनि कि तीनि बरस का रासन गँजा है। खाओ औ लडौ। और आप खजाना लइकै चुप्पे ते कासी जी भागिगे। उयि स्यवाला (शिवाला) माँ अँगरेजन क पकडि कै जलाय चुके रहैं न, वहे बात क डर रहै।" राव रामबख्श जब पकड़े गये तो कोई उनकी शिनाख्त करने न आया, केवल मौरावाँ के चन्दन लाल खत्री और मुरारमऊ के दुर्विजय सिह् ने शिनाख्त की।

राव रामबख्श के प्रति लाल साहब सेमरी भी भावशून्य आलोचक की भाँति अपने उद्गार प्रकट करते हुए बोले "राव रामबख्श ने कोई लडाई तो लडी नही। दो काम किये, एक तो शिवाले मे आग लगाई, दूसरे अगरेज़ो की नाव डुबाई। यह उनकी वीरता है।"

लाल साहब ने रावसाहब की एक विशेषता यह बतलाई कि उन्हें डूबते हुए लडको को देख कर बडा सुख मिलता था। वे घाट पर पूजा के लिये बैठते और उनके सधे हुये डुबकी खोर नहाने वाले बच्चो की टाँग घसीट कर पानी में खीच ले जाते थे। राव साहब की 'सैडिस्ट' प्रवृत्ति की यह बात सुनकर मैं स्तम्भित रह गया।

नाव डुबोने और मन्दिर मे आग लगाने की घटना को लेकर मन मे अब तक साफ नहीं हूँ। श्री सुरेन्द्रनाथ सेन ने अपनी पुस्तक 'एट्टीन फिफ्टी सेवन' मे मौब्रे टॉमसन और डेलाफोज की पुस्तको से वे अश उद्धृत किये हैं, जिनका सबन्ध नावें डुबाने से है। अंग्रेजो द्वारा मदिर मे शरण लिये जाने का उल्लेख भी है, सेन की पुस्तक मे राव रामबख्श के इलाके मे नावें फँसने, गोलिया चलाये जाने और सात अग्रेजो के शिवालय मे आश्रय लेने की बात तो है पर मदिर मे आग लगाये जाने की घटना का कोई उल्लेख नही है। ये दो अग्रेज जो कि स्वय उन घटनाओ मे

फँस कर भी सौभाग्यवश बच निकले मंदिर मे आग लगाने की घटना पर क्यो मौन हैं ? सेन ने केवल इतना ही लिखा है : "पीछा करने वालो से जब बचना मुश्किल हो गया तो निराश दल ने एक मंदिर मे शरण ली। मंदिर मे खाने के लिये कुछ नही था, लेकिन एक गड्ढे मे दुर्गन्धियुक्त पानी भरा था, वही उनकी प्यास बुझाने मे सहायक हुआ। उन्हे अपनी यह शरण-स्थली भी छोडनी पडी और नदी की ओर भागे।" सेन महाशय अंग्रेजो के प्रति भारतीयो के अत्याचार की कहानिया सुनाने से पुस्तक भर मे कही नही चूके, फिर राव रामबख्श का यह अपराध ही क्यो बख्श दिया ? सेन साहब अंग्रेजो के प्रति सहानुभूति प्रकट करते-करते इतने आत्मविभोर हुये है कि अंग्रेजो के शत्रु, स्वदेश वासी क्रातिकारियो को, आप भी 'शत्रु' ही कहने लगे हैं। ऐसे व्यक्ति का चुप रहना तो यही साबित करता है कि उसे आग लगाने के प्रमाण न मिले हो। पण्डित देवीदत्त शुक्ल ने 'अवध के गदर का इतिहास' मे मंदिर जलाये जाने की बात लिखी है।

अंग्रेजी नावो पर गोलीबार करने की योजना किसी और की बनाई थी। राव रामबख्श उस योजना मे शरीक अवश्य हुये थे। मंदिर भी भीड ने जलाया, राव रामबख्श वहा मौजूद थे या नही, इसका भी कोई उल्लेख अब तक कहीं नही पढ़ा।

ऐसी दशा मे राव रामबख्श को इन कार्यों के लिये दोषी ठहराना कहा तक उचित है, यह बात विचारणीय है। रही उनके बच्चे डुबाने वाली आदत की बात— इसके सम्बन्ध मे फिलहाल कुछ नही कहा जा सकता। अस्तु।

बात सत्तावनी नायको से हट कर अन्य सामन्ती नोकझोंक की ओर बढ़ी। ठाकुर रणदमन सिंह ने कहा कि एक बार गौरा के ठाकुर हमसे बोले कि बैसो मे राव दर्जा राणा से ऊँचा है। कविता का प्रमाण दिया—

दस हर (हल) राव आठ हर राना।
चार हरे कर भला किसाना ··॥

इस पर रणदमनसिंह जी ने जोश से तन्नाते हुये उनसे कहा कि आप के द्वारा दिया जाने वाला कविता का प्रमाण अशुद्ध है, शुद्ध इस प्रकार है—

दस हर राव बीस हर राना।
चार हरे कर भला किसाना॥
दुइ हर केरी खेती बारी।
एक हरे ते भली कुदारी॥

बैस ठाकुरो का प्रधान गढ दरअस्ल डौडिया खेडा है। जहाँ के राव रामवख्श थे। शकरपुर और खजूर गांव के राणा बैसो मे प्रमुख सामन्त थे। राणा वेनीमाधव के व्यक्तित्व से शकरपुर का माहात्य बहुत वढ गया था, दरअस्ल बैस सामन्त तीन शाखाओ में बँट गये थे। मुरार मऊ, डौंडिया खेडा और पुरवा के बैस, महान वैस राजा तिलोकचन्द के ज्येष्ठ पुत्र पिरथीचन्द के वशज हैं। तिलोक चन्दी बैसो की अन्य दो बडी शाखायें, सेम्बसी और नेहस्ता घराने, राज्य तिलोकचन्द के छोटे पुत्र हरिहर देव के वशजो ने स्थापित की। डौडिया खेडे वाले अपने को श्रेष्ठतम मानते हैं। यह श्रेष्ठता लघुता के झगडे बैसो के इन तीन प्रमुख घरानो मे अक्सर पारस्परिक ईर्ष्या के कारण वने है।

बैसो के इतिहास की भी रोचक कहानी है। वैसे तो बैस शालिवाहन श्री हर्ष के वशज माने जाते हैं। बदायूँ, मैनपुरी, इटावा, बैसो के पूर्व स्थान है। अवध मे इनका इतिहास सन् १२५० ई० से आरम्भ होता है। अभयचन्द, निर्भयचन्द नामक दो भाई वक्सर घाट पर गगा नहाने आये। उन दिनो अर्गल के गौतम वशी राजा और सूबेदार मे जोरो की तनातनी चल रही थी। वे भारत मे मुस्लिम शासन के प्रारम्भिक दिन थे। दिल्ली मे गुलाम वश का शासन चल रहा था। अवध मे राजपूत सामन्तो से मुसलमान शासको की पटरी नही बैठी थी। इसलिये मुसलमान सूबेदार ने गगा नहाने आई हुई गौतम रानी तथा उसकी पुत्री को घेर लिया। रानी ने गुहार लगाई कि अगर कोई क्षत्रिय हो तो विधर्मियो से हमारी रक्षा करे। निर्भयचन्द, अभयचन्द दोनो भाई मुकावले पर आ डटे और सूबेदार की सेना को मारकर खदेड दिया। इस युद्ध मे निर्भयचन्द ने वीरगति प्राप्त की। अभयचन्द रानी और राजकुमारी को पहुँचाने के लिये अर्गल गये। गौतम राजा ने उनके साथ अपनी राजकुमारी का विवाह कर दहेज मे बाइस मुहाल दिये। इन्ही बाइस मुहालो के ठाकुर होने के कारण ये लोग बैस कहलाते हैं।

ठाकुर रणदमन सिंह ने इस सम्बन्ध मे एक कविता दिखाई —

अवध राज डलमऊ बरेली ले
थुडेली, मौरावाँ, सिसेंडी, निघोबा सरवन सिहारे मे।
गिरधर कवि सातनपुर, पाटन, वइहार,
गुला देवरख कहिजर बिराजत जवारे मे॥
पाहन, ससान, मगडायल, सेदू, घाटमपुर,
कुम्भी डौंडिया खेर, हडहा बिराजत जवारे मे।

वरवत विशाला शालिवाहन के वश वारे,
वसत वैंस साढे वाइस मुहाल वैंसवारे मे ॥

इस प्रकार वैंसो के प्राचीन इतिहास की कान पडी भनक के साथ ही साथ यह विचार आया कि आरम्भ मे नये शत्रु के सामने वैंस अन्य क्षत्रियो के साथ भी सगठित हो सके, फिर अपने ही साढ़े वाईस मुहालो मे फूट पड गई। घर ही मे वडे छोटे की लतिहाउज चल गई, मुसलमानो से भी चलती ही रही। परन्तु सन् सत्तावन मे फिर यह आपसी फूट उडनछू हो गई।

हिन्दुस्तान मे फूट, गुलामी फिर सगठन, फिर फूट, गुलामी और फिर सगठन—यही क्रम कम से कम सिकन्दर के आक्रमण के समय से तो हमे दिखलाई ही पडता है। सत्तावनी क्रान्ति का काल देश के पुन सगठन का श्रीगणेश-काल था। यो फूट-परस्ती का वोल वाला भी रहा, परन्तु यह वात माननी पडेगी, कि राव और राणा आपसी छोटाई वडाई भूल कर सगठित हुये थे, हिन्दुओ ने वैर भूल कर देश की एकता के प्रतीक 'म्लेच्छ' यवनो के हरे झण्डे को उठाया था, और मुसलमानो के लिये हिन्दुओ के वजाय अग्रेज काफिर हो गये थे। यह इतिहास का एक नया मोड था। सन् सत्तावन मे जागी ज्योति के प्रकाश मे भारत ने अपनी राष्ट्रीयता को पहचाना। भारत के इतिहास मे ६ अप्रैल सन् १९१९ का दिन अपूर्व था। उन दिन देश ने अपने पूर्ण सगठित रूप का दर्शन इतिहास मे शायद पहली ही वार किया था। यह रौलट विल के विरोध मे आम हडताल का दिन था। गांधी की आज्ञा और कांग्रेस के प्रस्ताव पर हडताल हुई थी। सन् १९१९ की कांग्रेस रिपोर्ट मे कहा गया है "६ अप्रैल को देश व्यापी प्रदर्शन हुआ। सव लोग वडे ही उत्तेजित थे। उस समय एक वात मार्के की दिखाई पडती थी। और वह था हिन्दू-मुस्लिम भ्रातृभाव। अव दोनो जातियो के नेता वस इसी एकता की रट लगाये हुये थे। हर सभा मे यही आवाज़ निकलती थी। इस जोशो-खरोश के जमाने मे छोटी जातियो ने भी अपने मतभेद भुला दिये। वह भ्रातृभाव का एक अद्भुत दृश्य था। हिन्दू-मुसलमान एक दूसरे के हाथ से खुल्लम-खुल्ला पानी लेते देते थे, जुलूसो के झण्डो और नारो दोनो से हिन्दू मुसलमानो का प्रेम ही प्रकट होता था। एक जगह तो मस्जिद के इमाम पर खडे हो कर हिन्दू नेताओ को वोलने भी दिया गया था।"

इस महान् ऐतिहासिक दिन की भावना उन दिनो जन्मी थी, जव राणा वेनी माधव और मौलवी अहमद उल्ला शाह आपस मे एक दूसरे का हौसला वढाते हुए

पत्र-व्यवहार करते थे, जब राणा ने अंग्रेजो को लिखा था कि वे विश्वासघात नही कर सकते, वे बिरजीस कदर के साथ हैं।

हरदोई और उन्नाव

खोज-बीन के काम या तो सन्यासी साहित्यिक कर सकता है या फिर किसी बडे रईस का साहित्यिक बेटा। मैं दोनो मे से एक भी नही, पर काम करने का शौक़ है। गृहस्थी की झझटो के कारण कभी-कभी अपने शौक से समझौता करना ही पड जाता है। कहने का तात्पर्य यह कि हरदोई और उन्नाव जिलो मे गदर के फूल चुनने न जा सका। पहले कुछ अडचनें आ गई, बाद मे वर्षा का जोर बढ गया। न जा पाने का मुझे हार्दिक दुख है।

हरदोई जिले मे मुझे तीन प्रमुख नाम मिले थे। रोइया के राजा नरपत सिंह, सडीला के चौधरी हशमत अली और बेरुवा के ठाकुर गुलाब सिंह ।

चौधरी हशमत अली के सबध मे 'सवान हात-ए-सलातीन-ए-अवध' मे पढा था। बेगम का परवाना पाकर आप चार हजार की सेना लेकर लखनऊ पहुँचे थे।

रोइया के नरपत सिंह और बेरुवा के गुलाब सिंह के सबध मे मेरी सूचनायें क्रमश दैनिक "नवजीवन' और 'स्वतत्र भारत' मे प्रकाशित श्री बुद्धि सागर वर्मा और श्री वचनेश त्रिपाठी के लेखो तक ही सीमित हैं।

राजा नरपति सिंह

हरदोई ज़िले मे बिलग्राम से दस मील दूर सदामऊ (रोइया ग्राम) स्थित है। जहा के नरपति सिंह सत्तावनी काति मे अमर हो गये।

नरपति सिंह के पूर्वज राणा प्रताप भानु उदयपुर राज्य से किसी कारण वश निष्कासित होकर इधर आये थे। बिलग्राम के सैयदो ने प्रताप भानु से मैत्री संबध स्थापित किया। अपने इलाके का रोइया ग्राम इन्हें दे दिया। प्रताप भानु की चौथी पीढी मे नरपति सिंह हुए। इन्होने अपने चचेरे भाई सुमेर सिंह से गद्दी पाई।

नरपति सिंह स्वय वीर और वीरो के प्रशसक एव पोषक थे। उनकी सेना मे वही भरती हो सकता था जो सेर भर या इससे अधिक भोजन सामग्री को पचा ले। वे अपने सैनिको की कठिन परीक्षा लेते थे। सदियो पुराने सामती कायदे के

अनुसार सैनिक अपने-अपने गाँवो मे ही रह कर खेती-वारी करते थे और साल मे दो वार कवायद करने आया करते थे ।

मेरी समझ मे फौज़ रखने का यह तरीका ही इस देश को सदा कमज़ोर वनाता रहा । व्यक्तिगत वीरता और वात है, परन्तु इससे युद्ध के समय कभी उस प्रकार का सगठ्न नही हो सकता जैसा कि सेनाओ की नियमित क़वायद से वीरो मे आता है । लडाई का हाँका पडते ही राजा से गुजारे के लिये जमीन पाने वाले नमकख्वार वीर ग्रामीण जन वस मरने और मारने का निश्चय कर सग्राम क्षेत्र मे पहुँच जाते और अधाधुध मार-काट मचाते थे ।

अपने सवधी, शिवराजपुर के चदेले ठाकुर सतीप्रसाद की प्रेरणा से नरपति सिह भी अग्रेज़ो के विरोधी सगठन मे सम्मिलित हुये । इसी मिलसिले मे आपने सगठन विरोधी अँग्रेज़ परस्त गज मुरादावाद के ज़मीदार पर आक्रमण भी किया । लखनऊ की सरकार से आपके नाम परवाना भी भेजा गया था, जिसे स्वीकार कर आपने लिखा कि परिस्थिति को देखते हुए मेरा लखनऊ आना उचित नही । मैं यही रह कर शत्रुओ की राह रोकूँगा ।

अग्रेज़ो ने नरपति सिह को अपनी ओर मिलाने के लिये सभी उपाय किये परन्तु नरपति सिह का निश्चय स्वाभिमानी क्षत्रियो की परम्परा के अनुसार दृढ था। यह देख कर्नल एग्रियन होप ने पूर्व की ओर से रोइया गढी पर आक्रमण किया। सूचना मिलते ही नरपति सिह ने अपने वीरो का आह्वान कर एक सभा की। सवकी यही सलाह हुई कि सम्मुख युद्ध करने के वजाय गढी के फाटक वन्द कर रक्षात्मक युद्ध करना ही उचित होगा ।

अग्रेजों का आतक भारी था । एक सेर राशन खाने वाले नरपतिसिह के वीरो मे कुछ कायर भी थे । रोसगज के दो व्यक्ति नरपति सिह की सेना मे नौकर थे। वे दोनो डर कर अपने गांव की ओर भागे । उनमे से एक ब्राह्मण कुमार सई नदी के तट पर कारणवश कुछ देर के लिये रुक गया । उसका साथी कुरमी पुत्र अपने गाँव पहुँचा । भगोडे ब्राह्मण के वृद्ध पिता अपने दरवाजे पर वैठे भाँग घोट रहे थे। कुरमी पुत्र को देख कर कहा " कँरे लल्लुआ ई वेरिया तुई हियां कइसे आइगो रे ?"

लल्लू कुर्मी ने कहा "काका, गढी पर फिरंगिन को हमला होइ वालो है। राजा साहव की अब सँरि नाई है। जानि वूझि कै आगी म कउनु कूदै। कइयौ सिपाही अपने-अपने घर भजि गये। सो महूँ चलो आयउँ। तुम्हारो लउँडव पीछे आय रहो है।"

वृद्ध ब्राह्मण का चेहरा तमतमा उठा। रक्त खौलने लगा। वह भीतर से अपनी तोडेदार बन्दूक उठा लाया और उसे भरकर गज ठोकते हुए बोला "ससुरे जलम भरि ठाकुर साहब को नमकु खाओ है, लहड़ भरि-भरि जिनिस लाओ अउर जब उन पर बिपति आई तो भजि आओ। आवँ ससुरा दरवाजे पँ गोली मारि दिहैं।"

वृद्ध ब्राह्मण का यह कोप देखकर ललतू अपने ब्राह्मण साथी के सहित लौट गया और वे अत तक लडे।

होप साहब की सेना ने गढी घेर ली। गढी मे गिरने वाले गोलो को तुरत गीले टाटो से ठडा कर दिया जाता था, और सिपाही बदूको की बाढो पर बाढें दाग़ कर अग्रेज़ो को सुला रहे थे। दिन भर युद्ध चला।

रक्षात्मक युद्ध आखिर कब तक चल सकेगा ? यदि पराजय हुई तो ?—इसके लिये भी पूर्ण प्रबन्ध था। नीचे कमरे मे चार अगुल मोटी बारूद की पर्त बिछा उस पर कालीन बिछाई गई। गढी की स्त्रिया कन्यायें उस पर बैठी थी। कमरे के पास ही एक ठीकरे मे आग रक्खी हुई थी। अग्रेजो के जीतने पर स्त्रियो को क्षण भर मे स्वर्ग पहुँचाने का प्रबध था। परन्तु सात वर्ष की लडकी नरपति सिह से कहती थी, "बापू, तुम न घबडाना, जीत तुम्हारी होगी।"

जीतने की कोई आशा नही थी, पर विधि का विधान विचित्र है। होप साहब अपने किसी सहकारी को कुछ आदेश दे रहे थे तभी एक गोली ने उनके प्राण ले लिये। अग्रेजो मे शोक छा गया। सफेद झण्डा फहरा कर युद्ध बद किया और कूच कर गये। अग्रेज़ो को बहुत नुकसान सहना पडा।

दुबारा घाघरा पल्टन भेजी गई। नरपति सिह की गढी बास के जगलो और खाँई से घिरी हुई थी। गोरी सेना बडी सीढिया लेकर आई। खाँई पार की, गढी की मुडेर तक सीढिया लगा दी। गढ़ी की दीवाल के दोनो ओर से भयकर गोला-बार हुआ। अग्रेज़ो के छक्के छूट गये।

तीन दिन युद्ध हुआ। इसके बाद बुद्धि सागर जी के लेख और सेन महाशय के विवरण मे अतर है। सेन जी के अनुसार नरपत सिह गोरो को छका कर चुप-चाप किला खाली कर निकल गये और बुद्धिसागर जी के अनुसार नरपति सिह के वीरो ने घुटकर मरने के बजाय फाटक खोल दिये और अग्रेज़ो को प्रबल रणदान दिया।

वेरुआ के गुलाव सिंह

गुलाव सिंह भिण्ड भदावर के रहने वाले भदौरिया राजपूत थे। वे सण्डीला के पास वेरुआ रियासत मे वस गये और वही के दीवान भी हो गये।

क्राति के दिनो मे उक्त रियासत का मालिक एक सात वर्षीय वालक चद्रिका वख्श सिंह था। गुलावसिंह ही कर्तावर्ता थे। ये स्वदेशी दल मे शामिल हो गये। इनके छोटे भाई गोपालसिंह ने विरोध किया। जव गुलावसिंह न माने तो छोटे भाई ने अपने प्राण देने की धमकी दी। दोनो ही भाई अपनी आन के पक्के थे, गुलावसिंह ने देश का साथ न छोडा और छोटे भाई ने सचमुच अपना गला काटकर देह छोड दी।

उन्होने लखनऊ, कानपुर, रहीमावाद, मलीहावाद, सण्डीला, जामू, मल्हेरा, वेनवा-तट और वेरुवा गढी आदि स्थानो मे अद्भुत वीरता दिखा कर अग्रेजो के छक्के छुडाये।

नाना साहव के यह परम भक्त थे। लखनऊ की पराजय के वाद नाना साहव एक वार फरारी की हालत मे गुलाव सिंह के साथ वेरुआ आये थे। वे नाना साहव के साथ ही रहे और अंत मे नेपाल के जगलो मे मलेरिया से पीडित होकर प्राण त्याग किये।

राव रामवख्श सिंह, डौंडिया खेड़ा

डौंडिया खेडा तिलोक चदी वैसो का प्रमुख केन्द्र था। राव रामवख्श सिंह वहाँ के अधिपति थे। राव साहव के सम्बन्ध मे उन्नाव निवासी, युवराज दत्त कालेज, लखीमपुर के प्राध्यापक श्री प्रतापसिंह चौहान ने पत्र लिखकर सूचित किया है "राव रामवख्श सिंह अत्यन्त धर्मात्मा और निर्भीक व्यक्ति थे। उनकी नस-नस मे स्वतत्रता का अभिमान सचरित था। यही कारण है कि १८५७ के उन्नाव वाले परिच्छेद मे, जिनका नेतृत्व वे स्वय कर रहे थे, उन्नाव ने सवके वाद मे अपनी तलवार म्यान मे रक्खी। वे नित्य खड्ग पूजा करते थे और किंवदती है कि उनकी तलवार उठकर उनके पास आ जाती थी।

"हमारे पूर्वज इनके मान्य होकर आये थे। उनके दिये गाँव आज भी हमारे पास है। वे गाँव है भइया खेडा, पहाडपुर, कपूरपुर और विजई खेड़ा।

निस्सदेह उन्होंने उन अग्रेजों को जो उनके मदिर मे शरण लिए हुये थे व नाव से गगा को पार कर रहे थे जलवा दिया और डुवया दिया। अधिक लोग इसे नृशस कहेंगे पर युद्ध और प्रेम मे सब उचित होता है।"

पहले ही निवेदन कर चुका हूँ, मैं अब तक यह नही समझ सका कि मदिर मे डेलाफोज, मौब्रे टामसन आदि घिरे हुये व्यक्तियो को जलाने के उपक्रम मे राव रामबख्श का क्या हाथ था। मौब्रे टामसन का जो उद्धरण सेन महाशय की पुस्तक मे है उसमे अग्रेज़ो द्वारा शिवालय मे शरण लेने का ज़िक्र तो है, पर शिवालय जलाये जाने का नही, यह मैं पहले भी लिख आया हूँ।

रही नाव डुबाने की बात—सो नजफगढ के पास इनकी नाव रेत मे फँसी। वहा गोलिया चली—दोनो ओर से चली।

तब फिर इन पर नृशसता का दोष क्यो आता है ?

मेरी एक पुरानी कापी मे राव रामवख्श के सम्बन्ध मे कुछ बातें लिखी हुई हैं। यह अब याद नही पडता कि किस व्यक्ति ने वे बातें मुझसे कही थी। तब इटरव्यू लेने तो निकला नही था। किसी ने प्रसगवश बतलाया और मैंने आदत-वश लिख लिया। वह सूचना इस प्रकार है .

कानपुर से प्रयाग भागने वाली नाव के १३ अग्रेज जिनमे मेजर डेलाफोज भी था, न जाने क्यो नजफगढ के पास नाव छोडकर स्थल मार्ग से बक्सर पहुँचे। अकस्मात् डौंडिया खेरा के बाबू यदुनाथ सिंह ने उन्हें देख लिया और घेर लिया। बाबू किसी गोरे की गोली से स्वर्ग सिधारे और अग्रेज गगा के किनारे-किनारे भागे। बाबू के सिपाही अग्रेज़ो को भूल अपने मालिक की सम्हाल मे लगे। इसी बीच यह खबर बैंसवारे मे फैल गई। बहुत से नवयुवक और भीड अग्रेजो को ढूंढने निकल पडी। इस भीड का नेतृत्व राव रामबख्श कर रहे थे। भागते-भागते डेलाफोज और अग्रेज़ो ने एक मदिर मे शरण ली, मूर्तिया बाहर फेंक दी। यह मदिर और फुलवाडी सयोग से राव साहब ही की थी। जनता ढूंढते-ढूंढते मदिर पहुँच गई। कुछ आहट मिली, मूर्तियाँ बाहर देखी, द्वार बन्द पाये। सदेह पक्का हुआ, अपवित्र हो चुका था, जनता ने मदिर मे आग लगा दी। डेलाफोज़ दो आदमियो के साथ किसी प्रकार लपटो से जूझता निकल भागा। गगा तट पर गहरौली, गाँव उस समय राजा मुरारमऊ के कब्जे मे था। वहा उन्हें शरण मिली।

सेमरी के युद्ध मे राव रामबख्श की सेना भी लडी थी। बैंसवारे और अवध के पतन के बाद राव साहब सर्वहारा होकर बनारस भाग गये और छिपे तरीके से

रहने लगे। वही उनके नौकर चदी ने धोखा देकर इन्हे गिरफ्तार करा दिया। अग्रेजो ने उन्हे क्षमा मांगने पर विवश करना चाहा पर ये न झुके। ८ जून १८६१ मे ये वक्सर लाये गये और एक वरगद के पेड से इन्हे फांसी दी गई।

उन्नाव मे मगरवारा, वशीरतगज और बुढिया की चौकी मे भयकर युद्ध और कत्ले आम हुये है। यह क्षेत्र छापे मार युद्धो और वीर कारनामो का क्षेत्र रहा है। मुझे दु ख है कि इन स्थानो मे न जा सका। पुस्तक के दूसरे सस्करण तक यह कार्य अवश्य ही पूरा कर डालूंगा।

लखनऊ

लेफ्टिनेन्ट मेजर मॅक्लाड ईनिस आर० ई०, वी० सी० ने अपनी पुस्तक 'लखनऊ एण्ड अवध इन द म्यूटिनी' मे उस समय के नगर की सक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत की है और विशेप रूप से पुलो और मार्गों का उल्लेख किया है। पुराने लखनऊ के वडे रगीन और जानदार वर्णनो के रहते हुए भी मैंने ईनिस का रेखाचित्र ही काम का समझकर चुना है। ईनिस लिखता है :

"लखनऊ नगर लगभग साढे पांच मील लम्बा और ढाई मील चौडा है। यह विशेप रूप से गोमती के तट पर वसा है तथा अन्य तीनो दिशाओ मे एक वडी और गहरी नहर इसे घेरे हुये है। नगर के पश्चिमी भाग मे घनी आवादी है, इसी प्रकार पूर्व की वस्ती मे दक्षिणी अश भी घना आवाद है। इसका उत्तरी पूर्वी भाग महलो, बॅगलो, कोठियो, उनके साथ लगे हुये वागीचो, मकवरो और कब्रो से भरा है। जहा नगर के पश्चिमी और पूर्वी अर्द्धांश विलग होते हैं, वहा गोमती पर एक पुराना पत्थर का पुल है। उससे एक मील आगे नदी के वहाव की दिशा मे अर्थात् पूरव की ओर एक नया पुल लोहे का वना है। इन दोनो पुलो से होकर मडियाव छावनी, जो उत्तर मे दो मील दूर स्थित है, आ-जा सकते है। दक्षिण मे कानपुर मार्ग लोहे के पुल से आरम्भ होकर, रेजिडेंसी के किनारे से होता हुआ चारवाग मे नहर के ऊपर से होकर जाता है। मच्छी भवन और रेजिडेंसी नदी के दक्षिण तट पर क्रमश पत्थर के पुल और लोहे के पुल के एकदम निकट स्थित हैं।"

ये सारे मार्ग आज से सौ और निन्यानवे वर्ष पूर्व, क्राति के दिनो मे अत्यन्त महत्वपूर्ण रहे हैं। उन दिनो लखनऊ की शानदार इमारतो पर आमतौर ध्यान नही जाता था, ये राहें ही देखी जाती थी। उस समय की शानदार इमारतें

खण्डहर हो गई, बहुत-सी नेस्तनाबूद हो गई, मगर ये राहे अब भी चल रही हैं।

वाजिदअली शाह ने अपना तख्त व ताज गँवाकर कानपुर मार्ग से ही यह कह कर सफर किया था

"दरो दीवार पे हसरत से नजर करते है।
खुश रहो अहलेवतन हम तो सफर करते है ॥"

लेकिन अंग्रेजी अमल मे अहलेवतन खुश न रह सके। ११ फरवरी, सन् १८५६ को, लखनऊ गजेटियर के अनुसार, अवध के कम्पनी राज्य मे मिला लिये जाने की घोषणा हुई। नवाबी सरकार के बडे-बडे हाकिम अमले नई व्यवस्था मे सत्ताहीन हो गये, उनकी छातियो पर साप लोटना स्वाभाविक था। नवाबी दरबार उजडा तो महाजनो-दूकानदारो का धधा उजड गया, इनके पेट मे चूहे कूदने लगे। शाही सेनायें तोड दी गई थी, इसलिये शहर मे शोहदो का हगामा भी बढ गया था।

प्रजा अंग्रेजो की न्याय-व्यवस्था से बुरी तरह चिढती थी। वाजिदअली शाह के शासन-काल मे ही अवध के रेजिडेंट कर्नल स्लीमैन ने अवध के उन भागो मे, जो नवाब सआदत अली खा के समय मे ही अंग्रेजी अमल मे आ गये थे, नई न्याय व्यवस्था के प्रति प्रजा का असतोष देखा था। वह लिखता है कि "लोग या ज्यादातर लोग हमारे द्वारा शासित जिलो मे रहने के बजाय अवध राज्य मे रहना पसद करते है। हमारे विभिन्न न्यायालयो की कडियो से होकर गुजरना, हमारे गुत्थीदार कानून से बँधना, हमारे न्यायालयो के घमडी और लापरवाह अफसरो को, तथा मुकद्दमा लडाने के लिये उभयपक्षो की ओर से नियुक्त होनेवाले नये न्याय पडितो की रिश्वतखोरी और अन्याय को बर्दाश्त करना, फिर पास हो जाने पर डिगरी करवाना उन्हे बडा परेशान करता है। अवध निवासियो के यदि वोट लिये जाँय तो सौ मे निन्यानवे लोग हमारी गुत्थियो वाली न्याय-प्रणाली के बजाय अपनी पुरानी प्रणाली के पक्ष मे ही वोट देंगे।"

अंग्रेजी अमल आते ही तरह-तरह के टैक्सो की भरमार हो गई। खाने-पीने की चीजो के भाव टैक्स के कारण चढ गये। नवाबी लखनऊ को अफीम के दाम चढ जाना तो बेहद खला। धार्मिक दृष्टि से 'कदम रसूल' नामक पवित्र स्थल मे अंग्रेजो द्वारा बारूद-भण्डार (मेगजीन) स्थापित किया जाना भी लोगो के दिलो मे आग लगा गया। पुराना राजा कैसा भी हो, अपना था। उसके महलो मे नये शासको को देखदेख कर जनता मन ही मन कुढ़ती थी। छतर मजिल मे गोरे साहब रहते

थे, खुर्शीद मजिल में उनकी भोजनशाला थी । चौपड अस्तवल मे उन्होंने अपनी एक पल्टन रक्खी थी तो उसके आस-पास के अच्छे मकान फौजी अफसरो के लिये ले लिये गये थे । तारा कोठी जिसमे आजकल स्टेट बैंक की स्थानीय शाखा है, वेधशाला से कचहरी वन गई । । इसके आसपास की तमाम कोठिया वडे-वडे गोरे अफसरो ने हथिया लीं । आसफी दौलतखाना और शीश महल भी गोरी फौजो के अड्डे वन गये । इससे क़रीव ढाई-तीन मील आगे मूसावाग मे भी कपनी की सेना रहने लगी । अग्रेज़ो ने अपनी समझ से तो नगर को खूव घेर रक्खा था । उत्तर मे शहर से ढाई-तीन मील दूर मडियाव छावनी थी, उसके आगे मुदकीपुर मे थी, शहर मे सिकदर वाग के पास चक्कर वाली कोठी मे थी—फ़ौजें कहा नही थी ? नगर की प्रजा को आतकित किये रखने का पूरा प्रवध था । अग्रेजो से लखनऊ निवासी प्रसन्न नही थे । ग़ाज़ीउद्दीन हैदर के समय लखनऊ की यात्रा करने वाले अग्रेज़ महापादरी आर्कविशप हेव्वर ने अपने यात्रा वृत्तान्त मे लिखा है कि अग्रेज़ो को शहर मे हाथी पर सवार होकर दस-पाँच सिपाहियो के साथ ही शहर में निकलना चाहिये, इक्का-दुक्का घोडे पर सवार अग्रेज़ यहाँ कत्ल कर दिये जाते हैं ।

अग्रेज़ी अमल होने पर शहर के अदर लोगो ने अग्रेज़ो को किराये पर मकान देने से इकार कर दिया था । अफ़सरो ने परेशान होकर चीफ कमिश्नर हेनरी लारेंस से दरख़्वास्त की और रहने की जगह पाने के लिये गोरो को कानून का कोडा चलाना पडा ।

यह नगर की मनोदशा थी ।

फरवरी सन् १८५७ ई० तक मौलवी अहमदुल्ला शाह भी लखनऊ मे ही थे । वे घसियारी मडी मे रहते थे । लखनऊ के वहुत से वडे-बूढे उन्हें आज भी डकाशाह मौलवी के नाम से जानते हैं । सैयद कमालुद्दीन हैदर ने लिखा है कि 'नक्काराशाह' के नाम से मशहूर थे । हो सकता है कि पढे-लिखे शुरफा लोगो ने अपनी प्राजल भाषा मे डके को नक्कारा पुकारना उचित मान अपने वर्ग मे यही नाम प्रचलित कर लिया हो । शैदा वेगम ने जानेआलम वाजिदअली शाह को पत्र लिखते हुए शहर का, मौलवी साहव का हाल यों लिखा है "पिया जानेआलम, जवसे आप लखनऊ से सिधारे ख्वाव हराम है । रोना-धोना मुदाम है यहाँ शवो-रोज़ अहोवुका मे गुज़रती है, मगर दूसरी मेरी हमजिन्सें खुश-खुश इठलाती फिरती हैं । आपके वाद से फिरगियो के खिलाफ ज़हर उगला जा रहा है । नई-नई वातें

सुनने मे आ रही हैं। दिल को हौल है कि देखिये फलक क्या-क्या रग दिखलाता है। घासमण्डी मे मौलवियो का जमाव है। सुना है कि एक सूफी अहमदुल्लाशाह आये हुए हैं। नवाब चीनाटीन के साहबजादे कहलाते हैं। आगरे से आये हैं। ये भी सुना है कि उनके हजारहा मुरीद हैं और वो पालकी मे निकलते हैं। आगे डका बजता होता है, पीछे अज़दर्हां बड़ा होता है। वहशतनाक खबरो की गर्म-बाज़ारी है। ”

मौलवी साहब के शिष्यो के सबध मे मैंने यह भी सुना है कि वे लोग भीड के सामने अगारे चबाया करते थे, मौलवी साहब कहते थे कि जो आज अगारे चबा रहे है कल वे ही आग उगलेंगे। उन्ही को जन्नत मिलेगी। उनके चमत्कार, अमीरुज्जिन्नात के साथ उनका गठबधन, अल्लाह के साथ उनकी बातें—कहते हैं रात के बारह बजे वे अपनी कोठरी बद करके अधेरे मे बैठ जाते थे। फिर कोठरी मे हजारो गैस बिजलियो को मात करने वाला खुदाई नूर फैल जाता था और बादल की घडघडाहट, और बिजली की कडक होती थी। ऐसे मे मौलवी साहब की अल्ला मियाँ से बाते होती थी। उनके खास-खास मुरीद दरवाज़े के बाहर कान लगाये खडे रहते थे और फिर सबको बताते थे।

फरवरी मे मौलवी साहब फैज़ाबाद गये। श्री सुन्दरलाल की 'भारत मे अगरेजी राज' पुस्तक के अनुसार १८ अप्रैल को नाना साहब अपने साथियो सहित लखनऊ आये थे। उनका बडा भव्य स्वागत हुआ। हर वर्ग के लोगों ने उनके स्वागत मे सहयोग दिया। मैंने सुना है कि चौक के सर्राफो ने सोने के आभूषणो से सजे द्वार बनाये थे।

नाना साहब निस्सदेह यहा के हाल-चाल लेने, सूबेदारो से, पुराने राजवश के लोगो से मिलने, क्रान्ति की योजना फैलाने ही आये होगे। नाना यद्यपि यहा आकर अपनी नीति के अनुसार अग्रेज़ हाकिमो से भी मिठबोला कर गये।

१८ अप्रैल जो नाना साहब के भव्य स्वागत का दिन है, वही साहबे आलीशान चीफ कमिश्नर सर हेनरी लारेंस के अपमान का दिन भी है। साहबे आलीशान बग्घी पर सवार शाम की सैर को निकलते थे, किसी शहरी आदमी ने उन पर कीचड उछाली।

इससे कुछ दिन पूर्व छावनी मे एक बडी घटना और हो चुकी थी। अप्रैल के प्रारम्भ मे ४८ वी देशी पलटन के अग्रेज डाक्टर वेल्स अस्पताल का औषधि-भण्डार देखने गये। उनकी तबीयत भी कुछ गडबड थी, एक बोतल उठाकर मुँह

से लगा ली और एक खूराक पीकर फिर डाट लगा कर वही रख दी। हिंदुओ मे छुआछूत का इतना अधिक विचार था कि यह आग्ल अविचार खुले विद्रोह का कारण बन गया। सिपाहियो ने कह दिया कि हम इन दवाओ को व्यवहार मे नही लायेंगे। इसकी खबर कर्नल पामर को पहुँची। उन्होने सब देशी अफसरो को बुलाया। उनके सामने वह बोतल नष्ट की गई। डाक्टर वेल्स को सबके सामने खूब डाँटा। मगर तब भी सतोष नही हुआ। दो-तीन दिन बाद एक रात डॉक्टर का बगला फूंक दिया गया। यह स्पष्ट होने पर भी कि काम ४८वी पल्टन का ही है, किसी को दड नही दिया गया।

आटे मे हड्डियो का चूरा मिला होने की अफवाह धीरे-धीरे पीछे से आने लगी थी।

फौज के देशी अफसर नवाब सआदत अली खा के पुत्र नवाब रुकनुद्दौला और वाजिदअली शाह के बडे भाई मिर्जा मुस्तफा अली खा [पिता द्वारा नालायक़ साबित होकर ताजदार न होने के कारण नगे सिर रहते और कहते थे कि जब पहनूंगा तो ताज ही पहनूंगा] से शाही वश के सरक्षण और नेतृत्व करने की बातें चला रहे थे। पुलिस के जासूसो ने अगरेज़ सरकार को इसकी रिपोर्ट भी दी थी।

अप्रैल का महीना लखनऊ मे बडी सरगर्मी का रहा।

२ मई, सन् १८५७ ई० को मूसाबाग़ के सैनिक प्रशिक्षण केन्द्र मे ७वी अवध इर्रेगूलर सेना के सामने वे कारतूस आये जिन्होने मगल पाण्डेय को स्वतत्र सत्तावन का प्रथम स्वर प्रदान किया था।

७वीं इर्रेगुलर के अवधी जवानो ने नये कारतूस लेने से इकार कर दिया। अफसरो ने उन्हे बहुत समझाया-बुझाया, मगर 'मर्ज बढ़ता गया, ज्यो-ज्यो दवा की।' एक भी जवान नई इन्फील्ड राइफलें और उनके दांतो से खोले जाने वाले कारतूस लेने के लिये अपनी जगह से एक क़दम आगे न बढा। तब अनुशासन की सख्त कार्रवाई करने की धमकी दी गई। अब तक तो सैनिक मौन थे पर जब धमकियो की विवशता सीमा लांघने लगी तो एक जवान दीवाना हो पक्ति से बाहर निकल कर चिल्ला उठा . "दीन ! फिरगी के दीन से बचाओ।"

इस एक आवाज़ ने सनसनी फैला दी। वह सिपाही फौरन पकड लिया गया, और भी पकडे गये। उन्हें लाइन से अलग कर औरो को 'डिस्पर्स' होने का आदेश दिया गया। एक हज़ार जवानो ने न तो उन्हे ही जाने दिया

और न आप ही पक्ति से हटे । एक हज़ार भाई इकट्ठा जीना मरना चाहते थे—केवल तीस भाइयो को ही अलग ले जाकर मारा नही जा सकता था । उस समय सूबेदार, सिपाही हिन्दू, मुसलमान—भारतीय मात्र एक था ।

अब तो सैनिक अनुशासन की दृष्टि से बहुत ही वडी समस्या उपस्थित हो गई थी । कुछ विचौलिये सामने आये, कहा, हुजूर समझाने-बुझाने का मौका दिया जाय । इससे हुजूर की लाज भी बच गई । दिन मे दोनो ओर कल के लिये तैयारी होने लगी । सिपाही अपनी इस अवज्ञा का परिणाम जानते थे । अपनी तैयारी करते हुए उन्होने हथियार और गोला-वारूद अपने अधिकार मे कर लिये । इतना ही नही उन्होंने अपने से ऊँची मडियाव की ४८ वी रेजिमेट के 'वडे भाइयो' के नाम एक पत्र भी लिखा । स्वधर्म रक्षा के लिये अरदास की । ४८वी रेजिमेट के एक सूबेदार, एक हवल्दार और एक सिपाही ने, जिनके हाथ यह चिट्ठी लगी, सर हेनरी लारेंस के हाथो मे उसे रख दिया । कुछ दिन पहले इसी ४८ नवर ने विद्रोह किया था ।

दूसरे दिन हेनरी लारेंस गोरी पल्टन के १५०० सवार और तोपखाना लेकर पहुँच गये । चारो ओर से घेर कर इमारत पर तोपो की मार शुरू की । सिपाहियो ने समर्पण कर लिया । फौरन परेड की गई । अग्रेजी तोपखाना उनके सामने लाया गया । गोला-वारूद भर कर ज्योही एक सार्जेंट ने पलीता लगाया कि ७ वी अवध इर्रेगुलर सेना के जवान हिल उठे । चारो ओर भग-दड पड गई । सिपाही हथियार छोड-छोड कर भागे । कल्पना करता हूँ कि मूसाबाग की जगह-जगह से ध्वस्त चहारदीवारी मे थर्राये हुए इसान इधर-उधर वेतहाशा भाग रहे होगे और अग्रेज घुडसवार उन्हे उसी तरह घर-धर कर दवोचते होगे जैसे जगल मे जानवरो को शिकारी कुत्ते दवोचते हैं । एक हज़ार मे १२० मर्द डटे रहे । उनसे हथियार गिरवा कर कानूनी खानापूरी की गई, अर्थात वह सेना भग कर दी गई । उन १२० सिपाहियो मे से कुछ छोड दिये गये तीस को फासी की सजा दी और चालीस आदमियो को आजन्म की मशक्कत कैद । फाँसियाँ लक्ष्मणटीले के पास मच्छी भवन के फाटक के सामने खुलेआम दी गई । इनका फांसी देने का तरीक़ा भी घोर राक्षसी था । सुवह की फांसी लगाई लाश दिन भर लटकी रहती, शाम को दूसरा कैदी लटकता, पहले की लाश जिसे दिन भर चील गिद्ध नोच-नोच कर खाते भी थे, शाम को वही दफना दी जाती ।

शहर की साँस सलाख-सी खडी हो गई। लोगो के मुँह से आपस मे बात करते भी बोल नही फूटते थे। एक बार तो ऐसा आतक बैठ गया कि अग्रेजो का सर्दार हेनरी लारेंस भी स्वय अपने रौब को देख कर सकुचा गया। उसने देखा कि चारो ओर अग्रेजो का भय आवश्यकता से बहुत अधिक बढ गया है तो उसे ज़रा कम करने के लिये उपाय सोचने लगा। इसी बीच १३ नबर पल्टन के एक सिपाही ने बडी मुस्तैदी से शहर के उन तीन व्यक्तियो को गिरफ्तार करा दिया जो उसे एक षडयन्त्रकारी कार्य मे सम्मिलित करना चाहते थे। सर हेनरी लारेंस अपनी इन दो सेनाओ के ऐसे जवानो से बडा प्रसन्न हुआ। जनता मे विशेष रूप से भारतीय सैनिको मे आश्वासन जगाने के लिये सर हेनरी ने एक दरबार कर स्वामिभक्त सैनिको को पुरस्कृत करने का विचार मन मे धारण कर तदनुसार घोषणा भी करवा दी।

१२ मई को दरबार हुआ। सब मुल्की और जगी अफसर आये। शहर के बड़े-बडे लोग बुलावा पाकर आये। सेना के भारतीय अफसरो को भी बैठने के लिये कुर्सिया दी। सर हेनरी ने खालिस हिन्दुस्तानी ज़बान और इगलिस्तानी लहजे मे स्पीच दी। अपने भाषण मे सर हेनरी ने कहा कि पहले जमाने मे आलमगीर ने और फिर हैदरअली ने हजारो की सख्या मे हिन्दुओ को मजबूरन मुसलमान बनाया। उनके मन्दिरो को तोडा, घरेलू मूर्तियो को नष्ट किया। अपने ही जमाने को लीजिये, इस जलसे मे शरीक होने वाले ज्यादातर साहबान यह अच्छी तरह से जानते होंगे कि रजीत सिंह ने अपनी मुसलमान रियाया को उनके मजहबी हुकूक नही दिये, लाहौर की मस्जिदो की मीनारो से मुअज्जिन की अजान कभी नही सुनाई पडती थी। एक साल पहले तक लखनऊ मे कोई हिन्दू शिवाला बनवाने की जुरअत नही कर सकता था। कम्पनी बहादुर की सरकार आप लोगो के साथ माई-बाप जैसा बरताबा रखती है। हिन्दू और मुसलमानो के साथ एक सा इसाफ होता है।

इस तरह की स्पीच देकर सर हेनरी ने ४८ वी और १३ वी रेजीमेन्टो के सूबेदार सेवक तिवारी, हवलदार हीरालाल दुबे, सिपाही रामनाथ दुबे और सिपाही हुसैनबख्श को स्वामिभक्ति के पुरस्कार-स्वरूप खिलअते और थैलिया भेंट की। दरबार बरखास्त होने पर अग्रेज़ और देशी अफसर छोटी-छोटी मण्डलियो मे बातें करने लगे। बहुत से देशी अफ़सरो ने सर हेनरी की स्पीच और हुज़ूर कम्पनी बहादुर की इसाफ पसन्दी की दाद देते हुए अपनी राजभक्ति का प्रमाण दिया।

मगर आमतौर पर भारतीय सेना का रुख न बदला।

यह आश्चर्य की बात है कि जिस ४८ वी पल्टन ने अप्रैल मे सबसे पहले विद्रोह का स्वर मुखर किया, उसी ने मई मे अपने मूसाबाग के भाइयो का पत्र पकडवा दिया। इस स्वामि-भक्ति के लिये उसे १२ मई को पुरस्कार मिला, १३ वी पल्टन वाले ने भी इनाम पाया, फिर उन्होंने ही ३० मई को मडियांव छावनी मे विद्रोह किया और फांसी पाई। तो क्या इन रेजीमेन्टो ने किसी नीतिवश ७ वी इर्रेगुलर का पत्र और क्रान्तिकारियो के दूतो को पकडवा दिया था? यह हो सकता है, अगर सेना ने सार्वभौमिक विद्रोह करने के लिये कोई तिथि निश्चित कर रक्खी थी तो उसके पहले अंग्रेजो को आखिरी दम तक धोखे मे रखने के लिये नीति-वश भी राजभक्ति का प्रदर्शन किया जा सकता है। मगर यहाँ फिर एक प्रश्न यह उपस्थित होता है कि राज-भक्ति के प्रदर्शन के लिये क्या अपने एक हजार तीन भाइयो का गला फसा देना उचित था? सूबेदार तिवारी, हवलदार दुबे और हिन्दू-मुसलमान सिपाही यह तो अच्छी तरह जानते होगे कि अंग्रेज हाकिम ७ वी इर्रेगुलर के सिपाहियो और षडयत्रकारी नागरिको को कडी से कडी सजा देगें। हो सकता है, उन्होने इतने भयकर दण्ड की कल्पना न की हो या उनकी धारणा यह रही हो कि कुछ लोगो को दण्ड मिलने से अधिक लोगो मे स्वत बड़ी उत्तेजना फैल जायगी।

जो हो, गदर सम्बन्धी साहित्य पढते हुए जगह-जगह इस बात के प्रमाण मुझे मिले है कि विद्रोह के आरम्भ मे जगह-जगह भारतीय सिपाहियो ने प्राय सविनय अवज्ञा ही की थी। उनका व्यवहार आरम्भ मे अधिकतर अहिंसात्मक ही रहा था। गोले-गोलियो के सामने अगद की तरह अडिग खडे रहने वाले वे एक सौ बीस वीर सत्याग्रही उस सत्याग्रही भारत के पुरखे थे जो वर्षों बाद गाधी के नेतृत्व मे सामने आने वाला था। हिंसा का दोष अंग्रेजो को ही दिया जायगा। अहिंसा के उत्तर मे सर हेनरी लारेन्स ने जो राक्षसी ताण्डव दिखलाया, उसकी प्रतिक्रिया में त्रस्त और उत्तप्त भारतीय हृदयो मे प्रतिहिंसा की आग यदि भडकी तो उसके लिये उन्हे दोषी नही ठहराया जा सकता। हाँ, इसी दृष्टि से मैं डा० वेल्स का बँगला जला देने को भी बुरा मानता हूँ—पर हमे ईंट का जवाब पत्थर ही नही पहाड से दिया गया।

खैर, इसी तरह लखनऊ नगर, उसके आस-पास कस्बो और छावनियो मे दिन पर दिन गर्मी और तेजी से बढती ही गई। हर हिन्दुस्तानी के चेहरे पर

षड्यन्त्रकारिता का गुपचुपवाला भाव और कसाव देखने को मिलता था। लोगों की आँखो मे क्रान्ति की चिनगारिया चमकती थी। हालाकि आमतौर पर यह कोई न जानता था कि क्रान्ति कब होगी, कैसे होगी—क्या होगा ? छावनी मे बँगलो पर बाणो के साथ जलते पलीते फेंके जाने लगे। शहर मे जगह-जगह इश्तिहार चिपकाये जाने लगे कि दीन धर्म के शत्रुओ—फिरगियो—को मारना हर हिन्दू मुसलमान का मजहबी फर्ज़ है।

अग्रेज़ो मे सर हेनरी लारेंस बडा चतुर और दूरदर्शी कमाण्डर था। मेरठ, दिल्ली और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के कई नगर और ज़िले स्वतत्र हो चुके थे, लखनऊ के रग-ढग अच्छे नजर नही आते थे। भारतीय फौज़ो का रुख भी समझ मे नही आता था। यह सब देखकर सर हेनरी ने अपनी सैनिक शक्ति को नये सिरे से सगठित किया। मच्छी भवन का किला पाँच दिन मे दन-रात मरम्मत लगाकर युद्ध के अनुकूल बनवाया, रेजीडेन्सी पर मोर्चे बनाये, दोनो जगहो के आस-पास इमारतें तुडवा दी। अच्छे-अच्छे पेड कटवाकर मैदान साफ कर लिये, तोपे चढ़ा दी और बाजार से बेतहाशा अन्न धान आदि दैनिक आवश्यकता की सामग्री खरीदना शुरू कर दिया। उन दिनो सर हेनरी को बस एक ही धुन चढी हुई थी, जो भी हिन्दुस्तानी रईस अपनी खैरख्वाही जताने के लिये चीफ कमिश्नर और कमाण्डर सर हेनरी लारेन्स के पास आता और चलते वक्त अपने लायक खिदमत पूछता, उसी से वे घी, गेहूँ, अनाज आदि की फरमाइश कर बैठते थे।

२६ मई को मलीहाबाद वालो ने एक उम्दा मजाक किया। सर हेनरी के पास खबर पहुँची कि मलीहावाद सरकश हो रहा है। सर हेनरी ने कप्तान वेस्टन के नेतृत्व मे पल्टन भेजी। पल्टन के नजदीक पहुँचते ही मलीहावाद मे चारो ओर अपूर्व शान्ति छा गई। फौजवालो को कही इस बात का अनुभव ही न हो पाया कि यहा कही अशान्ति के लक्षण प्रगट हो रहे हैं—किस पर गोली चलाते ? किसकी पकडा-धकडी करते ? झख मार कर लौट आये।

मई के अन्तिम दिनो मे ही सर हेनरी लारेन्स ने शहर के अनेक अमीर और उमरा और महाजनो को बुलवाया। अर्थ कमिश्नर मार्टिन गबिन्स के पास भी कई पैसेवाले लोग पहुँचे। नवाव अहमद अली खाँ, मुनौवरुद्दौला, वाजिदअली शाह के चचिया ससुर नवाव मिर्ज़ा हुसैन खाँ, इकरामुद्दौला, भूतपूर्व मत्री मुहम्मद इब्राहीम शरफुद्दौला, बहू-बेगम के पोते मिर्ज़ा हैदर, गुलाम रजा, नवाव मुहसिनुद्दौला, भूतपूर्व दीवान वालकृष्ण, नवाव मुमताजुद्दौला आदि जितने औले-दौले थे, वे सब

अग्रेज सरकार माई-बाप के पास पहुँचे। नगर के कई एक महाजन भी अपनी सुरक्षा का प्रवन्ध करवाने की दरख्वास्त लेकर गये। अंग्रेज़ो ने इन लोगो की सुरक्षा के लिये सिपाही रखने की सलाह दी।

२४ मई, ईद का दिन था, अग्रेज उस दिन यहा गडवडी होने की आशका कर रहे थे, परन्तु कुछ न हुआ। फिर भी हवा मे सनसनी रोज़-वरोज़ वढ रही थी। मडियाव छावनी के गोरे, विशेप रूप से सर हेनरी लारेन्स से सर्तक थे।

भारतीय सिपाही भी पूरी तैयारी पर थे। उनका सकेत वँध चुका था। ३० मई को रात के ९ वजे तोप के दगते ही रात की हाज़िरी के लिये परेड मे उपस्थित सिपाहियो ने गोलिया दागनी शुरू कर दी। गविन्स लिखता है "रात की तोप दगते ही ७१वी देशी पल्टन की लाइट कम्पनी के सिपाहियो ने गोलिया दागनी शुरू कर दी, और लगभग चालीस आदमियो की एक टोली रेजीमेन्ट के भोजनालय की ओर वढ़ी ज्योही उन्होने छावनी के फाटक में प्रवेश किया, ७वी लाइट घुडसवारो की एक टुकडी ने दूसरे फाटक को भी घेर लिया। इस प्रकार यह दिखला दिया कि अफसरो का नाश करने की योजना सोच समझकर वनाई गई थी। परन्तु अफसर वर्ग सावधान था, पहली गोली की आवाज पर ही वह भोजनालय छोडकर जा चुका था। नम्बर ७१ का भोजनालय नष्ट कर डाला गया।

सर हेनरी लारेन्स वहुत होशियार और दूरदर्शी व्यक्ति थे। वहुत पहले से ही उन्होने तोपखाना देशी लोगो से ले लिया था। जब विद्रोह मूर्तिमान हुआ तो कई अग्रेज़ अफसर अपने मातहत सिपाहियो को समझाने-वुझाने के लिये वाहर निकल आये परन्तु उस समय किसी का वश नही चल पाता था। सर हेनरी ने तोपो की मार शुरू की। साधारण हथियारो वाले सैनिक भला इस मार के आगे कैसे ठहरते ? वे भागे, परन्तु उनका भागना कोरा घवराहट का भागना नही मालूम पडता, क्योकि अधिकतर लोग मुदकीपुर की ओर भागे थे। मुदकीपुर मे भी एक छावनी थी। वहा भी रात भर जोश गरमाता रहा। दूसरे दिन सुवह सात नम्वर का रिसाला मुदकीपुर भेजा गया। रिसाले को दूर आते देख एक विद्रोही सूवेदार ने अपनी तलवार ऊँची उठाई। यह देख आती हुई फौज के कुछ आदमी भी निकल कर देश-भक्तो की पक्ति मे खडे हो गये। कुल मिलाकर एक हज़ार स्वदेशी दल के लोग वहा मौजूद थे। वे भले ही वहुत वहादुरी से लड़े, परन्तु सर हेनरी की भारी तोपो की मार से उनका मुकावला अधिक देर तक होना असम्भव ही था। स्वदेशी दल को मोर्चा छोड कर भागना पडा। हेनरी लारेन्स ने उनका पीछा

किया। उन्होने घोषणा की कि जो व्यक्ति विद्रोहियो को गिरफ्तार या क़त्ल करेगा उसे आदमी पीछे सौ रुपया इनाम दिया जायगा। कुछ देश-भक्त वीर पकडे गये, अनेक मारे भी गये।

सेना के इस आन्दोलन का प्रभाव नगर के लोगो पर भी स्वाभाविक रूप से पडा। सैयद कमालुद्दीन हैदर, जो पहले अवध की शाही सरकार के नौकर और बाद मे अग्रेज सरकार के पेन्शनर रहे, अपने इतिहास ग्रथ 'सवानहात-ए-सलातीन-ए-अवध' मे लिखते हैं "इस अरसे मे मफदीन ने शहर मे तरफ हगामा बरपा किया, और शरीक सिपाह बागी हुए। मुहल्ला मन्सूर नगर, सआदतगज, मशकगज से निशान मुहम्मदी उठाकर ऐशबाग मे जमा होना शुरू किया। सैकडो ने छावनी की राह ली कि हम फौज मे जाकर शरीक होगे। जब खबर सबके भागने की सुनी, हर तरफ अपनी राह ली' आगा मिर्जा एक शख्स मशहूर कम्बलपोश उस दिन सुबह से हर तरफ लोगो को ग़ैरत दिला कर भडका रहा था। हरचन्द पेश्तर एक खुदा तरस ने उसे समझाया था कि तुम कभी ऐसी हरकत न करना, मगर वह कब सुनता था। वजह इसकी यह थी कि एक कुत्ता आगा मिर्जा का साहब ने मार डाला था। साहब ने भी जवाब सख्त दिया, गोली खाली गई। आग़ा मिर्ज़ा और उसके साथियो ने घर मे घुसकर उसे मार डाला, घर असबाब लूट लिया, यह पहल हुई। छोटे खा एक रगपोश साकिन दोगावा व एवज़अली वग़ैरह बदमाश और ऐसे ही बा शोरिश शामिल किये गये।"

ऐशबाग से एक बहुत बडी भीड छावनी की ओर चली। बडी बेतरतीब भीड थी। लडने का साज़ो सामान भी पास न था। भाले, तलवारे, कटारे, लाठिया टोपीदार बदूकें—जो जिसके पास था वही लेकर चल दिया। इस भीड मे व्यवस्थित सैनिक केवल दो सौ थे। सैयद कमालुद्दीन हैदर साहब ने इन्हे बदमाशो की भीड लिखा है। प्रमाणो के अभाव मे यह कैसे कहूँ कि ये बदमाश नही थे, परन्तु सन् १९४२ ई० की जन-क्रान्ति जगाने वालो को भी तत्कालीन सरकारी विज्ञापनो मे गुण्डो और लुटेरो के लकब से सबोधित किया गया था। कमालुद्दीन के इतिहास-ग्रन्थ का कमाल यह है कि वे अवध के बादशाहो के नाम पर दरअसल 'साहब ने आलीशान' अर्थात् अग्रेजो की प्रशस्तियो का पोथा है। सत्तावनी क्रान्ति का स्वदेशी रूप कमालुद्दीन को सख्त नापसन्द था। 'बेगमाते अवध के खूतूत' से भी यह जाहिर होता है कि बहुत-सी बेगमो को इस हौलनाक हगामे से चिढ थी। लखनऊ के पुराने नवाब वश के वर्तमान् बुजुर्गों से मिला हूँ, अधिकतर

बुजुर्ग 'सत्तावनी वलवे' से चिढे नज़र आये। इसलिये मैं सैयद कमालुद्दीन साहव पर यह दोप तो नही लगाता कि अंग्रेज़ो की पेन्शन खाने के कारण ही उन्होने स्वातत्र्य सग्राम मे सम्मिलित होने वाली भीड को वदमाशो की भीड कहा, पर यह अवश्य मानता हूँ कि किसी भी क्राति मे आगे वढकर हिस्सा लेने वालो मे सबसे आगे वह सर्वहारा वर्ग ही होता है, जिसे हम सफेदपोश असभ्य, गुण्डा, आवारा, वदमाश आदि नामो से पुकारते हैं। इसे क्राति की मजबूरी समझिये या विशेपता, कि वह उच्च माने जाने वाले उदारचेता मनुष्यो के मस्तिष्क से उदय होती है और असभ्य माने जाने वाले निम्न वर्ग के सहयोग से ही कार्यान्वित होती है। उसकी सफलता-असफलता की वात न्यारी है।

खैर, ये मुजाहिदीन नारे लगाते इमामवाडे की दीवार के नीचे से गुज़रते हुए गऊघाट पहुँचे। वहा से गोमती पार कर मडियाव गये। मडियाव मे धरा ही क्या था? लौटे तो हुसैनावाद मे अटके। पहले तो सब्ज़ी वालो को लूटा, कच्चे शाकों से भूख मिटाई, फिर पहरेदार वरकदाजो से उलझे, उनके हथियार छीने, फिर हुसैनावाद के दौलतखाना आसफी के देशी तिलगो को ललकारा और फिर जोशे जेहाद मे आखिर भिड ही गये। नतीजा जो चाहिये था वही हुआ, यानी भीड बुरी तरह मारी गई। वहुत से लोग इमामवाडे मे घुस गये। वहा गोरो ने घुस कर कत्ले आम मचाया।

दो दिनो तक शहर मे ये मुजाहिदीन अंग्रेजी राज के विरुद्ध विद्रोह करते रहे।

२ जून को कारनेगी साहव फौज लेकर मसूरनगर गया, दूसरे मुहल्लो मे भी पकडा-धकडी ज़ोर से शुरु हुई। मैं अपनी स्मृति से एक पुरानी सुनी हुई वात यहा नोट कर रहा हूँ—मैंने सुना था कि गोरे हर किसी को पकड कर फाँसिया देते थे। अव यह तो नही कह सकता कि यह घटना लखनऊ की पराजय होने के वाद कत्ले आम के समय की है अथवा पहले की, परन्तु जहा तक मेरा अनुमान है, सार्वजनिक फाँसियो के इसी दौर मे अंग्रेज़ो के द्वारा यह अन्याय हुआ होगा। जो हो, फाँसियो का वही राक्षसी कृत्य फिर से दुहराया गया। लक्ष्मण टीले, अकवरी दरवाजे और भी दो-चार जगहो पर फाँसी लगाने का कार्यक्रम उसी घृणित तरीके से चलने लगा।

११ और १२ जून को क्रमश मिलिटरी पुलिस के सवारो और पैदलो ने विद्रोह किया। गोरो के वगले लूटे-फूंके और चल दिये। इनका पीछा किया गया। मुँह मेल लडाई हुई। उसके वाद ये सिपाही नाना राव की सेवा मे चले गये।

अग्रेजो द्वारा इतनी वर्बरता प्रदर्शन होने पर भी अग्रेजो के विरुद्ध भारतीय सेनाओ को भडकाने का काम जारी था। काकोरी के मुशी रसूल वख्श और उनके वेटे हाफिज जी स्वदेशी दल मे छिपे तौर पर मिल जाने वाले सैनिको की मार्फत अग्रेज पक्ष की भारतीय सेनाओ मे विद्रोह की आग भडका रहे थे। एक दिन हुसैनावाद के तालाव के पास एक शहतूत के पेड के नीचे, मुशी जी के भेजे हुए दो व्यक्ति नादरी पल्टन के सूवेदार करम खा को समझा-बुझा रहे थे। सूवेदार ने देखा कि कोई व्यक्ति सुन रहा है। उसने डर कर साहव से रिपोर्ट कर दी। दूसरे दिन जव वे दोनो व्यक्ति सूवेदार के पास आये तो सूवेदार उनके नेता से वात करने के वहाने उनका घर देखने चला। जासूस भी पीछे-पीछे था। दोनो व्यक्ति सूवेदार को राजा टिकैतराय के वाजार मे राजा हुलासराय के यहा ले गये। मुशी जी, उनके वेटे और दो एक लोग वहा वैठे थे। एक वृद्ध सज्जन मीर खलील अहमद भी यों ही आकर वैठ गये थे। मकान के पडोस मे ही काशी के किन्ही सकठा प्रसाद खत्री की वारात भी टिकी हुई थी। जासूस द्वारा स्थान देख लिये जाने पर मेजर कारनेगी और महमूद खा कोतवाल ने ससैन्य आकर पूरा इलाका घेर लिया। वराती भी पकडे गये। वाद मे लक्ष्मण टीले के सामने मुशी रसूल वख्श, उनके पुत्र, मीर अव्वास थानेदार और इनके साथ वेचारा वेगुनाह वृद्ध मीर खलील अहमद भी फांसी पर लटका दिया गया। काशी के वराती वाद मे छोड दिये गये। मुशी जी की फाँसी का वदला मलीहावाद वालो ने लिया।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि भारतीय फौजी अफसर लखनऊ के शाही वश से अग्रेज सरकार विरोधी सैनिको के सरक्षण की वात चला रहे थे। पुलिस को इसकी सूचना भी मिल चुकी थी। अग्रेज सरकार ने शाही मसूरिया वश के वयोवृद्ध, नवाव सआदत अली खा के पुत्र नवाव मुहम्मद हसन खा रुक्नुद्दौला तथा वाजिदअली शाह के वडे भाई मिर्जा मुस्तफाअली खा को वदी वना लिया। दिल्ली के शाही घराने के मिर्जा हैदर शिकोह और मिर्जा हुमायूं शिकोह को, जो काफी अरसे से लखनऊ मे ही रहते थे, दूसरे दिन क़ैद कर लिया गया। इन सवको मच्छी भवन मे रक्खा गया। तुलसीपुर का जवान राजा कुछ अरसे से वेलीगारद मे नजरवद था, उसे भी वही पहुँचा दिया गया। मच्छी भवन रेजिडेंसी की अपेक्षा अधिक सुरक्षित था। इसी लिये अग्रेजो ने अपना खजाना वारूद भण्डार, महत्वपूर्ण कैदी आदि वही रक्खे। जिस भूमि पर आज मेडिकल कॉलेज, अस्पताल और होस्टल इत्यादि वने हैं; वहा सौ वर्ष पहले सदियो पुरानी गढी लखना उर्फ मच्छी भवन की इमारत विद्यमान थी।

इस प्रकार शहर मे अंग्रेजो ने फिर से अपना आतक जमा दिया, परन्तु इस बार सख्तियो के बावजूद आग बुझ न सकी।

३० मई से जो लखनऊ मे सैनिक विद्रोह आरम्भ हुआ तो अवध मे जगह-जगह आग भडक उठी। सीतापुर, मुहम्मदी, औरगाबाद, सेकरौरा, गोडा, बहराइच, मल्लापुर, फैजाबाद, सुल्तानपुर, सलोन, बेगमगज, दरियाबाद—सभी जगह अंग्रेज स्त्रियो, बच्चो और पुरुषो को बडे-बडे सकटो का सामना करना पडा। अवध का कोना-कोना अंग्रेजों की प्रभु-सत्ता से मुक्त हो गया था, केवल उसकी राजधानी-लखनऊ पर उनका कब्जा था परन्तु यह कब्जा एक तरह से बेमानी था। अंग्रेज अपने बचाव की चिंता मे ही इतने डूबे हुए थे कि उन्हें शहर के शासन प्रबन्ध की ओर कदाचित आख उठाकर देखने का अवकाश भी न था। विद्रोही सेना के बेकार तिलगे ऊधम मचा रहे थे। उनकी लूट-पाट से नागरिक दुखी थे।

२५ जून को लखनऊ के अंग्रेजो ने भी लम्बा हाथ मारा। शाही जमाने मे अलीरजा खा शहर लखनऊ का कोतवाल था। वाजिद अलीशाह के विश्वास-पात्र व्यक्तियो मे उसकी गिनती होती थी। अंग्रेजी अमल होते ही उनका खैरख्वाह बनने में उसे उतनी देर भी न लगी जितने मे गिरगिट अपना रग बदलता है। अंग्रेजी राज मे अलीरजा खा डिप्टी कलक्टर बना दिया गया था। उसने फाइनेंस कमिश्नर मार्टिन गबिन्स को कैसरबाग के गुप्त शाही खजाने का पता दे दिया। फौरन ही मेजर बैंक्स ने फौज के साथ जाकर वह जगह घेर ली। तेईस बहुमूल्य शाही ताज, वेनिस और स्पेन के बने कीमती आभूषण, नायाब हीरे-जवाहरात के बाईस सदूक, रत्नजटित सिंहासन आदि करोडो का धन अंग्रेज लूट कर ले गये।

इस बीच अवध ही नही सम्पूर्ण उत्तराखण्ड मे क्रान्ति की ज्वाला भडक चुकी थी—कही अत्यधिक, कही कम, कही और कम। आजमगढ, गोरखपुर, शाहजहापुर और कानपुर जो अवध के आस-पास थे अपने पूरे जोश पर थे। अवध की सेनायें यत्रतत्र से आकर नवाबगज बाराबकी मे एकत्र हुईं। २८ जून को नवाबगज स्वातत्र्य सेनाओ का पवित्र सगम क्षेत्र बन गया था। २८ जून को ही उन्नाव जिले के डौंडिया खेडा में अंग्रेजो की नाव रेत में फँस गई। राव रामबख्श के सिपाहियो ने उनको घेरा और कइयो को मार डाला।

लखनऊ के अंग्रेजो को चारो ओर से बुरी-बुरी खबरें ही मिल रही थी। इनकी डाक व्यवस्था तो १० जून के बाद ही समाप्त हो गई थी परन्तु इनके जासूस अच्छा काम कर रहे थे।

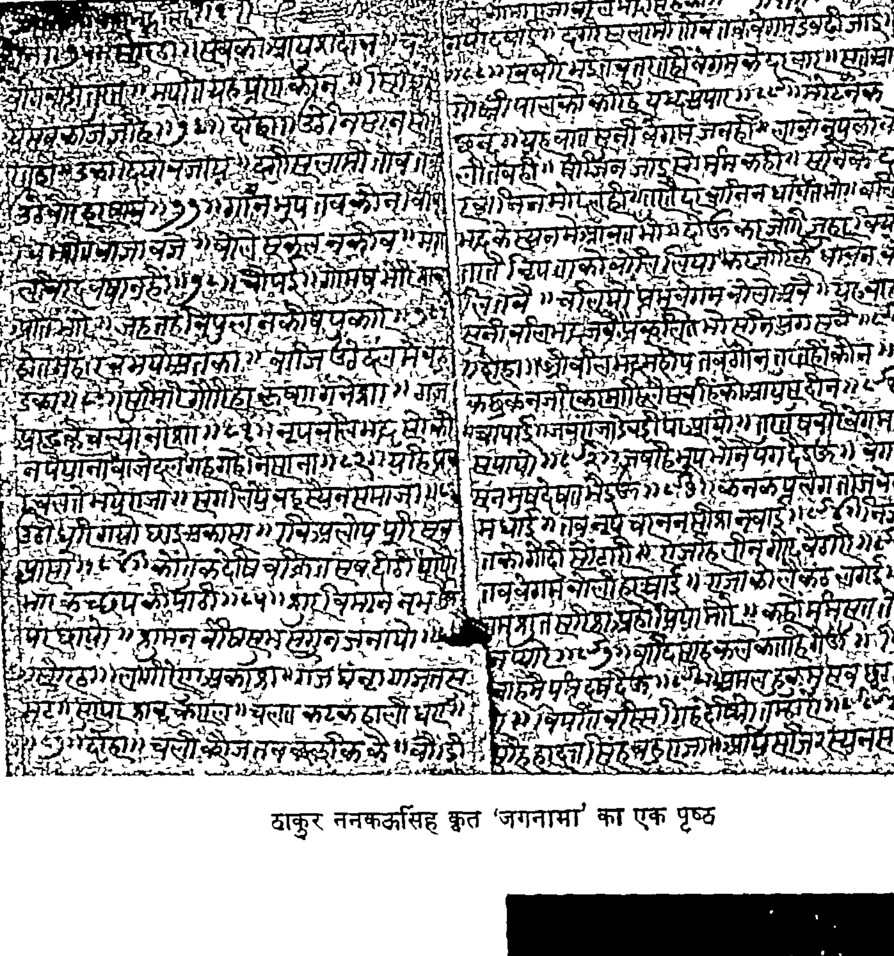

ठाकुर ननकऊसिह कृत 'जगनामा' का एक पृष्ठ

बेगम हजरतमहल की मुहर

नवाबगज बाराबकी का युद्ध देखने व
११५ वर्षीय श्री साहबदीन

२९ जून को स्वदेशी सेनायें लखनऊ से लगभग छ सात मील की दूरी पर चिनहट मे आकर जम गईं। मलीहाबाद के अफ्रीदी भी आकर मिल गये। यह खबर मिलते ही। सर हेनरी ने तुरत अपनी सेनाओ को कूच का आदेश दिया स्वदेशी दल की सेनाओ के नगर मे प्रवेश करने से पूर्व सर हेनरी उन्हें युद्ध देकर नगर के भाग्य का निर्णय कर लेना चाहते थे।

स्वदेशी दल की सेनाओ के कमाडर बरकत अहमद थे। चिनहट की ऐतिहासिक जीत का सेहरा इन्ही के सिर बँधा। सूबेदार शहाबुद्दीन और सूबेदार घमडी सिह की सेनायें भी बडी बहादुरी से लडी। इस युद्ध मे अग्रेज और अग्रेज-परस्त सेनायें ऐसी घिरी कि उन्हें छटी का दूध याद आ गया। शत्रु रण क्षेत्र छोडकर भागे, उनकी चार तोपें और बहुत-सा गोला बारूद स्वदेशी दल के हाथ लगा।

चिनहट की जीत का समाचार पाते ही दौलत खाना की इर्रेगुलर पल्टनों तथा इमाम बाडे की मिलटरी पुलिस ने विद्रोह कर अपने गोरे अफसरो का मालमता लूट लिया।

विजयी स्वदेशी सेनाओ ने अग्रेजो को खदेडना शुरू किया। लोहे के पुल तक अग्रेज सैनिक बेतहाशा भागते ही चले गये। वहाँ रेज़ीडेन्सी की तोपो ने विकट मार मारी। पत्थर वाले पुल के पास स्वदेशी सैनिको को मच्छी भवन की तोपो का सामना करना पडा। स्वदेशी सेनाओ ने भी अपनी तोपो के मोर्चे साधे। देखते-देखते ही स्वदेशी सेनायें सारे नगर पर छा गईं। कोठी फरहत बख्श, छतर-मजिल, बादशाह बाग, शाद मजिल, खुर्शीद मजिल, मुबारक मज़िल, कोठी रसद-खाना, हज़रत गज, दिल कुशा, मुहम्मद बाग, आसफी इमामबाडा—जिधर देखिये उधर ही विजयोल्लास मग्न भारतीय सैनिक दिखलाई पड रहे थे। जब कोठी फरहत बख्श और छतर मजिल मे पडाव डाला तो बेगमो मे खलबली पडी, बडी हाय-तोबा मची। सिपाहियो ने कहा कि आप लोग न घबरायें, हम सुबह होते ही यहाँ से चले जायेंगे।

रेजिडेंसी घिर चुकी थी। उसके आस-पास के घरो मे घुस, दीवारो मे बदूको के लिये छेद बना कर रात होने के पहले ही सिपाही रेजिडेंसी मे गोलिया बरसाने लगे। रेजिडेसी में ता चिनहट की हार के समाचार आते ही बेतहाशा भगदड और कोहराम मच गया था। अग्रेज जन-समूह प्राणो के भय से बावला हो गया था, जो ऐसी दशा मे किसी के लिये भी स्वाभाविक है।

दूसरी ओर जीत की खुशी मे जनता का मनमाना हो जाना भी स्वाभाविक है। दूसरे दिन सुवह अर्थात् १ जुलाई सन् १८५७ के दिन सवेरे ही लोगो को खवर लगी कि कोतवाली इमामवाडा और मुसाफिर खाना वगैरह सरकारी जगहो के रखवाले सिपाही इत्यादि भाग गये है, सरकारी माल-असवाव, हरवे-हथियार सव कुछ खुला पडा है। खवर मिलने की देर थी, फैलते देर न लगी और थोडी देर मे जनता शिवजी की सेना सी इन जगहो पर चढ दौडी। नरकारी सामान की लूट-पाट, फेक-फांक, तोड-फोड शुरू की। यह देख "इन शोहदो मे से रूमी दरवाजे के एक शोहदे ने अपने खास को गाली देकर ललकारा, तुम लूट न मचाओ, यह तोपें खीच कर मच्छी भवन पर लगाओ, इसमे हम तुम सवका वडा नाम होगा। सभो ने कवूल किया।" ('सवानहात-ए-सलातीन अवघ' से)

तोप लगाई गई। कुछ सिपाही चिनहट की लूट मे कुछ गोले पा गये थे। वे भी इस भीड के स्वतन्त्रता-सग्राम मे शामिल हो गये। दो तोपें नक्कारखाने के कोठे पर लगाई गई। दूकानदारो के तखत उठा कर उनकी झाँकिया वनाई और वाढें दगने लगी। मच्छी भवन से तोपें पडती थी, खाली जाती थी। यह देख जनता के हौसले वढ गये। लोगो ने रुई की वहुत सी गाँठें इकट्ठा की और उनमे आग लगा कर आधी रात मे मच्छी भवन के फाटक को जलाने का आयोजन किया।

परन्तु आधी रात को मच्छी भवन के सवध मे अग्रेज कमाडर सर हेनरी लारेंस भी एक योजना वना चुके थे। सर हेनरी ने देखा कि दो-दो जगहो पर घिरकर अग्रेज तबाही के सिवा और कुछ भी हासिल न करेंगे, इसलिये कर्नल पामर को वह मच्छी भवन स्थित सेना, खजाना, स्त्री-वच्चे, कैदी आदि लेकर आधी रात मे रेजिडेंसी चले आने का आदेश भेजना चाहते थे। परन्तु कोई साधन न था एक आदमी को एक हजार रुपये इनाम देकर भेजा भी, पर वह शायद मारा गया। सेमाफोर द्वारा बार-वार सकेतादेश भेजे गये। बार-बार सकेतो द्वारा यह आदेश दुहराया जाता था कि आधी रात के समय अनावश्यक सामान छोडकर तथा वारूद-भण्डार मे आग लगा कर चले आओ। सर हेनरी को विश्वास नही था कि उनका आदेश कर्नल पामर को मिल गया होगा, परन्तु अग्रेजो के भाग्य से पामर ने सूचना प्राप्त कर ली और आधी रात को अक्षरश सर हेनरी का आदेश पालन कर वाहर निकल आये।

हमारी ओर के लोगो ने अग्रेजो की इस चाल को स्वप्न मे भी कल्पना नही की थी। "अचानक आसमान को छूता हुआ लपटो का फौवारा फूट पडा, धरती

पत्ते की तरह डोलने लगी, काले धुंये के वादल छा गये।" जव तक कि लोग इस धमाके के वाद होश मे आयें-आयें, अग्रेजी फौज निकल गई। सैयद कमालुद्दीन ने लिखा है "हसनवाग की तरफ से बइतज़ाम हलका फौज मे तोपें आगे-पीछे रक्खे निकले। शाहज़ादे के मकान के दरवाज़े से दाखिल वेलीगारद हो गये। दफातन एक तोप चली तो मुलजिम गोलदाज राह मे अपनी जाने लेकर भागे। उसमें दो-चार साहव या गोरे भी शहर की गलियो में फँस गये, मारे गये, उनके नाम नामालूम है। फौज वागी जावजा मोर्चो पर थी, मुँह देखती रह गई।"

इसके वाद मुख्य घटना के रूप मे हमारे इतिहास का कलक प्रकट होता है। चिनहट की जीत से अग्रेजो के घिर जाने से हमारे सिपाहियो का हौसला वहुत वढ गया। मच्छी भवन के नाश होने पर भी इन्होने यही समझा कि अग्रेज हमारे डर से मोर्चा छोड कर भाग गये। यह हौसला यदि उचित नेतृत्व पा जाता तो वात कुछ की कुछ हो जाती। रेजिडेसी पर मौलवी अहमदुल्ला शाह की कमान में पहली जुलाई को धावा हुआ था। मौलवी साहव वडी वहादुरी से वेलीगारद के फाटक तक पहुँच गये लेकिन औरो ने पैर पीछे कर लिये। दूसरी जुलाई को फिर जवर्दस्त धावा हुआ। सर हेनरी लारेंस जिस कमरे मे वैठे थे उस पर ही गोला गिरा और सर हेनरी को वुरी तरह जख्मी किया। ४ जुलाई को उनका स्वर्गवास हुआ।

सर हेनरी लारेंस उस काल को दृष्टि मे रखते हुये हमारे शत्रु भले ही रहे हो लेकिन वे अपने चरित्रवल का अनुपम आदर्श उपस्थित कर गये है। वुरी तरह ज़ख्मी होकर, अपना दुखदर्द भूल कर वे भविष्य के लिये अनेक आयोजनायें प्रस्तुत करते रहे। वीच में अपने डॉक्टर से पूछा कि मेरी मृत्यु होने मे कितनी देर है? डॉक्टर ने अपना अनुमान वतलाया। उस समय को ध्यान मे रख सर हेनरी तेजी से अपना काम करवाने लगे। अपने अतिम क्षण तक वे स्वदेश वधुओ की सेवा करते रहे। यह गुण त्रिकाल मे श्रद्धेय है।

इधर हमारे तिलगे सिपाही नेतृत्व के अभाव मे उच्छृखल और उद्दण्ड होने लगे। वे अव तक किसी के नौकर नही हुये थे, उनके सामने भविष्य का कोई नक्शा नही था, इसलिये शहर लूटने पर तुल गये। जिस तिस रईस के यहा हुल्लड मचाते पहुँच जाते, कहते, तुम्हारे यहा दुश्मन छिपे हैं। तिलगो ने मुहसिनुद्दौला का सामान लूटा, शरफुद्दौला अमीनुद्दौला, हकीम मीर अली—कइयो के

घर लूटे । मुहल्ला वाग टोला, चौक की सोने वाली कोठी पर भी वागियो का हमला हुआ था । मेरे पितामह के मित्र वावू जयनारायण जी टण्डन—उक्त सोने वाली कोठी के एक स्वामी—ने अपनी कोठी का फाटक दिखलाया था जिसका एक किवाड काफी हद तक टूटा और फिर से तख्ते ठोक कर दुरुस्त किया हुआ है । वह तिलगो की ही स्मृति है । जव ऊपर से अशर्फियो के तोडे फेंके गये तब वे आगे बढे । नेतृत्व हीन जन-जोश यो ही भस्मासुर होकर आत्मसहार करता है ।

जब जनता बहुत त्रस्त हुई तो मौलवी अहमदउल्ला शाह ने जगह-जगह दूसरी पलटनो के पहरे बिठला दिये । और सेनाओ के अफसर पुराने शाही वश के किसी व्यक्ति को गद्दी पर बिठलाने का आयोजन करने लगे ।

बेगम हज़रत महल

यहा लखनऊ और अवध के सत्तावनी क्रान्ति सम्बन्धी इतिहास मे एक नया चरित्र आकर जुडा, और फिर क्रान्ति के अन्त तक उस पर ऐसा छाया रहा कि अवध मे क्राति का इतिहास ही उसका इतिहास हो गया । बेगम हज़रत महल का व्यक्तित्व भारत के नारी समाज, या कहे कि उस समय के प्राय आधे जगत् के सामन्ती मान्यताओ से बँधे नारी-समाज का प्रतिनिधित्व करता है । महारानी लक्ष्मीबाई के व्यक्तित्व को भी यदि इसके साथ-ही-साथ ध्यान मे रखकर सतर्क दृष्टि से देखा जाय तो हमारे नारी-जीवन का सपूर्ण चित्र सामने आ जाता है ।

लक्ष्मीबाई का बचपन सयोगवश पिता के निर्धन होते हुए भी अभाव रहित रहा । बाजीराव पेशवा के परिवार मे वह मातृहीना कन्या लाड से पली, सस्कार बडे शुद्ध पाये । मातृहीना, चपल, कुशाग्र बुद्धि और तेजस्वनी वालिका को पेशवा के सैनिको और नाना घोडू पन्त, बाला जी आदि के शस्त्र-शास्त्र गुरु का अपार स्नेह भी मिला । मणिकर्णिका बाई उर्फ मनु उर्फ छबीली की शिक्षा-दीक्षा समुचित रूप से हुई । उसके पिता मोरोपन्त ताम्बे बिठूर मे श्रीमन्त पेशवा की होमशाला के एक भिक्षुक ब्राह्मण थे, किन्तु सौभाग्य ने मनु को रानी बनाया । रानी होते ही—पत्नी होते ही—मनु के मुक्त, पुरुषोचित जीवन को उन समस्त बधनो का अनुभव हुआ जिसे हमारा स्त्री-समाज आज तक भोगता है । झासी के माण्डलिक राजा बाबा गगाधर राव बडे क्रोधी स्वभाव के थे । उन्होने अपनी बाल पत्नी

को कठोर अनुशासन मे रक्खा। लक्ष्मीवाई ने उतने ही वन्धन को वहुत माना लक्ष्मीवाई पति की अकेली पत्नी थी, सौभाग्यवश उन्हें सौतो के कुचक्रपूर्ण वातावरण मे नहीं घुटना पडा। पति की मृत्यु के वाद वे पूर्णरूप से स्वतत्र हो गईं और उस स्वतत्रता का उपयोग उन्होंने अपने वैधव्य को कठिन अनुशासन से सँवारने मे किया। कसरत, घुडसवारी आदि से अपने शरीर को कमाने के नशे के कारण वे भोग-विलास से सहज ही में वची रह सकी। लक्ष्मीवाई यदि वाईस वर्ष की आयु मे इस प्रकार काल कवलित न होकर पूरी आयु पातीं, तव भी मेरा जहा तक विचार है, वे चरित्र से अन्त तक निष्कलक ही रहती। यह वात और है कि वे शायद कुछ झक्की और कठोर हो जाती। लक्ष्मी वाई के आश्रय मे रहने वाले तथा उनके द्वारा मान्य एक वेद-शास्त्र सम्पन्न ब्राह्मण विष्णुभट्ट गोडशे ने अपनी पुस्तक 'माझा प्रवास' मे महारानी लक्ष्मीवाई की जो दिनचर्या दी है, उससे ही मेरी इस धारणा को पुष्टि मिली है। लक्ष्मीवाई सतीत्व के तेज से सयुक्त थी। वे देवी सीता की परम्परा की थी जिन्होंने समाज द्वारा स्त्री-जाति पर लादे गये अनुशासन को आस्थापूर्वक धर्म समझ कर धारण किया, परन्तु साथ ही साथ समाज के एकागी न्याय का विरोध भी किया। लक्ष्मीवाई वावा गगाधर राव के कठोर अनुशासन से वँधकर भी उनसे दवी नही थी। यह सद् विद्रोह उनके चरित्र की सवसे वडी विशेपता वन जाती है—ठीक उसी प्रकार जैसे सीता का चरित्र राम की राजसूय सभा मे स्वाभिमान रक्षा के हित अपनी जीवनाहुति देकर अपना पूर्ण विकास पाता है।

वेगम हजरत महल का चरित्र नारी के सहज स्वाभिमान और तेज का दूसरा पहलू पेश करता है। हज़रत महल को वचपन मे ही समाज की उस परम्परा से वँधकर अपने जीवन का विकास मिला जिस परम्परा मे स्त्री पुरुप की भोगागना वनने के लिये ही तैयार की जाती है। हजरत महल के वचपन का कोई इतिहास नही मिलता। वाजिदअली शाह ने अपनी प्रेम-पात्रियो का विवरण लिखते हुए इन्हें 'जनेखानगी' लिखा है। यह मैं पहले ही लिख चुका हूँ कि उस समय की मशहूर कुटनियो, अम्मन और अमामन के द्वारा यह वालिका वाजिद अली के परीखाने के वास्ते वेची गई थी। इसे वचपन मे नाच-गाने की शिक्षा मिली, पुरुप को रिझाने योग्य कलाओ मे यह दीक्षित की गई। शाहे अवध अमजद अली शाह के दूसरे कुँवर वाजिद अली ने अपनी नई परी का नाम महकपरी रक्खा। वेगम हज़रत महल के प्रपौत्र श्री सज्जाद अली मिर्ज़ा कौकव कदर ने मुझे वतलाया था कि उनके घर मे वेगम हरजत महल के वचपन से सवधित कोई

रवायत प्रचलित नही, उन्होने भी अपनी पडदादी के सम्बन्ध मे दो बातें पढी थी। एक तो नजमुलगनी का यह वक्तव्य कि बेगम हज़रत महल का असली नाम 'उमराव जान अदा' था, जो गलत है। उर्दू साहित्य मे प्रसिद्ध उमराव जान अदा और बेगम हज़रत महल का कोई साम्य नही। बेगम छोटी उम्र मे ही महकपरी के रूप मे वाजिदअली शाह के हरम मे दाखिल हुई थी। शीघ्र ही वे माता भी हो गईं। मिर्ज़ा रमज़ान अली खा अल-मुलक्कब मिर्ज़ा बिरजीसकदर हज़रत महल के गर्भ से मिर्ज़ा वाजिदअली की चौथी सन्तान थे।

मिर्ज़ा कौकबकदर ने दूसरी बात यह सुनी थी कि ये फैजाबाद के किसी निर्धन परिवार की कन्या थी। बहुत सुन्दरी होने के कारण धन के लोभवश इनके माता-पिता ने शाही भोग के वास्ते इन्हे अम्मन और अमामन के द्वारा महलो मे दाखिल करा दिया।

जो हो, ये अम्मन और अमामन के हाथो अपने धन के लोभी माता-पिता के द्वारा बेची गई हो या उन हरामज़ादियो के द्वारा कही से उडा कर महलो मे पहुँचाई गई हो, हर हालत मे यह एक ऐसी परिस्थिति है जिसे स्वाभिमानिनी बालिका ने अपनी अनिच्छा से स्वीकार किया होगा। स्त्री के अन्तर का यह सुप्त विद्रोह ही मातृत्व की शक्ति लेकर अपने बेटे का राज्य बचाने के लिये इस प्रकार विकसित हुआ कि राष्ट्रीयता का भाव सिद्ध कर सदा के लिये अनुकरणीय आदर्श बन गया। सर विलियम रसल बेगम की प्रशसा करते हुए लिखता है "बेगम मे बडी योग्यता और तेजस्विता दिखलाई देती है। बेगम ने हमारे साथ अनवरत युद्ध की घोषणा कर दी है। इन रानियो और बेगमो के स्फूर्तिवन्त शक्तिशाली चरित्रो को देखकर लगता है कि ज़नानखानो और हरमो मे रह कर भी वे अपने अन्दर तीव्र क्रियात्मक मानसिक शक्ति पैदा कर लेती है।" ईनिस, बाल, मेलिसन, के, होपग्राट, गबिन्स—जिसने भी अवध के सम्बन्ध मे कुछ लिखा है उसने, कम से कम, बेगम की चतुराई, बुद्धिमत्ता और सगठन शक्ति की प्रशसा किसी न किसी रूप मे अवश्य की है।

जब भूतपूर्व बादशाह के किसी पुत्र को राजगद्दी पर बिठलाने की बात आई तो पहले किसी का ध्यान बिरजीसकदर की ओर न गया। यदि और किसी शाहजादे अथवा उसकी उच्च कुल की मा ने वाजिदअली शाह की गद्दी से राजनैतिक सम्बन्ध जोडना स्वीकार कर लिया होता तो इतिहास के सम्मुख बेगम हज़रत महल का चरित्र शायद कभी न आया होता।

चिनहट की विजय के वाद स्वदेशी दल के सेना-सूवेदारो ने अपनी एक पचायत वनाई और यह तय किया कि राज-काज चलाने के लिये किसी शाही वश के व्यक्ति को राजतिलक करना चाहिये ।

अवघ का राजवश थके हुए, निकम्मे, विलास-रत व्यक्तियो से भरा था । उसमे विद्रोह करने की ताकत नही थी । पण्डित देवीदत्त शुक्ल ने अपनी पुस्तक 'अवध के ग़दर का इतिहास' मे एक महत्वपूर्ण वात नोट की है । वे लिखते हैं " परन्तु उसके साथ यह भी सच है कि उस समय लखनऊ मे वैसे हौसले के आदमी न थे, जो फिर से नवाबी शासन प्रचलित करने का साहस रखते हो । विद्रोह तो वहा इसलिये हुआ कि वह अन्य स्थानो मे हुआ था । अवघ को विद्रोह करना या लडना होता तो, वह उसी समय करता, जव उसके वादशाह वाजिदअली शाह पद-च्युत किये गये थे । उस समय विरोध करने की वात तो अलग रही, उलटा अग्रेज़ी अमलदारी का स्वागत सा किया गया था । जो ताल्लुकेदार राज़ी-राज़ी मालगुज़ारी नही देते थे, वे अग्रेज़ी होने पर ठीक समय पर मालगुजारी ही नही देने लगे, वल्कि अधिकारियो के आज्ञानुसार उन्होंने वे जायदादे भी उनके असली स्वामियो को चुपचाप लौटा दी, जिन्हे नवावी अमलदारी मे वलपूर्वक छीन लिया गया था । अवघ मे अग्रेज़ीसत्ता गत १५ महीने से ही स्थापित थी । पुलिस के व्यवहार और प्रवध से प्रजा सतुष्ट थी । खैरावाद और वहराइच की कमिश्नरियो का 'मुल्की वन्दोवस्त' हो गया था, और उनका राजस्व सरकारी अधिकारियो ने ठीक-ठीक निश्चित कर दिया था । शेप दो कमिश्नरियो का जो वन्दोवस्त हुआ था उसमे राजस्व वहुत अधिक नियत हो गया था, अतएव फिर से विचार कर वह कम कर दिया गया और इस वात की पहली अप्रैल को घोपणा भी हो गई थी । यह सव हुआ, परन्तु सिपाहियो के विद्रोह करते ही इन सवका सारा प्रभाव जाता रहा और प्राय वडे-वडे लोग विद्रोहियो की दाव मे आ गये ।" अस्तु ।

लखनऊ मे प्राचीन राजवश को सिहासन पर प्रतिष्ठित करने के लिये सेनानायको की पचायत ने राजा जयलाल सिह नुसरत जग को बुलवाया, उनकी वडी खातिर की । राजा जयलाल उर्फ राजा जियालाल ने शिकायत की कि तिलगो की लूट से शहर परेशान है । उनसे कहा गया कि इसलिये आपकी मदद की जरूरत है । राजा और सेनानायको की सलाह से अलीरज़ा कोतवाल और मीर नादिर हुसैन वुलवाये गये, इन्हे शहर का प्रवघ सौंपा गया । चूंकि ये दोनो अग्रेज़ो के मातहत भी रह चुके थे इसलिये इनके ऊपर निगरानी रखने के वास्ते मुहम्मद कासिम खा

को मुकर्रर कर दिया गया। जब तक राज सिंहासन पर किसी राजपुत्र को प्रतिष्ठित करने का आयोजन सफल हो तब तक के लिये सैनिक पचायत ने शासन प्रबध अपने हाथ मे ले लिया। इस पचायत मे जनरल बरकत अहमद, उमराव सिंह, जयपाल सिंह, रघुनाथ सिंह, शहाबुद्दीन और घमडी सिंह प्रमुख व्यक्ति थे। सैनिक पचायत ने मौलवी अहमदउल्ला शाह से अपने चौकी पहरे हटा लेने को कहा। इस पर शायद कुछ झझट भी हुई।

पहले मिर्ज़ा दार-उस सितवत को राजगद्दी के लिये चुना गया। उन्होंने अग्रेजो के डर से इकार कर दिया। फिर वाजिद अली शाह के बेटे युवराज के छोटे भाई मिर्ज़ा नौशेरवा कदर के लिये बात चलाई गई। वहा भी सफलता न मिली। अत मे नवाब महमूदखा और शेख अहमदहुसैन ने राजा को सलाह दी कि मिर्ज़ा बिरजीस कदर को गद्दी नशीन कर दो। राजा को वाजिदअली शाह का कोई पुत्र प्रतीक रूप मे सिंहासन पर प्रतिष्ठित करने के लिये चाहिये था, उन्होने कहा कि अगर बेगमो को मजूर हो तो सैनिक पचायत भी इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेगी।

यहा प्रसगवश एक पुरानी घटना का उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है। नाइटन ने अपनी पुस्तक 'प्राइवेट लाइफ ऑफ एन ओरियण्टल कुइन' मे वाजिद अली शाह की माता बेगम आलिया की एक भूतपूर्व बाँदी द्वारा सुनाई गई एक घटना का विवरण दिया है। वाजिदअली शाह अपनी माता की एक परिचारिका पर मुग्ध हो गये थे। राजमाता दोनो के मिलन मे बाधक थी। एक दिन बादशाह बाँदी के विरह मे इतना तडपे कि सीधे अपनी माता की सेवा मे जाकर अपनी नाराज़गी का इज़हार करने लगे। राजमाता ने नीति से काम लिया, कहा कि इस बाँदी को मैं जानबूझ कर तुम्हारी खिदमत मे नही भेजती, क्योकि इसकी पीठ पर साँपिन का निशान है, जिसके साथ रहेगी उस मर्द पर अपनी बदकिस्मती का साया डालेगी। वाजिदअली शाह डर गये। उनका स्वास्थ्य उन दिनो गिरा हुआ था, दिल की बीमारी थी। जाने आलम ने सोचा, इतनी बेगमात मे न जाने किस-किस के यह मनहूस निशान हो और उसकी वजह से उन पर यह मुसीबत आई हो। बस, विचार मन मे आते ही उन्होंने ख्वाजासरा बशीरुद्दौला को आदेश दिया कि राजमाता और खास महल को छोड कर अन्य सब बेगमो की तलाशी ली जाय। बेगमो पर कहर टूट पडा। मनहूस साबित होकर पिया जाने आलम की नज़रो से कोई भी बेगम गिरना नही चाहती थी। बशीरुद्दौला उनसे रिश्वतें पाकर

मालामाल हो गया। फिर भी आठ हतभागिनी वेगमो की देहो पर ख्वाजासरा वशीरुद्दौला ने सांपिन का निशान ढूंढ ही निकाला। उन वेगमात के नाम इस प्रकार हैं निशात महल, सुलेमान महल, खुर्शीद महल, हज़रत महल, शैदा वेगम, हज़रत वेगम, वडी वेगम और छोटी वेगम।

यो तो पिया जानेआलम अपनी किसी भी प्यारी वेगम को न निकालते, मगर उन्हें अपनी जान सवसे अधिक प्यारी थी। उन आठो वेगमो को तलाक देकर शाही महल से वाहर रहने की आज्ञा दी गई। वाद मे इन वेगमात की ओर से भी पैरवी करने वाले निकल आये। वादशाह को समझाया कि हिन्दू पण्डित अपने मत्र तत्र वल से हर दोप को दूर कर सकते है। पडित आये, पुरश्चरण द्वारा उन आठो वेगमो को दोप-मुक्त किया गया। तलाक की आज्ञा वापस ली गई। वडी और छोटी वेगम तो महलो मे लौट आई परन्तु वाकी छह पत्नियो ने महल के वाहर ही रहना पसन्द किया। उनके समस्त अधिकार पूर्ववत ही वने रहे।

इन आठ हतभागिनियो मे एक हज़रत महल भी थी। यदि यह घटना सच है तो हज़रत महल जैसी तीव्र वुद्धिवाली कुशल और भावुक स्त्री को इस घटना से कैसा करारा आघात लगा होगा! वे और उनकी अन्य हतभागिनी सपत्नियाँ, दोषमुक्त होने के वाद भी लौट कर महलों मे रहने न गईं—इस वात से उनका विद्रोह, शका और भय का भाव प्रकट होता है।

महलो मे रहने वाली राजा-सम्राट् की पत्निया और भोगागनायें हरदम वारूद के ढेर पर ही कीमती कालीन विछाये वैठी रहती थी। प्रथम पत्नी यानी पटरानी वैधानिक रूप से तो अवश्य सुरक्षित रहेगी, परन्तु उसका मान-सम्मान, पति-सग सुख आदि भी सुरक्षित रहेगा यह कभी नही कहा जा सकता था। फिर औरो की तो वात ही न्यारी थी। राजा सम्राट को अपनी नित-नूतन विलास-क्रीडाओ के लिये सुन्दरी तरुणिया चाहिये। यह भी निश्चित वात है कि वह एक सीमा के वाद सवकी प्राकृतिक भूख—दैहिक प्यास शात नही कर पाता होगा, केवल अपनी पिपासा को तृप्त करने की चिता ही उसे रहती होगी। ऐसी दशा मे महल की तरुणिया वेचारी क्या करें? छोटी-वडी रानियो, वेगमो, रखैलो में ऐसी वहुत सी होती थीं जो महीनो, वरसों अपने पति—राजा-सम्राट—का मुख भी नही देख पाती थी। उन्हें तो दासिया अपने से भी हीन मान कर उनकी वात तक नही पूछती थी। जो वेगम, रानी या रखैल जितने दिनो तक अपने राजा जी के मन चढ़ी रहती, उसके आस-पास उतने दिनो तक छोटी मोटियो का दरवार लगा रहता

बाहर-भीतर सब जगह उसकी आवभगत होती। उसके विरुद्ध सम्राट की भूतपूर्व चहेतियो और भविष्य की महत्वाकाक्षिणियो के षड्यत्र चलते रहते। ख्वाजासरा अपने अत्याचार का चक्र चलाता था। ऐसी दशा मे जो सीधे चलन वाली भावुक स्त्रिया होती होगी, क्या वे अपने पति से घृणा नही करती होगी ? उनमे विद्रोह की बडी तीव्र भावना उत्पन्न होती होगी। महलो की समस्या देश काल की सीमाओ से परे, बडी ही कठिन रही है। इसके लिये किसी एक देश काल अथवा धर्म के राजा को उँगली उठा कर कोसना मेरी नीयत नही, फिर भी, चूँकि इधर अवध पर ही पढा है तो दृष्टान्त के लिये मैं अवध के नवाबी हरम की कुछ बातें सामने रखता हूँ। आसफुद्दौला के सम्बन्ध मे उसका एक प्रतिष्ठित दरबारी अबू-तालिब लिख गया है कि वह गर्भवती स्त्रियो को अपने हरम मे रखता था, उनमे उत्पन्न सतानो को अपनी सतान करार देता था। वज़ीरअली को उसने पुत्र और राजगद्दी का उत्तराधिकारी घोषित किया और साथ ही यह भी कह गया कि इस खानसामा की औलाद को बडे-बडे सलाम करेंगे। आसफुद्दौला से लेकर वाजिद अली शाह तक अवध के नवाबो मे एक मात्र शेर मर्द—वज़ीर अली—को आसफु-द्दौला के इस पाप के कारण राजसिहासन छोडना पडा। मामूली से मामूली घरों की इज्ज़त उनकी स्त्रियो से होती है—यह सार्वभौमिक मान्यता है। कल्पना कीजिये, उन शाही हरम की स्त्रियो की जिनकी सतानो को लेकर जायज़-नाजायज़ का चर्चा सरे आम होता होगा। आसफुद्दौला ने अपनी माता बहू बेगम के साथ जो व्यवहार बरता अपने कर्मचारियो, सिपाहियो द्वारा उन पर जो अत्याचार करवाया उसका वर्णन कर अपनी लेखनी और पाठको के मन को दूषित नही करना चाहता। गाज़ीउद्दीन हैदर के समय मे लखनऊ की यात्रा करने वाला पादरी हेब्बर लिख गया है कि आसफुद्दौला, वज़ीर अली और सआदत अली खा की विधवा बेगमो और रक्षिताओ को सरकारी अमलो की लापरवाही से अरसे से खर्चा ही नही मिला था। जब वे भूखी मरने लगी तो एक दिन अपनी बादियो को साथ ले बाहर निकल पडी और हुसैनाबाद का बाज़ार लूट लिया, दूकानदारो से कहा कि जाकर बादशाह से अपना पैसा वसूल करो। बादशाह बेगम और शाह गाज़ीउद्दीन हैदर मे ऐसी बजी कि दोनो ने एक दूसरे को नाको चने चबवा दिये। पति पत्नी के वैमनस्य मे उनका पोता, नसीरुद्दीन हैदर का बेटा मुन्ना जान वैध से अवैध करार दे दिया गया। मुन्ना जान के सम्बन्ध मे स्लीमैन तक लिख गया है कि वह चेहरे मोहरे और आदतो से हूबहू अपने बाप का बेटा ही लगता था।

नसीरुद्दीन हैदर अपने बेटे की धाय पर इतना रीझा कि उससे विवाह कर, सब सीमाओं का उल्लघन कर उसे पटरानी—मलिका ज़मानिया बना दिया। यही नही, उसके आग्रह से उसके पूर्व पति के पुत्र को कैंवाजाह का खिताब दे, अपना पुत्र घोषित कर, अंग्रेजो से उसे अपना उत्तराधिकारी घोषित करने की बारबार इच्छा प्रकट की। जब मलिका ज़मानिया का ज़माना लदा तो गवर्नर जनरल को लिख दिया कि कैंवाजाह मेरा पुत्र नही। नसीरुद्दीन की एक चहेती कुद्सिया बेगम तो इतनी भावुक थी कि जब नसीरुद्दीन हैदर के मन से उतरी, नसीरुद्दीन ने उसे दुश्चरित्रता का दोष लगाया तो पति के देखते ही देखते आवेश मे आकर ज़हर खा लिया। वाजिद अली शाह के द्वारा इन आठ बेगमो को तलाक देने की कथा तो सामने है ही, उसके और भी कई दृष्टान्त दिये जा सकते हैं।

ऐसी दशा मे, महल नामक सामती नरक मे रहने वाली रानियो बेगमो ने भी यदि सन् ५७ की महाक्राति मे भाग लिया तो कोई अचरज की बात नही। सत्तावनी क्राति की दो महान् नायिकायें, लक्ष्मीबाई और हज़रतमहल, यद्यपि सर्वथा विभिन्न परिस्थितियो से गुजर कर राजमहलो मे आईं, फिर भी उनमे एक बडा ज़बर्दस्त साम्य है—दोनो ही जन-साधारण के कुलो की कन्यायें थी। इसलिये हम कोरी भावुकता से प्रेरित किसी तर्क का आधार लिये बिना भी यह कह सकते है कि लक्ष्मीबाई और हज़रतमहल तत्कालीन भारतीय नारी-समाज का प्रतिनिधित्व कर रही थी। पत्नी और उपपत्नी दोनो ही रूपो मे नारी-जीवन त्रस्त और कुण्ठित था, ऐतिहासिक परिस्थितियो का सुयोग पाकर उसकी चेतना, उसका स्वाभिमान विद्रोह कर उठा।

काइयो के पर्त जमे, बरसो के बद तालाब मे पत्थर फेंकने से जिस प्रकार काई फटती है और जल का अतर तक आलोडित हो उठता है, ठीक उसी प्रकार सदियो की अगति से जड भारत देश अग्रेज़ो से आघात पाकर आन्दोलित हो उठा। अग्रेज बहाना बन गये, उनके बहाने इस देश के हर वर्ग के स्त्री-पुरुष ने अपनी अनेकानेक कुण्ठाओ को तोडकर विद्रोह प्रकट किया था।

खैर, हम फिर से अपनी ऐतिहासिक कथा के सूत्र साध लें। राजा नुसरतजग, महमूद खा आदि के प्रयत्न से खास मकान मे सब बेगमात इकट्ठा हुईं, शक शुब्हे पेश हुए—अगर यहा किसी को गद्दी पर बिठला कर अग्रेज़ो से लडाई ठानी और कलकत्ते मे अग्रेज़ो ने वाजिदअली शाह को मार डाला, तो क्या होगा ?

हजरतमहल के जीवन का एकमात्र सतोष फलनेवाला था, वह राजमाता

होने वाली थी, परन्तु अन्य वेगमो के उपरोक्त तर्क ने उन्हे फिर निराश कर दिया। 'राजा रुखसत होकर चला गया, मगर महमूद खा के तिल-तलवो को लगी हुई थी। उसने हज़रतमहल से फौज के सरदारो को खत भिजवा दिये।'

७ जुलाई को चाँदी वाली वारादरी मे विरजीसकदर की ताजपोशी हुई। स्वदेशी सेना के जनरल वरकत अहमद ने विरजीसकदर को राजमुकुट पहना दिया। अफसरो ने तलवारो की नज़र दिखाई, २१ तोपो की सलामी सर की गई, शहर मे पुन शाही स्थापित होने की खुशी मे उत्सव मनाया गया। सैनिक पचायत और विरजीसकदर सरकार के वीच एक समझौता हुआ, जिसके अनुसार विरजीसकदर अवध के स्वतत्र वादशाह स्वय नही वन सकते थे। यह दिल्ली के शाहशाह की मर्जी पर छोडा गया कि वह उन्हे अवध का स्वतत्र वादशाह घोपित करें अथवा सआदत खा से लेकर सआदतअली खा तक की परम्परा के अनुसार उन्हे नवाव वज़ीर की पदवी से विभूपित करें।

दूसरी शर्त यह रक्खी कि सैनिको का वेतन दूना कर दिया जाय और वेतन की जो रकम अग्रेजी सरकार मे डूव गई है वह भी सरकार विरजीसी अदा करे।

तीसरी शर्त यह रक्खी कि नई पल्टन भरती किये जाने पर उसके अफसर की नियुक्ति सैनिक पचायत की सलाह से हो।

चौथी शर्त के अनुसार राज-काज मे सैनिक पार्लियामेन्ट की सलाह वरावर ली जायगी तथा नायब दीवान की नियुक्ति भी उसी की सलाह से होगी।

वेगम हज़रतमहल अपने अल्प-वयस्क पुत्र की सरक्षिका नियुक्त हुई तथा राज-काज मे उनके निर्णय के महत्व को भी स्वीकार किया गया। शरफुद्दौला, राजा बालकृष्ण, राजा जयलाल सिंह, मम्मू खा, हिसामुद्दौला आदि नई सरकार के प्रमुख पदाधिकारी बने।

१३ नई पल्टनें भरती करने का निर्णय हुआ। एक दूसरे हुक्मनामे के अनुसार अवध के प्रमुख ताल्लुकेदार, ज़मीदारो को अपनी सेनायें लेकर राजधानी मे आने का आदेश दिया गया।

सैयद कमालुद्दीन ने अपने इतिहास-ग्रन्थ मे सेना सहित लखनऊ आने वाले दस ताल्लुकेदारो के नाम दिये हैं। गोडा के राजा देवीबख्श सिंह ३००० सैनिक लेकर आये, गोसाईंगज के ज़मीदार और ताल्लुकदार, अनन्दी और खुशहाल ४००० सैनिक लेकर आये, सेमरौता—चन्दापुर के राजा शिवदर्शन सिंह (लोकगीत प्रसिद्ध 'सुदर्सन काना') १०,००० सैनिको के साथ और वहा के जमीदार रामवख्श

तोपें और २००० फौज लेकर आये, अमेठी के राजा लालमाधो सिंह ४ तोपें .०० घुडसवार और ५००० पैदल सेना सहित आये, बैसवारा के ताल्लुकेदार ाणा वेणीमाधवबख्श सिंह ५ तोपो और ५००० सैनिको सहित आये, राजा ानपारा के कारिन्दा कल्लू खा १०,००० सैनिको के साथ, खजूर गाँव के राणा ्घुनाथ सिंह ४ तोपो और २००० सैनिको के साथ, सँडीला के चौधरी हश्मतअली ४००० सैनिको के साथ, तथा रसूलाबाद के चौधरी मीर मन्सब अली १००० ंनिको के साथ आये।

ये सामन्तगण शाही हुक्मनामा पाते ही सहसा आ गये हो सो बात नही। अवध के विभिन्न जिलो की यात्रा से मुझे इन सामन्तो के जगह-जगह एकत्र होकर कान्फ्रेन्सें करने और अहदनामो पर हस्ताक्षर करने की बात मालूम हुई है। इन ताल्लुकेदारो का सगठन करने के लिये बेगम हज़रत महल स्वय जगह-जगह जाकर भाषण करती और लोगो को सगठित करने के लिये प्रयत्न करती थी, यह सूचना किंवदन्तियो द्वारा मुझे प्राप्त हुई है। बहुत बाद मे जब पूर्णतया पराजित होकर लखनऊ से भागी तो भरावन के जमीदार राजा मर्दनसिंह ने इन्हे शरण न देकर एक चुभती हुई बात कही थी। वह अपमानजनक वाक्य बेगम की जगह-जगह की दौड-धूप के प्रति स्पष्ट सकेत करता है। उन्होने कहा "मैं तुम्हे शरण नही दे सकता क्योकि तुम मेढक की तरह इधर से उधर उछलती फिरोगी।" हारे हुए प्रभु की जिन कारगुजारियो को राजा मर्दनसिंह ने मेढक का फुदकना बताया वही बात यदि स्वदेशी दल की जीत हो जाती तो गदर सगठन के लिये 'जनाब आलिया बेगम हजरत महल के तूफानी दौरे' के नाम से मर्दनसिंह जैसे मुसाहबो की जबान पर होती। बेगम ने सचमुच ही तूफानी दौरे किये होगे। एकबार जब कि असभव सम्भव हो गया, खास महल आदि ऊँची बेगमात की औलादें रहते हुए भी हजरत महल की कोख के जाये को ऐतिहासिक परिस्थितियो के कारण बाप की राजगद्दी मिल गई, तो हजरत महल उन ऐतिहासिक परिस्थितियो के प्रति दिल से वफादार भी हो गई। मैंने आमतौर पर पुराने लोगो से बेगम के प्रति आदरसूचक शब्द सुने हैं। सीधी-सी बात है कि राणा वेणीमाधव बख्श जैसा ऊँचे दर्जे का पुरुष यदि बेगम का मान करता है तो उस महिला के प्रति हमारे मन मे भी आदर जागता है। अतिम युद्ध मे राणा, राजा देवीबख्श, मुहम्मद हुसैन नाज़िम जैसे दिव्य पुरुष उनका साथ दे रहे थे। नाना साहब का दल, तुलसीपुर की रानी भी उनके साथ ही थी। ऐसे लोग अनायास ही किसी ऐरे-गैरे व्यक्तित्व से बँध नही सकते।

यात्रा मे मुझे वेलीगारद की लडाई मे चर्दा, चहलारी आदि नरेशो के लडने के सम्बन्ध मे सूचनायें मिली थी। अमहट वालो के पास सरकार-ए-विरजीसी के गदर सम्बन्धी परवाने मौजूद है। सैयद कमालुद्दीन हैदर ने अपने इतिहास-ग्रन्थ मे अनेक सामन्तो को परवाने भेजे जाने की वात लिखी है। रोइया (हरदोई) के नरपतिसिह, कटियारी के हरदेववख्श सिह, राजपुर के दुनियासिह ने परवाने स्वीकार किये और सिपाही की खातिर की।

वाँगरमऊ के माखनसिह, उस्मानपुर के मीर गुलाम जाफर, साँडी-वावन के मीर आलमअली, सलोन के भीखम खाँ ने परवाने लेकर भी हुक्म की तामील नही की।

कालाकाकर के राजा हनुमन्तसिह, तरौल के वावू गुलावसिह परवाने पाकर सेनाओ सहित लखनऊ आये और अगेजो से खूब लडे। सेनाओ का खर्च कुछ राजा लोग अपने पास से देते थे और कुछ को सरकार विरजीसो से मिलता था।

पडित देवीदत्त शुक्ल लिखित 'अवध के गदर का इतिहास' के अनुसार अवध के राजे-सामन्तो और चकलेदारो की जो सेनाये अवध की राजधानी लखनऊ मे एकत्र हुई थी, सख्या मे एक लाख, पचास हजार पाँच सौ थी।

इतनी जन सेना लेकर भी हम रेजीडेन्सी के मुट्ठी भर गोरो और गोरा-परस्तो ने जीत न पाये, इसका कारण सहसा समझ मे नही आता। आमतौर पर सिपाहियो मे वीर पुरुष थे। जहा तक व्यक्तिगत वीरता का प्रश्न है हमारे पुरखे एक से एक, वेमिसाल वहादुर हुए है। केवल १८५७ मे ही नही वल्कि जाने माने इतिहास के आरम्भ से देखें, सिकन्दर के आक्रमण के समय महायोद्धा पुरु और उनके साथ लडने वाले असख्य भारतीय जन अपनी वीरता के लिये तत्कालीन यूनानियो द्वारा खूब सराहे गये हैं। फिर चन्द्रगुप्त मौर्य, चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, समुद्रगुप्त, स्कदगुप्त, हर्षवर्द्धन, पृथ्वीराज चौहान, राणा साँगा, महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, गुरु गोविन्दसिह से लेकर लक्ष्मीबाई, तात्या टोपे, मौलवी अहमदउल्ला शाह, नानाराव पेशवा, जनरल वख्त खाँ रुहेला, राणा वेणीमाधव वख्श, वावू कुँअरसिह, वलभद्रसिह चहलारी वाले,—अनेकानेक और प्राय प्रत्येक युग मे अवतरित हुए। महावीर योद्धा उत्पन्न होते गये और देश वरावर विदेशियो द्वारा हारता रहा। यह सोचकर हार्दिक कष्ट होता हैं। जव पहली वार इस वात पर ध्यान वैठा तो मन मे उपमा के तौर पर एक चित्र भी उभरा। ऐसा दिखाई पडा मानो दस हजार हाथियो के वरावर वलशाली भीम गहरे दलदल मे फँस गया है

उबरने के लिये वह अपनी जितनी अधिक शक्ति का उपयोग और प्रदर्शन करता है उतना ही वह गहरा धँसता चला जाता है। सोचकर सिहर उठा, दम सा घुटने लगा।

उम्दा घडी के वेशकीमती पुर्जे मौजूद है पर वे सुनियोजित रूप से एकत्र और सुसगठित नही है हमारे देश की यही तस्वीर है। महाराज पुरु के समय से लेकर सन् १८५७ ई० तक यही वात दिखलाई देती है।

रेजिडेन्सी पर वरावर हमले होते रहे। हमारे पासी जाति के पुरखे सुरगे उडाने मे वडे पटु थे, अक्सर वेलीगारद वालो को उनसे नुकसान पहुँचता रहा।

अगस्त मे कानपुर से हेवलाक की सेनाओ के इधर आने की खवर गर्म थी। वेगम, मम्मू खा, जनरल वरकत अहमद ने तय किया कि गोरो की नई सेना आने से पहले वेलीगारद पर कब्जा कर लेना चाहिये। फौज के दूसरे अफसर भी सहमत हो गये।

१० अगस्त को सव पल्टने और रिसाले अपनी-अपनी जगह धावे के लिये तैयार होने लगे। जनरल वरकत अहमद फौज लेकर वेलीगारद की ओर वढे। तिलगो ने 'बम महादेव' का नारा लगाते हुए, रेजिडेंसी को घेर लिया। इतने मे मौलवी साहव पधारे, उन्होंने कहा कि यह धावा नाहक हो रहा है, जव तक मैं न कहूँ, कुछ न हो। मौलवी साहव का सिपाहियो पर प्रभाव था ही, उनकी वात की लक्ष्मण लीक के आगे तोपखाने के रिसाले ने आगे वढने से इन्कार कर दिया। तिलगे अवश्य वेलीगारद की दीवाल तक पहुँच गये। एक सुरग मे वत्ती दी गई, पर वह किसी कारणवश न उडी। तिलगे दीवार खोदने लगे, कुछ गिरजाघर और कुछ खजाने की ओर से वढे।

वेगम और मम्मू खाँ के पास दम-दम पर हरकारे पहुँचने लगे कि यो हमारी जीत हो रही है और यो रेजिडेंसी पर अधिकार हो रहा है। वेगम का प्रसन्न होना स्वाभाविक था। दूसरे दिन और ही खवर आई, लडाई मे मारे गये और घायल हुए लोगो की सूची आई—२२० मारे गये और १०५ घायल हुए। लाशें रण-क्षेत्र मे ही छूट गईं। वेगम को वडा आघात लगा।

फूट का वाजार शुरू से ही गर्म हो चला था। शंका और पारस्परिक भय फैला हुआ था। वात यह थी हमारी ओर सेना का सगठन और सचालन करने वाला कोई भी योग्य कमाडर न था। जनरल वरकत अहमद, जिनकी जगी सूझ-वूझ से चिनहट मे विजय मिली, एक तरह सर्वमान्य हो कर भी, दूसरे नेताओ की अहमन्यता

के शिकार थे। मम्मू खां चूंकि बेगम की कमज़ोरी थे, इसलिये शहज़ोर थे, जनरल बरकत अहमद का मान था, मगर मौलवी अहमदुल्ला शाह भी महामानी थे। सैनिक पचायत के अन्य अफसर भी अपना महत्व जतलाये बिना कैसे रहते ? इस प्रकार नेताओ मे खींच-तान थी।

यह सब देख कर लगता है कि उस समय हमारा राष्ट्रीय मानस दूसरी परिस्थिति मे था, यानी कि सगठन भी था और आपसी फूट तथा शका भी थी। स्वाभिमान और सिद्धान्त के लिये मर-मिटने का जोश भी भरपूर था, पर आपसी कलह मे भी कसर न थी। हमारे सत्तावनी पुरखे अपनी ऐतिहासिक परिस्थिति के प्रति जहा अत्यधिक गम्भीर थे वहा ही दूसरी ओर सगठन की व्यापकता के प्रति लापरवाह भी थे। यानी कि हम बढ रहे थे, बडी धूम थी, बडा जोश था, मगर साथ ही साथ हमारे पैरो मे उलझनो की काटेदार बेडियाँ पडी थी हम एक जगह पूर्णतया जड भी थे।

महलो मे भी आपसी जलन और तू-तू, मैं-मैं का बाज़ार गर्म था। एक दिन कई बेगमात मिल कर हज़रत महल के पास आईं, कहा कि बेलीगारद के अग्रेज़ को मारने का बदला कही वाजिद अली शाह और कलकत्ते मे रहने वाली शाही टोली को मार कर न लिया जाय, इसलिये तुम इस सल्तनत को चूल्हे मे डालो। हज़रत-महल बोली, मालूम हुआ तुम सब लोग जलती हो।—बडी कहासुनी हो गई। फौज के अफसरो तक बातें पहुँची। उन्होने कहा कि बेगमात अग्रेज़ो से मिल गई हैं, उन्हे महलो से बाहर निकाला जाय।

इस तरह की बातें कुछ न कुछ नित्य-प्रति उठती ही रहती थी। इन आपसी फूट की बातें अफवाहो की सूरत मे सिपाहियो तक पहुँचती और उन अफवाहो का असर बुरा पडता था।

सरकारी खजाने में रुपया नही था। उसकी चिंता थी। जुलाई मे बिरजीस कदर के गद्दीनशीन होने के बाद से ही बेगम को रुपयो की चिंता थी। तिलगे शहर मे लूटपाट मचा रहे थे। इससे नगर की जनता मे स्वाभाविक रूप से बडा ही असतोष था। एक दिन बिरजीस कदर को घोडे पर सवार करा बेगम ने तिलगो की सेना को समझाने के लिये बाहर भेजा। ३३ तोपो की सलामी सर की गई, उधर भी तिलगो ने बडे अदब से अपने शासक की बाते सुनी और वचन दिया कि भविष्य मे शहर नही लुटेगा, लेकिन हमारे पेट की सुध ली जाय।

बेगम साहबा के पास कुल चौबीस हजार रुपया था। जो खर्च हो चुका था।

मुफ्ताहुद्दौला से खजाना मांगा गया, उन्होने कहा कि सोने-चादी के असवाव के सिवा खजाने मे और कुछ नही। उनसे चाभिया लेकर वे सोने-चांदी की चीजें गलाकर सिक्के ढालने का आयोजन हुआ। अफसरो ने नवाव माशूक महल का घर लूटा। नवाव के खजाने का भेद सात फीसदी कमीशन पाने की लालच मे भेदियो ने मम्मू खा को वतला दिया। रात में मम्मू खाँ, राजा जयलाल, युसुफ खाँ, हैदर खाँ आदि नवाव के घर गये। एक सहनची खोदी गई, पाच लाख रुपया निकला। इसमे से कुछ सरकार मे पहुँचा, कुछ मम्मू खाँ के घर पहुँच गया।

सैयद कमालुद्दीन ने मम्मूखाँ पर लूट का इल्जाम लगाया है। कमालुद्दीन के अनुसार मम्मू खा ने तिलगो की लूट को इस रीति से वढावा दिया कि वे लूट का धन सरकार मे जमा करते रहें। एक दिन तिलगे नवाव मुमताजुद्दौला के यहा से से पचास हजार का माल लूट लाये और सरकार मे जमा कर दिया। नवाव अफसर वहू का मालमता लुटा, शहर के रईस लूटे गये, शाही वेगमात ने तिलगो द्वारा सताये जाने की शिकायत मम्मू खाँ से की, मगर उन्होने ध्यान न दिया।

इस प्रकार नगर के एक वर्ग मे असतोप वढ़ रहा था।

मम्मू खाँ सन् १८५७-५८ का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण व्यक्ति है। अग्रेजो ने उसके और वेगम के सवध मे वहुत कुछ लिखा है। शेख तसद्दुक हुसैन साहव लखनऊ और अवध के मुस्लिम इतिहास के अधिकारी विद्वान माने जाते है, उन्होंने भी कुछ ऐसा ही सकेत किया है। परन्तु लखनऊ के कुछ पुराने परिवारो के वशज इस वात को वहुत ग़लत भानते हैं। उनका कहना है कि वेगम साहवा का चरित्र वेदाग था। उस जमाने मे उन्हें तरह-तरह से वदनाम किया जा रहा था। लखनऊ मे आलमवाग़ की लडाई के सुप्रसिद्ध वीर शहीद, भटवामऊ के राजा नवी वख्श के वशज राजा रज़ा हुसैन खाँ तो इस वात से किंचित उत्तेजित हो उठे थे। कहने लगे. "साहव, क़ौम की वदक़िस्मती से उस जमाने के सही हालात पर रौशनी डालने लायक रिकॉर्ड अव नही रहे। कोई कुछ भी कह सकता है। हमारे खानदान का उन दिनो की तवारीख से चूंकि वडा ताल्लुक रहा है, मेरे दादा नवी वख्श खा और उनके दोनो भाई तजम्मुल हुसैन खाँ, काजिम हुसेन खाँ—तीनो ही गदर मे शरीक हुए थे, इसलिये हमारे खानदान मे उस जमाने की रवायतें चली आ रही हैं। मेरे चचा ने तो उस ज़माने का हाल भी लिखा है, मैंने अपने वचपन मे यह तो ज़रूर सुना था, कि मम्मू खाँ वेगम साहवा के वडे मुँहचढे थे, और इसी वजह से दुश्मनो ने ग़लत खवरें उड़ा रक्खी थी।"

यह होते हुए भी मम्मू खा के सबध मे मेरी धारणा अवतक भी कुछ अच्छी नही वॅध पाई। मम्मू खा अव तक वेगम के प्रति वफादार रहे, जाहिरा तौर पर यह वात साफ है पर उस वफादारी के साथ-साथ वे अनुचित रूप से अपने को भी महत्व दे रहे थे। उन्होने अपनी अहता वेगम के अर्थात् स्वदेश के हितो पर भी अनुचित रूप से लादी है। वे पढे-लिखे दूरदेश हरगिज नही मालूम पडते। वेग़म के मुँहचढ़े होने के दो कारण समझ मे आते हैं, एक तो वे फौज़ी पार्लियामेण्ट और सरकार-ए-विरर्जीसी के वीच की महत्वपूर्ण कडी थे, दूसरे सरकार को लडाई चलाने के लिये येनकेन प्रकारेण रुपया लाकर दे देते थे। दरवार के अमीरो पर उनसे अधिक सम्भवत राजा जयलाल सिंह का प्रभाव था। गदर के वाद अग्रेजी हुकूमत ने मम्मू खा और राजा जयलाल सिंह पर मुकदमे चलाये। मम्मू खा का वयान लिया गया था। वह सरकारी फाइलो मे सुरक्षित है। मम्मू खा का वयान उनकी ढुलमुल यकीनी का परिचय देता है। राजनैतिक व्यक्ति के लिये उचित सूझवूझ और गहरे विचारमथन का उनमे अभाव नज़र आता है।

रुपये पैसे का अभाव योग्य और विश्वस्त सलाहकारो मे पारस्परिक फूट, फौजी सगठन मे खीचतान, शिया-सुन्नी समस्या, शहरी शासन मे ढीलढाल और प्रजा मे भयजनित अस्थिरता, इस सवके साथ रेज़िडेंसी की लडाई चल रही है और जिसे चलाते रहना ही आन की वात है। ऐसी विषम और निराशाजनक परिस्थिति मे भी नित्य नये प्राण फूँकनेवाली शक्ति के मुझे दर्शन न होते यदि मैंने अवध मे जगह-जगह वेगम के आने, विशेपरूप से महादेवा की सामन्त सभा मे सवको अपने भापण से उत्तेजित कर देने की वातें न सुनी होती। वेगम हज़रत महल ने केवल मम्मू खा, मौलवी साहव, जनरल साहवान, सूवेदार साहवान के भरोसे वैठे रहना अक्लमन्दी न समझा। उन्होंने विभिन्न इलाको के नाज़िमो, चकलेदारो को सगठित किया, प्रमुखतम हिन्दू सामन्तो का सहयोग प्राप्त किया। इनकी सेनाओ का वरावर लडने के वास्ते आते रहना फौज़ी सगठन को भी एक वने रहने की प्रेरणा अवश्य देता था। मौलवी अहमदुल्ला शाह भी आपसी दिलशिकनी भूल कर अपने जौहर दिखलाने के महा आवेश मे आ जाते थे। यह सच है कि यदि कोरा 'जेहाद' होता तो एक वार प्रवलतम होकर भी उसे तुरत ही मिटना पडता। मौलवी अहमदउल्ला शाह के चरित्र का राष्ट्रीय विकास ही तवसे आरम्भ होता है जवसे वे स्वदेश रक्षक हिन्दू सामतो, विशेप रूप से राणा वेणीमाधव वख्श के सम्पर्क मे आते हैं। वैसवारो के प्रमुख राणा वेणीमाधव वख्श, रैकवारो के प्रमुख हरदत्तसिंह

गोंडा के राजा देवी बख्श सिंह विसेन, जनवार, अहिवन, गौड कनपुरिया आदि अवध के समस्त क्षत्रिय सामन्त मण्डल का सहयोग प्राप्त कर लेना आसान वात न थी , खास तौर पर जब कि हाल ही मे अयोध्या मे जेहाद हो चुका था। इन सामन्तो मे जो वाद मे अग्रेजो से मिल गये, छुटभैये किस्म के लोग थे , जो वडे-वडे सर्दार थे वे नेपाल के जगलो तक वेगम के साथ गये। केवल इस वात से ही वेगम हज़रत महल के व्यक्तित्व पर पूर्ण प्रकाश पड जाता है।

अपनी डायरी मे सर विलियम रसल ने एक वाक्य लिखा है . "अपने वेटे के हितो की रक्षा के लिये उन्होने सारे अवध को उत्तेजित कर दिया है, और मुखिया लोगो ने उसके (वेटे के) प्रति वफ़ादार रहने की क़स्में खाई है।"

मैं सौ वर्ष पुराने और आधुनिक दृष्टिकोण के अन्तर को अच्छी तरह मानते हुए भी यह मानने को तैयार नही कि केवल विरजीसक़दर का राज सिंहासन वचाने के निष्काम भाव से ही सारे सामन्त और नाज़िम चकलेदार 'शरणम् गच्छामि' वोलते हुए चले आये होगे। एक स्त्री, भले ही वह कितनी भी चतुर क्यो न हो, केवल अपने वेटे या नजरवन्द पति के नाम पर वफादारी की भावना नही जगा सकती। जवतक सामूहिक स्वार्थ की समस्या न हो, समूह के स्वाभिमान का समान प्रश्न न हो तव तक ऐसा सगठन नही हो सकता जैसा अवध मे वेगम हजरत महल के द्वारा किया गया था। हमे यह भी नही भूलना चाहिये कि भय और पारस्परिक शकाओ के उस प्रलयकाल मे एक स्त्री द्वारा इतनो का अटूट विश्वास प्राप्त कर लेना साधारण वात नहीं है।

उन्हे खानगी का टीका लगाये ही सही, मगर वेगम हज़रत महल किशोरावस्था से मिर्ज़ा वाजिद अली की हुईं , पर्दे के अदव कायदे से वे भी उसी तरह वँधी थी जैसे दूसरी वेगमें, हर मुसलमान स्त्री वँधी थी। उनका पर्दे से वाहर आना खतरे से खाली नही था। वेचारी के पास कुलीनता का सार्टीफिकेट भी नही था। यो ही वदनामी मे कसर न रही, अगर एक भी कदम सचमुच डगमगा जाता तो कही की न रहती। किन्तु वेगम के सामने एक स्पष्ट उद्देश्य था, उसके पीछे खरे विद्रोह का तप था, उचित सूझवूझ थी। वाजिदअली शाह की वेगम हज़रत महल हर्गिज़ पर्दा-प्रथा तोडकर वाहर नहीं निकल सकती थी, किन्तु वेगम आलिया—राजमाता हज़रत महल पर्दे की झूठी क़ैद से वाहर निकलने लायक आत्मविश्वास से कवच-मंडित, पूर्ण सुरक्षित थी। गदर के दिनो मे वेगम की आयु अधिक से अधिक छव्वीस-सत्ताईस की रही होगी। भरे यौवन मे राजमाता का गौरव पद सम्हालने

वाली देवी प्रणम्य है। वलभद्र सिंह के 'जगनामे' मे वेगम के सबध मे प्रकट हुई कवि की श्रद्धा वास्तव मे तत्कालीन जन-मन की श्रद्धा है।

रसल लिखता है "वह अपने वादशाह पति से अच्छी 'मर्द' थी।" श्री सुन्दर लाल ने जॉर्ज विकर्स की सन् १८५८ ई० की छपी पुस्तक के आधार पर 'भारत मे अग्रेजी राज' मे लिखा है, "अवध निवासियो की इस आजादी की लडाई मे वेगम हज़रत महल के अधीन अवध की अनेक स्त्रिया तक मरदाना वेष पहन कर, हथियार वाधकर अपने अलग दल बना कर लड रही थी।" श्री सुरेन्द्रनाथ सेन ने लिखा है कि "कम प्रतिष्ठित पक्तियो की स्त्रियो ने नगर की रक्षा के निमित्त अपने प्राण अर्पित कर दिये।" उन्ही की पुस्तक मे गॉर्डन एलेक्ज़ेंडर का एक उद्धरण दिया गया है कि सिकदर वाग की लडाई मे अनेक हब्शिनें भी लड रही थी। वह लिखता है "वह जगली विल्लियो की तरह लड रही थी और उनकी मृत्यु हो जाने से पहले यह पता ही न चल सका कि वे औरतें थी।" सिकदर वाग मे पीपल के वृक्ष से एक स्त्री ने अनेक गोरो को मार गिराया और अत मे स्वय भी गोली से ही मरी। लखनऊ के पतन के वाद एक जुलजुल वुढिया लोहे के पुल के पास चीथडे वटोरते नजर आया करती थी। कुछ दिनो वाद वह मरी पाई गई। जाच होने पर पता लगा कि वह वारूद से कोई सुरग उडाने आई थी, पलीता अधजला हाथ मे ही रह गया और वह किसी कारणवश स्वय ही मृत्यलोक से उठ गई।

वेगम आलिया ने भी रानी लक्ष्मी बाई के समान स्त्रियो का सैनिक सगठन बनाया था। महलो की बादियाँ उनकी निगरानी मे कवायद इत्यादि करती थी और उनकी शागिर्द कहलाती थी। स्त्री जासूसो का अच्छा सगठन भी उनके द्वारा किया गया था। इस प्रकार आपसी फूट की निराशाजनक स्थिति मे भी जन-जन की क्राति-भावना को अवध मे पौने दो वर्ष तक जगाये रखना वेगम का ही काम था।

सत्तासी दिन के घेरे के बावजूद हिन्दुस्तानी लोग हर तरह से टूटे हुये मुट्ठी भर गोरो को हरा न सके। काश कि वेगम ने सैनिक शिक्षा भी पाई होती तो वह तमाम मर्द सेनापतियो से कई गुना अच्छी कमाडर साबित हुई होती।

वेगम नाना और तात्या से भी क्रान्ति के सिलसिले मे वरावर मिलती-जुलती रही हैं। कोई आश्चर्य नही जो उन्होंने नाना से उनकी मुहबोली बहन छबीली की स्फूर्ति-दायनी बातें सुनी हो। आडे समय मे क्रान्तिकारी एक दूसरे के व्यक्तित्व से प्रेरणा लेकर ही अपने व्यक्तित्व का विकास करते हैं।

जुलाई, अगस्त और आधे सितम्बर तक तूफानी समुद्र मे सल्तनत की झझरी नाव लेकर भी बेगम बडे साहसपूर्वक आगे बढती रही। मीर फिदाहुसैन कप्तान उनके भाई मुहम्मद हुसैन नाजिम, अब्दुल हादी खा, कुमेदान मुहम्मद मिर्ज़ा, शरफुद्दौला, हिसामुद्दौला—सभी बेगम से ही नया बल प्राप्त कर आपसी शिकायतो को नज़र-अदाज़ कर स्वतन्त्रता सग्राम मे आगे बढे। राजा जयलाल सिंह ने बडा साथ दिया। जब हैवलाक की सेनायें उन्नाव जिले मे विजय सिद्ध करने लगी और सूचना पाकर तिलगे लखनऊ शहर की नाकेबन्दी छोड कर भागने लगे तब राजा जयलाल ने यह देख अपना पहरा मुकर्रर किया। इस बीच रेज़िडेंसी पर ज़ोरदार हल्ले होते ही रहे।

२१ सितबर को हैवलाक और औटरम की सेनायें लखनऊ के लिये चली। मगरवारा और बशीरत गज मे विजय-लाभ करते हुए अग्रेज सई नदी के किनारे बनी मे पहुच गये और २३ तारीख को लखनऊ की ओर बढ़े। शहर मे घबराहट फैल गई। उनमे कायरता के बजाय कर्म प्रेरणा भरने के लिये शहर मे मुनादी की गई कि अग्रेज़ जीतेंगे तो रिआया को ईसाई बनायेंगे। पोस्टर जगह-जगह चिपकाये गये कि यदि अगेज जीते तो स्त्री-पुरुष-बच्चे किसी को भी जीता नही छोडेंगे, दिल्ली, मेरठ, कानपुर सब जगह इन्होने प्रजा की भली दुर्दशा की है।

तिलगो को सम्भवत वेतन नही मिला था अथवा किसी और कारण से उन्हें सरकारी व्यक्तियो से बडी शिकायत थी। वे लडने तो जा रहे थे पर सरकार-ए-बिरज़ीसी के प्रति असतोष लेकर। पानी ज़ोरो का बरस रहा था। सेनाओ मे पूरा जोश नही था। मम्मू खा और जनरल हिसामुद्दौला बेगम के आग्रह से तिलगो का हौसला बढाने के लिये एक गाडी पर सवार हो कर गये। मीर वाजिद अली से भी साथ चलने को कहा, वे बोले कि हम तिलगो की गालियाँ सुनने नही जायेंगे, अगर लडने के लिये जाते हो तो साथ देने को तैयार हैं।

सैयद कमालुद्दीन के अनुसार गाडी पर जाते हुए मम्मू खा और जनरल हिसामुद्दौला ने तिलगो की इतनी गालियाँ सुनी कि भाग कर एक मस्जिद मे बैठ रहे।

राजा रज़ा हुसैन खा, भटवामऊ ने मुझे बतलाया था कि उनके तीनो दादा तजम्मुल हुसैन खा, नबी बख्श खाँ और काजिम हुसैन खाँ भोजन करने बैठे थे कि बेगम साहबा ने आकर कहा "इम्तहाने सर फरोशी का वक्त आ पहुँचा है और तुम लोग घर मे बैठे हो। क्या जब गोरे मेरे झोटे नोचैंगे तब जाओगे ?" तीनो

भाई दस्तरख्वान से उठ खडे हुए। नवाब विरजीस कदर नवीवख्श खाँ को दस हजार रुपये देने लगे जिसे उन्होने लेने से इनकार कर दिया।

अयोध्या के राजा मानसिंह भी अपने नौ हजार सिपाहियो के साथ वडी वहादुरी से लडे ।

आलम बाग मे बडी भीड थी। जनता सिपाही सभी अपने नगर की सुरक्षा के लिये लडने उमड आये थे। पानी भी वडे जोर से वरस रहा था। दोनो ओर से तोपो की करारी मार चल रही थी, मुंह-मेल लडाई हो रही थी। वेगम हज्रत महल को चैन नही था। शहर मे चारो ओर जा-जाकर सर्दारो के उत्साह जगा रही थी। सरफराज वेगम लखनवी ने कलकत्ते की अख्तर महल को पत्र मे लिखा है "मैं नही समझती थी कि हज्रत महल ऐसी आफत की परकाला है। खुद हाथी पर वैठ कर तिलगो के आगे-आगे फिरगियो से मुकाबला करती है।" धन्य है उसकी स्त्री के जीवट को! हज्रत महल से सचमुच राजमाता के पद गौरव की प्रतिष्ठा बढ़ी है। उनकी प्रेरणा और भयानक शत्रु का सामना सैनिको मे अद्‌भुत उत्साह भर सका, वे भूख, प्यास, आपसी शिकायतें आदि सब कुछ भूल कर अपनी एक-एक इच भूमि के लिये लड रहे थे।

अग्रेज जीत गये। रेजिडेंसी मे पहुँच गये। इसके बाद तो नगर मे स्थित स्वदेशी सेनाओ को हताश हो जाना चाहिये था, पर लाख गडबडिया चलने के बावजूद ऐसा न हो सका। एक वार अग्रेजो को रेजिडेंसी छोड कर निकल जाने मे ही अपना कल्याण दिखाई दिया। बेगम के तूफानी दौरो और अवध भूमि के भारतीय वीरो की राष्ट्रीय भावना ने चारो ओर से सिमट कर अपनी राजधानी को शक्ति-पुज बना दिया। अनेक राजा सरकार-ए-विरजीसी से अपनी सेना का खर्च तक नही माँगते थे।

गदर मे मैं अपनी कमज़ोरियो को तो यथामति सतर्क हो पहचानता और आज तक अनुभव भी करता चल रहा हूँ, परन्तु उस काल मे मुझे अपनी ऐसी विशेषतायें भी कम नज़र नही आती जिन्हें पाकर किसी भी काल मे हर राष्ट्र गौरव का अनुभव करेगा। अवध को तो मैंने देगची के एक चावल की तरह टटोला है, जो यहा है वह भारत देश मे है। भारत की सास्कृतिक एकता इस प्रकार की है कि अपनी विशेपताओ को लेकर उसका कोई भी भाग पूर्णरूप से स्वच्छन्द नही। यह राष्ट्रीयता ही अब तक इस महाद्वीप-से विशाल देश को बचाये हुये है। ऐसी असम्भव-सम्भव सुन्दर पृष्ठभूमि के साथ भी यहा राजनैतिक एकता बार-बार

भग हुई, यह और वात है। यदि मेरे पास शक्ति और साधन होते और थोड़े से स्थानो तक ही पहुँच पाने के बजाय गदर के पूरे क्षेत्र मे दौरा कर सकता तो मेरा विश्वास है, हर जगह मुझे ऐसी ही स्फूर्ति मिलती। स्वाभिमान और स्वतत्रता के लिये होने वाले युद्ध मे हिंदू मुसलमान दोनो ही अपने अन्दर से अनेक उदात्त वीर नायक-नायिकाओ को, राष्ट्रीयता के उगते हुए नये रूप और स्वतत्रता की रक्षा के लिये, राष्ट्र को प्रदान कर रहे थे।

गुलामहुसैन की मस्जिद के नीचे अग्रेजो से जम कर लडाई हो रही थी। नवी वख्श खा के दोनो भाई सख्त घायल हुये। लोगो ने उनसे कहा तो बोले "ये क्या खवर सुनाने आये है? लडाई मे मरने-मारने और घायल होने के सिवा और होता ही क्या है?" नवीबख्श खा और ठाकुर अमरसिंह दोनो साथ-साथ शहीद हुए। नवी वख्श खा की माता जीवित थी। जिस समय उनके तीन वेटे लडाई के मैदान से उनके सामने लाये गये तो तीनो ही मुर्दा लगते थे। नवीवख्श खाँ का शव लाया गया था और तजम्मुल हुसैन खा तथा काजिम हुसैन खा वेहोशी की हालत मे आये थे। तीनो बेटो को देखकर वीर माता बोली· "खुदावन्दा, शुक्र है तेरा कि ये लोग लडभिड कर मरे और नाम रख लिया। मैं अपना दूध वख्शती हू।"

मार्च, सन् १९५८ तक घरेलू कमजोरियो के बावजूद सघर्ष चलता रहा। १८ मार्च को वेगम हज़रतमहल तथा २१ मार्च को मौलवी अहमदुल्ला शाह अग्रेजो से हार गये, एक - एक इच भूमि के लिये जम कर युद्ध हुआ, अग्रेजो द्वारा लिखी गई पुस्तको तक मे भारतीय वीरता के चित्र उभर कर सामने आते है।

सुकवि वधुवर चद्रप्रकाश सिंह जी के परनाना अतिम युद्ध मे सम्मिलित हुये थे। कुछ वर्ष पहले ही उनका देहान्त हुआ। वे वतलाया करते थे कि "अग्रेजो की लाशो पर फिसल-फिसल कर हम लोग आगे वढते जाते थे। सम्मुख रण मे अग्रेज कभी हमारे मुकावले मे ठहर नही पाते थे। हाँ, उनकी तोप-वंदूकें वढिया और जवर थी, उनसे हमारा वस नही चलता था। वेगम को नेपाल तक जाके छोडा। विदा करते हुए वेगम रोने लगी, कहा, अव हमारा अपना ही ठिकाना नही रहा, तुम लोग जाओ।" चद्रप्रकाशसिंह जी के परनाना और उनके चचेरे भाई माधव सिंह जी और कालिकासिंह जी नवाव विरजीसकदर के अग रक्षक थे। उन्हें जो वर्दी मिली थी उसे अन्त तक वडे-वडे अवसरो पर शान से पहनते थे।

वेगम हज़रत महल लखनऊ से निकल कर अपने पुत्र सहित गुरुवख्श सिंह रैंकवार के भिठौली गढ मे रही और फिर रैंकवारो के मुखिया हरदत्तसिह के

बौंडी गढ मे क्रान्ति का केन्द्र स्थापित कर दिसम्बर ५८ तक वही से सारे सूत्रो का सचालन करती रही। यही मे राजमाता हज़रत महल ने राज राजेश्वरी विक्टोरिया की घोषणा के उत्तर मे जो चेतावनी अपने स्वदेश वासियो को दी थी, वह भारतीय गदर के इतिहास के साथ-साथ चिरकाल तक जीवित रहेगी। सुन्दरलाल कृत इतिहास ग्रन्थ मे वेगम के उक्त एलान का बहुत सा अश उद्धृत किया गया है। पहले समझता था कि जैसे शासकों के लेखक उनके नाम से मजमून बना देते है, वैसे ही बेगम हज़रत महल के इस एलान को भी किसी और ने उनके नाम से लिखा होगा। परन्तु अब प्रेरणा मूर्ति बेगम के सम्बन्ध मे इतना जान कर बेझिझक तस्लीम कर लूंगा कि उसके एक-एक शब्द बेगम हज़रत महल के बोले हुए है। बेगम ने ऐसी ही बातो से पतन शील सामन्तो को उठाया था। अवध मे जन-जन के अदर जैसे सब कुछ पलट गया था—भारतवासी अपना उद्धार करने के लिये खरे आवेश मे आ गया था। यही कारण है कि विक्टोरिया के एलान के छ महीने बाद तक अवध मे विद्रोह की ज्वाला धधकती ही रही। चार्ल्स बाल लिखता है "मलका विक्टोरिया के एलान के बाद भी अवध के अन्दर आश्चर्य जनक युद्ध जारी रहा। विप्लवकारियो के इन सब गिरोहो के साथ उनके देशवासियो की सहानुभूति थी और इस सहानुभूति से उन्हे इतना अधिक बल और इतनी अधिक उत्तेजना प्राप्त हुई कि जिसका अनुमान भी नही किया जा सकता। ये विप्लवकारी बिना कमसरियट के जहा चाहे जा सकते थे, क्योकि लोग सब जगह उन्हे भोजन पहुँचा देते थे। वे बिना पहरे के अपना असबाब जहा चाहे छोड सकते थे, क्योकि लोग उनके असबाब पर हमला न करते थे। उन्हे सदा अपनी और अग्रेजो की स्थिति का ठीक-ठीक पता रहता था, क्योकि लोग उन्हे घण्टे-घण्टे भर के अन्दर आकर सूचना देते रहते थे। हम उनसे अपनी कोई योजना छिपाकर न रख सकते थे, क्योकि हमारी प्रत्येक खेमे की मेज के इर्द-गिर्द और अग्रेजी सेना के करीब हर खेमे मे उनसे गुप्त सहानुभूति रखने वाले लोग खडे रहते थे। हमारे लिये उन पर अचानक हमला कर सकना एक अलौकिक सी बात थी, क्योकि हमारे चलने की अफवाह, एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य को हमारे सवारो से अधिक तेज़ी के साथ उन तक पहुँच जाती थी।"

बहराइच मे काज़िम हुसैन खा, भटवामऊ जमीदार तजम्मुल हुसैन खा, गोडा के राजा देवीबख्श, बरुवा के ठाकुर गुलाब सिह, महोना के दिग्विजय सिंह, रोइया के राजा नरपत सिह, राणा बेणीमाधव बख्श बहादुर, चरदा के राजा जोत सिह,

चौधरी मुसाहबअली, अनदी कुरमी—सब अपनी-अपनी जगह पर लडते रहे, और जब उखडे तो बौंडी मे आ सिमटे। यह देख लार्ड क्लाइड ने सर होप ग्रान्ट को चन्द्रपुर बुलाया। लार्ड क्लाइड ने नेपाल की सीमा पर चौकस पहरे का प्रबन्ध और इन हारे हुए वीरो को नेपाल की सेना मे खदेडना आरभ किया। लार्ड क्लाइड बहराइच से लडते भिडते बौंडी के निकट पहुँच गया। बेगम, नाना, राणा, आदि क्रान्ति के अमर सेनानियो ने डट कर अगरेजो को युद्ध दान दिया। और जब यहा से पैर उखडे तो दु:ख के साथी तितर-बितर होकर नेपाल की सेना मे निकल गये।

बेगम और उनके साथी अकेले नही भागे थे, उनके साथ कई हजार सेना भी थी। सर होप ग्राण्ट ने अपनी पुस्तक मे सैनिको की सख्या दी है। स्वदेशी दल के वीरो का नेपाल से होकर कलकत्ते पर आक्रमण करने का पूरा विचार था जो बाद मे कारणवश सम्भव न हो सका। इन सिपाहियो की सूची मे इन्‌फील्ड राइफल-धारी सैनिको का भी उल्लेख है। इन्ही नई राइफलो के कारतूसो पर सत्तावनी क्रान्ति की जिम्मेदारी रक्खी गई है। आपद्‌काल मे भारतीयो ने चर्बी के कारतूस मुँह मे खोलकर अग्रेजो को मारा था।

इस सम्बन्ध मे आगरा कालेज के इतिहास राजनीति विभाग के प्राध्यापक डॉक्टर सत्यनारायण दुबे ने मुझे बतलाया था "मेरे मामा श्री जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, जो उबन्नपुर, तहसील बाह, जिला आगरा के निवासी हैं, का कहना है कि आपद्धर्म मे चौका-चूल्हा खत्म हो जाता है। गदर मे हमारे घर के लोग झोले मे रोटी डालकर ले जाते थे और मुँह से चर्बीवाला कारतूस काटकर अग्रेजो को मारते थे।"

नेपाल भागने वाली सेना मे इन्फील्ड राइफलधारी सैनिक तथा डाक्टर दुबे की यह बात सिद्ध करती है कि शत्रु नाश की भावना थोथे धर्म की भावना से सैनिको की निगाह मे बडी थी। अस्तु।

बेगम हजरत महल दो-तीन दिन तुलसीपुर की अचवागढी मे रही, वहां से सोनार पर्वत होकर नये कोट चली गईं। नये कोट मे आसफुद्दौला की बारादरी थी, वही टिकी। लेकिन वहा पहुँचने से पूर्व २७ फरवरी सन् १८५९ को कप्तान निरजन माझी नेपाल के राणा जगबहादुर की चिट्ठी लेकर आये जिसमे यह लिखा था कि हमसे किसी प्रकार की आशा न रखिये और अगरेजो से मेल कर लीजिये। मम्मू खा ने लिखा "न हमे आपकी मदद चाहिये और न हम अगरेजो से मेल

करेंगे।" इस पर राणा का उत्तर आया कि तव उधर से अगरेज मारेंगे इधर से हम, और इसके वाद राणा ने इन लोगो का रसद पानी रुकवा दिया। परिस्थिति देखकर वेगम हज़रत महल ने समझदारी से काम लिया, वे पीनस मे सवार होकर पहले अकेले नये कोट गईं। उनके पास जो अत्यन्त वहुमूल्य रत्नालकार थे वे सुना जाता है कि नेपाल के राणा जगवहादुर को भेंट मे दिये। यह भी लिखकर दिया कि सिपाहियो ने मेरे वेटे को ज़वरदस्ती गद्दीनशीन कर दिया। मेरा और मेरे वेटे का अग्रेजो से बैर नही।

परन्तु उन्होंने अग्रेजो के वार-वार आग्रह कर उन्हें तथा नवाव विरजीसकदर को वुलाने और पूर्ववत् मान सम्मान और पेंशन देने के प्रस्ताव को ठुकरा कर नेपाल मे शरणागत होकर रहने मे अपना गौरव समझा। नेपाल राज की ओर से उन्होंने पाँच सौ रुपये महीना पेंशन भी लेना स्वीकार किया।

हज़रत महल ने काठमाण्डू मे ही एक मकान ले लिया और साधारण जीवन विताने लगी।

सन् १८६९ ई० मे वही उन्होने अपने पुत्र नवाव विरजीसकदर का विवाह किया। दिल्ली के एक क्रातिदलीय शाहज़ादे मिर्ज़ा दाऊद वेग भी नेपाल के शरणार्थी थे। उन्ही की पुत्री मुख्तारुन्निसा वेगम हज़रतमहल की पुत्रवधू वनी। हज़रतमहल ने उनका ससुराल का नाम महताव आरा बेगम रक्खा। विरजीसकदर के पौत्र मिर्ज़ा कौकबकदर ने मुझे बतलाया था कि विवाह के वाद वेगम साहवा ने अपनी पुत्रवधू को खुफिया तौर पर अपने श्वसुर नवाव वाजिदअली शाह का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिये कलकत्ता भेजा था।

सन् १८७४ ई० मे भारतीय क्राति की यह अमर कान्तिमयी तारिका अपने वेटे बहू और पोते-पोतियो के परिवार को छोड नश्वर जगत से विदा हो गई। बेगम को दैव से ऐसा जीवन प्राप्त हुआ जो आरम्भ से अत तक कटु अनुभवो की कहानी था, परन्तु उस कटुता के अन्दर से उन्होने अपना जो व्यक्तित्व सौंदर्य निखारा वह सदा प्रशसनीय माना जायगा। विद्रोही वही होता है जो अपनी कुण्ठाओ से जडीभूत नही हो जाता। विद्रोह जव सूझ-वूझ से सयुक्त होता है तो क्रातिकारी विचार उदय होते हैं जो व्यक्ति को निरतर अधेरे मे उजाला देते है। ऐसे व्यक्ति व्यक्तिगत जीवन मे दुख भोगने वाले अभागे होकर भी सचमुच सौभाग्यशाली होते हैं—उनके द्वारा इतिहास पलटे जाते हैं।

काठमाण्डू की एक मस्जिद के कब्रिस्तान मे हज़रतमहल के अस्थि-अवशेष विद्यमान हैं। उनकी अमर कीर्ति चारो दिशाओ मे महक रही है।

बिरजीसक़दर के आठ संतानें हुईं—आग़ाजानी, हशमत आरा, शितवत आरा, बद्रक़दर, जमाल आरा, खुरशीद कदर, हुस्नआरा और मेहर क़दर।

सन् १८८७ ई० में नवाब वाजिदअली शाह का कलकत्ते मे देहान्त हो गया। नवाब वाजिदअली इतिहास से अधिक किंवदंतियों के नायक हैं। वे भले और भोले व्यक्ति थे। इसमे सदेह नही कि वाजिदअली और उनके बडे भाई मुस्तफाअली अग्रेज़ो से आरम्भ से ही नाराज़ थे। मुस्तफाअली शीघ्र उत्तेजित हो जाने वाले मुँहफट व्यक्ति थे, इसलिये अग्रेज़ उन्हें गद्दी पर नही बिठलाना चाहते थे। वे असतुलित मस्तिष्क के, राजमुकुट पहनने के अयोग्य ठहराये गये। वाजिदअली अपने भाई की अपेक्षा अधिक गंभीर थे। साहित्यिक और कलात्मक अभिरुचि के भी थे। नये-नये नृत्य के भावो पर रक्षिना नर्तकियो से प्रयोग करवाना, सगीत नाट्य खेलना उनका शौक था। आरभ में, गद्दी मिलने पर उन्होने अग्रेज़ो से उलझने के बजाय अपने घर को सुव्यवस्थित करना उचित मान उसमे मन लगाया। फ़ौज की कवायद आदि भी स्वय करवाते थे। उर्दू के वयोवृद्ध लेखक श्री मुमताज़ हुसैन जौनपुरी ने हुसैनाबाद के पीछे गोमती किनारे का वह मैदान दिखलाया जहा वाजिदअली शाह क़वायद कराते थे। वे रसमग्न होने वाले व्यक्ति थे, अगर अग्रेज़ों ने उनके राजकाज मे हस्तक्षेप न किया होता तो वे शायद बडे योग्य शासक सिद्ध होते। परन्तु जब उन्होंने यह देखा कि अग्रेज भारतीय शासको को कुछ भी नही करने देंगे और भारतीय शासक, वे स्वय, अपने आसपास के वातावरण से विवश हैं तो फिर अपने दूसरे शौक को ही जीवन का ध्येय बना लिया और उसी मे पूरी तरह डूब गये। वाजिदअली शाह लडाई झगड़े से दूर भागते थे, उनका मन कपट शून्य था। इसलिये जब तक वे जीवित रहे बिरजीसकदर उनसे छिप कर मिलने भी न आ सके।

सन् १८९३ ई० में नेपाल मे दरिद्रता और परायेपन से ऊब कर उन्होंने मक्का जाने का निश्चय किया और भारत सरकार से अपने राज्य से होकर गुज़र जाने की अनुमति माँगी। वे दरअस्ल चाहते तो यह थे कि उन्हें भारत मे रहने की आज्ञा मिल जाय, पेंशन भी वे स्वीकार कर लेना चाहते थे? परन्तु यदि यह सम्भव न हो तो बाहर चले जाना चाहते थे।

उनकी पत्नी नवाब महताबआरा बेगम पहले कलकत्ता आई, अग्रेज बहादुर

का रुख समझा तब विरजीसकदर सपरिवार कलकत्ता पहुँचे। उस समय उनके तीन बच्चे जीवित थे। पुत्री जमालआरा वेगम १८ वर्ष की थी, पुत्र खुरशीद क़दर १४ वर्ष के थे और पुत्री हुस्नआरा बेगम की आयु १२ वर्ष थी इनके अतिरिक्त नवाव महतावआरा बेगम उन दिनो गर्भवती भी थी।

नवाव विरजीसकदर और उनके परिवार को अग्रेज़ सरकार ने अपने सदर स्ट्रीट वाले मेहमानखाने मे रक्खा। उसके वाद अपने चचेरे भाई सर मिर्ज़ा जहाकदर की दावत पर अतावाग़ मे रहने गये जो मटिया बुर्ज मे है। विरजीसकदर सरकार से अपने उत्तराधिकार के सवन्ध मे लिखा-पढी चला रहे थे कि परिवार मे इनके विरुद्ध षड्यत्र हुआ। भोजन के लिये बुलाकर ज़हर दे दिया। १३ अगस्त, १८९३ ई० को नवाव विरजीस कदर, उनके वेटे खुरशीद कदर, वडी वेटी जमालआरा बेगम एक साथ दुनिया से उठ गये। पत्नी महताव आरा वेगम और छोटी वेटी हुस्नआरा बेगम दावत मे शरीक नही हुई थी। घर मे खाना भेजा गया था पर गर्भवती ने चिकनाई आदि खाना पसन्द न किया और वेटी भी टाल गई। उन्हे बचना था।

२७ दिसम्बर '९३ को पिता की मृत्यु के तीन-साढे तीन महीने बाद महताव-आरा वेगम की कोख से जाहिदअली मिर्ज़ा मेहरकदर ने जन्म पाया, जिनके द्वारा बेगम हज रत महल का वश आज चल रहा है। मेहर क़दर की बहन हुस्नआरा बेगम सन् १९४९ ई० मे मरी। मेहरकदर विद्यमान हैं परन्तु लकवे से पीडत हैं। उनके तीन पुत्र है . अजुमकदर रौशनअली मिर्जा, कौकब कदर सज्जादअली मिर्जा तथा नैयरकदर वासिफ अली मिर्ज़ा।

वेगम हजरतमहल की अन्य शेष स्मृतियो में उनके घर में अब केवल कुरान शरीफ की एक प्रति है जिसका वे अतकाल में वहुत पारायण करती थी तथा उनकी मोहर आदि कुछ अन्य सामग्री है।

कत्ले आम

श्री रेजिनल्ड रेनॉल्ड्स ने अपनी पुस्तक "व्हाइट साहेब्ज इन इडिया' ने १८५७ मे प्रकाशित होने वाले जॉर्ज वरो के अग्रेज़ी उपन्यास 'रमणी राय' के एक पात्र द्वारा कहलाई गई एक वात उद्धृत की है। उक्त उपन्यास के गोरे नायक से, सेना मे भरती होकर हिन्दुस्तान जाने की प्रेरणा देते हुए कम्पनी वहादुर का रिक्रूटिंग

अफसर कहता है ' "दुनिया का सबसे उम्दा देश है ' उसमे ध्यान न देने लायक दुष्टो का निवास है एकदम जगली गिड़बिड जबान है उनकी कम्पनी अपनी सेना के जवानो से बस यही सेवा चाहती है कि इन दुष्टो को ठोकरें मारो और काट डालो और उनसे उनके 'रुपये' छीन लो—यानी कि उनके चाँदी के सिक्के ।"

यह सम्वाद अवध मे जगह-जगह, लखनऊ नगर मे हर स्वतन्त्रता प्रेमी गाँव, जिले, नगर, कस्बे मे—अग्रेज़ो द्वारा किये गये कत्ले-आम के बर्बरतापूर्ण दृश्यो का रहस्य प्रकट कर देते हैं ।

लखनऊ में अग्रेज़ो के जीतने की खबर गली-गली फैलते देर न लगी । लोग यथासम्भव अपना-अपना माल-मता बाल-बच्चे लेकर घबराहट मे जिधर सीग समाया भाग चले । चोरों-लुटेरो की बडी बन आई । जो शहर मे रह गये उनकी दुर्दशा के दृश्य देख कर शायद भगवान् ने भी उस दिन आँखें मीच ली । केवल सआदतगज लाल दरवाज़ा, जहा महाजन रहते थे और चौक के महाजन जिनको छूट के परवाने मिले हुए थे, हीं बचे, जितनी प्रजा उनके यहा शरण ले सकी वह बची—बाकी कोई गली, मुहल्ला, घर नही बचा जिसे गोरो, सिक्खो और नेपाल की सेनाओ ने न लूटा हो । पडित देवीदत्त शुक्ल की पुस्तक के आधार पर यह विवरण लिखते हुए स्वय मैं भी इस विवरण के सम्बन्ध मे यह कह सकता हूँ कि बात सच है । मैंने बचपन मे गदर की बातें अक्सर सुनी थी । मेरी दादी इलाहाबाद की थी, वे वहा की बातें सुनाती थी, हमारे पडोस मे एक वृद्धा रहा करती थीं, उनके मुँह से भी सुना कि सोधी टोले और हट्टी राम की चढाई पर और जाने कहाँ-कहाँ गोरे घोडे पर सवार बदूकें दागते आये थे । चौक मे तीन जगह परवाने थे, सोधी टोले मे चतुरामल सेठ की हवेली, छोटी काली जी के मदिर के सामने राय विशम्भर नाथ काकाजी की हवेली और वृन्दावन के अपने मदिर के कारण भारत प्रसिद्ध मिर्जामण्डी के शाह जी की कोठी पर । मेरे पितामह के मित्र स्व० राय गौरीनाथ काकाजी आनरेरी मैजिस्ट्रेट ने छोटी काली जी के मदिर के पास रहने वाले एक वृद्ध सज्जन का बडा कारुणिक इतिहास सुनाया था गोरो ने उनके दरवाजे तोड घर मे घुसकर उन्हे और उनके पुत्र को दालान के खम्भो से बांध दिया । स्त्री और एक लडकी कुँए मे कूद पडी, पुत्रवधू अपने पति की गोली झेल कर सौभाग्यवती हो गई, पुत्र भी मारा गया, परन्तु पिता को भोग-भोगने थे, उनके शारीरिक घाव अच्छे हो गये किन्तु मन के घाव लेकर वे मेरे पूरे होश तक जीवित थे । वे गली के लोगो के विनोद की जिन्स बन गये थे । गदर के

बाद उन्होंने चौक बाजार की सूरत नही देखी थी। उन्हें रोज सवेरे मिट्टी की वासी गुडगुडी पर एक चिलम पीकर एक पैसे की नई गुडगुडी खरीदने के लिये सात वजे घर से निकलना पडता था, एक फर्लांग जाने और आने में उन्हे ढाई तीन घण्टे लग जाते थे। वे घर से निकले और लोगो ने छेडा। कोई-कोई शुरू से ही लाला का मूड न विगाड कर लाला से जैराम जी की करते। उत्तर मिलता। और दो-चार ठडी-मीठी वातें करते, लाला भले-भले रहते, फिर पूछने वाला कहता "वहुत दिनो से लाला चौक मे नही देखा आपको ?" इतना कहते ही कहने वाला तुरत बीस कदम दूर भाग जाता था क्योकि लाला फिर लाठिया पटकते, गालिया वकते थे। 'लाला चौक चलोगे' उनकी चिढ थी, कहने वालो को अग्रेजो को कदम-क़दम पर गालिया सुनाते उनकी साँस फूल-फूल उठती थी। लाला ने अपने खण्डहर घर की हर कोठरी, दालान और छतें अपनी नित्य की गुडगुडियो से पाट रक्खी थी।

वडी मनमानी हुई। हज़रत अव्वास की दरगाह में कई सौ पर्दानशीन औरतें जा छिपी थी। गोरो ने इनके साथ वडा अत्याचार किया। वाद को कोनिया साहव ने सबको एक-एक रुपया दे, डोलियो पर विठला कर भेज दिया। कई सौ धोवी वहा जमा थे, वे लुटे, दरगाह का सारा सामान लुटा। सोने के अलम महाजनो ने गोरो से रुपये तोले के हिसाब से खरीदे। दरगाह का ख़ास अलम तेरह सेर सोने का था। लखनऊ की लूट से अग्रेज़ो ने विलायत मे अपने पैतृक ऋण चुकाये, जायदादें खरीदी।

और यहा के प्रमुख व्यक्तियो में शरफद्दौला इब्राहीम खा वेचारे छब्बे वनने चले और दुवे भी न रहे। वेगम की हार के वाद उनके साथ न गये, उनके घर ठहरी तो कहा सब जानते हैं कि मैं अग्रेज़-परस्त हो गया हूँ। उधर अग्रेज़ो की चिट्ठिया आईं तो जवाब नदारद। वे जाने क्या सोच रहे थे। अत मे तिलगो के हाथ बुरी मौत मरे।

मम्मू खा धोखा देकर नेपाल से पकडवा मँगाये गये। उन पर मुकद्दमा चला। अपने वचाव मे उन्होंने अग्रेज़ो की चिट्ठिया पेश की और कहा कि कैसरवाग मे जो अग्रेज़ वदी वच गये वे मेरे ही हुक्म से वचे। कई महीने मुकद्दमा चला फिर फाँसी का आदेश हुआ। अपील करने पर काला पानी जाने की रिआयत हुई। अडमन मे मम्मूखा ने अपने निर्वाह के लिये दूकान कर ली। वही उनकी मृत्यु हुई।

राजा जयलाल सिंह नुसरतजग जो लखनऊ मे अधिकतर राजा जियालाल के नाम से प्रसिद्ध हैं कायस्थ थे। वे राजा दर्शन सिंह गालिवजग के पुत्र थे। वे

अपने समय के वडे योग्य शासक माने जाते थे। उन्हें शाही मे कलक्टरी का पद मिला था। सरकार विरजीसी मे भी उनका वडा मान था, फौजी पचायत भी उनका आदर करती थी। २४ सितवर १८५७ के अग्रेज-वध के अपराध मे उन्हें १ अक्टूबर १८५८ को उसी जगह फाँसी दी गयी जहा ओर साहव का वध किया गया था। राजा जयलाल सिंह नुसरतजग ने अपने हाथ से फाँसी का फदा अपने गले मे डाला और वतन के नाम पर हसते-हसते शहीद हुए।

अवध के अन्य ज्ञात-अज्ञात शहीदो तथा अवसरवादियो का इतिहास यहा छोड रहा हूँ। उनके प्रति किसी प्रकार की अवज्ञा का भाव मुझमे नही, जिस धारा को देख रहा था उसे अव अपने अन्तर मे पा गया हूँ। केवल एक वात को लेकर प्रकट मे विचार करने की इच्छा होती है, नेपाल मे वेगम ने वयान देकर गदर का सारा भार सिपाहियो पर डाल अपने को तथा अपने वेटे को वेलाग कर लिया। उस बयान से वात की शक्ल ये हो गई कि विरजीसकदर और वेगम ने सिपाहियो के भय से गदर मे भाग लिया था। यदि विरजीसकदर की सरक्षिका होकर वेगम चुपचाप वैठी रहती तो यह अवश्य कहा जा सकता था कि राजमाता और उनका वेटा सिपाहियो की वदूको से घिरकर उसकी मर्जी के अनुसार काम कर रहे थे। वस्तुत. ऐसी वात नजर नही आती। सिपाहियो का आतक अवश्य था फिर भी वेगम उनके बीच मे कभी व्यक्तित्वहीना कगाल होकर नही रही। वेगम का नेपाल वाला वयान उनके क्राति से सवधित पूर्व इतिहास को छिपा नही सकता। मल्का विक्टोरिया के घोपणा-पत्र के उत्तर मे उनका ऐलान इतिहास की एक वेमिसाल शानदार घटना है। उससे वेगम का चरित्र वहुत ऊँचा उठता है, परन्तु उसके वाद यह वयान उन्हें उसी प्रकार गिराता भी है। वेगम का ये रुख यह देख कर और भी वुरा लगता है कि नानाराव पेशवा ने नेपाल से ही सर होप ग्रान्ट को वडा शानदार पत्र लिखा था। उन्होने लिखा कि "आपको हिन्दुस्तान पर अधिकार करने का तथा मुझे दण्डनीय घोपित करने का हक ही क्या है? हिन्दुस्तान पर राज करने का अधिकार आपको किसने दिया? क्या आप फिरगी लोग वादशाह है और हम अपने ही देश के अदर चोर हैं?" नाना के इस उत्तर मे भी क्या वेगम को प्रेरणा नही मिली होगी? मेरी समझ मे वेगम हज़रत महल या तो एकलौते वेटे के मोहवश अथवा छिपे तौर पर वाजिदअली शाह का कोई नदेश पाकर इस प्रकार पीछे हट गई। उनका अकेले नये कोट जाकर नेपाल के कप्तान निरजन माझी से वातें करना और तत्पश्चात् इस प्रकार का पत्र लिखकर देना

अपने पीछे की किसी छिपी कहानी का सकेत देता है। ये लोग नेपाल से कलकत्ते पर हमला करने वाले थे , नेपाल की घरेलू राजनीति भी उस समय मजबूत आधार पर नही थी, राणा जगवहादुर को स्वय अपनी ही सेना मे विद्रोह नजर आ रहा था। ऐसे समय मे बेगम को तोडने के लिये सम्भवत वह धमकी दी गई हो कि कलकत्ते पर हमला करते ही वाजिदअली शाह और विरजीसकदर मार डाले जायेंगे—और यह धमकी काम कर गई हो। आखिरकार वेगम स्त्री थी और दुखियारी माँ थी। फिर भी यह दाग लगने के वावजूद वेगम हज़रत महल का स्थान इतिहास मे सदा गौरव के साथ सुरक्षित रहेगा।

गदर मे दूसरी मार्के की वात यह दिखलाई देती है कि उसके प्रमुख नेताओ मे एक ओर जहा अस्सी वर्ष के कुँवर सिह, साठ-पैंसठ के राणा वेणीमाधव, मौलवी साहव, वहादुरशाह 'ज़फर,' तात्या आदि वडे वूढे थे वहा ही अठारह वर्ष के वलभद्र सिह, बाईस वर्ष की लक्ष्मीबाई, छब्बीस-सत्ताइस वर्ष की हज़रत महल और तेंतीस वर्ष के नाना साहव आदि ताज़े खून वाले नौजवान भी थे।

गदर मे इस प्रकार हम देखते है कि वे तमाम खूबिया जो किसी भी राष्ट्र को ऊँचा उठा सकती हैं, हमे भी वहुत वल दे रही थी। अस्सी वर्ष का वृद्ध हो अथवा अठारह वर्ष का नवयुवक, दोनो एक ही महाभाव से वधे, एक ही उद्देश्य के लिये अपना सर्वस्व अर्पण कर रहे थे।

हमने भारतीय इतिहास की एक यह विशेषता भी पहचानी कि वाहरी शत्रु का दबाव पडने पर देश सगठित हो उठने का प्रयत्न वरावर करता है, परन्तु वह सगठन कभी पूरी तौर पर स्थायी नही हो पाता। यह अजीव बात है कि सास्कृतिक रूप से भारत सदा से सुसगठित है। व्यापार की दृष्टि से भी देश को एक-सूत्रता स्वयसिद्ध है, और यह काफी पुराने ज़माने से चली आ रही है। अपेक्षाकृत काफी नये ज़माने यानी शेरशाह सूरी के समय मे 'ग्राण्ड ट्रक रोड' का बनना इसी एक-सूत्रता का परिचय देता है। परन्तु सास्कृतिक और आर्थिक दृष्टि से जुडे रहने के वावजूद राजनैतिक दृष्टि से हम आपस मे कटे-कटे रहे। जब-जब ऐतिहासिक परिस्थितिवश भारत मे विशाल साम्राज्य स्थापित हुए तब-तव किसी वाहरी शत्रु की हमला करने की हिम्मत न हुई। और इसीलिये मैं सोचता हूँ कि भारत की फूट का कारण मुख्य रूप से उसके राजे, सामन्त ही रहे हैं। इनके राजसी जोम ने ही देश को एक राजनैतिक राष्ट्र के रूप मे कभी पनपने न दिया और परस्पर मे फूटे हुए राजे सामन्त किसी बडे उद्देश्य के अभाव मे केवल व्यक्तिगत सुख और

वैभव लाभ करने की चिन्ता में ही रह गये। इससे देश की आम जनता और व्यापारी वर्ग पर बराबर अत्याचार भी होते रहे। यह राजसी जोम ही जाति-पाँति की छोटाई-बडाई की समस्या और तरह-तरह के षड्यन्त्र, अत्याचार, उत्पात बढाता रहा। हमारा देश किसी एक नीति पर नही चल पाया, जहा राजा सामन्त भला और प्रजापालक रहा वहा तो ठीक-ठीक चला लेकिन जिस क्षेत्र को ऐसा सौभाग्य न मिला वह तबाह होता रहा। अग्रेजो के आने से पहले अन्तिम साम्राज्य मुगल सम्राट अकबर द्वारा स्थापित हुआ और औरगजेब के जीवनकाल मे ही वह छिन्न-भिन्न भी होने लगा। १८५७ ई० मे इसी छिन्न-भिन्नता, अराजकता और अशाति से उत्पन्न हुई कुण्ठा सगठन के लाख प्रयत्नो के बावजूद देश को जडीभूत करती रही थी।

यह भी मार्के की बात है कि अग्रेजो के खिलाफ़ लडने के लिये सबसे पहले सिपाही उठे। सामन्तगण सिपाहियो के कारण ही सघबद्ध हुए थे। यह सिपाही सगठन ही देश मे नये युग के आने का परिचय देता है। सिपाही आखिरकार हमारी आम जनता के ही प्रतिनिधि तो थे। और इसीलिये जब हमारे राजे-सामन्त हार गये तब भी जनसाधारण एकाएक चुप होकर न बैठ सका। लखनऊ, उसके आस-पास और अवध मे सन् १८५९ ई० तक अग्रेजो के खिलाफ हो-हल्ले उठते ही रहे।

एक बात यह भी विचारणीय है कि क्या ग़दर होने का प्रमुखतम कारण धर्म—मजहब ही था? मैं तो समझता हूँ कि अग्रेज़ो के खिलाफ हमारी शिकायतो का यह एक बहाना मात्र था। जिन चरबी के कारतूसो के कारण ग़दर होना बतलाया जाता है वे कारतूस ही भारतीयो के द्वारा अग्रेजो के खिलाफ इस्तेमाल किये गये। ब्राह्मण सिपाहियो तक ने आपद्धर्म कहकर चर्बीहि कारतूस मुँह से काटे और शत्रु अग्रेजो को मारा। मेरी दृष्टि मे यह बडी बात है—बडा धर्म है।

अपनी कमजोरियो पर सतर्क दृष्टि रखते हुए भी मैं सत्तावनी क्रान्ति मे अपने पुरखो की खूबियो पर मुग्ध हूँ। सन् ५७-५८ मे एक नये सिरे से बनते हुए राष्ट्र की परम्परागत रूढ कमज़ोरिया हारी—हमारी परम्परागत प्रगतिशील निष्ठा और शक्ति तो उस अग्नि-परीक्षा से विजयिनी सिद्ध होकर ही निकली और गदर के बाद के भारत को नया रूप देने मे समर्थ सिद्ध हुई।

जो हो, युद्ध मे स्वपक्ष के गौरव से भरकर भी युद्ध के दृश्यो से घृणा होती है। इन्सान के पिछले अनुभव यदि भविष्य मे युद्धो की सम्भावना को समाप्त कर

अपने पीछे की किसी छिपी कहानी का सकेत देता है। ये लोग नेपाल से कलकत्ते पर हमला करने वाले थे, नेपाल की घरेलू राजनीति भी उस समय मज़बूत आधार पर नही थी, राणा जगवहादुर को स्वय अपनी ही सेना मे विद्रोह नजर आ रहा था। ऐसे समय मे वेगम को तोडने के लिये सम्भवत वह धमकी दी गई हो कि कलकत्ते पर हमला करते ही वाजिदअली शाह और विरजीसकदर मार डाले जायेंगे—और यह धमकी काम कर गई हो। आखिरकार वेगम स्त्री थी और दुखियारी माँ थी। फिर भी यह दाग लगने के वावजूद वेगम हज़रत महल का स्थान इतिहास मे सदा गौरव के साथ सुरक्षित रहेगा।

गदर मे दूसरी मार्के की वात यह दिखलाई देती है कि उमके प्रमुख नेताओ मे एक ओर जहा अस्सी वर्ष के कुँवर सिंह, साठ-पैंसठ के राणा वेणीमाधव, मौलवी साहव, वहादुरशाह 'ज़फर,' तात्या आदि वडे वूढे थे वहा ही अठारह वर्ष के वलभद्र सिंह, वाईस वर्ष की लक्ष्मीबाई, छब्बीस-सत्ताइस वर्ष की हज़रत महल और तेंतीस वर्ष के नाना साहव आदि ताज़े खून वाले नौजवान भी थे।

गदर मे इस प्रकार हम देखते है कि वे तमाम खूबिया जो किसी भी राष्ट्र को ऊँचा उठा सकती हैं, हमे भी वहुत वल दे रही थी। अस्सी वर्ष का वृद्ध हो अथवा अठारह वर्ष का नवयुवक, दोनो एक ही महाभाव से वधे, एक ही उद्देश्य के लिये अपना सर्वस्व अर्पण कर रहे थे।

हमने भारतीय इतिहास की एक यह विशेषता भी पहचानी कि वाहरी शत्रु का दवाव पडने पर देश सगठित हो उठने का प्रयत्न वरावर करता है, परन्तु वह सगठन कभी पूरी तौर पर स्थायी नही हो पाता। यह अजीव वात है कि सास्कृतिक रूप से भारत सदा से सुसगठित है। व्यापार की दृष्टि से भी देश की एक-सूत्रता स्वयसिद्ध है, और यह काफी पुराने ज़माने से चली आ रही है। अपेक्षाकृत काफी नये ज़माने यानी शेरशाह सूरी के समय मे 'ग्राण्ड ट्रक रोड' का बनना इसी एक-सूत्रता का परिचय देता है। परन्तु सास्कृतिक और आर्थिक दृष्टि से जुडे रहने के वावजूद राजनैतिक दृष्टि से हम आपस मे कटे-कटे रहे। जब-जब ऐतिहासिक परिस्थितिवश भारत मे विशाल साम्राज्य स्थापित हुए तब-तव किसी वाहरी शत्रु को हमला करने की हिम्मत न हुई। और इसीलिये मैं सोचता हूँ कि भारत की फूट का कारण मुख्य रूप से उसके राजे, सामन्त ही रहे हैं। इनके राजसी जोम ने ही देश को एक राजनैतिक राष्ट्र के रूप मे कभी पनपने न दिया और परस्पर मे फूटे हुए राजे सामन्त किसी वडे उद्देश्य के अभाव मे केवल व्यक्तिगत सुख और

परिशिष्ट

(श्री इंतज़ाम उल्ला शहाबी द्वारा संकलित पुस्तक से साभार)

बेगमात-ए-अवध के ख़ुतूत

वाजिदअली शाह तथा उनकी बेगमो के वे पत्र और पत्रांश जिनसे संघर्ष-कालीन लखनऊ के इतिहास पर प्रकाश पडता है।

बेगमो के पास खबरें नौकरो-बाँदियो की प्रेस-ट्रस्ट से आती थी लिहाज़ा उनके खतो मे लखनऊ की सत्तावनी सूचनायें कुछ उलट-पलट कर भी आई हैं, कही ग़लत समाचार भी मिलता है। यह सब होते हुए भी ये पत्र उस समय की तसवीर पेश करने मे बड़ी मदद देते हैं। सौतो की आपसी जलन के चित्र, वाजिद-अली शाह की मनोभावनाए, रोमानियत का वहाव—इन ऐतिहासिक पत्रो की विशेषता बन गई है।

[शैदा वेगम को भेजा गया खास महल का पत्र, २९ रमज़ान, १२७१ हिजरी।]

तूतिये शीरी, तक़रीरे चमन, मूदते बुलबुल, खुशनवीद गुलशन, उल्फ़ते गुचा, मक़सद तुम्हारा हमेशा शगुफ्ता रहे।

इस गर्दिशे इफराक से फूले न फले हम।
ज्यो सब्ज़ा रौंदे उगते ही पाँवो के तले हम।

बहन शैदा वेगम, मेराजी की २९ तारीख सन् १२७१ हिजरी पंजशबे का दिन उम्र भर न भूलेगा जबकि सुल्ताने आलम को जनरल औटरम साहब ने बाप-दादा की सल्तनत छोडने और हुकूमत से दस्तबरदार होने का हुक्म दिया और लखनऊ से हम लोग जुदा हुए, जैसे बुलबुल गुलशन से छूटी, यूसुफ मिस्र से निकले, बू ये गुल चमन से जुदा हुई। पिया जाने आलम का सुकूत और तमाम अमले का हसरत भरी निगाह से देखकर बेकसी के आंसू बहाना, कमाले अदब से रूमाल मे ग़म के मोतियो को समोना, अइज्ज़ा को हिचकियाँ लगी हुई थी। हम आखिरश महरात मे मातम बपा करते हुए सुल्ताने आलम के हमराह रवाना हुए। उस वक्त

दें, तो मानव सभ्यता मे निस्सन्देह एक अभूतपूर्व क्रान्ति आ जायगी। परन्तु जब तक दुर्भाग्यवश ऐसा नही होता तब तक देश पर सकट पडने पर कायर बनकर कुत्ते-बिल्ली की मौत मरने के बजाय हमे मृत्यु के उस रूप को ही सराहना है जिसे हमारे वीर पुरुषाओ ने आत्म-बलिदानो से परम तेजस्वी बनाया है। देश पर मर मिटनेवाले वीरों के सस्मरणो से प्रेरणा लेकर आगे बढनेवाले भारत देश को अपना सिर कदापि न झुकाना पडेगा, वीरो की गाथा और पिछले अनुभव हमारे लिये रक्षा कवच बनेंगे। एवमस्तु।

बन्दौं भरत भूमि अति पावन।

परिशिष्ट

(श्री इंतज़ाम उल्ला शहाबी द्वारा संकलित पुस्तक से साभार)

बेगमात-ए-अवध के ख़ुतूत

वाजिदअली शाह तथा उनकी बेगमो के वे पत्र और पत्रांश जिनसे सघर्ष-कालीन लखनऊ के इतिहास पर प्रकाश पडता है।

बेगमो के पास खबरें नौकरो-बाँदियो की प्रेस-ट्रस्ट से आती थी लिहाज़ा उनके खतो मे लखनऊ की सत्तावनी सूचनायें कुछ उलट-पलट कर भी आई हैं, कही गलत समाचार भी मिलता है। यह सब होते हुए भी ये पत्र उस समय की तसवीर पेश करने मे बडी मदद देते हैं। सौतो की आपसी जलन के चित्र, वाजिद-अली शाह की मनोभावनाए, रोमानियत का बहाव—इन ऐतिहासिक पत्रो की विशेषता बन गई है।

[शैदा बेगम को भेजा गया खास महल का पत्र, २९ रमज़ान, १२७१ हिजरी।]

तूतिये शीरी, तकरीरे चमन, मूदते बुलबुल, खुशनवीद गुलशन, उल्फते गुंचा, मक़सद तुम्हारा हमेशा शगुफ्ता रहे।

इस गर्दिशे इफराक से फूले न फले हम।
ज्यो सब्ज़ा रौंदे उगते ही पाँवो के तले हम।

बहन शैदा बेगम, मेराजी की २९ तारीख सन् १२७१ हिजरी पँजशबे का दिन उम्र भर न भूलेगा जबकि सुल्ताने आलम को जनरल औटरम साहब ने बाप-दादा की सल्तनत छोडने और हुकूमत से दस्तबरदार होने का हुक्म दिया और लखनऊ से हम लोग जुदा हुए, जैसे बुलबुल गुलशन से छूटी, यूसुफ़ मिस्र से निकले, बू ये गुल चमन से जुदा हुई। पिया जाने आलम का सुकूत और तमाम अमले का हसरत भरी निगाह से देखकर बेकसी के आँसू बहाना, कमाले अदब से रूमाल मे ग़म के मोतियो को समोना, अइज्ज़ा को हिचकियाँ लगी हुई थीं। हम आखिरश महरात मे मातम बपा करते हुए सुल्ताने आलम के हमराह रवाना हुए। उस वक्त

जाने आलम का यह कहना, "तुम पर दस बरस तक मैंने सल्तनत की, इस अरसे मे जो कुछ सदमा और रज मेरी जान से तुम को पहुँचा हो उसको बखुशी माफ कर दो। इस वक्त मै माजूर हू और तुम से छुटता हू, खुदा जाने जिन्दगी मे फिर मिलूँ या न मिलूँ।" वहन इस जुमले से, तुम्हे याद है, मजमे को मजलिसे मातम बना दिया। हजरत मुनव्वरुद्दौला अहमद अली खा ने कहा "सरकार ऐसे वक्त मे गुलाम को कदमो से जुदा तो न करो।" सुल्ताने आलम खामोश हो गये। हुजूर मल्का किश्वर आरा बेगम साहब और भैया सिकदर हश्मत सरमहू और लख्ते जिगर नूरे-नजर वलीअहद बहादुर सरमहू और चार सरकार की खादिमा हम-राह थी। रजब की पांचवी को लखनऊ से चले थे। कानपुर पहुँचे तब रोते हुये बुरा हाल हुआ। पलवन साहब के बगले मे हम लोग मुकीम हुए। रजब भर महीना वही बीता। शाबान की पहली को रुखसत हुये। आठ दिन वहाँ ठहरे फिर बनारस आए। राजा पुराना नमकख्वार था। अपनी-सी उसने अच्छी खिदमत की। रानियाँ हुजूर मल्का की बहुत तवाजह करती थी। हर वक्त हाथ बाघे चाकरी मे खडी रहती थी। मुझ मग़मूम की पूछ भी बहुत थी। मैं हर वक्त सुल्ताने आलम की दिलजोई मे लगी रहती। इनका बातो मे दिल बहलाती मगर वे ग़म से निढाल थे। मैं वारी जाऊ, ये हाल देख मेरा जी कुढता था। बनारस से दहकानी जहाज पर सवार हुए। रमज़ान की २७ को कलकत्ते हमारा काफिला पहुँचा। सब पर थकान का असर था। इस वक्त तुमको रास्ते की मुख्तसिर कैफियत लिख रही हू, तुम भी लिखना हमारे पीछे क्या बीती।

*　　*　　*

[जानेजा बेगम का खत बनाम सरफराज़ बेगम साहब १६ शव्वाल १२७२ हिजरी। इस पत्र द्वारा वाजिदअली शाह की माता के लदन प्रयाण का विवरण तथा मल्का विक्टोरिया के लिये भेजे गये उपहारो की सूची मिलती है।]

शहर से दिल उचाट है,
उन्स नही उजाड से।
फोडें सर को ऐ जुनू,
कौन से अब पहाड से।,

तकदीर मे शबे हिज्र से ज्यादा रोज़े सियह दिखाये, फराकत के फन्दे से कभी छुटने न पाये। जिगर मे खजरे मिज़गाँ की काविश है, आंखो मे खूने नाब की हरदम तराविश है। कुछ हाल यहाँ का लिखती हूँ। जनावे आलिया

के साथ विलायत जाने के लिये ११० आदमी सब जकूरोकुनास तजवीज हुए। मौलवी मुहम्मद मसीहुद्दीन खा सफे शाही उनकी पेशी मे मीर मुहम्मद रफी मुकर्रर हुये। हाजी अल हरमैन, शेख मुहम्मद अली वायज व जाकर रफीके खास जनरल साहब वजरिसुलद्दौला मुसाहब मिर्जा वली अहद बहादुर को दस हजार रुपया इखराजात के लिये दिये गये। जनाव मल्का मुअज्जमा दाम इक़बालहू के वास्ते एक हार अलमास का जिसका वजन तीन सेर, दूसरा हार याकूत का, जमुर्रुद की कघी, परचये अल्मास बहुत से, मारये मलवाईद और अँगठियाँ और पेशवाज बहुत तकल्लुफ की ३२ हजार रुपये की तैयार की हुई एक नामा शाही मुतजम्मिने हार खुद जनाव मल्कये दौरा और मुख्तार नामा जर्री व किरी सुपुर्द जनाव आलिया के हुआ। आखिर इस्तखारा जाते रुक्का साथ लिया। पाच रुक्के निकले। १४ शव्वाल रोज सशबा सन् १२७२ हिजरी, १२ बजे रात को जनाव आलिया सवार हुई। वक्तेरुख्सत अजीब हश्रो-नश्र महर से बरपा हुआ, नारये अलफिराक व अलविदा मुखज्जिरात उस पर्दये शब मे महीते कररये आलम हुआ। हरएक की आख से मुसलसल दुर्रे-अश्क वह रहे थे। सुबह जहाज ने लगर उठाया। जेरे कोठी शाही गुजरा। बादशाह सुल्ताने आलम फर्ते बेक़रारी से बरामदे में खडे हुए। जनरल साहब ने व मिर्जा वली अहद ने आदावोसलाम बादशाह से किए। खुदा हाफिज कह के रुखसत किया। सब लोगो को अजीब सदमये रूहानी हुआ। मैने ग़म मे दो वक्त खाना नही खाया। जाने आलम ने कहा भी मगर मैं रोती रही। जो हाल पुर मलाल हम पर गुजरा वो तुमको लिख दिया।

रुख्सते सैरे बाग भी न हुई।
यूँ ही जाती रही बहार अफसोस॥

* * *

[नवाब मुन्नाजान के नाम वाजिदअली शाह का पत्र, २२ रजब, १२७३ हिजरी]

हम हैं कलकत्ते मे और आलमे तनहाई है!

जानेमन राहतेजा, दिलेसदल दर्दे सर मुजमहल, बाइसे आबादी, शहरे आशिका, बहारे रियाज व चमनिस्तान, मुन्नाजान तफरीह बख्श गुचये खातिर अख्तरे मुज्तर रहो। खत तुम्हारा दिल से अजीज जान से प्यारा बख्त बीकम शहर हाल मार्फ़त कन्जरुद्दौला बहादुर के करीदे कुपल मसर्रत हुआ। अहले शहर की

वेकरारिया मालूम हुई। इनकी ईजायें सब मफऊम हुईं। वल्लाह जाने जा, इनसे ज्यादा वेकरार हूँ। घर छोडा इनके लिये साकिनो यार निक्वत आसार हूँ। आगे जो मुकद्दर ज्यादा हसरत हमाग़ोशी।

* * *

[नवाब फरखन्दा महल का खत जाने आलम के नाम सन् १२७३ हिजरी।]

आप वो चेहरये रौशन जो दिखादें वख़ुदा।
वेकरारी दिले वेताव हरगिज न रहे॥

मेहरो गुलजार, रैनाइये तदूर, कोहसारे वेवफाई यज़ाद-उल-हुस्नऊ[1] यहा का अजीब हाल है। दिन दूनी रात वद अहवाल है। लखनऊ मे ताज़ा रूहदाद हुई जिससे तबीयत कुछ-कुछ शाद हुई। आठवी को इस महीने की यकशबा दोपहर से फौजे फिरगी तकसीम पर कारतूसो के बिगड गई। जगोजदल की ठहर गई। सब फौज मूसाबाग़ मे ईसाइयो के कत्ल को यकजा हुई। अव्वल हैवतो पर हैबत गालिबेसिवा हुई। कितना मलदेमा फौज को समझाया लेकिन लोगो के खयाल मे न आया। आखिर इन अहमको ने कई सौ योरोपियन निकाले और करीब शाम कत्ल की सिम्त को रवाना किया। ऐशबाग़ मे १५०० आदमी जमा हो चुके थे। वक्ते तहरीर अब तक मजमा बहुत कसीर है। उलमाये आलम मुहम्मदी उठाने को हैं। देखिए क्या होती इसकी आखिर है। वेढब हुआ ये बिगाड है। अब तो ईसाइयो को मूसाबाग़ जाना पहाड है। इत्तिलान लिखा है, आगाह तुमको किया है, और ऐ जाने आलम, मालूम नही यहा के अखबार हररोज़ तुमको मुताले से गुज़रते हैं या अहलकार पोशीदा करते हैं—जैसा हो वैसा लिखो। हम यहा से तहरीर क्या करें? अखबार और हाल मुफस्सिल तहरीर करें। इजहार आप की चहीती नवाब सरफराज़ बेगम भी यहा के हाल से आपको आगाह कर रही हैं।

* * *

[जाने आलम वाजिद अली शाह का खत बनाम शैदा बेगम साहबा]

मर्ग सूझे हैं आजकल मुझको।
बेकली से नही है कल मुझको॥

मेहरे सिपहर, वेवफाइये माह समाये-दिलरुबाई, गौहरे ताज, आश्नाइये जौहर, शमशीरे यकता, हमेशा खुश रहो।

मालूम हो गया हमे लैलो निहार से।
एक वज़ा पर नही है ज़माने का तूर आह॥

मालूम हुआ अवध मे कुछ बलवाई लोग जमा हुये है और सरकार अग्रेजी के खिलाफ हो गये हैं। कम्बख्तो से कहो, हम चुपचाप चले आये तुम लोग काहे को दगा मचा रहे हो ? मैं यहा बहुत बीमार था। सफरा की तिब ने दिक कर दिया था। आखिर तबरीद के बाद सेहत हुई। जिस कदर नजरो नियाज मानी थी की गई। जल्सा रात भर रहा, नाच गाना होता ही रहा। कोई चार घडी रात बाकी थी, गुल पुकार होने लगा। हम ग़फलत मे पडे थे। आँख खुलते ही हक्का-बक्का रह गये। देखा कि अग्रेजी फौज मौज दर मौज टिड्डी दल चारो तरफ से आ गई। मैंने पूछा ये क्या गुल है ? इन मे से एक ने कहा अली नक़ी कैद हो गये। मुझको गुस्ल की हाजत थी। मैं तो हम्माम मे चला गया। नहा कर फारिग हुआ कि लाट साहब के सेक्रेटरी ओमग्रटम साहब (?) हाजिर हुए, और कहने लगे, मेरे साथ चलिए। मैंने कहा आखिर कुछ सबब बताओ। कहने लगे गवरमेन्ट को कुछ शुब्हा हो गया है। मैंने कहा मेरी तरफ से शुबह बेकार है। मैं तो खुद ही झगडो से दूर भागता हूँ। इस कश्तो खून और खल्के खुदा के कत्लो गारत के सबब से तो मैंने सल्तनत से हाथ उठा लिया। मैं भला अब कलकत्ते मे क्या फसाद करवा सकता हूँ ? उन्होने कहा मैं सिर्फ इतना जानता हूँ कि कुछ लोग सल्तनत के शरीक हो कर फसाद फैलाना चाहते हैं। मैंने कहा, अच्छा अगर इन्तजाम करना है तो मेरे चलने की क्या जरूरत है, मेरे ही मकान पर फौज मुक़र्रर कर दो। उन्होंने कहा मुझको जैसा हुक्म मिला है वह मैंने अर्ज़ कर दिया। मैंने कहा, फिर आखिर मैं साथ-साथ चलने पर तैयार हूँ। मेरे रिफ्का भी चलने पर तैयार हैं। सेक्रेटरी साहब ने कहा सिर्फ आठ आदमी आपके हमराह चल सकते हैं। फूफा मुजाहिदुद्दौला, जिहानतुद्दौला सेक्रेटरी साहब और मैं एक बग्घी मे सवार होकर किले मे आये और कैद कर लिये गये। मेरे साथियो मे जुल्फिकारुद्दौला, फतेहुद्दौला, खजाँची काजिम अली, सवार बाकरअली हैदर खाँ 'कूल', सर्दार जमालुद्दीन चपरासी, शेख इमाम अली हुक्के बरदार, अमीर बेग खवास, वली मुहम्मद मेहतर, मुहम्मद शेर खा गोलन्दाज, करीमबख्श सक्का, हाजी कादर बख्श कहार, इमामी गाडी पोछने वाला—ये कदीम मुलाजिम नमकख्वार थे। जबरदस्ती कैदखाने मे आ गये। राहते सुल्ताना खासा बरदार, हुसैनी गिलौरी वाली, मुहम्मदी खानम मुग़लानी, तबीबुद्दौला हकीम भी साथ आया। देखा-देखी आया था, घबरा गया और कहने लगा खुदा इस मुसीबत से जल्द निजात दे। मैंने बहुत कुछ हक जताये कि तुमको बीस बरस पाला है मगर

वेकरारिया मालूम हुई । इनकी ईज़ायें सव मफऊम हुई । वल्लाह जाने जां, इनसे ज्यादा वेकरार हूँ । घर छोडा इनके लिये साकिनो यार निक्वत आसार हूँ । आगे जो मुकद्दर ज्यादा हसरत हमाग़ोशी ।

* * *

[नवाव फरखन्दा महल का खत जाने आलम के नाम सन् १२७३ हिजरी ।]

आप वो चेहरये रौशन जो दिखादें वखुदा ।
वेकरारी दिले वेताव हरगिज न रहे ॥

मेहरो गुलजार, रैनाइये तदूर, कोहसारे वेवफाई यज़ाद-उल-हुस्नऊ[1] यहा का अजीब हाल है । दिन दूनी रात वद अहवाल है । लखनऊ मे ताज़ा रूहदाद हुई जिससे तवीयत कुछ-कुछ शाद हुई । आठवी को इस महीने की यकशवा दोपहर से फौजे फिरगी तकसीम पर कारतूसो के बिगड गई । जगोजदल की ठहर गई । सव फ़ौज मूसावाग़ मे ईसाइयो के कत्ल को यकजा हुई । अव्वल हैवतो पर हैवत गालिबेसिवा हुई । कितना मलदेमा फौज को समझाया लेकिन लोगो के खयाल मे न आया । आखिर इन अहमको ने कई सौ योरोपियन निकाले और क़रीब शाम कत्ल की सिम्त को रवाना किया । ऐशबाग मे १५०० आदमी जमा हो चुके थे । वक्ते तहरीर अब तक मजमा बहुत कसीर है । उलमाये आलम मुहम्मदी उठाने को हैं । देखिए क्या होती इसकी आखिर है । वेढब हुआ ये बिगाड है । अव तो ईसाइयो को मूसाबाग़ जाना पहाड है । इत्तिलान लिखा है, आगाह तुमको किया है, और ऐ जाने आलम, मालूम नही यहा के अखबार हररोज़ तुमको मुताले से गुज़रते हैं या अहलकार पोशीदा करते हैं—जैसा हो वैसा लिखो । हम यहा से तहरीर क्या करें ? अखवार और हाल मुफस्सिल तहरीर करें । इजहार आप की चहीती नवाव सरफराज़ बेगम भी यहा के हाल से आपको आगाह कर रही हैं ।

* * *

[जाने आलम वाजिद अली शाह का खत बनाम शैदा बेगम साहबा]

मर्ग सूझे हैं आजकल मुझको ।
वेकली से नही है कल मुझको ॥

मेहरे सिपहर, वेवफाइये माह समाये-दिलरुवाई, गौहरे ताज, आश्नाइये जौहर, शमशीरे यकता, हमेशा खुश रहो ।

मालूम हो गया हमे लैलो निहार से ।
एक वज़ा पर नही है ज़माने का तूर आह ॥

पिया जाने आलम, जब से आप लखनऊ से सिधारे ख्वाब हराम है। रोना धोना मुदाम है। यहाँ शबोरोज आहोबुका मे गुजरती है, मगर दूसरी मेरी हमजिन्सें खुश-खुश इठलाती फिरती हैं। आपके बाद से फ़िरंगियो के खिलाफ जहर उगला जा रहा है। नई नई बातें सुनने मे आ रही हैं। दिल को हौल है कि देखिये फलक क्या क्या रग दिखलाता है। घासमडी मे मौलवियो का जमाव है। सुना है एक सूफी अहमदुल्ला शाह आये हुए है। नवाब चीनाटीन के साहबज़ादे कहलाते हैं। आगरे से आये है। ये भी सुना है कि उनके हज़ारहा मुरीद हैं और वो पालकी मे निकलते हैं। आगे डका बजता होता है, पीछे अज़दहा बडा होता है। वहशतेनाक खबरो की गर्म बाज़ारी है। सरकार सुल्ताने आलम अब आप अपना हाल लिखिये। दिल को शाद काम कीजिये।

*　　*　　*

[जाने आलम का जवाब शैंदा बेगम को तारीख १० रजब सन् १२७३ हिजरी।]

जानेजा, जाने आलम नवाब शैंदा बेगम साहबा हुस्नहा व जमालहा।. दो तशफ्फिये नामे तुम्हारे अजमुलदौला बहादुर ने नवी रजब को लाकर दिखाये। दिल शाद हुआ। तबीयत मे कूवत आई। जान ताज़ा पाई। मगर ऐ जानी, अब हम वो नही रहे। हम अपना हाल लिखते है। इससे मालूम होगा कि हम पर क्या गुज़र रही है। इश्को-आशिकी सब मफकूद है। रज ने हालत तबाह की। हम किले फोर्ट विलियम मे नज़रबन्द हैं। लार्ड रग (?) का मेरे पास खत भी आया कि अफसरान आपके एज़ाज़ मे फर्क न करेंगे। मगर मेरी जिन्दगी दुश्वार हो रही है। आठ दिन बाद, किले मे एक कोठी है उसमे आये। अब सिर्फ २३ आदमी हमराह हैं। परिन्दा तक पर नही मार सकता। कैदखाने के दरवाज़े बन्द कर लिये गये। हमारा दम घुटता है। मुजाहिदुद्दौला मिर्ज़ा जैनुलआब्दीन, दियानत दौला, मुत्तदीनुल्मुल्क मुहम्मद मोतमिद अली खा, अमानते जग कुमेदान हरवक्त परवानावार जानिमार थे। फतेहुद्दौला बख्शिये मुल्क ज़ईफो के सबब चिरागे सहरी थे। वे २८ सफर सन् १२७३ हि० को हमसे रुखसत हो गये। हमको फ़ुरकत मे छोडकर खुद राही जन्नत बन गये। मोहतमिमदौला बहादुर और जुल्फिकारुद्दौला सैयद मुहम्मद सज्जाद अली खा रिसालुद्दार हर वक्त शरीके रजोग़म थे। आखिर मुसीबत-ओ-तकलीफ से आजिज़ आकर उकता कर मुझसे भी जुदा होना शुरू किया। पहले दियानतदौला ने कौंसिल से इस्तिग्रात आरियात जाने की इजाजत

फिर भी वो अपनी जान छुडा कर भाग गया। जिस क़िले में हम क़ैद किये गये थे, उसको कली-ये-वाव कहते हैं। ये खत 'करबलाई' आवखासा वरदार के भाई के साथ भेज रहा हूँ।

हुआ है अव तो ये नक्शा तेरे बीमारे हिज्राँ का।
कि जिसने खोल कर मुँह उसका देखा वस वहीं ढाका॥

* * *

[शैंदा बेगम का खत जाने जाने आलम के नाम—तारीख २६ जमादुर-आखिर सन् १२७३ हिजरी।]

हामिये रिआया, नासिर वर आया, तुम पर खुदा का साया, इश्तियाक़ नामा १७ वी का लिखा हुआ ऐन इन्तज़ार मे आया। हमने देखते ही आँखो से लगाया, कलेजा मुँह को आया। असीर ने पढ कर सुनाया। जुदाई ने वो सदमा दिखाया गम ने ऐसा रुलाया कि खून आंखो ने वरसाया। पीरे फलक ने अजीब रग दिखाया। आप कही हैं और हम कही। खुदा जल्द मुसीबत टाले। तुम्हारी सूरत रश्के खुरशीद दिखलाये, यानी तुमको हमसे मिलाये। सबबे तरद्दुद जाये। दिल को तस्कीन आये। रक़ीयावानो वेगम को जुकाम है।

(नोट ऐन हङ्गामे के दिनो मे, पत्र की सबसे वडी सूचना के तौर पर रक़ीयाबानो वेगम का जुकाम भी बतौर नमूना पेश है।)

* * *

[शैंदा बेगम का खत बनाम जाने आलम।]

सोज़े तपे फ़ुरकत से अजब रग हैं दिल के।
तहरीर नही होते हैं जो ढग हैं दिल के॥

आशनाये दरियाये मुआनिसत, इखराशे सनावर, कुलज़ुमे मसादिक़त, मिर्ज़ा जाने आलम बल्कि जाने जहा से बढकर सुल्ताने आलम, यजीदुल्लाह लुत्फहू।

तेरे फिराक मे क्यो कर ये दर्दनाक जिये।
मरे तो मर नही सकता जिये तो खाक जिये॥

चर्खे नाहज़ार मुस्तइद आज़ार है, कोई मूनिस है न गमख्वार है। ज़िन्दगी से यास है, जीने की किसे आस है। दिल मे दर्द है, आहे सर्द है। सीना मातम सरा है, जिस्म खुश्क, जिगर हरा है। जोशे वहशत की शिद्दत है, जीने से जी वेज़ार दुनिया से नफरत है।

काश के दो दिल भी होते इश्क मे।
एक रखते एक खोते इश्क मे॥

वेताविये दिल किसे सुनायें,
ये दीदयेतर किसे दिखायें।

जाने आलम, ख्वाब मे भी नही आते। जवसे मालूम हुआ है कि किले मे कयाम है दिल को वडी वेचैनी है।

एक वज़ा पर नही है ज़माने का तौर आह,
मालूम हो गया हमें लैलो नहार से।

यहाँ नये गुल खिलाये जा रहे हैं। हजरत महल, आपकी महवूवा, सरकार से जोड-तोड करके वागियो की सरदार वनी हैं। नवाव मुहम्मद अली खा के वह-काने मे आ गई हैं। शोरापुश्ती दिखा रही हैं देखिये किस करवट ऊँट वैठे।

वो खुश होवें कि जिनको ताकतें परवाज हैं।

*　　　*　　　*

[फरखन्दा महल का जानेआलम के नाम खत। १० रमज़ान सन् १२७३ हिजरी।]

पहले तो खू निकलता था अश्के सियाह से।
अब लख्ते दिल ही आते है आँखो की आह से॥

अक्से आईना, इखतिसासे नक्श, निगार खानये इखरास मल्लाहे दरियाये आश-नाई दिलवरी खास लहजये वफा परवरी, महर गुस्तरी मादामे गौहर मुराद हमकनार वाद जाने आलम, तुम्हारा मुहव्वत नामा आया। पयामे उल्फत पाया। हाल नवाव खास महल के चले आने का मालूम हुआ। तुम्हारा हाथ वाँध के समझाना मफऊम हुआ। वे तो ऐसी वेवफा नही थी। तुम पर हज़ार जान से फिदा थी। अव वेसवव वो तुमको छोडती हैं वेवजह मुँह मोडती हैं। कुछ तो उन्होंने रज पाया जो चला आना यहा का पसन्द किया। जो तुमने लिखा कि लानतुल्ल-राहे अला अहले हिन्दुस्तान (अहले हिन्दुस्तान पे लानत हो)। इस लिखने के वक्त तुम्हारा ध्यान था कि सकाने हिन्द कैसे कैसे और शहरो मे लोग ऐसे ऐसे हैं। अलल् खुसूस लखनऊ मे किस किस तरह के दीनदार है। सदहा आलम आलिमो फ़ाज़िल और मुफ्ती व अवरार हैं। हरचन्द वदकार भी वेशुमार हैं लेकिन उनमें कुछ अक्लमद है कुछ होशियार हैं। वक़ौल शख्से "न हर जन जन अस्त, न हर मर्द मर्द, खुदा पजे अगुश्त यक सा न कर्द।" मगर इस मुकाम पर कतये सादी ने कतये कलाम किया लिहाजा ये नामा इस पर तमाम किया।

चूअज़ कूमे यके वेदानिशी कर्द
नके राह मज़िलत वाशद न महरा।

ली मगर इजाज़त मिलते ही किले से चल दिया। अव मोहतमिमदौला ने पागल बनकर हर एक को गालिया दी और मार पीट करने लगा। आखिर निकाला गया। मुहम्मद शेर खा ने गोलन्दाज़ ने वाकरअली की नाक काटी इसके वाद उसको सज़ा हो गई। जेल गया। करीम वख्श सक्का तपेदिक मे मुब्तिला हुआ, तव मैं जाने से अजीरन हो गया।

* * *

[वाजिद अली शाह का पत्र किसी गुमनाम वेगम के नाम।]

आश्नाये दरयाये आशनाई, शनावर वहरे दिलरुवाई, गौहरे अकीर रिफाकते जौहर, जमीले सदाकत, महवूवये दिलनवाज़, यगीदुल्लाह मुज्दहू,—

फलक ने तो इतना हँसाया न था,
कि जिसके एवज़ यू रुलाने लगा।

तुम्हारा मुहव्वतनामा वदस्त मुहम्मद जान चोवदार से मिला। हम लोग अभी कलकत्ते मे मुकीम हैं। अइज्ज़ा की जुदाई, सल्तनत जाने का सदमा, शहरोदयार का छुटना, १४ शव्वाल को जनाब वालिदा और वली अहद वहादुर और भाई को लन्दन रवाना करना, अव सिर्फ नवाव खास महल और चार बीविया रह गईं। अभी अभी नवाव अलीनकी खा और मुनव्वरुदौला मेरे पास आ गये। घवराओ नही, खुदा पर नज़रे हकीक़त रक्खो वो मुसब्बिर असबाब है। कोई सवव मिलाने का निकालेगा। बिरजीस कदर का खयाल रखना। रकियावानो को दुआ।

बदकिस्मत—अखतर

* * *

[शैदा वेगम का खत जानेआलम के नाम]

ऐ शाहँशाह शहरे हुस्नोजमाल, माहेताबाने औज फज़ले कमाल, गुलशादाव गुलशन खूबी, सर्वेआजादे बागे महवूबी! हक सदा मेहरबाँ रहे तुम पर। और अली की अमा रहे तुम पर। दर्दे जिगर से काम तमाम हुआ, मरना अजाम हुआ। गिरिआ शोआरी है, आदत आहोजारी है। वहशत समाई, जुनू की भी चढ़ाई, दिल को इज्तराब है, जिगर कवाव है। न चश्मे ख्वाव है न दिल को ताव है।

तपे जुदाई से अव इस तरह नज़ार हू मैं।
नज़र मे खल्क की रश्के खते गुवार हू मैं॥

कभी वुका है, कभी हँसी है, अजीव मुसीबत मे तबीयत फसी है। ग़मो अरम खुराक है वहशत के जोर मे गरेबाँ चाक है। गला है और खजरे फिराक है। मरने की खुशी से जीना शाक है।

वेताबिये दिल किसे सुनायें,
ये दीदयेतर किसे दिखायें।

जाने आलम, ख्वाब मे भी नही आते। जबसे मालूम हुआ है कि क़िले मे कयाम है दिल को बडी बेचैनी है।

एक वज़ा पर नही है ज़माने का तौर आह,
मालूम हो गया हमे लैलो नहार से।

यहाँ नये गुल खिलाये जा रहे हैं। हजरत महल, आपकी महबूबा, सरकार से जोड-तोड करके बागियो की सरदार बनी है। नवाब मुहम्मद अली खा के बहकाने मे आ गई है। शोरापुश्ती दिखा रही हैं देखिये किस करवट ऊँट बैठे।

वो खुश होवें कि जिनको ताकतें परवाज हैं।

* * *

[फरखन्दाँ महल का जानेआलम के नाम खत। १० रमज़ान सन् १२७३ हिजरी।]

पहले तो खू निकलता था अश्के सियाह से।
अब लख्ते दिल ही आते हैं आँखो की आह से॥

अक्से आईना, इखतिसासे नक्श, निगार खानये इखरास मल्लाहे दरियाये आशनाई दिलब्ररीं खास लहजये वफा परवरी, महर गुस्तरी मादामे गौहर मुराद हमकनार बाद जाने आलम, तुम्हारा मुहब्बत नामा आया। पयामे उलफत पाया। हाल नवाब खास महल के चले आने का मालूम हुआ। तुम्हारा हाथ बाँध के समझाना मफऊम हुआ। वे तो ऐसी बेवफा नही थी। तुम पर हज़ार जान से फिदा थी। अब बेसबब वो तुमको छोडती हैं बेवजह मुँह मोडती है। कुछ तो उन्होंने रज पाया जो चला आना यहा का पसन्द किया। जो तुमने लिखा कि लानतुल्लराहे अला अहले हिन्दुस्तान (अहले हिन्दुस्तान पे लानत हो)। इस लिखने के वक्त तुम्हारा ध्यान था कि सकाने हिन्द कैसे कैसे और शहरो मे लोग ऐसे ऐसे हैं। अलल् खुसूस लखनऊ मे किस किस तरह के दीनदार है। सदहा आलम आलिमो फ़ाज़िल और मुफ्ती व अबरार हैं। हरचन्द बदकार भी बेशुमार हैं लेकिन उनमें कुछ अक्लमद है कुछ होशियार हैं। बकौल शख्से "न हर ज़न ज़न अस्त, न हर मर्द मर्द, खुदा पजे अगुश्त यक सा न कर्द।" मगर इस मुकाम पर कतये सादी ने कतये कलाम किया लिहाज़ा ये नामा इस पर तमाम किया।

चूँअज़ कूमे यके बेदानिशी कर्द
नके राह मज़िलत बाशद न महरा।

नमी वीनी कि गाव दर अल्फज़ार
वियाला यद हमा गामा दहे राह ॥

(अक्लमन्द को भुनगा भी दिखाई देता है । मगर तुमको दरवाज़े मे आई हुई गाय भी नही दिखाई देती ।)

* * *

[सरफराज़ वेगम का खत जाने जा वेगम के नाम]

मजनूं का दिल हूँ महमिले लैला से हूँ जुदा
तनहा फिरू दश्त मे जो नारये वुका ।

दवाये दर्दमदा व इत्तिहाद शफाये मुस्तमिनदा हमेशा वा मुराद रहो । लखनऊ की हालत सुल्ताने आलम के वाद से तवाह व वरवाद हो रही है । नये नये फितने उठ रहे हैं । लोग पागल हो रहे हैं । मुतवाहिश खवरें उडती हैं जिससे दिल हौल खाता है । देखिये क्या रग फलक दिखाता है । लखनऊ मे तिलगो ने उधम मचा रक्खी है । यो समझिये फैजावाद से मौलवी अहमद उल्ला शाह ने आकर लूट-मार कम की है और जगह-जगह अपने चौकी पहरे विठा दिये हैं । वहुत से सरफिरे इनके खैरखाह साथ हैं । उधर सुल्ताने आलम के खैरख्वाह ये चाहते हैं कि इनका तख्त खाली न रहे । मिर्ज़ादार-उस-सितवत को वादशाह वनाने की तजवीज़ है। तीन रात नज़राना तलव किया था मगर दार-उस-सितवत कहने लगे कि नवाव शुजा-उद्दौला अगरेज़ो से मुकावला न कर सके तो हम क्या कर सकते हैं । राजा जवाहर सिह खल्फ दर्शन सिह नवाव खासमहल की ड्योढ़ी पर आकर कहने लगे कि मिर्ज़ा नौशेरवाकद्र को मसनद नशी रियासत कर दें । शमशेरुद्दौला दारोगा ने कहा वो लडका सव तरह माज़ूर है और नवाब खासमहल और वादशाह की मजूरी वग़ैर ये काम कैसे हो सकता है ? महमूद खा और शेख अहमदहुसैन ने राजा मानसिह और जवाहर सिह से मिर्ज़ा विरजीस कदर के वास्ते कहा तो उसने जवाब दिया, फौज को मजूर है मगर वेगमाते महल शाही राज़ी हो तो अलवत्ता मुमकिन है । इस वक्त महमूद खा राजा को अपने साथ लाये । पीर वाजदअली को वुलाया, सव वेगमात जमा हुईं । वाज ने कहा कि वाजिद अली शाह के होते हुये किसी को वादशाह न वनाओ, ये शगूने वद है । सरफराज वेगम भी ये सुन रही थी । वाज़ वोली कि सुल्ताने आलम का वेटा उनके सामने तख्त पर वैठ रहा है और वाप को तख्तोताज दिलाने का सामान कर रहा है । हज़रत महल ने सवसे हाथ जोड कर कहा, ये लडका तुम्हारा है जैसा तुम मुनासिव खयाल करो, वैसा करो ।

नवाव खुर्द महल ने अज़राह फ़रासत कहा कि अगर हम तुम्हारे राज़ी नामे पर मुहर कर दें, कलकत्ते मे अंग्रेज नवाब वाजिद अली शाह को मार डालें तो क्या हो ? तव राजा रुखसत होके चला गया। हज़रत महल मायूस हुई मगर महमूद खा के तिल तलवो को लगी हुई थी। उसने हज़रत महल से फौज के सरदारो को खत लिखवा दिये। १२ ज़ीकात वरोज़ यकशम्वा १२७३ इत्तिफ़ाकन पानी शिद्दत से वरस रहा था। राजा मय अफसरान फौज कसरुलखा मे आकर वैठे। मिर्ज़ा रमज़ान अली खा अलमुरकिव मिर्ज़ा विरजीसकदर तामझाम सवारी हुज़ूरे आलम पर सवार आये, और सिन जलूस जन्नत आरामगाह पर आके वैठे। किसी ने कहा कि छोटा है, किसी ने कहा कि ऐशो इशरत मे पला है फिर गाफिल न हो जाये। आखिरकार शहाबुद्दीन और सैयद वरकात अहमद १५ रिसाले के रिसालदार ने उठकर मुन्दीर मिर्ज़ा विरजीसकद्र के सर पर रख दी। मुवारक वाद दी गई। अफसरान ने तलवारो की नज्र दिखाई। जहागीर वख्श सूवेदार ने तोपखाना फैज़ावाद से २१ तोप की सलामी सर की। शहर मे एक गुरगुरये मसनद नशीनी हुआ। गर्मी की शिद्दत थी, मिर्ज़ा विरजीसकदर दाखिले महल हुए। घमण्डी सिंह सूवेदार कलमाते ला-तायल वकता रहा। नायवे दीवान हिसाम-उद्दौला को वनाना चाहा, मगर वो रज़ामन्द न हुए। शाहशाह महल ने मुफ्ताहुद्दौला से कहा, वो भी तैयार न हुए, तो नवाव शरफुद्दौला मुहम्मद इब्राहीम खाँ की तजवीज़ हुई। मम्मू खा विगड वैठे। फिर सफाई हो गई। जनावे आलिया को ११ अशर्फी नजरे अकीदत दी गई। नवाव हिसामुद्दौला ने उठकर वेगमसाहवा के हाथ मे रख दी। सैयद वरकात अहमद कासिम जान ने इनकी तारीफ की। विरजीस कद्र ने दूसरे दिन खिलअत नायावत इनायत किया। खिलअत दीवानी महाराजा वालकृष्ण को अदा किया। तीसरा खिलअत कोतवाली मिर्ज़ा अली रजा वेग, चौथा मीर यावर हुसैन मुहतमिमरविन्द को, पाँचवा खिलअत जनरली-हिसामुद्दीन वहादुर को, फिर तमाम ने मिर्ज़ा विरजीसकद्र और हज़रत महल को और शाहशाह महल को नज़रे दी। दारोगा दीवाने खास मम्मू खा, अली मोहम्मद खा वहादुर रवाना हुये। मुंशी कचहरी खास अमीर हैदर, दारोगा ड्योढियात मीर वाजद अली, अखवारे मुल्की मुहम्मद हसन खां दामाद नवाव शरफुद्दौला को दिया गया। जनरल हिसामुद्दौला को हुक्म भरती १३ पलटन नजीव का हुआ। और अँगरेजो से लडाई शुरू कर दी। वेलीगारद पर हमला कर दिया जहा अँगरेज जमा थे। मौलवी अहमदुल्ला शाह ने वडी वहादुरी की। वेलीगारद के फाटक तक

पहुँच गये। मगर कोई और साथी उनके साथ न था। बेचारे ज़ख्मी होकर लौट आये। मैं महलात से उठकर शहर मे आ गई हूँ। ये मेरा खत जाने आलम तक पहुँचा देना। वो किले मे नज़रबन्द हैं। मेरे नाम भी खत आया था जो बमुश्किल मिला।

* * *

[यास्मीन महल का खत बनाम जाने आलम]

क्या लिखू ओ बुते बेरहम तेरी दूरी से,
कौन-सा दिन था कि मैं दीदये गिरिया न हुआ।

जौहरे तेगनाज़ो नियाज़ कतरये सब्ग गमजओ अदाज हमेशा गुलशन खूबी शादाब। जाने आलम, एक साल हो गया, सब चहीतो को नवाजा, मुझ निगोडी को कभी भूल के भी पुर्ज़ये कागज़ से न किया खुश अफजा। यहा दिन रात आतिशे फिराक मे घुल रही हूँ। वहा बेखबरी वो है जो जान रही हूँ।

आतश भरी हुई है मेरे जिस्मेजार में।
पारे का है खवास दिले बेकरार में॥

हम हैं और गमें दिलदार है सीना है और आहे शररबार है। महलात में बिरजीस कदर को देख लेती हूँ, दिल शाद कर लेती हूँ। तुम्हारी फबन इसमे पूरी है। सूरत भी बाप की सी गोरी है। अल्लाह हज़रत महल की कोख को ठडी रक्खे। मुझपर बह मिहरबान है मुझको भी वह प्यारा दिलोजान है। कल उसकी ११वी सालगिरह थी, यह तो सुन ही लिया होगा कि वह तख्तनशी है। तमाम लोग उसके फिदाकार हैं। शब मे रक्सो पुरन् को महफिल थी एक तवायफ ने गज़ल पढ़ी, एक शेर याद है

गैरते महताब है बिरजीस कदर।
गौहरे नायाब है बिरजीस कदर॥

खुदा नज़रेबद से लाडले को बचाये, दुश्मन का मुँह काला हो जाये। सुनते हैं मौसमे खिजा जा चुका है अब बहार आई है। बुलबुलो ने गुलिस्ता में खुशी मचाई है। अपनी तो हालत है कि हूँ बुलबुले तस्वीर—परवाज की ताकत नही और यासे चमन हूँ। जाने आलम अपनी खैरियत से इत्तिला कीजिये और सोजे महजूरी से निजात दीजिये।

मौत सी अब तो जीस्त है कि बहुत,
दर्दे दिल का इलाज कर देखा।

जीते जी मौत की सी लज्जत को,
खूब देखा कि तुम पे मर देखा।

* * *

[जाने आलम का खत सरफराज़ महल पजवारी (पाँचवी वीवी) के नाम।]

घोलये वर्क दूरी नाइरें नार महजूरी आतिशे हुस्न दो वाला हो। जियो।

वह कौन है जो मुझ पे तअस्सुफ़ नही करता,
पर मेरा जिगर देख कि मैं उफ नही करता।

यहा का हाल क्या लिखू ? दिल वेकरार है। सीना फर्तेनाले से रश्के रूवाव है। लखनऊ से मेरे साथ ५०० आदमी आये थे। मोचीखोला मे मुकीम है। वली अहद वहादुर की माँ मलकये खास महल, जनरल की वालिदा मलकये मुल्क आली जनाव ताजुन्निसा वेगम, तीसरा महल महवूवा खास मल्कये आशिक-नुमा जानेजा वेगम हैं। ये आजकल वीमार हैं। खुदा इसको शफा दे। महल चहर्रुम वडी वेगम आशिके सुल्तान मुमताजे आलम कैसर वेगम न मनकूला थी न ममतूआ वल्कि सिर्फ दोस्ती में चली आई थी। उसने खर्च को मांगा। ११ हजार रुपये दिये वो रुपये पाते ही कलकत्ते से चल दी। पजुम खस्तामहल, शिशुम ममतूआ जाफ़री वेगम अजीव चुलवुली तवीयत नाजुक मिजाज, खिल-दड़ी, चचल, जगजू, तुदखू, तेगजवान, दरिश्त कलाम हमको किले विलियम में अक्सर गिलौरिया भेज दिया करती थी। वह ऐसी महवूव थी कि एकदम हमारी नजर से जुदा न होती थी। अव महीनो से उसके फिराक में तडपता हूँ। उनके गम में दिल पानी-पानी हो गया। गुचये दिल कुम्हला गया। दिल हजार सम्हाले नही सम्हलता। सवा भी हम कैदियो की पैगामवरी नही करती। हर तरफ पहरा है। दो रफीक हैं, एक खौफ़ दूसरा हिरास। एक कैदखाने में हम पडे हुए हैं चारों तरफ़ हिरासत है। हमारे साथ १२ आदमी मुसीवत झेल रहे हैं। हर एक अपने दीन से वेजार है क़ैद गम में गिरफ्तार है। भिश्ती व खाकरू आते है, उनके साथ एक एक अग्रेज भी आता है। मजाल क्या है जो मुंह से वोल सके। क़ैदखाने की कोठी वहुत वसीह है, मगर अपने किस काम की ? हर वक्त दरवाजा वन्द, गरमी से दिल तग परेशान हालते तवा हूँ। जव दरवाजे खुलते हैं तो धूप की शिद्दत से जान वेजार होती है। कई मर्तवा लाट साहव को भी शिकायती खुतूत भेजे मगर किसी का जवाव नही आया। तुम खुदा का शुक्र करो, आजाद हो। अपनी नीद सोती हो, कोई पूछने वाला नही। शैदा वेगम का खत आया

उसका भी जवाब लिख दिया। उसको मिला भी होगा या नही

वो बुलबुले मरदूदे बहार और खिज़ा हूँ,
जिसका कि ठिकाना न चमन मे न कफस मे।
किया है अख्तरे बे पर को उसने मक्र से कैद,
कही भी होता है ऐसा शिकार का असलूब ?

* * *

[सरफराज़ बेगम का खत बनाम अख्तर महल]

मलिका मुल्के खूबी, पुश्ते पनाह विलायते महबूबी, अकामुल्लाह जमालहा व इक़बालहा। मेरी मल्कये आलम रफीके सुल्ताने आलम, मैं लखनऊ के वाक़याते हालतेज़ार जाने आलम के वास्ते लिख रही हूँ। यहा का हाल दिगरगूं है। देखा नही जाता। बुरा शगुन है। एक दिन मशहूर हुआ कि कल या परसो फौज बेलीगारद पर धावा करेगी। साहबाने महसूर को ज़ेरे तेग़ करेगी और वहा की जमीन को खोद कर बराबर कर देगी। ये खबर गोशज़द साहबाते महल हुई। आपस मे कहने लगी कि जिस वक्त यहा सबको कत्ल किया तो जितने कलकत्ते मे हैं उनकी जान काहे को रहेगी। एक ने कहा कि हम तुम ही न बचेंगे, इस वास्ते कि फिरगियो का जाल मिस्ल घास की जड के है, जितना काटो उतना ही बढती है। गरज़ कि नवाब फख्रमहल, बदियेजा नवाब सुलेमान महल, नवाब शिकवा महल, नवाब फरखन्दामहल, यास्मीनमहल महबूबमहल और कई महल जमा होकर हजरतमहल से कहने लगी और नवाब खुर्दमहल और सुल्तानजहा इनकी शरीक थी—कहा कि तुम सब तरह अच्छी रहो। तुम्हारा बेटा बादशाह हुआ मुबारक हो। मगर हम सब बेवारिस हुये जाते है। कल फौज का ये इरादा सुना है अब तुम्ही इसाफ करो, फिर बादशाह और महलात वगैरह जो कलकत्ते मे हैं जिन्दा बचेंगे या सब फासी दे दिये जायेंगे। तुम ऐसी सल्तनत को चूल्हे मे डालो। जनाबे आलिया ने बरहम होकर जवाब दिया, मालूम हुआ तुम सब हमारा बुरा चाहती हो, बल्कि इस सल्तनत के होने से जलती हो। गरज कि जनाबे आलिया बिरजीसकदर को लेकर अन्दर दालान मे चली गईं। ये खबर अफसरो को लग गई। मुफ्ताहुद्दौला वगैरह हजरत-महल के पास आये और कहा कि महलात जो फिरगियो से मिली हुई हैं उन्हे निकाल बाहर कर दो। तब बेगम बोली सब्र से काम लो। दूसरे दिन बेलीगारद पर हमला करने चले मगर पहले शहर पर हाथ साफ किया, लूटमार की। बिरजीसक़द्र ने खुद घोडे पर बैठ कर तिलगो को बुलवा कर कहा 'बहादुरो हम तुमसे बहुत खुश हुए,

खूब लडते हो, मगर अफसोस ये है कि तुम शहर को लूटते हुये सब रिआया से बददुआ लेते हो।' सब अफसरो ने दस्तबस्ता अर्ज की कि जनाब अब शहर न लुटेगा। और देहली सफीर रवाना किया कि हुजूर बादशाह से सनद मसनद नशीनी ली जाय। मैं नही समझती थी कि हजरतमहल ऐसी आफत की परकाला है, खुद हाथी पर बैठ कर तिलगो के आगे-आगे फिरगियो से मुकाबिला करती है। आख का पानी ढल गया है और इसको हिरास मुतलक नही है। गरज़ ये कि आलमबाग पर बडा मुकाबला रहा। अहमदुल्ला शाह से भी हजरतमहल ने मुलाकात की। हरदू ने बडी जाफिशानी दिखाई मगर किस्मत को क्या कीजिये। २२ दिसबर सन् ५७ का रोज था, फिरगी सरदार जनरल औटरम और जनरल हैवलाक मुकाबिल थे। ४०,००० फौज यहा जमा थी। पानी बडे ज़ोर का बरसा। तारीगी हो गई, पर फिरगियो की तोप ने और भी गोले बरसाये। तिलगे पलटे, मम्मूखा और अशरफुद्दौला ने हट कर नाका चारबाग लिया। राजा मानसिंह ने बडी बहादुरी दिखाई। नौ हज़ार जमीयत मे ऐसा मुकाबिला किया कि फिरगियो के छक्के छूट गये। शाम हो गई थी, जनाबे आलिया ने राजा मानसिंह बहादुर को जाफिशानी व जाबाजी पर खिताबे फ़रजन्दी दिया। खिलअत दुशाला, रूमाल और मलबूते खास दुपट्टा इनायत किया और बहादुरी की बहुत तारीफ की। मगर ये सब तदबीरें उलटी रही। आखिर हमको शिकस्त उठानी पडी। कानपुर से नानाराव पेशवा आया। देहली से जनरल बख्त खा रुहेला ये रिश्तेदार मलकये खास का है। शाहजादा फीरोज़शाह आये। अहमद रज़ा ने बडी बहादुरी दिखाई। फिरगियो ने जान तोड कर तिलगो को पस्पा किया।

कैसर बाग के महलात पर गोले बारूद गिरे। बेगमात भागी। बडी इफरात फरी थी। खुदा वो दिन दुश्मन को भी न दिखाये—पा बरहना सरासीमा परेशा हाल दामन बडे पायचो के अपनी पतली कमरो मे बाधे हुये पानदान और बेशबहा कीमत यानी एशिया साथ लिये भागती फिरती थी। जनाबे आलिया सरासीमा परेशान पा-पियादा मय साहबाते महल और शागिर्द पेशागोल औरात मुलाज़मीन बाग के कोठो पर से घसियारी मन्डी के फाटक से बाहर निकली और हल्कये औरात सफेबस्ता उनके बीच बिरजीस कदर एक सैयद की गोद मे कधे मे चिमटे हुये और गालीचा चादनी रफये एहतिमाल को डाले हुये। जिसने रास्ते मे नाफ़िलिये नामूसे शाही को देखा बेइख्तियार पीटने और रोने लगा। ये इनक़लाब का जमाना था। बहरहाल गलियो मे गिरती पडती टीलेशाह पीर जलील से गुजर के

पुल मौलवीगज मे जवाहर अली खा के यहाँ पहुँची । वहा से पीनस मे सवार होकर गुलाम रज़ा खा के घर उतरी, फिर शरफुद्दौला के यहा गई । रात को शाह जी के मकान मे ठहरी । जनरल औटरम ने कहला भेजा तुम अपने महल मे आराम से रहो । हम वागियो को निकाल कर तुम्हारा एहतिराम करेंगे । हज़रत महल ने मुसीवत उठा कर हिम्मत न हारी । २९ रजव को करीव शाम मय विरजीस कदर के पीनस मे सवार होकर नाका आलमवाग की तरफ से मय मम्मू खा, घोडे पर सवार लखनऊ से रवाना हो गई । रास्ते मे राजा मर्दन सिंह जमीदार तुमरदी से पेश आया । मौलवी अमादुद्दीन देवी उर्फ मौलवी मुहम्मद नाज़िम विसवाने वाडी तीन कोस से इस्तकवाल जनावे आलिया के वास्ते आये । वडी धूम और नक्कारा और निशान जलूस मवार से मिर्जा वदा अलीवेग के इमाम वाडे मे उतारा । राह मे फुकरा के दो हज़ार रुपये खैरात किये । जव दाखिलये शहर हुई तोपें सलामी की चली । वहा से मशविरा हुआ कि वरेली (?) को चलें । चुनाचे ये काफिला आगे को रवाना हो गया । मेरी छोकरी यास्मीन साथ थी । वह लौट आई । और उसने सब हाल कहा जो जाने आलम को सुनाने के लिये तुमको लिख रही हूँ । अव यहा फिरगियो का मामला मौलवी अहमदुल्ला शाह से हो रहा है । देखिये क्या अजाम हो ? मैं भी अपनी भाजी के यहा खैरावाद जा रही हूँ । देखूँ ये खत मेरा पहुँचता है या नही । मुफताहुद्दौला के आदमी के हाथ भेजती हूँ वो यहा से भाग कर कलकत्ते जा रहा है ।

* * *

[शैदा बेगम का खत बनाम जाने आलम, सफर १२७४ हिजरी ।]

आपके जाने के एक साल के वाद वह वह वलवाए आम हुये, वह वह मुसीबतें आईं जो खुदा दुश्मन को भी नसीव न करे। हज़रत महल ने ऐसी वहादुरी दिखाई कि दुश्मन के मुँह फिर फिर गये, वडी जीदार औरत निकली, सुल्ताने आलम का नाम कर दिया कि जिसकी औरत ऐसी जो मरदानावार मुकावला कर सकती है तो मर्द कैसा वहादुर और शुजा होगा, जब ही खौफ से हुज़ूर को आँखों आँखो मे रक्खा । नवाब सरफराज़ महल ने मुफस्सल हालात लिख भेजे हैं तकरार लाहासिल है । जाने आलम फिरगियो ने वडी वेदर्दी से हज़रत वाग पर गोले वरसाये हैं। महलात के साथ मैं भी जान वचा कर भागी, सब सामान हजरत वाग मे छुट गया, और जो कुछ वचा था वह सब मुसाफिरत मे लुट गया । अव्र सरेदस्त यह हाल पहुँचा है कि जब किसी से नही कर्ज़ा बहम पहुँचता है तो

नौवत फाकाकशी की आती है। देखिये किस्मत क्या दिखाती है। खुदा के वास्ते जिस सूरत बने हमको अपने पास बुलाओ और अगर नही तो जिस तरह होगा मैं खुद, चली आऊँगी। यह सदमा कहाँ तक उठाऊँगी। ऐ जाने आलम, हाल मेरी वाल्दैन की गुरवत का तुम पर हुवेदा है, न वसीक़ा है न वज़ीफा। मैं ही उनकी मदद कर देती हूँ।

*   *   *

[हूर वेगम का जाने आलम के नाम खत, दोम ज़ीकाद १२७३ हिजरी।]

हाल गर्दिशे लैलो नहार से वहुत परेशान है, लवो पर जान है। जव से सव महलात के साथ निकलीं शाहजादी को लिये लिये नगे पाँव चली, रास्ते मे सव से मुफारक़त हुई। वदुशवारिये तमाम सआदत गज पहुँचने की नौवत हुई वहा वडी तलाश से एक मकान खाली पाया। उसमें दो दिन की वसर। तीसरे दिन वखौफे जानो श्रावरू वहा से सफर। गर्ज़ कि यूँ एक दिन कही रही और दो दिन कही रही। इस श्रावारगी मे ताकत जीने की भी नही रही। आसनाये राह मे कभी खाना मिला और कभी फाका हुश्रा। एक दम भी न रजो अलम से इफाका हुश्रा। श्राखिर को उफ्ता वा खेजा इफाका हुआ हर करियो कसवे मे फिरती हुई अपने घर मश्राली खा की सरा मे आई। शाहज़ादी रहीम श्रारा वेगम वीमार हुई, हमारी हालते दिलज़ार हुई, वह सदमा फिर किस मुँह से वयान करूँ कि राहते जान हमारी रमजान मे कज़ा कर गई। खुदा शाहिद है कि मैं जीते जी मर गई। अव तक जव उसकी सूरत याद आती है, टुकडे छाती हो जाती है, ऐ जाने आलम खुदा व रसूल गवाह है सवसे ज्यादा मेरी हालत तवाह है। खाने पीने को हैरान हूँ। घर तक जाता रहा, वेमकान हूँ। हर घड़ी सदमा सहती हूँ। इस वक्त हमारा कोई पुरसाने हाल नही। किसी को हमारा ख्याल नही, हमको तवाह देख कर सवने मुँह मोडा।

*   *   *

[पिया जाने श्रालम के नाम नवाव फ़ख्रमहल का खत रमज़ान १२७४ हिजरी]

हर एक मकान वीरान है, कालो ने ऊधम मचाई है, गोरो ने मात खाई है। दो चार दिन मे देखिये क्या हो ?

*   *   *

[राक़िम जान श्रालम अख्तर का खत वनाम नवाव निशात महल साहिवा।]

. . . .   . फ़रगियो की वे एतनाई हद से ज्यादा है। मेरे हालात जो साहिवाते महल तक पहुँचे होगें, मसाय वर्क तफसील उससे हवेदा है।

हैफ समझा है न वह कातिले नादा वरना ।
वेगुनह मारने के काविल यह गुनहगार न था ॥

* * *

[वनाम जाने आलम मेहरुन्निसा खानम का खत ।]

: लखनऊ पर खुदाई कहर नमूदार हुआ, हम सव का अजीव हाल हुआ, आतिश वारी से की खानावीरानी, हर कस था मुव्तलाये हैरानी। गैर जगह का रुख करके वतन छोडा, वजन्नो इकराह घर से मुंह मोडा। वहाले तबाहो खस्ततो खराव कानपुर पहुँचे। वादिले मुज्तरव वेताव नावकिफो ने अजराहे करम वैठने को जगह दी। मैने अपना किस्सए कुलफत सुनाया, हरएक का जी भर भर आया। जब कि उन्हें यह मालूम हुआ कि वादशाहे अवध की दीगर कनीजो मे से एक कनीज़ होने का शर्फ रखती हूँ तो सवने आंखो पर विठाया— ।